Digitization: HHPA(USA). Funding: Shastry Family, Mattur, Shivamogga K

√ 1.1Q

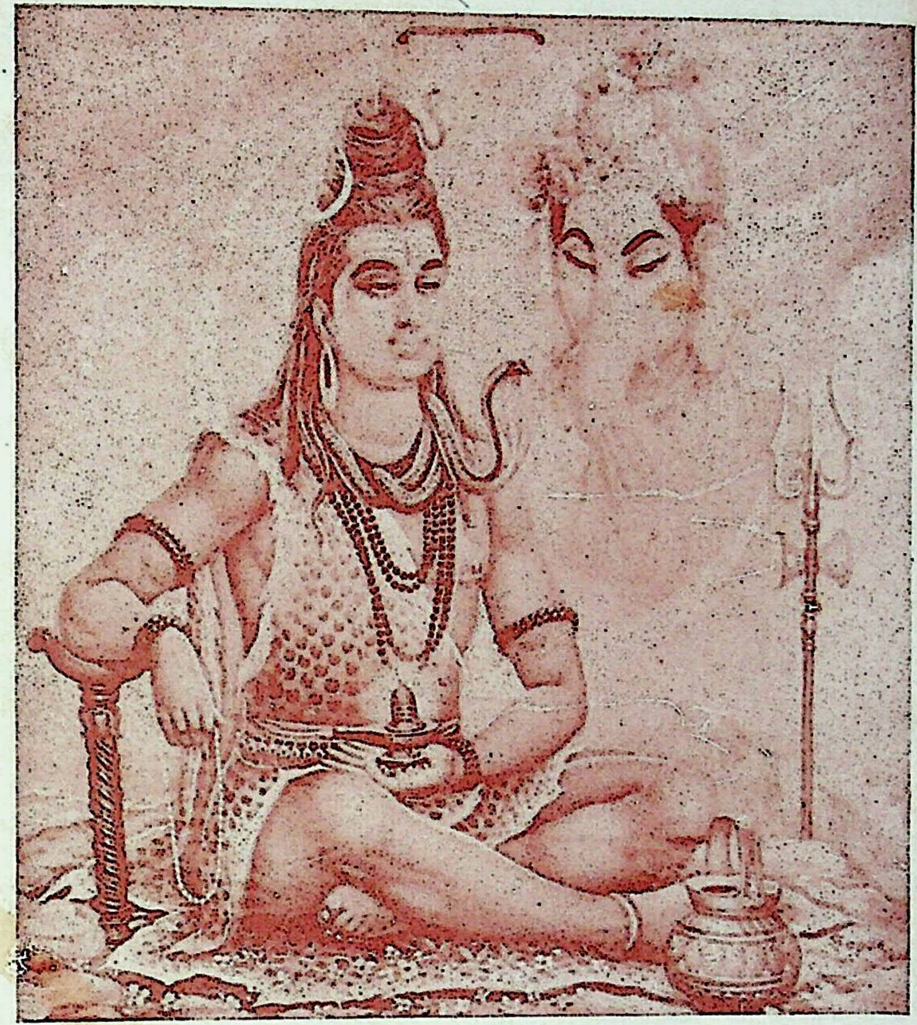

समर्पण

साम्ब सदाशिव आपका, पाकर कृपा प्रसाद।
तत्त्व दृष्टि हित ग्रंथ यह, रचा सहित आह्लाद॥
किंकर की यह अर्चना, स्वीकारो अखिलेश।
पुष्प मान अर्पित करूँ, चरणों में सविशेष॥

* रामप्रसाद शर्मा

श्रावण शुक्ला त्रयोदशी, २०३० वि०

Acc. No. 8247

SV-2024

॥ ॐ नमः शिवाय ॥

श्रीमान्-श्रीमती ____________________

सादर सप्रेम भेंट, उपहार

की ओर से

प्राक्कथन

संस्कृत के मान्य पंडित खेतड़ी निवासी श्री रामप्रसाद जी शर्मा द्वारा बड़े परिश्रमपूर्वक लिखा गया "शिव-तत्त्व-दर्शन" भारतीय भक्ति विषयक साहित्य को एक सर्वथा नवीन देन है। पंडित रामप्रसाद जी ने अपने सम्पूर्ण जीवन में अति गहन परिश्रम करके "शिव-तत्त्व" की गहरी छानबीन की है और इस ग्रंथ में उसे अत्यंत विशद रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इस ग्रंथ को जब मैंने ध्यान से पढ़ा तो मुझे ऐसा विदित हुआ कि भगवान् शिव के विषय में प्राच्य और पाश्चात्य भक्तजनों के पूरे साहित्य का गहरा मंथन करके उसे एक स्थान पर उपलब्ध कराने की दिशा में पण्डित जी ने अद्यावधि उपलब्ध सम्पूर्ण सामग्री को सुव्यवस्थित रूप में सजाकर प्रस्तुत किया है शिव-भक्तों के लिये तो यह एक अपूर्व विश्वकोश ही है जिसमें शिव के विषय में सभी प्रकार की अप्राप्य ज्ञातव्य बातें जानने का साधन एक ही स्थान पर सुलभ कर दिया गया है।

विद्वान लेखक ने जहाँ सामग्री-चयन में अत्यन्त श्रम किया है वहाँ उस सामग्री को उपन्यस्त करने में भी अपनी अपूर्व प्रतिभा व क्षमता का परिचय दिया है। ग्रंथ की सामग्री का विभाजन अत्यन्त वैज्ञानिक पद्धति के आधार पर हुआ है। इसकी सम्पूर्ण सामग्री तीन खण्डों में विभक्त है जिनके शीर्षक क्रमशः "प्रथमनेत्रदृष्टि" "द्वितीयनेत्रदृष्टि" व तृतीयनेत्रदृष्टि रखे गये हैं। इसके पश्चात् प्रार्थना स्तोत्रादि भी दिये हैं। प्रथमनेत्रदृष्टि में भगवान् शिव का ईश्वरत्व सिद्ध कर शिवमूर्ति की आवश्यकता विभिन्न प्रामाणिक ग्रन्थों के प्रमाणों से सिद्ध की गई है और तत्पश्चात् विभिन्न शिवलिङ्गों और शिवमन्त्रों का विस्तार से विवेचन किया गया है।

द्वितीयखण्ड में शिव पूजन में प्रयुक्त होने वाली विविध वस्तुओं की जानकारी दी गई है और पूजापद्धतियों का सांगोपांग दिग्दर्शन कराया गया है। तृतीय खण्ड में शिव से सम्बद्ध सभी व्रतों का विवेचन करने के पश्चात् शिव के जितने भी तीर्थस्थल हैं, भारत में या विदेश में, सभी का पूरा परिचय और वहाँ पहुंचने के लिये यातायात सुविधाओं का पूरा विवरण प्रस्तुत कर लेखक ने शिव तीर्थ दर्शनाभिलाषी भक्तों का महान् उपकार किया है। इन विषयों के अतिरिक्त इस खण्ड में पाप-पुण्य आदि के फल का व ब्रह्मविद्या का विश्लेषण अत्यन्त सुन्दर ढंग से शास्त्रोक्त प्रमाणों से प्रतिपादित कर लेखक ने इस ग्रन्थ को भक्तों के साथ साथ विद्वज्जन पठनीय भी बना दिया है।

इस ग्रन्थ के लेखक पंडित रामप्रसादजी शर्मा स्वयं शिव के परम भक्त हैं। अतः उनकी यह हार्दिक आकांक्षा रही

है कि सामान्य लोगों में शिवभक्ति का प्रचार-प्रसार बढ़े। इसी पुनीत उद्देश्य को हृदय में रखकर इन्होंने इस विशालकाय और अत्यन्त उपादेय ग्रन्थ की रचना की है; किन्तु मेरी यह धारणा है पंडितजी ने इसके लेखन में जो श्रम किया है उसके कारण यह ग्रन्थ सामान्य लोगों के साथ साथ विद्वानों व अनुसन्धानाभिलाषी अन्य जनों के लिए भी समानरूप से उपयोगी सिद्ध होगा। पण्डित जी की इस महान् कार्य के लिये जितनी प्रशंसा की जाय उतनी ही कम है।

अन्त में भगवान् शिव से मेरी यही प्रार्थना है कि इस ग्रंथ के अध्येताओं में अधिकाधिक शिवभक्ति की भावना जाग्रत हो, जिससे कि विद्वान् लेखक का श्रम फलीभूत हो और उन्हें इस प्रकार का अन्य ग्रंथ लिखने के लिए और भी प्रेरणा व उत्साह मिले।

निवेदक

अनन्तदेव त्रिपाठी, व्याकरणाचार्य
भूतपूर्व अध्यक्ष, प्राचार्य, बिरला संस्कृत महाविद्यालय
पिलानी (राज०)

आमुख

भारतीय संस्कृति रत्नाकरवत् है, जिसमें अनगिनत कलकल निनादिनी स्रोतस्विनी की अजस्र धाराएँ विलीन होती रही हैं। यह संस्कृति जीवन एवं जगत के व्यापक आदर्शों का समष्टि रूप है। इसका मूलाधार धर्म के ताने बाने से विनिर्मित है। धर्म प्रमुख होने के फलस्वरूप यह संस्कृति देवोन्मुख है, जिसकी व्याप्ति-प्रसार के कारण विदेशी संस्कृतियाँ भी इसमें अन्तर्भूत होती गईं। इस संस्कृति के अन्तर्गर्भ में समन्वयवादिता का लक्ष्य निहित होने से, विभिन्न मत-मतांतर तथा देवी-देवता एक सूत्र में निबद्ध होते गये। धर्म-संस्कृति का अंकुर होता है। संस्कृति का अस्तित्व धर्म-निरपेक्ष नहीं हो सकता। 'एकोऽहम् बहु स्याम' का अभिप्राय भी समन्वित संस्कृति से संवलित है। संस्कृति ब्रह्म की अभिव्यंजना करती है। इसी ब्रह्म का आदि रूप शिव है, जो भारतीय साहित्य के साक्ष्य पर कहा जा सकता है। ब्राह्मकल्प के प्रारम्भ में जो दिव्य अण्ड प्रकट हुआ था, जिसमें सत्यस्वरूप ज्योतिर्मय सनातन ब्रह्म का अन्तर्यामी रूप से आविर्भाव हुआ उसी से ब्रह्मा तथा स्थाणु नामधारी शिव का प्रादुर्भाव हुआ (महा॰भा॰आदि पर्व १/३०/३२)।

भारतीय साहित्य में शिवतत्त्वविषयक वर्णनात्मक परम्परा प्राचीनतम है। ऋग्वेदीय ऋचाओं से इस विशिष्ट आध्यात्मिक तत्त्व के दर्शन होने लगते हैं। वैदिक संहिताओं में शिव रुद्र, शंकर शर्व आदि नामों से अभिहित होता है। इन्होंने ही देवताओं को निर्मित किया—"इत कृणोति देवान्" (ऋ॰ म॰१ सू॰ ७७)। यही

शिव मंगलकारी वहाँ चित्रित हुए हैं–श्रेयस्करत्वात्। यही शिव पापहंता हैं। भारत ही नहीं वरन् समीपवर्ती द्वीपों में भी शिव स्तवन चलता है। "शिवः कर्त्ता शिवो धाता शिवो दत्तवरप्रदः। शिवो रक्षतु मां नित्यं शिवा च नमोऽस्तुते" यह बालिद्वीप की अर्चना है। यद्यपि वैदिक साहित्य में ३३ कोटि देवता वर्णित हैं, परन्तु "एकः सद्विप्राः बहुधा वदन्ति" श्रुत्यनुसार एक ही ब्रह्म के फलाकांक्षी मनीषियों ने विभिन्न कल्पनाएँ कर लीं। भर्तृहरि ने शिव को ही संसार का एक मात्र देवता माना है "एको देवो केशवो वा शिवो वा" (भर्तृ० २/११५)। यस्मात् जायते स ब्रह्मा, येन पाल्यते स विष्णुः। येन संहरते स रुद्रः" इसी कथन की पुष्टि विष्णुपुराण भी करता है—"सृष्टि स्थित्यन्तकरणाद् ब्रह्माविष्णुशिवात्मिकाम्"।

छांदस शास्त्र में रुद्र सर्वाधिक महत्वपूर्ण देव हैं। उनका वर्णन विशेषतः तीन स्थलों पर स्पष्ट है—

"इमा रुद्राय''''(ऋ० म० १/१६ सू ११४)

"श्रेष्ठो जातस्य रुद्र श्रियासि" (ऋ० १/४/३३);
"इमारुद्राय स्थिर''' '''''(ऋ० ७/३/४६)।

यजुर्वेदीय पूर्वार्धं षोडश अध्याय रुद्राध्याय ही हैं, जिनमें उनका श्रेयस्कर सौम्यरूप है और पाप निहंता होकर पुण्यफल दाता है (यजु० पू० १६/१-२-६)। अथर्ववेद में वे ही रुद्र शिव भयावह शक्ति के कारण पूज्य हैं (अथर्व ११ सू० २, मं० ७/१०)। शतपथ ब्राह्मण में वही रुद्र अग्निरूप और पशुरूप में परिवर्तित हो गये "पशुनां पति रुद्रोऽग्निरिति" श०ब्रा०१-७-३-८ तथा "रौद्रो वै पशवः" (श० ब्रा० ६/३/२/७) उपनिषदों में रुद्र शिव एक ही है "एकोहि रुद्रा द्वितीया च तस्थुर्व (श्वे० ३/२/६)। रुद्र शिव समस्त प्राणियों में स्थित हैं, सर्वव्याप्त हैं और कल्याणप्रद हैं तथा अपनी शक्ति से लोक को वश में करने वाले सर्वशक्तिमान्, रक्षक सर्वरूपधारी देवरूप में प्रतिष्ठित हैं और उनका देवत्व तथा दिव्यता सर्वतोमुखी है।

शिव का यही तारतम्य छांदस, संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, आधुनिक भाषाओं तक अक्षुण्ण प्रवाहित है। जितना विवेचन, आकलन, विश्लेषण, मंथन शिवतत्त्व का हुआ है, उतना शायद ही अन्य दिव्य-तत्त्व का हुआ हो। इतना होते हुए भी 'शिव-तत्त्व-दर्शन' के लेखक विद्वान् एवं मर्मज्ञ पं० रामप्रसाद जी शास्त्री की लेखनी द्वारा तिरोहित तथ्यों का उद्घाटन हुआ है, वह अपने में एक निराली वरिष्ठता रखता है। सम्भ्रांत लेखक ने वेद, शास्त्र, निगमागम, पुराणादि का सम्यक् एवं समीचीन अध्ययन कर अपने मौलिक तर्क संगत निष्कर्ष निकाले हैं। प्रस्तुत ग्रंथ में स्वतन्त्र रूप से लेखक ने निगूढ़ भावनाओं का अन्वेषण करते हुए कतिपय नवीन स्थापनाएँ की हैं जिनकी ओर इस विषय के अध्येताओं का ध्यानाकर्षण नैसर्गिक है। प्रतीत होता है कि अद्यतन विद्वानों के सत्प्रयत्नों से जो शिव-विषयक विपुल सामग्री सामने आई है, 'शिव-तत्त्व-दर्शन' का मनन करने के अनन्तर, वह संदिग्ध व अस्पष्ट सी भासित होने लगी है। हिन्दी साहित्य के भण्डार में इस प्रकार की सामग्री का अभाव था।

विद्वान् लेखक पेशेवर लेखक नहीं हैं। उनका जीवन क्षेत्र विभिन्न वीचि-मालाओं व कार्य-कलापों से उद्वेलित होता आया है और उनकी लेखन-क्रिया स्वांतःसुखाय है, तो भी उन्होंने गवेषणात्मक एवं विवेचनात्मक तथ्यों का उद्घाटन किया है। ख्याति-प्राप्ति अथवा अर्थोपार्जन लेखक का मंतव्य नहीं, एक सात्त्विक, मननशील, विद्याव्यसनी, साधक के रूप में उन्होंने जिज्ञासुवत् ज्ञानोपलब्धि के हेतु, शिव-विषयक शोध-पूर्ण गहन अध्ययन कर, इस ग्रन्थ का प्रणयन किया है ताकि उपलब्ध ज्ञान को रसज्ञों तक पहुंचाया जा सके और भी नवीन सारगर्भित पद्धति अन्तःसाक्ष्यमूलक विचारों की विवेचना है। प्रस्तुत पुस्तक में तथ्यों का प्रामाणिक परीक्षण तारतम्यपूर्ण परिवेश, निहित विचार

दृष्टिकोण, दर्शन, भावबोध आदि का समीचीन आकलन हुआ है। यह ग्रन्थ लेखक के शास्त्रीय ग्रन्थों के अवगाहन का परिचायक है।

लेखक की शैली दार्शनिकता पर आधृत होने के फल स्वरूप, गंभीर एवं सूत्रात्मक है। गहन विषय को बोधगम्य करने के लिये लेखक ने प्रायः विवरणात्मक पद्धति अपनाई है। उनका लक्ष्य शिव-तत्त्व के गहन एवं जटिल मर्म का विश्लेषण करना प्रतीत होता है। लेखक ने खंडन-मंडनात्मक तर्क-विस्तार इसी कारण नहीं किया है। पाश्चात्य एवं पौरस्त्य विद्वानों के उद्धरणों से लेखक के विश्वस्त मत की सशक्त पुष्टि होती है। इस प्रकार उनकी शैली पूर्वाग्रह के आँचल को न पकड़ कर वैज्ञानिक बन गई है।

प्रस्तुत ग्रन्थ की भाषा सरल, सरस, सक्षम, विषयानुगामिनी एवं भाव-सुबोध है। अनर्गल साज शृङ्गार से बोझिल नहीं। 'शिव-तत्त्व-दर्शन' में कला-कौशल व पांडित्य प्रदर्शनार्थ भाषा व्यवहृति नहीं हुई है। इस रचना में सगुणोपासक भक्तों की भाँति, अपने इष्ट देव शिव का स्वानुभूति के आधार पर, श्रद्धा-भक्ति समन्वित गुण कथन ही उद्देश्य रहा है। रचना में अभिव्यंजित भाव-विचार लेखक की निजी अनुभूति से निर्मित हुए हैं, अत एव स्वतः प्रसूत हृदयोद्गार हैं, अनुकृति नहीं। यह कृति एक चिन्तक मनीषी की आत्माभिव्यक्ति प्रतीत होती है लेखक ने दार्शनिक पृष्ठभूमि की स्पष्टता के साथ २ शिव-तत्त्व के मूल स्रोतों तथा प्रेरणा केन्द्रों की, पौराणिक परिप्रेक्ष्य में, व्यापक व्याख्या की है। कतिपय स्थलों के निष्कर्ष 'भिन्नमतिर्हिलोकः, के अनुसार अन्य विद्वानों के निष्कर्षों से पर्याप्त पृथक् तथा नवोन्मेषशील हैं।

त्रिनेत्र चन्द्रमौलि-विषयक प्रस्तुत रचना तीन स्कंधों में वर्गीकृत है। प्रत्येक स्कन्ध में शास्त्रीय प्रमाणानुसार १८ अध्यायों की समाविष्टि है। प्रथम नेत्रदृष्टि में शिव व्यापक ब्रह्मरूप में प्रतिष्ठापित हैं एवं उनके विभिन्न स्वरूपों की झाँकी प्रस्तुत की गई

है। द्वितीय में, शिवार्चना-विधि की प्रमुखता है। तृतीय नेत्र दृष्टि, लोकजीवनोपयोगी शिव विषयक व्रतादि, तीर्थ-स्थलों व तत्संबन्धी महात्म्य को लेकर चलती है। इस ग्रंथ में प्रयुक्त मन्त्र, सूक्त, श्लोक आँगल भाषीय विवरण, मूल पाठ के संदर्भों के साथ ही, हिन्दी रूपान्तरित हुए हैं. जो एक श्लाघ्य प्रयास है। इसमें अनेक प्रकार के शिव लिंगों का सर्वांगीण परिचय भी दिया गया है। इस ग्रन्थ की एक अन्य विशिष्टता यह भी है कि वर्तमान अति व्यस्त युग में, सभी प्रकार के व्यक्तियों के प्रयोजनार्थ, वेदोक्त,पुराणोक्त छोटी बड़ी अनेक प्रकार की पूजा पद्धतियाँ वर्णित हैं, जो अपनी २ सुविधानुसार ग्रहण की जा सकती हैं। तीनों स्कन्धों के पश्चात् उपासक भक्तों के हेतु श्री गणेश, महेश, भगवती अम्बादि के स्मरण प्रार्थना स्तोत्रादि का संग्रह भी दिया गया हे।

इस प्रकार 'शिव-तत्त्व-दर्शन' विद्वान् लेखक की सफल एवं महत्त्वशाली कृति है। लेखक ने इस ग्रंथ में यह प्रतिपादित किया है कि भारत ही नहीं, अपितु इतर विदेशों में भी शिव-तत्त्व पर्याप्त लोक प्रचलित व चर्चित रहा है, जो भारतीय संस्कृति की एकात्मकता का परिचायक है। विभिन्न भाषाओं की संस्कृति को एक सूत्र में आबद्ध करने वाले, इस दार्शनिक तत्त्व की सम्यक् विवेचना करके, लेखक ने मौलिक अनुसंधित्सु का ही कार्य सम्पन्न नहीं किया, अपितु भारत की अखंडता तथा सांस्कृतिक एकता को पुनः संस्थापित कर स्तुत्य कार्य किया है। लेखक का अथक-परिश्रम, चिंतन, अध्ययन पद २ पर इस ग्रन्थ में परिलक्षित होता है। शिव-तत्त्व की व्याख्या, स्वरूप, लक्षण, सार्वदेशिकता आदि प्रसंगों पर वैज्ञानिक विश्लेषण, हिन्दी ग्रन्थों में कम ही दृष्टिगोचर होता है। यद्यपि

यह क्लिष्ट, दार्शनिक विषय है, तथापि सामान्य लोक मानस के लिए भी व्रतादि, तीर्थस्थल, सामग्री इसमें विद्यमान हैं। साध्य, साधना, सिद्धि तथा अनुभूति का विवेचन विद्वतापूर्ण पद्धति से इस ग्रन्थ में हुआ है। श्री शास्त्री जी का यह प्रयास भारतीय सांस्कृतिक परंपरा को आगे बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण योगदान होगा।

सावित्री भवन,
पिलानी (राजस्थान) डॉ॰ महावीर प्रसाद मिश्रा
दिनांक २१/२/७३ एम॰ ए॰ (हिन्दी–संस्कृत) पी–एच॰ डी॰

* * *

ग्रन्थकार—

वैद्य पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री (खेतड़ी)

आयुर्वेद एवं धार्मिकाध्यात्मिक विविधोपाधि-अलंकृत

॥ ॐ नमः शिवाय ॥

आत्म-निवेदन

भूत-भावन भगवान् का, तत्त्व-दर्शन-वृत्तान्त ।
मनन, चिन्तन व भक्ति से, मुक्ति मिले नितान्त ॥

समस्त देवताओं में भगवान् शिव ही सर्वाधिक जन द्वारा सर्वाधिक स्थानों पर पूजित होते हुए भी सर्वाधिक विवादास्पद देवता हैं। इसका प्रमुख कारण है, जन सामान्य में भगवान् शिव के स्वरूप का स्पष्ट ज्ञान नहीं होना। शिव महिमा पर अनेक ग्रन्थ मिलते हैं, वेद पुराणादि इनके गुणों के बखान से भरे हुए हैं, फिर भी कोई एक अकेला ऐसा ग्रंथ दिखाई नहीं देता जो भगवान् शिव के तत्त्व का सम्यक् ज्ञान जन साधारण को करा सके। हिन्दू-धर्म के साहित्य में ऐसे ग्रन्थ का अभाव प्रायः खटकता रहा है। जन सामान्य को भगवान् शिव विषयक अधिकाधिक सामग्री सुव्यवस्थित रूप से एक ही पुस्तक में सुलभ हो सके, इसी उद्देश्य के साथ 'शिव–तत्त्व–दर्शन' नामक एक पुस्तक सरल हिन्दी भाषा में, उक्त अभाव की पूर्ति हेतु लिखने मैं प्रयास करता रहा, किन्तु सांसारिक क्रिया-कलापों में घिरे रहने के कारण बहुत ही कम समय इस कार्य में लगा पाया। जब जब कुछ समय मिलता शिव-विषयक ग्रन्थों का स्वाध्याय एवं मनन कर, संस्मरण लिखा करता। यह क्रम अनेक वर्षों से चलता रहा किन्तु उक्त सामग्री का सन्तोष-प्रद संचय न हो सका। सन् १९६४ में जीविकोपार्जनभार से मुक्त होने के पश्चात् इसी सामग्री का संचय करने लगा। भगवान् शिव के अनुग्रह से जिस प्रकार पठन मनन होता गया, जिज्ञासा पिपासा उत्तरोत्तर बढ़ती गई पर इस–उस कारण से लेखन कार्य में कुछ विलम्ब होता रहा। एक दिन बिरला ग्राम (नागदा) के शिव मन्दिर में (जिसका चित्र पुस्तक के प्रारम्भ में दिया गया है।) प्रार्थना

कर ध्यानावस्थित हो रहा था, हठात् हृदय में भगवान् शिव की कृपा से प्रेरणा उत्पन्न हुई कि इस पुस्तक के लेखन-कार्य का आज ही शुभारम्भ किया जावे। इस प्रकार की प्रेरणा को भगवान् शिव की कृपा, आशीर्वाद और आज्ञा मानकर विघ्नविनाशक श्री गणेश जी महाराज, माता सरस्वती, इष्ट देव भगवान् शिव, भगवती अम्बा एवं परम पूज्य श्री माता-पिता सभी पूर्वजों, गुरुवर्य्यों के चरणों में ध्यान मनन से नतमस्तक होकर लेखन-कार्य आरम्भ किया तो इन्हीं परम पूज्यों की कृपा व आशीर्वाद से इस ग्रन्थ रूप में फली भूत हुआ।

वेद, उपनिषद्, श्रुति, स्मृति, पुराणादि, प्राचीन धर्म-ग्रन्थों व आधुनिक भारतीय संस्कृति के साहित्य के साथ ही साथ पाश्चात्य देशों के विद्वानों, आधुनिक विज्ञानविदों, पुरातत्त्वज्ञों, इतिहासकारों के विचारों, जिन्होंने भगवान शिव विषयक अनेक अन्वेषण कर अपने विचार यथा समय व्यक्त एवं प्रकाशित किए है, और भारतीय प्राचीन सांस्कृतिक पूजापद्धतियों के विषय में आधुनिक विज्ञान द्वारा अन्वेषण कर युक्तियुक्त अर्थसहित उनके वैज्ञानिक रहस्योद्घाटन किए है; के तथ्यों एवं मौलिक विचारधाराओं का मिश्रण कर यह ग्रन्थ इस रूप में लिखा गया है कि प्राचीन भारतीय विषयों पर अर्वाचीन विद्वानों की विचारधाराओं के प्रकाश द्वारा इसके धार्मिक तथ्य प्राचीन वेदधर्मशास्त्रज्ञ विद्वानों को भी नहीं, अपितु आधुनिक अंग्रेजी पढ़े लिखे से लेकर प्रकाण्ड विद्वज्जन तक सभी धार्मिकाध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त कर लाभान्वित हो सकें। इसमें सभी के योग्य भाषा प्रयोग करने का प्रयास कियाग या है।

इस लेखक का जन्म ऐसे कुल में हुआ है जिसमें वेद, वेदान्त, ज्योतिष, धर्मशास्त्रादि की शिक्षा पूर्वजों से चली आ रही है। प्रातःस्मरणीय परमपूज्य स्वर्गीय पितामह पंडित महासुख जी शर्मा, जो वेद, वेदान्त, ज्योतिष, धर्मशास्त्रादि के प्रकाण्ड विद्वान् थे, द्वारा तथा अनेक पूज्यपाद गुरुवर्य्य विद्वानों द्वारा दी गई शिक्षा

व सम्पर्क का ही प्रभाव है कि यह अकिंचन लेखक भगवान् साम्ब-सदाशिव की कुछ भक्ति स्तुति करने का प्रयास कर सका है। यह मधु संचय इन सभी पूज्यवर्य्यों का आशीर्वाद एवं भगवान् साम्ब सदाशिव का ही अनुग्रह है, तथा अनेकानेक ग्रंथों, पत्र, पत्रिकाओं, एवं रिपोर्टों का तथ्यमय सारांश संकलन है जिनके संदर्भ भी इस ग्रन्थ में यथास्थान दर्शाये गये हैं। यदि कहीं भूल से संदर्भ देने में त्रुटि रही हो तो उसके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ।

यह भगवान् शिव का महान् गूढ विषय है। मैं कोई पेशेवर लेखक या लेखन कला का अभ्यासी नहीं हूँ, अत स्वाभाविकत: भूल और त्रुटियाँ अवश्य रही होंगी। ऐसी भूल व गलतियों के लिए मैं पूज्यवर्यों एवं विद्वान् पाठकों से क्षमाप्रार्थी हूँ। कोई भी त्रुटि जिन महानुभावों की दृष्टि में आवे, मुझे अवश्य सूचित करें और उन त्रुटियों पर ध्यान न देकर जो उत्तम, मीठा, सारयुक्त फल रुचिकर प्रतीत हों, ग्रहण करें, यही मेरा विनम्र निवेदन है। इस ग्रन्थ का लेखन किसी प्रकार का श्रेय या अर्थ लाभ प्राप्त हेतु नहीं किया गया है। मेरे वानप्रस्थ आश्रम का सदुपयोग एवं लम्बे समय से चली आ रही हृदय पिपासा का शान्ति-लाभ ही इसका मुख्य कारण रहा है। सर्व प्राणियों पर दया करने वाले साम्ब सदाशिव की कृपा द्वारा पूजा के एक पुष्प रूप में अर्पित करने का यह किंचित् प्रयास है।

परम पूज्य गुरुवर्य्य श्री अनन्तदेव जी त्रिपाठी, भूतपूर्व प्राचार्य बिरला संस्कृत कॉलेज पिलानी की वैसे तो मुझ चरण-सेवक पर सर्वदा ही कृपा रही है; किन्तु इस 'शिव-तत्त्व-दर्शन' ग्रंथ को पढ़ने और प्राक्कथन लिखने का जो अनुग्रह उन्होंने किया है, इसके लिए उनका मैं सर्वदा ऋणी रहूँगा।

सहोदर समान, अभिन्न हृदय, परम मित्र डा० महावीर प्रसाद मिश्र एम० ए० (हिन्दी-संस्कृत) पी–एच० डी०, प्रोफेसर, बिरला इन्स्टीट्यूट आफ टेक्नोलौजी एण्ड साइन्स पिलानी (राजस्थान) जो शिव-वाङ्मय के भी अच्छे विद्वान् हैं, ने 'शिव-तत्त्व-दर्शन'

ग्रन्थ पर अपने विचार ग्रामुख के रूप में प्रकट करने का श्रम किया है, यह वस्तुतः स्तुत्य है। उनका परम स्नेह ही इसका मुख्य कारण है।

वेदवाणी संस्कृत, हिन्दी के ग्रतिरिक्त पाश्चात्य व अन्य भाषाओं की साहित्यिक सामग्री संचय कराने, एवं उनके हिन्दी अनुवाद द्वारा ज्ञान कराने का श्रेय श्री पद्माकर अनन्त फड़के बी०एस-सी० (टेकनिकल, केमिकल) तथा केमिकल इन्जीनियर चीफ ग्रोफीसर इन्जीनियरिंग डिवीजन ग्वालियर रेयोन, बिरलाग्राम व उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रत्नप्रभा फड़के बी० ए० आनर्स (एकोनोमिक्स) को है जिन्होंने कठिन श्रम व अपना बहुमूल्य समय देकर वर्णनातीत सहयोग प्रदान किया है। वर्तमान समय में कागज का प्राप्त करना महान् कठिन होते हुए भी कागज का पर्याप्त प्रबन्ध कराने का श्रेय भी आपको ही है।

महाराष्ट्री भाषा के साहित्य का हिन्दी अनुवाद कराने व समझाने में श्री पद्माकर आत्माराम ग्रत्रे बी०एस-सी०(टेकनिकल-केमिकल) प्रोसेस-इंजीनियर ग्वालियर रेयोन, बिरलाग्राम ने भी समय समय पर सहयोग प्रदान किया है।

इस ग्रंथ के लेखन, प्रकाशन, प्रिंटिंग प्रबंधादि में चि० ओ३म् प्रकाश शर्मा बी०कॉम(लक्ष्मणगढ़ निवासी), ग्वालियर रेयोन, बिरलाग्राम ने अपना अमूल्य समय देकर जो सहयोग दिया है वह चिरस्मरणीय रहेगा। श्री धीरेन्द्र ओझा एम० ए० ग्वालियर रेयोन का श्रम सहयोग भी भुलाया नहीं जा सकता। उज्जैन-इन्दौर के पुस्तकालयों से इस विषय के अनेक ग्रंथों को मेरे अवलोकनार्थ लाने व पहुँचाने का कठिन श्रम आपने किया है तथा मुद्रणादि के प्रबन्ध व कागज प्राप्त करने हेतु भी अनेक स्थानों पर मेरे साथ रहे हैं।

इन सभी सहयोगियों के प्रति धन्यवाद तथा आभार प्रदर्शित करता हुआ शिव से इनकी मङ्गलकामना निवेदन करता हूँ।

प्रकाशन से पूर्व जिन परम पूज्यपाद धर्मगुरुओं, धर्म मर्मज्ञ विद्वानों ने ग्रन्थावलोकन के पश्चात् अपने आशीर्वाद, मङ्गलकामनाएँ

एवं शुभ सम्मतियाँ प्रदान करने का अनुग्रह कर इस शिवकिंकर का उत्साहवर्धन किया है, उन सभी का मैं चिरकृतज्ञ व ऋणी हूं।

डा० बद्रीप्रसाद पंचोली ने मेरा पितृ समान आदर करते हुए, अपना कार्य मानकर मुद्रण प्रबन्धादि सभी कार्यों में पूर्ण सहयोग प्रदान किया है। भगवान् शिव से इनकी मङ्गलकामना निवेदन करता हूँ।

'शिव-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ प्रकाशन समिति' बिरलाग्राम ने इस ग्रंथ के प्रकाशन का जो भार उठाया है, इसके लिये समिति को मैं साधुवाद देता हूँ। भगवान् शिव के प्रति मेरी श्रद्धा एवं भक्ति के पत्र-पुष्प रूप में यह ग्रन्थ आप पाठकों के हाथों तक पहुंचाने का श्रेय समिति को ही है।

ग्रन्थ प्रकाशन के लिए कई श्रीमानों, महानुभावों, बहनों कतिपय प्रतिष्ठानों एवं संस्थाओं द्वारा दिये गये सहयोग के लिए मैं हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। स्थानीय ग्वालियर रेयोन एवं भारत कामर्स के अधिकारियों व कर्मचारियों द्वारा दिया गया प्रत्यक्ष एवं परोक्ष सहयोग स्तुत्य है। श्री चन्द्रमौलीश्वर इन सबको निरन्तर प्रगति एवं अपनी भक्ति प्रदान करें।

परम पूज्य गुरुवर्य्य विद्वान्, साहित्य सेवी, अनुसंधानाभिलाषी माताएं, बहिनें एवं अन्यान्य शिवभक्त पाठकगण इसके पठन मनन द्वारा लाभान्वित होंगे और भगवान् साम्ब सदाशिव की कृपा प्राप्त करेंगे, यही मेरा परम सौभाग्य होगा, परिश्रम सार्थक होगा एवं जन्म कृतार्थ होगा।

मेरे परम इष्टदेव साम्ब सदाशिव इस ग्रन्थ रूपी पुष्प को स्वीकार कर आशीर्वाद प्रदान करें कि आद्या शक्ति उमा के विषय में भी कुछ लिखकर शीघ्र प्रस्तुत कर सकूं। मन तथा चित्त आपके ही मनन एवं चिन्तन में लगे रहें।

यह ग्रन्थ मैं त्रिनेत्र भगवान् चन्द्रमौलीश्वर साम्ब सदाशिव के चरणों में सम्पूर्ण श्रद्धा एवं भक्ति से समर्पण करता हूं। वे सब का कल्याण करें।

बिरलाग्राम (नागदा) म० प्र० विनीत
दि० श्रावण शुक्ला त्रयोदशी, २०३०वि० रामप्रसाद शर्मा (खेतड़ी)

अनुक्रम

विषय क्रम पृष्ठांक

प्रथम नेत्रदृष्टिस्कन्ध

सोपान १ क्या भगवान् शिव ब्रह्म है ? १
” २ प्रतिमा और उपासना ६८
” ३ शिवलिंगाकार तथा पीठयोनि रूप में क्यों ? ७२
” ४ द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग ८३
” ५ अष्टमूर्ति शिवलिंग १२१
” ६ शास्त्राधारों के अतिरिक्त स्थापित शिवलिंग १३६
” ७ नर्मदेश्वर (बाणलिंग) १३७
” ८ विभिन्न पदार्थों द्वारा निर्मित शिवलिंग १४२
” ९ पार्थिव लिंग निर्माण व पूजन १४८
” १० विचित्र, अद्भुत, असाधारण शिवलिंग १६०
” ११ शिवलिंग पूजा की प्राचीनता व विश्व व्यापकता १६३
” १२ अष्टोत्तर शत दिव्य शिव-क्षेत्र २०४
” १३ पारद द्वारा निर्मित शिवलिंग २०६
” १४ शिव की मनुष्याकार में मान्यता २२४
” १५, १६, १७, १८ महामृत्युंजय यंत्र, त्र्यक्षरी शिवयंत्र, पंचाक्षरी शिवयंत्र, पंचाक्षरी शिवायै यंत्र २२७

द्वितीय नेत्रदृष्टिस्कन्ध

सोपान १ शिव पूजन में ध्यान देने योग्य बातें २३१
” २ शिव पूजन अधिकार निर्णय २४१
” ३ रुद्राक्ष व भस्म त्रिपुण्ड्र धारण २४८
” ४ ज्योति या दीपक २५४

विषय क्रम			पृष्ठांक
"	५	बिल्वपत्र का पूजन में प्रयोग व माहात्म्य	२५७
"	६	तुलसी पत्र तथा मंजरी का प्रयोग	२६२
"	७	विभिन्न पुष्पों, अन्नों व जल-दुग्धादि की धारा से पूजन	२६६
"	८	प्रदक्षिणा (परिक्रमा)	२७२
"	९	पूजा में क्षमा याचना	२८३
"	१०	आशीर्वाद की आवश्यकता	२८५
"	११	शिव का प्रसाद भक्षण व निर्माल्य ग्रहण	२९०
"	१२	पूजा-विसर्जन	२९६
"	१३	पंचाक्षर मंत्र जप, पूजन विधि	२९८
"	१४	प्रणवाक्षर जप, पूजन, माहात्म्यादि	३०५
"	१५	महामृत्युंजय, पूजन व माहात्म्य	३१०
"	१६	वेदोक्त पूजन विधि (बृहत्पूजा प्रकार)	३१३
"	१७	सर्वदेवपूजा तथाशिव मानसपूजा	३२७
"	१८	(क) हिन्दी भाषा द्वारा पूजन-पद्धति	३३७
"	१८	(ख) शिव-पार्वती की सूक्ष्म पूजाविधि	३६१
		शिव महिम्न स्तोत्र	३६५

तृतीय नेत्रदृष्टिस्कन्ध

सोपान	१	शिव के व्रतों का वर्णन व विधान	३८५
"	२	षोडश सोमवार व्रत, कथा, पूजन विधि	३९१
"	३	सोमवार व्रत कथा	४०१
"	४	सोम प्रदोष व्रत कथा	४०७
"	५	पूजन करने वालों के लिए आरती गायन	४०९
"	६	रुद्राष्टकम्	४११
"	७	शिव तीर्थ यात्रा माहात्म्य	४१४
"	८	काशीवास माहात्म्य वर्णन	४२३

विषय क्रम **पृष्ठांक**

„ ९ परब्रह्म परमात्मा के स्वरूप का निरूपण ४३२
„ १० भक्ति ज्ञान ४४८
„ ११ उपासना द्वारा भक्ति ४५४
„ १२ देहधारियों का सम्बन्ध किसी से क्यों होता है ? ४५८
„ १३ पाप का फल कौन भोगता है ? ४६३
„ १४ धर्म की महत्ता ४६६
„ १५ धर्म का सार ४६९
„ १६ ब्रह्म विद्या का सार ४७०
„ १७ ग्रन्थ समापन प्रार्थना ४७२
„ १८ शान्ति पाठ ४७५
परिशिष्ट—प्रार्थना हेतु स्तोत्र ४८४

श्री गणेशस्य प्रातःस्मरणम्, श्री शिवस्य प्रातःस्मरणम्, श्री देव्याः प्रातःस्मरणम् श्री परब्रह्मणः प्रातःस्मरणम्, शिव के प्रतिष्ठित सर्वदेवस्तुति, शिवाष्टकम् गौरीशाष्टकम् श्री विश्वनाथाष्टकम्, परमेश्वर स्तोत्रम्, भवान्यष्टकम् आदित्य हृदयस्तोत्रम् श्रीशिवचालीसा, श्रीशिवाष्टक, आरती ४८३

परिशिष्ट—आशीर्वाद, मङ्गल कामना, सम्मतियाँ १–४८

* * *

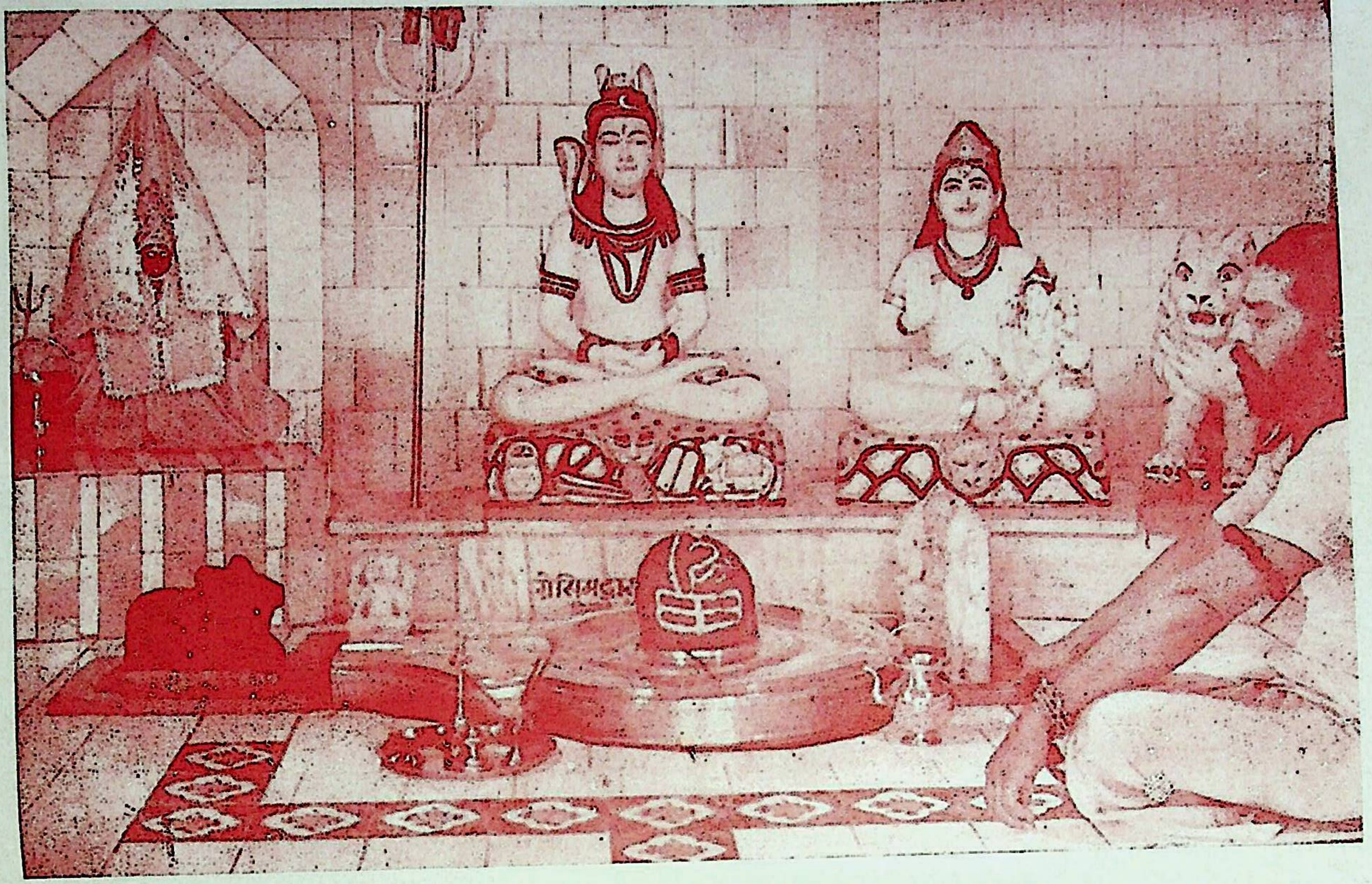

शिव मन्दिर, बिरलाग्राम (नागदा)

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

शिव-तत्व-दर्शन

लम्बोदरं परमसुन्दरमेकदन्तं,
पीताम्बरं त्रिनयनं परमं पवित्रम् ।
उद्यद्दिवाकरनिभोज्ज्वलकान्तिकान्तं,
विघ्नेश्वरं सकल विघ्नहरं नमामि ॥

परम पवित्र, तोन नेत्र वाले, पोतवस्त्रधारी, एकदन्त, बड़े पेट वाले, परम सुन्दर, प्रातःकाल उदय होने वाले सूर्य के समान कांति से चमत्कृत, विघ्न का हरण करने वाले ईश्वर, समस्त विघ्नों का नाश करने वाले, श्री गणेशजी महाराज ! आपको नमस्कार करता हूं ।

सोपान

(१)

'क्या भगवान् शिव ब्रह्म (ईश्वर) हैं ?'

देवाधिदेव महादेव के विषय में कोई पूजा-विधि तत्त्व-रहस्य, महात्म्य आदि कहना या इस विषय में निर्णय करना, उदाहरण लिखना साधारण मनुष्य तो क्या, किसी के लिए भी सम्भव नहीं है। यह सब शास्त्रों व ऋषि मुनियों का सिद्धान्त है। इसी प्रकार गन्धर्वराज पुष्पदन्त ने अपने शब्दों में जिस प्रकार

कहा है, उसी को मैं भी अपनी प्रार्थना रूप में भगवान् शिव के सामने प्रेम व सत्कार पूर्वक निवेदन करता हूँ ।

महिम्नः पारन्ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः ।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधिगृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर ! निरपवादः परिकरः ॥

हे भगवान् शिव ! मुझ जैसे अज्ञ पुरुष से तुम्हारी महिमा यदि पूर्ण रूपेण व्यक्त करके नहीं कही गई है तो मैं यह कहूँगा कि ब्रह्मादि भी तुम्हारी महिमा को व्यक्त करने में समर्थ नहीं हो सके हैं, मेरी तो औकात ही क्या है ? किन्तु अपनी शक्ति के अनुसार तुम्हारा विषय कहने में यदि दोष न होता हो तो, मैं भी अपनी बुद्धि के अनुसार कुछ कहता हूं, इसमें किसी प्रकार की आपत्ति नहीं होनी चाहिये ।

इसी प्रकार हे भगवान शङ्कर (साम्ब सदाशिव) ! मेरी इस विनय को सुनकर आपके विषय में कुछ लिखने की आज्ञा दें ।

तमीश्वराणां परमं महेश्वरं
तं देवतानां परमं च दैवतम् ।
पतिं पतीनां परमं परस्ताद्
विदाम देवं भुवनेशमीड्यम् ॥

यस्मिन्निदं यतश्चेदं येनेदं य इदं स्वयम् ।
योऽस्मात्परस्माच्च परस्तं प्रपद्ये स्वयम्भुवम् ॥
तमीशानं वरदं देवमीड्यं
निचाय्येमां शान्तिमत्यन्तमेति ॥

वे ईश्वरों के भी परम महेश्वर, देवताओं के परम देवता, पतियों के भी परमपति, परात्पर, परम पूज्य और भुवनेश हैं। जिनमें यह विश्व है, जिनसे यह विश्व है, जिनके द्वारा यह विश्व है, जो स्वयं यह विश्व हैं। जो इस विश्व के परे से भी परे हैं, उन स्वयम्भू भगवान् की मैं शरण लेता हूं। उन्हीं ईशान और वरदाता पूज्यदेव को जानने से जीव आत्यन्तिकी शान्ति का अधिकारी हो जाता है।

ब्रह्मा, विष्णु महेश, शक्ति आदि सभी एक ही हैं। श्रीराम, श्रीकृष्ण आदि भी इन्हीं के अवतार रूप में एक ही हैं। इसी प्रकार भगवती, लक्ष्मी, ब्रह्माणी, पार्वती, सीता, राधा, रुक्मिणी आदि भी एक ही हैं। इनकी किसी एक की पूजा आराधना की जाती है वह सब सर्वेश्वर की ही पूजा आराधना है।

इनकी एकता के विषय में शास्त्रों में बहुत प्रमाण मिलते हैं। जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं।

भगवान विष्णु ने कहा है—

स एवाहं महादेवः स एवाहं जनार्दनः।
उभयोरन्तरं नास्ति घटस्थजलयोरिव॥

वस्तुतः मैं ही जनार्दन विष्णु हूं और मैं ही महादेव हूं। अलग अलग दो घड़ों में रक्खे हुए जल की भाँति मुझ :और उनमें कोई अन्तर नहीं है। इसी प्रकार गोस्वामी तुलसीदास जी ने लिखा है--

शंभु विरंचि विष्नु भगवाना।
उपजहिं जासु अंस तें नाना॥
जासु अंस उपजहिं गुन खानी।
अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी॥

इसी प्रकार पद्मपुराण में भगवान् श्रीराम ने शिव के प्रति कहा है—

ममास्ति हृदये शर्वो भवतो हृदये त्वहम् ।
आवयोरन्तरं नास्ति मूढाः पश्यन्ति दुर्धियः ।।

आप शिव मेरे हृदय में रहते हैं और मैं आपके हृदय में हूँ। हम दोनों में कुछ भी अन्तर नहीं है। मूढ़ और दुर्बुद्धि लोग ही हम में भेद मानते हैं।

इसी प्रकार से शिव पुराण में भगवान् शिव कहते हैं—

ममैव हृदये विष्णुः विष्णोश्च हृदये ह्यहम् ।
उभयोरन्तरं यो वै न जानाति मतो मम ।।
(६/५५-५६)

मेरे हृदय में विष्णु हैं और उनके हृदय में मैं हूं। जो हम दोनों में अन्तर नहीं समझता है, वही मुझे विशेष प्रिय है।

इसी प्रकार उमादेवी भवानी ने कहा है—

परं ब्रह्म परं ज्योतिः प्रणवद्वन्द्वरूपिणी ।
अहमेवास्मि सकलं मदन्यो नास्ति कश्चन ।।
निराकारापि साकारा सर्वतत्त्वस्वरूपिणी ।
अप्रतर्क्यगुणा नित्या कार्यकारणरूपिणी ।।
कदाचिद्दयिताकारा कदाचित्पुरुषाकृतिः ।
कदाचिदुभयाकारा सर्वाकाराहमीश्वरी ।।
विरञ्चिः सृष्टिकर्ताहं जगद्धाताहमच्युतः ।
रुद्रः संहारकर्ताहं सर्वविश्वविमोहिनी ।।
(शिव० पु० उ० स० ४८/२७-३०)

मैं ही परब्रह्म, परमज्योति, प्रणवरूपिणी तथा युगल रूपधारिणी हूं। मैं ही सब कुछ हूं। मुझ से भिन्न कुछ भी पदार्थ

नहीं है। मैं निराकार होकर भी साकार हूं। सर्व-तत्त्व-स्वरूपा हूं। मेरे गुण अतर्क्य हैं। मैं नित्ये स्वरूपा तथा कार्यकारणरूपिणी हूँ। मैं ही कभी प्राणवल्लभा नारी का आकार धारण करती हूं और कभी प्राणवल्लभ पुरुष का। कभी एक साथ स्त्री और पुरुष दोनों रूपों में (अर्द्धनारीश्वर रूप में) प्रकट होती हूं। मैं सर्वरूपिणी ईश्वरी हूं। मैं ही सृष्टि-कर्त्ता ब्रह्मा हूं, मैं ही जगत् पालक अच्युत विष्णु हूं. और मैं ही संहारकर्त्ता रुद्र हूं और सम्पूर्ण विश्व को मोह में डालने वाली महामाया भी मैं ही हूं।

इसी प्रकार से एक महात्मा ने अपनी वाणी में कहा है--

शंकर नाहीं दूजा कोई।
एक अनेकन नांव तुम्हारे, मो पैं और न होई।।
अलख इलाही एक तूँ, तूँ ही राम रहीम।
तू ही मालिक मोहना, कैसे नांउ करीम।।१।।
सांई सिरजनहार तूँ, तूँ पावन तू पाक।
तूँ काइम करतार तूँ, तू हरि हाजिर आप।।१।।
रमिता राजिक एक तूँ, तू सारंग सुबहान।
कादिर करता एक तूँ, तू साहिब सुलतान।।३।।
अविगत अल्लह एक तूँ, गनी गुसांई एक।
अजब अनुपम आप हैं, शिव के नाम अनेक।।४।।

इसी प्रकार वेद, उपनिषद्, श्रुति, स्मृतियों में भी आया है--

असंख्याताः सहस्राणि ये रुद्रा अधिभूम्याम्।
(शुक्ल यजुर्वेद संहिता १६वां अध्याय का मन्त्र ५४)

नीलग्रीवाः शितिकण्ठा दिवं रुद्रा उपश्रिताः।
(शुक्ल यजुर्वेद संहिता अध्याय १६ का मन्त्र ५५)

शर्वाः--(शु० य०सं ० अ० १६ मंत्र ५७)

ये भूतनामधिपतयः.............. कपर्दिनः,(शु० य० सं० १६/५६)

रुद्रों (महादेवों) की गिनती नहीं की जा सकती। ये सभी नीलकण्ठ, भूतों के अधिपति, कपर्दी, संहार-शक्तिमान्, शर्व, भूतल-आकाश सर्वत्र ही रहते हैं। ऋग्वेद के ७वें मण्डल में ५१वें सूत्र में इनका 'त्र्यम्बक' नाम आया है।

इससे मालूम होता है कि मृत्यु के मोक्षनार्थ तथा अमृत में स्थिति के लिए इनका यजन ऋषियों ने किया है।

यह ऋग्वेद का सुप्रसिद्ध मन्त्र है।

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥

रुद्र के बहुतेरे मन्त्र ऋग्वेदादि संहिताओं में अधिकाधिक रूप में आये हैं। इसी प्रकार से श्वेताश्वतर उपनिषद् के तृतीय अध्याय में शिव-तत्त्व का उपदेश मिलता है—

एको हि रुद्रो न द्वितीयाय तस्थुर्य इमांल्लोकानी शत ईशनीभिः।

फिर आया है।

यो देवानां प्रभवश्चोद्भवश्च विश्वाधिपो रुद्रो महर्षिः।
हिरण्यगर्भं जनयामास पूर्वम्।

सर्वाननशिरोग्रीवः सर्वभूतगुहाशयः।
सर्वव्यापी स भगवांस्तस्मात्सर्वगतः शिवः॥

एक अद्वितीय रुद्र अपने शक्ति-समूह के द्वारा सब लोकों के ईश्वर हैं। ये सर्वज्ञ रुद्र देवताओं के रचयिता और पालक हैं और इन्होंने ही पहले ब्रह्मा की सृष्टि की थी। उनके मुख, मस्तक और ग्रीवा असंख्य हैं। वे ही सब प्राणियों की हृदय गुहा में अवस्थित हैं। वे ही सर्वव्यापी भगवान्-शिव हैं।

इसी प्रसंग में फिर उपनिषद् में आया है—

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः ।

इत्यादि ।

उनके हाथ नहीं हैं; परन्तु वे ग्रहण करने में समर्थ हैं; चरण नहीं हैं; किन्तु द्रुतगामी हैं; चक्षु नहीं हैं; परन्तु सर्वद्रष्टा हैं; कर्ण नहीं है, तो भी श्रवण–शक्ति–युक्त हैं। इस प्रकार समस्त श्रुति वाक्यों में शिव के निर्गुण, सगुण एवं विश्वरूप के भाव प्रदर्शित हैं।

लीला-विग्रह के अप्राकृत कर, चरण, नयन, कर्णादि को भक्त गण देखते हैं। कैवल्योपनिषद् में लिखा है।

तमादिमध्यान्तविहीनमेकं
विभुं चिदानन्दमरूपमद्भुतम् ।
उमासहायं परमेश्वरं प्रभुं
त्रिलोचनं नीलकण्ठं प्रशान्तम् ।।

वे आदि, मध्य और अन्तहीन हैं, वे रूपहीन हैं। वे एक हैं- अद्वितीय हैं, चिदानन्द हैं। वे अद्भुत हैं, देवेश हैं, वे ही उमा सहचर, त्रिलोचन, नीलकण्ठ, परमेश्वर हैं। अर्थात् जो निराकार हैं, वही साकार हैं। रूपवान् होकर भुवन मोहन हैं, इसी कारण वे अद्भुत हैं।

इसी प्रकार और भी उपनिषदों में लिखा है-

सर्वव्यापी स भगवान् शिवः । (श्वेता०)
सत्यज्ञानमनन्तं ब्रह्म ।
आनन्दं ब्रह्म । (तैत्ति०)
ईशावास्यमिदँ सर्वम् । (ईश.)
यतो वाचो निवर्तन्ते आ प्राप्य मनसा सह ।
शान्तं शिवमद्वैतम् । (तैत्ति०)

विश्व की उत्पत्ति में यह शिव ही मूल कारण है। यह शिव ही 'विश्वरूप' या 'सत्यब्रह्म' कहा जाता है। यह शिव (ईश्वर) जगत् को रचकर उसमें प्रविष्ट होता है। यह प्रविष्ट होने वाला रूप ईश्वर का विश्वचर रूप कहा जाता है, इसे वैदिक परिभाषा में 'देवसत्य' कहते हैं। यही सब जगत् का नियन्ता है। व्यवहार में, न्याय दर्शन में या उपासना शास्त्रों में यही नियन्ता 'ईश्वर' कहा गया है। ईश्वर के इस रूप की व्याप्ति सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में है, समष्टि ब्रह्माण्ड में और प्रत्येक व्यष्टि पदार्थ में यह व्यापक रूप से विराजमान हैं। ब्रह्माण्ड से बाहर भी व्याप्त रह कर ब्रह्माण्ड को अपने ही उदर में रखे हुए है।

जैसे श्वेताश्वतर उपनिषद् में कहा है।

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः
सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः
साक्षीचेता केवलो निर्गुणश्च ॥
यस्मात्परं नापरमस्ति किञ्चिद्
यस्मानणीयो न ज्यायोऽस्ति कश्चित् ।
वृक्ष इव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येक-
स्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम् ॥

आदि आदि कहते यही कह दिया है सबका शरीर यही है, सब की आत्मा यही है, यह सर्वव्यापी है, इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है, इसे ही ईश्वर(ब्रह्म) आदि नाम से कहा जाता है।

परब्रह्म भगवान् शिव के स्वरूप एवं ब्रह्मा, विष्णु, महेश व आद्याशक्ति भगवती की एकरूपता का पुराणों एवं अन्य धर्म-ग्रन्थों में अनेक दृष्टान्तों और संवाद रूप में वर्णन मिलता है। भगवान्

शिव व भगवती शिवा के तत्त्व जैसे गूढ विषय का विशद विवेचन अधिक स्पष्ट, सरल व रोचक ढंग से समझने के लिये इन्हीं में से कुछ दृष्टान्त एवं संवाद पुष्परूप–सोलह संख्या में चयन (चुन) कर प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

महेश्वर की महत्ता का प्रतिपादन

पुष्प
(१)

वायु देवता कहते हैं--महर्षियो! इस विश्व का निर्माण करने वाला कोई पति है, जो अनन्त रमणीय गुणों का आश्रय कहा गया है। वही पशुओं को पाश से मुक्त करने वाला है। उसके बिना संसार की सृष्टि कैसे हो सकती है; क्योंकि पशु अज्ञानी और पाश अचेतन है। प्रधान परमाणु आदि जितने भी जड़ तत्त्व हैं; उन सबका कर्त्ता वह पति ही है–यह बात स्वयं समझ में आ जाती है। किसी बुद्धिमान् या चेतन कारण के बिना इन जड़ तत्त्वों का निर्माण कैसे संभव है। पशु, पाश और पति का जो वास्तव में पृथक–पृथक स्वरूप है, उसे जानकर ही ब्रह्मवेत्ता पुरुष योनि से मुक्त होता है। क्षर और अक्षर–यह दोनों एक दूसरे से संयुक्त होते हैं। पति या महेश्वर ही व्यक्ताव्यक्त जगत् का भरण–पोषण करते हैं। वे ही जगत् को बन्धन से छुड़ाने वाले हैं। भोक्ता, भोग्य और प्रेरक–ये तीन ही तत्त्व जानने योग्य हैं। विज्ञ–पुरुषों के लिये इनसे भिन्न दूसरी कोई वस्तु जानने योग्य नहीं है। सृष्टि के आरम्भ में एक ही रुद्रदेव विद्यमान रहते हैं, दूसरा कोई नहीं होता। वे ही इस जगत् की सृष्टि करके इसकी रक्षा करते हैं और अन्त में सब का संहार कर डालते हैं। उन के सब ओर नेत्र हैं, सब ओर मुख हैं, सब ओर भुजाएँ हैं और सब ओर चरण हैं। ये ही सब से पहले देवताओं में ब्रह्माजी को उत्पन्न करते हैं। श्रुति कहती है कि 'रुद्रदेव' सब से श्रेष्ठ महान ऋषि हैं। मैं इन महान् अमृत स्वरूप अविनाशी पुरुष परमेश्वर को जानता हूँ। इनकी

अङ्ग-कान्ति सूर्य के समान है। ये प्रभु अज्ञानान्धकार से परे विराजमान हैं। इन परमात्मा से परे दूसरी कोई वस्तु नहीं है। इनसे अत्यन्त सूक्ष्म और इनसे अधिक महान् भी कुछ नहीं है। इनसे यह सारा जगत् परिपूर्ण है। इनके सब ओर हाथ, पैर नेत्र, मस्तक, मुख और कान हैं। ये लोक में सबको व्याप्त करके स्थित हैं। ये सम्पूर्ण इन्द्रियों के विषयों को जानने वाले हैं, परन्तु वास्तव में सब इन्द्रियों से रहित हैं। सबके स्वामी, शासक, शरणदाता और सुहृद् हैं। ये नेत्र के बिना भी देखते हैं और कान के बिना भी सुनते हैं। ये सबको जानते हैं, किन्तु इनको पूर्णरूप से जानने वाला कोई नहीं है। इन्हें परम पुरुष कहते हैं। ये अणु से भी अत्यन्त अणु और महान् से भी परम महान् हैं। ये अविनाशी महेश्वर इस जीव की हृदय गुफा में निबास करते हैं।

एक साथ रहने वाले दो पक्षी एक ही वृक्ष (शरीर) का आश्रय लेकर रहते हैं। उनमें से एक तो उस वृक्ष के कर्म रूप फलों का स्वाद ले—लेकर उपभोग करता है, किन्तु दूसरा उस वृक्ष के फल का उपभोग न करता हुआ केवल देखता रहता है। जीवात्मा इस वृक्ष के प्रति आसक्ति में डूबा हुआ है, अतः मोहित होकर शोक करता रहता है। वह जब कभी भगवत् कृपा से भक्त—सेवित परम कल्याण प्रद परमेश्वर का और उनकी महिमा का साक्षात्कार कर लेता है, तब शोक रहित हो सुखी हो जाता है। छन्द, यज्ञ, क्रतु तथा भूत, वर्तमान और भविष्य सम्पूर्ण विश्व को वह मायावी रचता है और माया से ही उसमें प्रविष्ट होकर रहता है। प्रकृति को ही माया समझना चाहिये और महेश्वर ही वह मायावी है। ये विश्वकर्मा महेश्वर ही परम देवता परमात्मा हैं, जो सब के हृदय में विराजमान हैं। उन्हें जानकर ही पुरुष परमानन्दमय अमृत का अनुभव करता है। ब्रह्मा से भी श्रेष्ठ, असीम एवं अविनाशी परमात्मा में विद्या और अविद्या दोनों

गूढ भाव से स्थित हैं। विनाशशील जडवर्ग को ही यहां अविद्या कहा गया है और अविनाशी जीव को विद्या नाम दिया गया है; जो उन दोनों विद्या और अविद्या पर शासन करते हैं, वे महेश्वर इस जगत में समष्टि भूत और इन्द्रियवर्गरूप एक एक जाल को अनेक प्रकार से रचकर इसका विस्तार करते हैं। फिर अन्त में संहार करके सबको अनेक से एक में परिणत कर देते हैं तथा पुनः सृष्टि काल में सब की पूर्ववत् रचना करके सब पर आधिपत्य करते हैं। जैसे सूर्य अकेला ही ऊपर–नीचे तथा अगल बगल की दिशाओं को प्रकाशित करता हुआ स्वयं भी देदीप्यमान होता है, उसी प्रकार भजनीय परमेश्वर अकेले ही समस्त कारण रूप पृथ्वी आदि तत्त्वों का नियमन करते हैं। श्रद्धा और भक्ति के भाव से प्राप्त होने योग्य, आश्रय रहित कहे जाने वाले, जगत् की उत्पत्ति और संहार करने वाले, कल्याण स्वरूप एवं सोलह कलाओं की रचना कर उस महादेव को जानते हैं, वे शरीर के बन्धन को सदा के लिये त्याग देते हैं अर्थात् जन्म-मृत्यु के चक्कर से छूट जाते हैं।

वे ही परमेश्वर तीनों कालों से परे हैं, निष्कल, सर्वज्ञ, त्रिगुणाधीश्वर एवं साक्षात् परात्पर ब्रह्म हैं। सम्पूर्ण विश्व उन्हीं का रूप है। वे सबकी उत्पत्ति के कारण होकर भी स्वयं अजन्मा हैं, स्तुति के योग्य हैं; प्रजाओं के पालक, देवताओं के भी देवता और सम्पूर्ण जगत् के लिए पूजनीय हैं। अपने हृदय में विराजमान उन परमेश्वर की हम उपासना करते हैं। जो काल आदि से परे हैं, जिनसे यह समस्त प्रपञ्च प्रकट होता है, जो धर्म के पालक, पाप के नाशक, भोगों के स्वामी तथा सम्पूर्ण विश्व के धाम हैं, जो ईश्वरों के भी परम महेश्वर, देवताओं के भी परम देवता तथा पतियों के भी परम पति हैं, उन भुवनेश्वरों के भी ईश्वर महादेव को हम सबसे परे जानते हैं। उनके शरीर रूप, कार्य और इन्द्रिय तथा मन रूपी करण नहीं हैं। उनके समान और उनसे अधिक भी इस जगत में कोई नहीं दिखाई देता। ज्ञान, बल और क्रिया-

रूप उनकी स्वाभाविक पराशक्ति वेदों में नाना प्रकार की सुनी गई है उन्हीं शक्तियों से इस सम्पूर्ण विश्व की रचना हुई है। उसका न कोई स्वामी है, न कोई निश्चित चिह्न है, न उस पर किसी का शासन है। वह समस्त कारणों का कारण होता हुआ ही उनका अधीश्वर भी है। उनका न कोई जन्मदाता है, न जन्म है, न जन्म के माया-मलादि हेतु ही हैं। वह एक ही सम्पूर्ण विश्व में, समस्त भूतों में, गुह्यरूप से व्याप्त है। वही सब भूतों का अन्तरात्मा और धर्माध्यक्ष कहलाता है। वह सब भूतों के अन्दर बसा हुआ सबका द्रष्टा, साक्षी, चेतन और निर्गुण है। वह एक है, कामना रहित है और बहुतों की कामना पूर्ण करने वाला ईश्वर है। सांख्य और योग अर्थात् ज्ञानयोग और निष्काम कर्मयोग से प्राप्त करने योग्य सबके कारण उन जगदीश्वर परमदेव को जानकर जीव सम्पूर्ण विश्व के स्रष्टा, सर्वज्ञ, स्वयं ही अपने प्राकट्य के हेतु, ज्ञान-स्वरूप, काल के भी स्रष्टा सम्पूर्ण दिव्य गुणों से सम्पन्न, प्रकृति और जीवात्मा के स्वामी, समस्त गुणों के शासक तथा संसार-बन्धन से छुड़ाने वाले हैं। जिन परमदेव ने सबसे पहले ब्रह्माजी को उत्पन्न किया और स्वयं उन्हें वेदों का ज्ञान दिया, अपने स्वरूप विषयक बुद्धि को प्रसन्न (विकसित) करने वाले उन परमेश्वर शिव को जानकर मैं इस संसार बन्धन से छूटने के लिये उनकी शरण में जाता हूँ।

यह वेदान्त-शास्त्र का परम गोपनीय ज्ञान है; पूर्वकल्प में मुझे इसका उपदेश किया गया था। मैंने बड़े भारी सौभाग्य से ब्रह्माजी के मुख से इस ज्ञान को पाया था। जो शम-दम से रहित हो, उसे परम उत्तम ज्ञान का उपदेश नहीं देना चाहिये। जो अपना पुत्र, सदाचारी तथा शिष्य न हो, उसे भी नहीं देना चाहिये। जिनकी परमदेव परमेश्वर में परम भक्ति है, जैसे परमेश्वर में है, वैसे ही गुरु में भी है, उस महात्मा पुरुष के हृदय में ही ये बताये हुए रहस्यमय अर्थ प्रकाशित होते हैं। अतः संक्षेप से यह

सिद्धान्त की बात सुनो। भगवान् शिव प्रकृति और पुरुष से परे हैं। वे ही सृष्टिकाल में जगत् को रचते हैं और संहार-काल में पुनः सबको आत्मसात् कर लेते हैं।

(शिव० पु० वाय० संहि० पू० खं० अध्या० ६)

अग्नि और सोम के स्वरूप का विवेचन तथा जगत् को अग्निसोमात्मकता का प्रतिपादन

पुष्प (२)

ऋषियों ने पूछा-प्रभो! पार्वती देवी का समाधान करते हुए महादेवजी ने यह बात क्यों कही कि 'सम्पूर्ण विश्व अग्नि सोमात्मक एवं वागर्थात्मक है। ऐश्वर्य का सार एक मात्र आज्ञा ही है, और आज्ञा तुम हो।' अतः इस विषय में हम क्रमशः यथार्थ बातें सुनना चाहते हैं।

वायुदेव बोले—महर्षियो! रुद्रदेव का जो घोर तेजोमय शरीर है, उसे अग्नि कहते हैं और अमृतमय सोम शक्ति का स्वरूप है; क्योंकि शक्ति का शरीर शान्तिकारक है। जो अमृत है, वह प्रतिष्ठा नामक कला है और जो तेज है, वह साक्षात् विद्या नामक कला है। सम्पूर्ण सूक्ष्म भूतों में वे ही दोनों रस और तेज हैं। तेज की वृत्ति दो प्रकार की है। एक सूर्य रूपा है और दूसरी अग्नि रूपा। इसी तरह रसवृत्ति भी दो प्रकार की है-एक सोम-रूपिणी और दूसरी जल रूपिणी। तेज विद्युत आदि के रूप में उपलब्ध होता है तथा रस मधुर आदि के रूप में। तेज और रस के भेदों ने ही इस चराचर जगत् को धारण कर रखा है। अग्नि से अमृत की उत्पत्ति होती है और अमृतस्वरूप घी से अग्नि की वृद्धि होती है, अतएव अग्नि और सोम को दी हुई आहुति जगत् के लिये हितकारक होती है। शस्य-सम्पत्ति उत्पादन करती है। वर्षा शस्य को बढ़ाती है इस प्रकार वर्षा से ही हविष्य का प्रादुर्भाव होता है, जिससे यह अग्नि-सोमात्मक जगत् टिका हुआ है। अग्नि

वहाँ तक ऊपर को प्रज्वलित होता है, जहाँ तक सोम सम्बन्धी परम अमृत विद्यमान है; और जहाँ तक अग्नि का स्थान है, वहाँ तक सोम सम्बन्धी अमृत नीचे झरता है। इसलिए कालाग्नि नीचे है और शक्ति ऊपर। जहाँ तक अग्नि है, उसकी गति ऊपर की ओर है और जो जल का आप्लावन है, उसकी गति नीचे की ओर है। आधार-शक्ति ने ही इस ऊर्ध्वगामी–कालाग्नि को धारण कर रखा है तथा निम्नगामी सोम शिव–शक्ति के आधार पर प्रतिष्ठित है। शिव ऊपर है और शक्ति नीचे तथा शक्ति ऊपर है और शिव नीचे। इस प्रकार शिव और शक्ति ने यहां सब कुछ व्याप्त कर रखा है। बारंबार अग्नि द्वारा जलाया हुआ जगत् भस्मसात् हो जाता है। यह अग्नि का वीर्य है। भस्म को ही अग्नि का वीर्य कहते हैं। जो इस प्रकार भस्म को श्रेष्ठ जानकर 'अग्निः' इत्यादि मन्त्रों द्वारा भस्म से स्नान करता है, वह बंधा हुआ जीव पाश से मुक्त हो जाता है। अग्नि के वीर्य-रूप भस्म को सोम ने अयोग-युक्ति के द्वारा फिर आप्लावित किया; इसलिये वह प्रकृति के अधिकार में चला गया। यदि योग-युक्ति से शाक्त अमृत वर्षा के द्वारा उस भस्म का सब ओर आप्लावन हो तो वह प्रकृति के अधिकारों को निवृत्त कर देता है। अतः इस तरह का अमृत प्लावन सदा मृत्यु पर विजय पाने के लिये ही होता है। शिवाग्नि के साथ शक्ति सम्बन्धी अमृत का स्पर्श होने पर जिसने अमृत का आप्लावन प्राप्त कर लिया, उसकी मृत्यु कैसे हो सकती है। जो अग्नि के इस गुह्य स्वरूप को तथा पूर्वोक्त अमृतप्लावन को ठीक ठीक जानता है वह अग्नि-सोमात्मक जगत् को त्याग कर फिर यहां जन्म नहीं लेता। जो शिवाग्नि से शरीर को दग्ध करके शक्ति स्वरूप सोमामृत से योग-माया के द्वारा इसे आप्लावित करता है, वह अमृत हो जाता है। इसी अभिप्राय को हृदय में धारण करके महादेवजी ने इस सम्पूर्ण जगत् को अग्नि–सोमात्मक कहा था। उनका वह कथन सर्वथा उचित है।

(शिव पु० वाय० संहि० पू० ख० अध्या० २८)

जगत् 'वाणी और अर्थरूप' है— इसका प्रतिपाद

पुष्प
(३)

वायुदेवता कहते हैं—महर्षियो ! अब यह बता रहा हूँ कि जगत् की वागर्थात्मकता की सिद्धि कैसे की गई है। छः अध्वाओं (मार्गों) का सम्यक् ज्ञान मैं संक्षेप से ही करा रहा हूं, विस्तार से नहीं। कोई भी ऐसा अर्थ नहीं है, जो बिना शब्द का हो और कोई भी ऐसा शब्द नहीं है जो बिना अर्थ का हो। अतः समयानुसार सभी शब्द सम्पूर्ण अर्थों के बोधक होते हैं। प्रकृति का यह परिणाम शब्द-भावना और अर्थ-भावना के भेद से दो प्रकार का है। उसे परमात्मा शिव तथा पार्वती की प्राकृत मूर्ति कहते हैं। उनकी जो शब्द मयी विभूति है, उसे विद्वान् तीन प्रकार की बताते हैं- स्थूला, सूक्ष्मा और परा। स्थूला वह है जो कानों को प्रत्यक्ष सुनाई देती है; जो केवल चिन्तन में आती है, वह सूक्ष्मा कही गई है और जो चिन्तन की भी सींमा से परे है, उसे परा कहा गया है। वह शक्ति-स्वरूपा है। वही शिव तत्त्व के आश्रित रहने वाली 'परा-शक्ति' कही गई है। ज्ञान-शक्ति के संयोग से वही इच्छा की उपोद्बलिका (उसे दृढ करने वाली) होती है। वह सम्पूर्ण शक्तियों की समष्टि रूपा है। वही शक्ति तत्त्व के नाम से विख्यात ही समस्त कार्य समूह्-की मूल प्रकृति मानी गयी है। उमी को कुण्डलिनी कहा गया है। वही विशुद्धाध्व परामाया है। वह मूलतः विभाग रहित होती हुई भी छः अध्वाओं के रूप में विस्तार को प्राप्त होती है। उन छः अध्वाओं में से तीन तो शब्दात्मक हैं और तीन अर्थात्मक बताये गये हैं। सभी पुरुषों को आत्म शुद्धि के अनुरूप सम्पूर्ण तत्त्वों के विभाग से लय और भोग के अधिकार प्राप्त होते हैं। वे सम्पूर्ण तत्त्व कलाओं द्वारा यथा योग्य प्राप्त हैं। परा प्रकृति के जो आदि में पांच प्रकार के परिणाम होते हैं; वे ही निवृत्ति आदि कलाएं हैं। मंत्राध्वा, पदाध्वा और

वर्णाध्वा—ये तीन अध्वा शब्द से सम्बन्ध रखने वाले हैं। इन सब में भी परस्पर व्याप्य-व्यापक भाव बताया जाता है। सम्पूर्ण मन्त्र पदों से व्याप्त हैं; क्योंकि वह वाक्य रूप हैं। सम्पूर्ण पद भी वर्णों से व्याप्त हैं; क्योंकि विद्वान् पुरुष वर्णों के समूह को ही पद कहते हैं। वे वर्ण भी भुवनों से व्याप्त हैं; क्योंकि उन्हीं में उनकी उपलब्धि होती है। भुवन भी तत्त्वों के समूह द्वारा बाहर-भीतर से व्याप्त हैं; क्योंकि उनकी उत्पत्ति ही तत्त्वों से हुई है। उन कारणभूत तत्त्वों से ही उनका आरम्भ हुआ है। अनेक भुवन उनके अन्दर से ही प्रकट हुए हैं। उनमें से कुछ तो पुराणों में प्रसिद्ध हैं। अन्य भुवनों का ज्ञान शिव-सम्बन्धी आगम से प्राप्त करना चाहिये। कुछ तत्त्व सांख्य और योग शास्त्रों में भी प्रसिद्ध हैं।

शैव शास्त्रों में प्रसिद्ध तथा दूसरे-दूसरे भी जो तत्त्व हैं; वे सब के सब कलाओं द्वारा यथायोग्य व्याप्त हैं। परा प्रकृति के जो आदि काल में पांच-परिणाम हुए, वे ही निवृत्ति आदि कलाएँ हैं। वे पांच कलाएँ उत्तरोत्तर तत्त्वों से व्याप्त हैं। अतः परा शक्ति सर्वत्र व्यापक है। वह विभाग रहित होकर भी छः अध्वाओं के रूप में विभक्त है। शक्ति से लेकर पृथ्वीतत्त्वपर्यन्त सम्पूर्ण तत्त्वों का प्रादुर्भाव शिव तत्त्व से हुआ है। अतः जैसे घड़े आदि मिट्टी से व्याप्त हैं, उसी प्रकार वे सारे तत्त्व एक मात्र-शिव से ही व्याप्त हैं। जो छः अध्वाओं से प्राप्त होने वाला है, वही शिव का परम धाम है। पांच तत्त्वों के शोधन से व्यापिका और अव्यापिका शक्ति जानी जाती है। निवृत्ति कला के द्वारा रुद्रलोक पर्यन्त-ब्रह्माण्ड की स्थिति का शोधन होता है। प्रतिष्ठा कला द्वारा उससे भी ऊपर जहां तक अव्यक्त की सीमा है, वहां तक शोध की जाती है। मध्यवर्तिनी विद्या कला द्वारा उससे भी ऊपर विद्येश्वर पर्यन्त स्थान का शोधन होता है। शान्तिकला द्वारा उससे भी ऊपर के स्थान का तथा शान्त्यतीता कला के द्वारा अध्वा के

अन्त तक का शोधन हो जाता है। उसी को 'परम व्योम' कहा गया है।

ये पांच तत्त्व बताये गये, जिनसे सम्पूर्ण जगत् व्याप्त है। साधकों को यह सब कुछ देखना चाहिये। जो अध्वा की व्याप्ति को न जानकर शोधन करना चाहता है, वह शुद्धि से वञ्चित रह जाता है, उसके फल को नहीं पा सकता। उसका सारा परिश्रम व्यर्थ, केवल नरक की ही प्राप्ति कराने वाला होता है। शक्तिपात का संयोग हुए बिना तत्त्वों का ठीक-ठीक ज्ञान नहीं हो सकता। उनकी व्याप्ति और वृद्धि का ज्ञान भी असम्भव है। शिव की जो चित्स्वरूपा परमेश्वरी परा शक्ति है, वही आज्ञा है। उस कारण रूपा आज्ञा के सहयोग से ही शिव सम्पूर्ण शिव के अधिष्ठाता होते हैं। विचार करके देखा जाय तो आत्मा में कभी विकार नहीं होता। यह विकार की प्रतीति माया मात्र है, न तो बन्धन है और न उस बन्धन से छुटकारा दिलाने वाली कोई मुक्ति है। शिव की जो अव्यभिचारिणी परा शक्ति है, वही सम्पूर्ण ऐश्वर्य की पराकाष्ठा है। वह उन्हीं के समान धर्मवाली है और विशेषतः उनके उन-उन विलक्षण भावों से युक्त है। उसी शक्ति के साथ गृहस्थ बने हुए हैं। वह सदा उन शिव के ही साथ उनकी गृहिणी बनकर रहती हैं। जो प्रकृति-जन्य कार्य रूप है, वही उन शिव दम्पती की सन्तान है। शिव कर्ता हैं और शक्ति कारण। यही उन दोनों का भेद है। वास्तव में एक मात्र साक्षात् शिव ही दो रूपों में स्थित हैं। कुछ लोगों का कहना है कि स्त्री और पुरुष रूप में ही उनका भेद है। अन्य लोग कहते हैं कि पराशक्ति शिव में नित्य समवेत है। जैसे प्रभा सूर्य से भिन्न नहीं है, उसी प्रकार चित्स्वरूपिणी पराशक्ति शिव से अभिन्न है। यही सिद्धान्त है। अतः शिव परम कारण हैं, उनकी आज्ञा ही परमेश्वरी है। उसी से प्रेरित होकर शिव की अविनाशिनी मूल प्रकृति कार्य भेद से महामाया, माया और त्रिगुणात्मिक प्रकृति-इन तीन रूपों

में स्थित हो छः अध्वाओं को प्रकट करती है। वह छः प्रकार का अध्वा वागर्थमय है, वही सम्पूर्ण जगत् के रूप में स्थित है; सभी–शास्त्र-समूह इसी भाव का विस्तार से प्रतिपादन करते हैं।

(शिव पु॰ वाय॰ संहि॰ पूर्वख अध्या॰ २६)

ऋषियों के प्रश्न का उत्तर देते हुए वायुदेव के द्वारा शिव के स्वतन्त्र एवं सर्वानुग्राहक स्वरूप का प्रतिपादन

पुष्प
(४)

ऋषियों ने कई कारण दिखाकर पूछा—वायुदेव! यदि शिव सदा शान्त भाव से रहकर ही सब पर अनुग्रह करते हैं तो सबकी अभिलाषाओं को एक साथ ही पूर्ण क्यों नहीं कर देते? जो सब कुछ करने में समर्थ होगा, वह सब को एक साथ ही बन्धन मुक्त क्यों नहीं कर सकेगा? यदि कहें अनादि काल से चले आने वाले सबके विचित्र कर्म अलग–अलग हैं; अतः सबको एक समान फल नहीं मिल सकता तो ठीक नहीं है; क्योंकि कर्मों की विचित्रता भी यहां नियामक नहीं हो सकती। कारण कि वे कर्म भी ईश्वर के कराने से ही होते हैं। इस विषय में बहुत कहने से क्या लाभ। उपर्युक्त रूप से विभिन्न युक्तियों द्वारा फैलायी गयी नास्तिकता जिस प्रकार शीघ्र ही निवृत्त हो जाय, वैसा उपदेश दीजिये।

वायुदेव ने कहा—ब्राह्मणो! आप लोगों ने युक्तियों से प्रेरित होकर जो संशय उपस्थित किया है, वह उचित ही है; क्योंकि किसी बात को जानने की इच्छा अथवा तत्त्वज्ञान के लिये उठाया गया प्रश्न साधु बुद्धिवाले पुरुषों में नास्तिकता का उत्पादन नहीं कर सकता। मैं इस विषय में ऐसा प्रमाण प्रस्तुत करूंगा, जो सत्पुरुषों के मोह को दूर करने वाला है। असत् पुरुषों का जो अन्यथा भाव होता है, उसमें प्रभु शिव की कृपा का अभाव ही कारण है। परि पूर्ण परमात्मा शिव के परम अनुग्रह के बिना कुछ भी कर्त्तव्य नहीं है, ऐसा निश्चित किया गया है। परानुग्रह कर्म

में स्वभाव ही पर्याप्त (पूर्णतः समर्थ) है; अन्यथा निःस्वभाव पुरुष किसी पर अनुग्रह नहीं कर सकता। पशु और पाशरूप सारा जगत् ही पर कहा गया है। यह अनुग्रह का पात्र है। पर का अनुगृहीत करने के लिये पति की आज्ञा का समन्वय आवश्यक है। पति आज्ञा देने वाला है, वही सदा सब पर अनुग्रह करता है। उस अनुग्रह के लिए ही आज्ञा-रूप अर्थ को स्वीकार करने पर शिव परतन्त्र कैसे कहे जा सकते हैं। अनुग्राहक की अपेक्षा न रखकर कोई भी अनुग्रह सिद्ध नहीं हो सकता। अतः स्वातन्त्र-शब्द के अर्थ की अपेक्षा न रखना ही अनुग्रह का लक्षण है। जो अनुग्राह्य है, वह परतन्त्र माना जाता है; क्योंकि पति के अनुग्रह के बिना उसे भोग और मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती। जो मूर्त्यात्मा हैं, वे भी अनुग्रह के पात्र हैं; क्योंकि उनसे भी शिव की निवृत्ति नहीं होती। वे भी शिव की आज्ञा के बाहर नहीं हैं। यहाँ कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो शिव की आज्ञा के अधीन न हो। सकल (सगुण या साकार) होने पर भी जिसके द्वारा हमें निष्कल (निर्गुण या निराकार) शिव की प्राप्ति होती है, उस मूर्ति या लिंग के रूप में साक्षात् शिव ही विराज रहे हैं। वह 'शिव की मूर्ति है' यह बात तो उपचार से कही जाती है। जो साक्षात् निष्कल तथा परम कारण रूप शिव हैं; वे किसी के द्वारा भी साकार अनुभव से उपलक्षित नहीं होते, ऐसी बात नहीं है। यहाँ प्रमाणगम्य होना उनके स्वभाव का उपपादक नहीं है। प्रमाण अथवा प्रतीक मात्र से अपेक्षा बुद्धि का उदय नहीं होता। वे परम तत्त्व के उपलक्षण मात्र हैं, इसके सिवा उनका और कोई अभिप्राय नहीं है। कोई न कोई मूर्ति ही आत्मा का साक्षात् उपलक्षण होती है। 'शिव की मूर्ति है' इस कथन का अभिप्राय यह है कि उस मूर्ति के रूप में परम शिव विराजमान हैं। मूर्ति उनका उपलक्षण है। जैसे काष्ठ आदि आलम्बन का आश्रय लिये बिना केवल अग्नि कहीं उपलब्ध नहीं होती। उसी प्रकार शिव भी मूर्त्यात्मा में आरूढ

हुए बिना उपलब्ध नहीं होते। यही वस्तु स्थिति है। जैसे किसी से यह कहने पर कि 'तुम आग ले आओ' उसकेद्वारा जलती हुई लकड़ी आदि के सिवा साक्षात् अग्नि नहीं लाई जाती, उसी प्रकार शिव का पूजन भी मूर्ति रूप में ही हो सकता है, अन्यथा नहीं। इसलिये पूजा आदि में 'मूर्त्यात्मा' की परिकल्पना होती है; क्योंकि मूर्त्यात्मा के प्रति जो कुछ किया जाता है, वह साक्षात् शिव के प्रति किया गया ही माना गया है। लिङ्ग आदि में विशेषतः अर्चा-विग्रह में जो पूजन कृत्य होता है, वह भगवान् शिव का ही पूजन है। उन-उन मूर्तियों के रूप में शिव की भावना करके हम लोग शिव की ही उपासना करते हैं; उसी प्रकार मूर्त्यात्मा में स्थित शिव हम पशुओं पर अनुग्रह करते हैं। परमेष्ठी शिव ने लोकों पर अनुग्रह करने के लिए ही सदाशिव आदि सम्पूर्ण-मूर्त्यात्माओं को अधिष्ठित-अपनी आज्ञा में रखकर अनुगृहीत किया है।

भगवान् शिव सब पर अनुग्रह ही करते हैं, किसी का निग्रह नहीं करते, क्योंकि निग्रह करने वाले लोगों में जा दोष होते हैं, वे शिव में असम्भव हैं। ब्रह्मा आदि के प्रति जो निग्रह देखे गये हैं, वे भी श्रीकण्ठमूर्ति शिव के द्वारा लोक हित के लिये ही किये गये हैं। विद्वानों की दृष्टि में निग्रह भी स्वरूप से दूषित नहीं है। (जब वह राग-द्वेष से प्रेरित होकर किया जाता है, तभी निन्दनीय माना जाता है।) इसलिये दण्डनीय अपराधियों को राजाओं की ओर से मिले हुए दण्ड की प्रशंसा की जाती है। यदि साधु की रक्षा करनी है तो असाधु का निवारण करना ही होगा। पहले साम आदि तीन उपायों से असाधु के निवारण का प्रयत्न किया जाता है यदि यह प्रयत्न सफल नहीं हुआ तो अन्त में चौथे उपाय दण्ड का ही आश्रय लिया जाता है। यह दण्डान्त अनुशासन लोक-हित के लिए की किया जाना चाहिये। यही उसके औचित्य को परिलक्षित कराता है। यदि अनुशासन इसके विपरीत हो तो उसे अहितकर कहते हैं। जो सदा हित में

में ही रहने वाले हैं, उन्हें ईश्वर का दृष्टान्त अपने सामने रखना चाहिये। (ईश्वर केवल दुष्टों को ही दण्ड देते हैं, इस लिये निर्दोष कहे जाते हैं।) अतः जो दुष्टों को ही दण्ड देता है, वह उस निग्रह कर्म को लेकर सत्पुरुषों द्वारा लाञ्छित कैसे किया जा सकता है? लोक में जहाँ कहीं भी निग्रह होता है, वह यदि विद्वेष पूर्वक न हो, तो श्रेष्ठ माना जाता है। जो पिता पुत्र को दण्ड देकर उसे अधिक शिक्षित बनाता है, वह उससे द्वेष नहीं करता।

शिव की आज्ञा का पालन ही हित है और जो हित है, वही उनका अनुग्रह है। अतएव सब को हित में नियुक्त करने वाले शिव सब पर अनुग्रह करने वाले कहे गये हैं। जो उपकार शब्द का अर्थ है, उसे भी अनुग्रह ही कहा गया है; क्योंकि उपकार भी हित रूप ही होता है। अतः सबका उपकार करने वाले शिव सर्वानुग्राहक हैं। शिव के द्वारा जड़ चेतन सभी सदा हित में ही नियुक्त होते हैं; परन्तु सब को जो एक साथ और एक समान हित में उपलब्धि नहीं होती, इसमें उनका स्वभाव ही प्रतिबन्धक है। जैसे सूर्य अपनी किरणों द्वारा सभी कमलों को विकास के लिए प्रेरित करते हैं; परन्तु वे अपने अपने स्वभाव के अनुसार एक साथ और एक समान विकसित नहीं होते। स्वभाव भी पदार्थों के भावी अर्थ का कारण होता है; किन्तु वह नष्ट होते हुए अर्थ को कर्त्ताओं के लिये सिद्ध नहीं कर सकता। जैसे अग्नि का संयोग सुवर्ण को ही पिघलाता है, कोयले या अङ्गार को नहीं, उसी प्रकार भगवान् शिव परिपक्व मल वाले पशुओं को ही बन्धन मुक्त करते हैं, दूसरों को नहीं जो वस्तु जैसी होनी चाहिये, वैसी वह स्वयं नहीं बनती। वैसी बनाने के लिए कर्त्ता की भावना का सहयोग होना आवश्यक है। कर्त्ता की भावना के बिना ऐसा होना सम्भव नहीं है। अतः कर्त्ता स्वतन्त्र होता है।

सब पर अनुग्रह करने वाले शिव जिस तरह स्वभाव से निर्मल हैं, उसी तरह 'जीव' संज्ञाधारण करने वाली आत्माएँ

स्वभावतः मलिन होती हैं। यदि ऐसी बात न होती तो वे जीव क्यों नियमपूर्वक संसार में भटकते और शिव क्यों संसार बन्धन से परे रहते ? विद्वान पुरुष कर्म और माया के बन्धन को ही जीव का 'संसार' कहते हैं। यह बन्धन जीव को ही प्राप्त होता है, शिव को नहीं। इसमें कारण है, जीव का स्वाभाविक मल। वह कारण भूत मल जीवों का अपना स्वभाव ही है, आगन्तुक नहीं है। यदि आगन्तुक होता तो किसी को भी किसी भी कारण से बन्धन प्राप्त हो जाता। जो यह हेतु है, वह एक है; क्योंकि सब जीवों का स्वभाव एक-सा है। यद्यपि सब में एकसा आत्मभाव है, तो भी मल के परिपाक और अपरिपाक के कारण कुछ जीव बद्ध हैं और कुछ बन्धन से मुक्त हैं। बद्ध जीवों में भी कुछ लोग लय और भोग के अधिकार के अनुसार उत्कृष्ट और निकृष्ट होकर ज्ञान और ऐश्वर्य आदि की विषमता को प्राप्त होते हैं अर्थात् कुछ लोग अधिक ज्ञान और ऐश्वर्य से युक्त होते हैं तथा कुछ लोग कम। कोई मूर्त्यात्मा होते हैं और कोई साक्षात् शिव के समीप विचरने वाले होते हैं। मूर्त्यात्माओं में कोई तो शिव स्वरूप होकर छहों अध्वाओं के ऊपर स्थित होते हैं। कोई अध्वाओं के मध्यमार्ग में महेश्वर होकर रहते हैं और कोई निम्न भाग में रुद्र रूप से स्थित होते हैं। शिव के समीपवर्ती स्वरूप में भी माया से परे होने के कारण उत्कृष्ट, मध्यम और निकृष्ट के भेद से तीन श्रेणियाँ होती हैं— वहाँ निम्न स्थान में आत्मा की स्थिति है, मध्यम स्थान में अन्तरात्मा की स्थिति है। ये ही क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर कहलाते हैं। कोई वसु (जीव) परमात्मपद का आश्रय लेने वाले होते हैं, कोई अन्तरात्मपद पर और आत्मपद पर प्रतिष्ठित होते हैं।

भगवान् शिव तो अनायास ही समस्त पशुओं को बन्धन से मुक्त करने में समर्थ हैं। फिर वे उन्हें-बन्धन में डाले रख कर क्यों दुख देते हैं ? यहां ऐसा विचार या सन्देह नहीं करना चाहिये;

क्योंकि सारा संसार दुःख रूप ही है, ऐसा विचार वालों का निश्चित सिद्धान्त है। जो स्वभावतः दुःखमय है वह दुःख–रहित कैसे हो सकता है। स्वभाव में उलटफेर नहीं हो सकता। वैद्य की दवा से रोग अरोग नहीं होता। वह रोग पीड़ित मनुष्य का अपनी दवा से सुखपूर्वक उद्धार कर देता है। इसी प्रकार जो स्वभावतः मलिन और स्वभाव से ही दुःखी हैं, उन पशुओं को अपनी आज्ञा–रूपी औषधि देकर शिव दुःख से छुड़ा देते हैं। रोग होने में वैद्य कारण नहीं है, परन्तु संसार की उत्पत्ति में शिव कारण हैं। अतः रोग और वैद्य के दृष्टान्त से शिव और संसार के दृष्टान्त में समानता नहीं है। इसलिये इसके द्वारा शिव पर दोषारोप नहीं किया जा सकता। जब दुःख स्वभाव सिद्ध है, तब शिव उसके कारण कैसे हो सकते हैं। जीव में जो स्वभाविक मल है, वही उन्हें संसार के चक्कर में डालता है। संसार का कारण भूत जो मल–अचेतन माया आदि है, वह शिव का सांनिध्य प्राप्त किये बिना स्वयं चेष्टाशील नहीं हो सकता। जैसे चुम्बकमणि लोहे का सांनिध्य पाकर ही उपकारक होता है– लोहे को खींचता है, उसी प्रकार शिव भी जड़माया आदि का सांनिध्य पाकर ही उसके उपकारक होते हैं; उसे सचेष्ट बनाते हैं। उनके विद्यमान सांनिध्य को अकारण हटाया नहीं जा सकता। अतः जगत् के लिये जो सदा अज्ञात है, वे शिव ही इसके अधिष्ठता हैं। शिव के बिना यहाँ कोई भी प्रवृत्त (चेष्टाशील) नहीं होता, उनकी आज्ञा के बिना एक पत्ता भी नहीं हिलता। उनसे प्रेरित होकर ही यह सारा जगत् विभिन्न प्रकार की चेष्टाएं करता है, तथापि वे शिव कभी मोहित नहीं होते। उनकी आज्ञा रूपिणी जो शक्ति है, वही सबका नियन्त्रण करती है। उनका सब ओर मुख है। उसी ने सदा इस सम्पूर्ण दृश्य प्रपञ्च का विचार किया है, तथापि उसके दोष से शिव दूषित नहीं होते। जो दुर्बुद्धि मानव मोहवश इसके विपरीत मान्यता रखता है, वह नष्ट हो हो जाता है। शिव की शक्ति के वैभव से ही संसार चलता है, तथापि इससे शिव दूषित नहीं होते।

इसी समय आकाश से शरीर रहित वाणी सुनायी दी—'सत्यम् ओ३म् अमृतमय सौम्यम्'

इन पदों का सम्मिलित अर्थ इस प्रकार होता है—हाँ, यह सत्य है, अमृतमय है और सौम्य है।

इन पदों का वहां स्पष्ट उच्चारण हुआ, उसे सुनकर सब लोग बहुत प्रसन्न हुए। उनके समस्त संशयों का निवारण हो गया तथा उन मुनियों ने विस्मित हो प्रभु पवन देव को प्रणाम किया। इस प्रकार उन मुनियों को संदेह रहित करके भी वायुदेव ने यह नहीं माना कि उन्हें पूर्ण ज्ञान हो गया। 'उनका ज्ञान अभी प्रतिष्ठित नहीं हुआ है' ऐसा समझ कर ही वे इस प्रकार बोले।

वायुदेवता ने कहा—मुनियो! परोक्ष और अपरोक्ष के भेद से ज्ञान दो प्रकार का माना गया है। परोक्ष ज्ञान को अस्थिर कहा जाता है और अपरोक्ष ज्ञान को सुस्थिर। युक्तिपूर्ण उपदेश से जो ज्ञान होता है, उसे विद्वान् पुरुष परोक्ष कहते हैं। वही श्रेष्ठ अनुष्ठान से अपरोक्ष हो जायगा। अपरोक्ष ज्ञान के विना मोक्ष नहीं होता, ऐसा निश्चय करके तुम लोग आलस्य रहित हो श्रेष्ठ अनुष्ठान की सिद्धि के लिये प्रयत्न करो।

(शिव पु० वाय० संहिता पूर्वखं • अध्याय ३२)

परम धर्म प्रतिपादन, शैवागम के अनुसार पाशुपत ज्ञान तथा उसके साधनों का वर्णन

पुष्प
(५)

ऋषियों ने पूछा—वायुदेव! वह कौनसा श्रेष्ठ अनुष्ठान है, जो मोक्ष स्वरूप ज्ञान को अपरोक्ष कर देता है? उसको और उसके साधनों को आज आप हमें बताने की कृपा करें।

वायु ने कहा—भगवान् शिव का बताया हुआ जो परम धर्म है, उसी को श्रेष्ठ अनुष्ठान कहा गया है। उसके सिद्ध होने पर

साक्षात् मोक्षदायक शिव अपरोक्ष हो जाते हैं। वह परम धर्म पाँचों पर्वों के कारण क्रमशः पांच प्रकार का जानना चाहिए। उन पर्वों के नाम हैं–क्रिया, तप, जप, ध्यान और ज्ञान। ये उत्तरोत्तर श्रेष्ठ हैं। उन उत्कृष्ट साधनों से सिद्ध हुआ धर्म, परमधर्म माना गया है। जहां परोक्ष ज्ञान भी अपरोक्ष ज्ञान होकर मोक्षदायक होता है। वैदिक धर्म दो प्रकार के बताये गये हैं–परम और अपरम। धर्म शब्द से प्रतिपाद्य अर्थ में हमारे लिये श्रुति ही प्रमाण है। योग पर्यन्त जो परम धर्म है, वह श्रुतियों के शिरोभूत उपनिषद् में वर्णित है और जो अपरम धर्म है, वह श्रुति के मुखभाग मे अर्थात् संहिता मन्त्रों द्वारा प्रतिपादित हुआ है। जिनमें पशु (बद्ध) जीवों का अधिकार नहीं है, वह बेदान्त–वर्णित धर्म 'परम धर्म' माना गया है उससे भिन्न जो यज्ञ–यागादि हैं, उनमें सव का अधिकार होने से वह साधारण या 'अपरमधर्म' कहलाता है। जो अपरम धर्म है, वही परम धर्म का साधन है। धर्म–शास्त्रादि के द्वारा उसका सम्यक् रूप से विस्तार पूर्वक साङ्गोपाङ्ग निरूपण हुआ है। भगवान् शिव के द्वारा प्रतिपादित जो परम धर्म है, उसी का नाम श्रेष्ठ अनुष्ठान है। इतिहास और पुराणों द्वारा उसका किसी प्रकार विस्तार हुआ है। परन्तु शैव–शास्त्रों द्वारा उसके विस्तार का साङ्गोपाङ्ग निरूपण किया गया है। वहीं उसके स्वरूप का सम्यक् रूप से प्रतिपादन हुआ है। साथ ही उसके संस्कार और अधिकार भी सम्यक् रूप से विस्तार पूर्वक बताये गये हैं। शैव आगम के दो भेद हैं–श्रौत और अश्रौत। जो श्रुति के सार तत्त्व से सम्पन्न है वह श्रौत है; और स्वतंत्र है, वह अश्रौत माना है। स्वतन्त्र शैवागम पहले दस प्रकार का था, फिर अठारह प्रकार का हुआ। वह कायिका आदि संज्ञाओं से सिद्ध होकर सिद्धान्त नाम धारण करता है। श्रुतिसारमय जो शैव शास्त्र हैं; उसका विस्तार सौ करोड़ श्लोकों में किया गया है। उसी में उत्कृष्ट 'पाशुपत व्रत' और 'पाशुपत ज्ञान' का वर्णन

किया गया है। युग-युग में होने वाले शिष्यों को उसका उपदेश देने के लिये भगवान् शिव स्वयं ही योगाचार्य रूप से जहाँ-तहाँ अवतीर्ण हो उसका प्रचार करते हैं।

इस शैव-शास्त्र को संक्षिप्त करके उसके सिद्धान्त का प्रवचन करने वाले मुख्यतः चार महर्षि हैं—रुरु, दधीचि, अगस्त्य, और महायशस्वी उपमन्यु। उन्हें संहिताओं का प्रवर्तक 'पाशुपत' जानना चाहिये। उनकी सन्तान-परम्परा में सैंकडों-हजारों गुरुजन हो चुके हैं। पाशुपत सिद्धान्त में जो परम धर्म बताया गया है, वह चर्या, विद्या, क्रिया और योग इन चार नामों से चार प्रकार का माना गया है। इन चारों में जो पाशुपत योग है, वह दृढता पूर्वक शिव का साक्षात्कार कराने वाला है। इसलिये पाशुपत योग ही श्रेष्ठ अनुष्ठान माना गया है। उसमें भी ब्रह्माजी ने जो उपाय बताया है, उसका वर्णन किया जाता है। भगवान् शिव के द्वारा परिकल्पित जो 'नामाष्टकमय योग' है उसके द्वारा सहसा 'शैवी प्रज्ञा' का उदय होता है। उस प्रज्ञा द्वारा पुरुष शीघ्र ही सुस्थिर परम ज्ञान प्राप्त कर लेता है। जिसके हृदय में वह ज्ञान प्रतिष्ठित हो जाता है उसके ऊपर भगवान् शिव प्रसन्न होते हैं। उनके कृपा-प्रसाद से वह परम योग सिद्ध होता है, जो शिव का अपरोक्ष दर्शन कराता है। शिव के अपरोक्ष ज्ञान से संसार-बन्धन का कारण दूर हो जाता है। इस प्रकार संसार से मुक्त हुआ पुरुष शिव के समान हो जाता है। यह ब्रह्माजी का बताया हुआ उपाय है। उसी का पृथक वर्णन करते हैं। शिव, महेश्वर, रुद्र, विष्णु, पितामह (ब्रह्मा), संसार वैद्य, सर्वज्ञ और परमात्मा ये मुख्यतः आठ नाम हैं। ये आठों मुख्य नाम शिव के प्रतिपादक हैं। इनमें से आदि पाँच नाम क्रमशः शान्त्यतीता आदि पाँच कलाओं से सम्बन्ध रखते हैं और उन पांच उपाधियों को ग्रहण करने से सदाशिव आदि के बोधक होते हैं। उपाधि की निवृत्ति होने पर इन भेदों को निवृत्ति हो जाती है। वह पद ही नित्य है। किन्तु उस पद पर प्रतिष्ठित होने वाले अनित्य

कहे गये हैं। पदों का परिवर्तन होने पर पद वाले पुरुष मुक्त हो जाते हैं। परिवर्तन के अनन्तर पुनः दूसरे आत्माओं को उस पद की प्राप्ति बतायी जाती है और उन्हीं के आदि पांच नाम नियत होते हैं। उपादान आदि योग से अन्य तीन नाम (संसार–वंद्य, सर्वज्ञ, और परमात्मा) भी त्रिविध उपाधि का प्रतिपादन करते हुए शिव में ही अनुगत होते हैं।

अनादि मल का संसर्ग उनमें पहले से ही नहीं है तथा वे स्वभावतः अत्यन्त शुद्ध स्वरूप हैं, इसलिये 'शिव' कहलाते हैं अथवा वे ईश्वर समस्त कल्याणमय गुणों के एक मात्र घनीभूत विग्रह हैं। इसलिए शिव तत्त्व के अर्थ को जानने वाले श्रेष्ठ महात्मा उन्हें शिव कहते हैं। तेईस तत्त्वों से परे जो प्रकृति बतायी गई है, उससे भी परे पच्चीसवें तत्त्व के स्थान में पुरुष को बताया गया है, जिसे वेद के आदि में ओंकार रूप कहा गया है। ओंकार और पुरुष में वाच्य–वाचक–भाव सम्बन्ध है। उसके यथार्थ स्वरूप का ज्ञान एक मात्र वेद से ही होता है। वे ही वेदान्त में प्रतिष्ठित हैं। परन्तु वे प्रकृति से संयुक्त हैं; अतः उससे भी परे जो परम पुरुष है, उसका नाम 'महेश्वर' है; क्योंकि प्रकृति और पुरुष दोनौ की प्रवृत्ति उसी के अधीन है। अथवा यह जो अविनाशी त्रिगुणमय तत्त्व है, इसे प्रकृति समझना चाहिये। इस प्रकृति को माया कहते हैं। यह माया जिनकी शक्ति है, उन मायापति का नाम 'परमेश्वर' है। महेश्वर के सम्बन्ध से जो माया अथवा प्रकृति में क्षोभ उत्पन्न करते हैं; वे अनन्त या 'विष्णु' कहे गये हैं: वे ही कालात्मा और परमात्मा आदि नामों से पुकारे जाते हैं। उन्हीं को स्थूल और सूक्ष्म रूप भी कहा गया है। दुःख अथवा दुःख के हेतु का नाम 'सत्' है। जो प्रभु उसका द्रावण करते हैं–उसे मार भगाते हैं, उन परम कारण शिव को साधु पुरुष 'रुद्र' कहते हैं। कला, काल आदि तत्त्वों से लेकर भूतों में पृथ्वी–पर्यन्त जो छत्तीस तत्त्व हैं। उनकी गणना इस प्रकार की गई है। कला, काल, नियति,

विद्या, राग, प्रकृति और गुण ये सात तत्त्व, पञ्चतन्मात्रा, दस इन्द्रियाँ, चार अन्तःकरण, पाँच शब्द आदि विषय तथा आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी ये छत्तीस तत्त्व हैं। इन्हीं से शरीर बनता है। उस शरीर, इन्द्रिय आदि में जो तन्द्रा रहित हो व्यापक रूप से स्थित हैं, वे भगवान् शिव 'रुद्र' कहे गये हैं। जगत् के पिता रूप जो मूर्त्यात्मा हैं; उन सब के पिता के रूप में भगवान् शिव विराजमान हैं; इसलिये वे 'पितामह' कहे गये हैं। जैसे रोगों के निदान को जानने वाला वैद्य तदनुकूल उपायों और दवाओं से रोग को दूर कर देता है, उसी तरह ईश्वर लय योगाधिकार से सदा जड़मूल सहित संसार-रोग की निवृत्ति करते हैं; अतः सम्पूर्ण तत्त्वों के ज्ञाता विद्वान् उन्हें 'संसार-वैद्य कहते हैं। दस विषयों के ज्ञान के लिये दसों इन्द्रियों के होते हुए भी जीव तीनों कालों में होने वाले स्थूल-सूक्ष्म पदार्थों को पूर्ण रूप से नहीं जानते; क्योंकि माया ने ही उन्हें मल से आवृत कर दिया है। परन्तु भगवान् सदा-शिव सम्पूर्ण विषयों के ज्ञान के साधन-भूत इन्द्रियादि के न होने पर भी जो वस्तु जिस रूप में स्थित है, उसे उसी रूप में ठीक-ठीक जानते हैं। जो इन सभी उत्तम गुणों से नित्य संयुक्त होने के कारण सबके आत्मा हैं, जिनके लिये अपने से अतिरिक्त किसी दूसरे आत्मा की सत्ता नहीं है, वे भगवान शिव स्वयं ही 'परमात्मा' हैं।

आचार्य की कृपा से इन आठों नामों का अर्थ सहित उपदेश पाकर शिव आदि पांच नामों द्वारा निर्वृत्ति आदि पाँचों कलाओं की ग्रन्थिका क्रमशः छेदन और गुण के अनुसार शोधन करके गुणित उद्घात युक्त और अनिरुद्ध प्राणों द्वारा हृदय, कण्ठ, तालु, भ्रूमध्य और ब्रह्मरन्ध्र से युक्त पुर्यष्टक का भेदन करके सुषुम्णा नाड़ी द्वारा अपने आत्मा को सहस्रार चक्र के भीतर ले जाये। उसका शुभ्रवर्ण है। वह तरुण सूर्य के सदृश रक्तवर्ण केसर के द्वारा रञ्जित और अधोमुख है। उसके पचास दलों में स्थित 'अ'

से लेकर 'क्ष' तक सबिन्दु अक्षर-कर्णिका के बीच में गोलाकार चन्द्र-मण्डल है। यह चन्द्र-मण्डल छत्राकार में स्थित है। उसने एक ऊर्ध्वमुख द्वादश दल कमल को आवृत्त कर रक्खा है। उस कमल की कर्णिका में विद्युत-सदृश अकथादि त्रिकोण यन्त्र है। उस यन्त्र के चारों ओर सुधा-सागर होने के कारण वह मणिद्वीप के आकार का हो गया है। उस द्वीप के मध्य भाग में मणिपीठ है। उसके बीच में नाद-बिन्दु के ऊपर हंस-पीठ है। उस पर परम शिव विराजमान हैं। उक्त चन्द्रमण्डल के ऊपर शिव के तेज में अपने आत्मा को संयुक्त करे। इस प्रकार जीव को शिव में लीन करके शाक्त अमृत वर्षा के द्वारा अपने शरीर के अभिषिक्त होने की भावना करे। तत्पश्चात् अमृतमय विग्रह वाले अपने आत्मा को ब्रह्मरन्ध्र से उतार कर हृदय में द्वादश दल कमल के भीतर स्थित चन्द्रमा से परे श्वेत कमल पर अर्द्धनारीश्वर रूप में विराजमान मनोहर आकृति वाले निर्मल देवभक्तवत्सल महादेव शंकर का चिन्तन करे। उनकी अङ्गकान्ति शुद्ध स्फटिक मणि के समान उज्ज्वल है। वे शीतल प्रभा से युक्त और प्रसन्न हैं। इस प्रकार मन-ही-मन ध्यान करके शान्तचित्त हुआ मनुष्य शिव के आठ नामों द्वारा ही भावमय पुष्पों से उनकी पूजा करे। पूजन के अन्त में पुनः प्राणायाम करके चित्त को भली-भाँति एकाग्र रखते हुए शिव नामाष्टक का जप करे। फिर भावना द्वारा नाभि में आठ आहुतियों का हवन करके पूर्णाहुति एवं नमस्कार पूर्वक आठ पुष्प (फूल) चढ़ाकर अन्तिम अर्चना पूरी करके चुल्लू में लिये हुए जल की भांति अपने आपको शिव के चरणों में समर्पित करदे। इस प्रकार करने से शीघ्र ही मङ्गलमय पाशुपत ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है और साधक उस ज्ञान की सुस्थिरता पा लेता है। साथ ही वह परम उत्तम पाशुपत-व्रत एवं परम योग को पाकर मुक्त हो जाता है, इसमें संशय नहीं है।

(शिव पु० वाय० संहिता पू० खं० अध्याय ३२)

उपमन्यु द्वारा श्री कृष्ण को पाशुपत ज्ञान का उपदेश

पुष्प (६)

ऋषियों ने पूछा--पाशुपत ज्ञान क्या है? भगवान् शिव पशुपति कैसे हैं? और अनायास ही महान् कर्म करने वाले भगवान श्री कृष्ण ने उपमन्यु से किस प्रकार प्रश्न किया? वायुदेव! आप साक्षात् शंकर के स्वरूप हैं, इसलिये ये सब बातें बताइये। तीनों लोकों में आपके समान दूसरा कोई वक्ता इन बातों को वताने में समर्थ नहीं है।

सूतजी कहते हैं--उन महर्षियों की यह बात सुनकर वायुदेव ने भगवान् शंकर का स्मरण करके इस प्रकार उत्तर देना आरम्भ किया। वायुदेव बोले—महर्षियो! पूर्वकाल में श्रीकृष्ण रूपधारी भगवान् विष्णु ने अपने आसन पर बैठे हुए महर्षि उपमन्यु से उन्हें प्रणाम करके न्यायपूर्वक यों प्रश्न किया।

श्रीकृष्ण ने कहा—भगवान्! महादेवजी ने देवी पार्वती को जिस दिव्य पाशुपत ज्ञान तथा अपनी सम्पूर्ण विभूति का उपदेश दिया था, मैं उसी को सुनना चाहता हूँ। महादेवजी पशुपति कैसे हुए, पशु कौन कहलाते हैं? वे पशु किन पाशों से बाँधे जाते हैं; और फिर किस प्रकार उनसे मुक्त होते हैं?

महात्मा श्रीकृष्ण के इस प्रकार पूछने पर श्रीमान् उपमन्यु ने महादेवजी तथा देवी पार्वतीजी को प्रणाम करके उनके प्रश्न के अनुसार उत्तार देना आरम्भ किया।

उपमन्यु बोले—देवकीनन्दन! ब्रह्माजी से लेकर स्थावर पर्यन्त जो भी संसार के वशवर्ती चराचर प्राणी हैं, वे सबके सब भगवान शिव के पशु कहलाते हैं और उनके पति होने के कारण देवेश्वर शिव को पशुपति कहा गया है। वे पशुपति अपने पशुओं को मल और माया आदि पाशों से वांधते हैं और भक्ति

पूर्वक उनके द्वारा आराधित होने पर वे स्वयं ही उन्हें उन पाशों से मुक्त करते हैं। जो चौबीस तत्त्व हैं, वे माया के कार्य एवं गुण हैं। वे ही विषय कहलाते हैं, जीवों (पशुओं) को बाँधने वाले पाश वे ही हैं। इन पाशों द्वारा ब्रह्मा से लेकर कीट पर्यन्त समस्त पशुओं को बांधकर महेश्वर पशुपति देव उनसे अपना कार्य कराते हैं। उन महेश्वर की ही आज्ञा से प्रकृति पुरुषोचित बुद्धि को जन्म देती है। बुद्धि अहंकार को प्रकट करतो है तथा अहंकार कल्याणदायी देवाधिदेव शिव की आज्ञा से ग्यारह इन्द्रियों और पांच तन्मात्राओं को उत्पन्न करता है। तन्मात्राएँ भी उन्हीं महेश्वर के महान् शासन से प्रेरित हो क्रमशः पांच महाभूतों को उत्पन्न करती हैं। वे सब महाभूत शिव की आज्ञा से ब्रह्मा से लेकर तृण पर्यन्त देहधारियों के लिए देह की सृष्टि करते हैं, बुद्धि कर्त्तव्य का निश्चय करती है और अहंकार अभिमान करता है। चित्त चेतता है और मन संकल्प-विकल्प करता है, श्रवण आदि ज्ञानेन्द्रियां पृथक्-पृथक् शव्द आदि विषयों को ग्रहण करती हैं। वे महादेवजी की आज्ञा केवल से केवल अपने ही विषयों को ग्रहण करती हैं। वाक् आदि कर्मेन्द्रियां कहलाती हैं और शिव की इच्छा से अपने लिये नियत कर्म ही करती हैं दूसरा कुछ नहीं। शब्द आदि जाने जाते हैं, और वोलना आदि कर्म किए जाते हैं। इन सब के लिये भगवान शंकर की गुरुतर आज्ञा का उल्लङ्घन करना असम्भव है। परमेश्वर शिव के शासन से ही आकाश सर्वव्यापी होकर समस्त प्राणियों को अवकाश प्रदान करता है, वायु तत्त्व प्राण आदि नाम भेदों द्वारा वाहर भीतर के सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है।। अग्नि तत्त्व देवताओं के लिये हव्य और कव्य भोजी पितरों के लिये कव्य पहुँचाता है। साथ ही मनुष्यों के लिए पाक आदि का भी कार्य करता है। जल सव को जीवन देता है और पृथ्वी सम्पूर्ण जगत् को सदा धारण किये रहती है।

शिव की आज्ञा सम्पूर्ण देवताओं के लिये अनुल्लङ्घनीय है। उसी से प्रेरित होकर देवराज इन्द्र देवताओं का पालन, दैत्यों का

दमन और तीनों लोकों का संरक्षण करते हैं। वरुणदेव सदा जल तत्त्व के पालन और संरक्षण का कार्य संभालते हैं, साथ ही दण्डनीय प्राणियों को अपने पाशों द्वारा बाँध लेते हैं। धन के स्वामी यक्षराज कुबेर प्राणियों को उनके पुण्य के अनुरूप सदा धन देते हैं, और उत्तम बुद्धि वाले पुरुषों को सम्पति के साथ ज्ञान भी प्रदान करते हैं। ईश्वर असाधु पुरुषों का निग्रह करते हैं, तथा शेष शिव की ही आज्ञा से अपने मस्तक पर पृथ्वी को धारण करते हैं। उन शेष को श्री हरि की तामसी रौद्रमूर्ति कहा गया है, जो जगत् का प्रलय करने वाली है। ब्रह्माजी शिव की ही आज्ञा से सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि करते हैं, तथा अपनी अन्य मूर्तियों द्वारा विश्व का पालन, सर्जन और संहार भी करते हैं। विश्वात्मा भगवान हर भी तीन रूपों में विभक्त हो सम्पूर्ण जगत् का संहार, सृष्टि और रक्षा करते हैं। काल सब को उत्पन्न करता है। वही प्रजा की सृष्टि करता है, तथा वही विश्व का पालन करता है। यह सब वह महाकाल की आज्ञा से प्रेरित होकर ही करता है। भगवान् सूर्य उन्हीं की आज्ञा से अपने तीन अंशों द्वारा जगत् का पालन, अपनी किरणों द्वारा वृष्टि के लिये आदेश देते और स्वयं ही आकाश में मेघ बनकर बरसते हैं। चन्द्रभूषण शिव का शासन मानकर ही चन्द्रमा औषधियों का पोषण और प्राणियों को आह्लादित करते हैं। साथ ही देवताओं को अपनी अमृतमयी कलाओं का पान करने देते हैं। आदित्य, वसु, रुद्र, अश्विनी कुमार, मरुद्गण, आकाशचारी, ऋषि, सिद्ध, नागगण, मनुष्य, मृग, पशु, पक्षी, कीट आदि, स्थावर प्राणी, नदियां, समुद्र, पर्वत, वन, सरोवर, अङ्गों सहित वेद, शास्त्र, मन्त्र, वैदिक स्तोत्र और यज्ञ आदि, कालाग्नि से लेकर शिव पर्यन्त भुवन, उनके अधिपति, असंख्य ब्रह्माण्ड, उनके आवरण, वर्तमान, भूत और भविष्य, दिशा–विदिशाएँ, कला आदि काल के भिन्न–भिन्न भेद तथा जो कुछ भी इस जगत् में देखा और सुना जाता है, वह सब भगवान शंकर की आज्ञा से टिका हुआ है। उनकी आज्ञा के

बल से यहाँ पृथ्वी, पर्वत, मेघ, समुद्र, नक्षत्रगण, इन्द्रादि देवता, स्थावर जङ्गम अथवा जड़ और चेतन सबकी स्थिति है।

(शिव पु॰ वाय॰ संहि॰ उ॰ खं॰ अध्या॰ २)

शिव की पञ्चमूर्तियों, ब्रह्म मूर्तियों तथा अ मूर्तियों का परिचय और उनकी सर्व व्यापकता

पुष्प (७)

उपमन्यु कहते हैं—श्री कृष्ण महेश्वर परमात्मा शिव की मूर्तियों से यह सम्पूर्ण चराचर जगत् किस प्रकार व्याप्त है, यह सुनो। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, महेशान तथा सदाशिव ये उन परमेश्वर की पांच मूर्तियां जाननी चाहिये, जिनसे यह सम्पूर्ण विश्व विस्तार को प्राप्त हुआ है। इनके सिवा और भी उनके पांच शरीर हैं, इन्हें पञ्चब्रह्म (मंत्र) कहते हैं। इस जगत् में कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है, जो उन मूर्तियों से व्याप्त न हो। ईशान पुरुष, अघोर, वामदेव, और सद्योजात—यह महादेवजी की विख्यात पांच ब्रह्म मूर्तियां हैं। इनमें जो ईशान नामक उनकी आदि श्रेष्ठतम मूर्ति है, वह प्रकृति के साक्षात् भोक्ता क्षेत्रज्ञ को व्याप्त करके स्थित है। मूर्तिमान प्रभु शिव की जो तत्पुरुष नामक मूर्ति है, वह गुणों के आश्रय रूप भोग्य अव्यक्त (प्रकृति) में अधिष्ठित है। पिनाक—पाणि महेश्वर अत्यन्त पूजित अघोर नामक मूर्ति है। वह धर्म आदि आठ अङ्गों से युक्त बुद्धि तत्त्व को अपना अधिष्ठान बनाती है। विधाता महादेव की वामदेव नामक मूर्ति को आगमवेत्ता विद्वान् अहंकार की अधिष्ठात्री बताते हैं। भगवान शिव के चरणों में अनुराग रखने वाले महात्मा पुरुष उनकी वामदेव नामक मूर्ति को रसना, वायु, रस, और जल-तत्त्व की स्वामिनी समझते हैं तथा सद्योजात नामक मूर्ति को वे घ्राणेन्द्रिय, उपस्थ, गन्ध और पृथ्वी—तत्त्व की अधिष्ठात्री कहते हैं। महादेवजी की ये पांचों मूर्तियां कल्याण की एक मात्र हेतु हैं। कल्याण कामी पुरुषों को इनकी सदा ही यत्नपूर्वक वन्दना करनी

चाहिये। उन देवाधिदेव महादेव जी की जो आठ मूर्तियाँ हैं, तत्स्वरूप ही यह जगत् है। उन आठ मूर्तियों में यह विश्व उसी प्रकार ओत प्रोत भाव से स्थित है, जैसे सूत में मनके पिरोये होते हैं।

शर्व, भव, रुद्र, उग्र, भीम, पशुपति, ईशान तथा महादेव– ये शिव की विख्यात आठ मूर्तियाँ हैं। महेश्वर की इन शर्व आदि आठ मूर्तियों से क्रमशः भूमि, जल, अग्नि, वायु, क्षेत्रज्ञ, सूर्य और चन्द्रमा अधिष्ठित होते हैं। उनकी पृथ्वीमयी मूर्ति सम्पूर्ण चराचर जगत् को धारण करती है। उसके अधिष्ठाता का नाम शर्व है। इसलिये वह शिव की 'शार्वी' मूर्ति कहलाती है। यही शास्त्र का निर्णय है। उनकी जलमयी मूर्ति समस्त जगत् के लिये जीवन-दायिनी है। जल परमात्मा भव की मूर्ति है इसलिये उसे भावी कहते हैं। शिव की तेजोमयी शुभमूर्ति विश्व के बाहर भीतर व्याप्त होकर स्थित है। उस घोररूपिणी मूर्ति का नाम रुद्र है, इसलिये वह 'रौद्री' कहलाती है। भगवान् शिव वायु रूप से स्वयं गतिशील होते हैं और इस जगत् को गतिशील बनाते हैं। साथ ही वे इसका भरण–पोषण भी करते हैं। वायु भगवान् उग्र की मूर्ति हैं; इसलिये साधु पुरुष इसे 'औग्री' कहते हैं। भगवान् भीम की आकाश रूपिणी मूर्ति सबको अवकाश देने वाली, सर्व व्यापिनी तथा भूत समुदाय की भेदिका है। वह भीम नाम से प्रसिद्ध है (अतः उसे 'भैमी' मूर्ति भी कहते हैं) सम्पूर्ण क्षेत्रों में निवास करने वाली तथा सम्पूर्ण आत्माओं की अधिष्ठात्री शिव मूर्ति को 'पशुपति' मूर्ति समझना चाहिये। वह पशुओं के पाशों का उच्छेद करने वाली है। महेश्वर की जो 'ईशान' नामक मूर्ति है, वह दिवाकर (सूर्य) नाम को धारण करके सम्पूर्ण जगत् को प्रकाशित करती हुई आकाश में विचरती है। जिनकी किरणों में अमृत भरा है और जो सम्पूर्ण विश्व को उस अमृत से आप्यायित करते हैं; वे चन्द्र देव भगवान् शिव के महादेव नामक विग्रह हैं; अतः उन्हें 'महादेव' मूर्ति कहते हैं। यह जो आठवीं मूर्ति है, वह परमात्मा शिव का साक्षात् स्वरूप

है तथा अन्य सब मूर्तियों में व्यापक है। इसलिए यह सम्पूर्ण विश्व शिव रूप ही है। जैसे वृक्ष की जड़ सींचने से उसकी शाखाएँ पुष्ट होती हैं, उसी प्रकार भगवान शिव की पूजा से उनके स्वरूप भूत जगत् का पोषण होता है। इसलिये सबको अभयदान देना, सब पर अनुग्रह करना और सब का उपकार करना–यह शिव का आराधन माना गया है। वैसे इस जगत् में अपने पुत्र–पौत्र आदि के प्रसन्न रहने से पिता–पितामह आदि को प्रसन्नता होती है, उसी प्रकार सम्पूर्ण जगत् की प्रसन्नता से भगवान् शंकर प्रसन्न होते हैं। यदि किसी भी देहधारी को दण्ड दिया जाता है तो उसके द्वारा अष्ट मूर्तिधारी शिव का ही अनिष्ट किया जाता है, इसमें संशय नहीं है। आठ मूर्तियों के रूप में सम्पूर्ण विश्व को व्याप्त करके स्थित हुए भगवान् शिव का तुम सब प्रकार से भजन करो, क्योंकि रुद्रदेव सबके परम कारण हैं।

(शिव पु० वाय० संहि० उ० खं० अध्याय ३)

परमेश्वर शिव के यथार्थ स्वरूप का विवेचन तथा उनकी शरण में जाने से जीव के कल्याण का कथन

पुष्प (८)

उपमन्यु कहते हैं—यदुनन्दन! यह चराचर जगत् देवाधिदेव महादेवजी का स्वरूप है। परन्तु पशु (जीव) भारी पाश से बंधे होने के कारण जगत् को इस रूप में नहीं जानते। महर्षि गण उन परमेश्वर शिव के निर्विकल्प परम भाव को न जानने के कारण उन एक का ही अनेक रूपों में वर्णन करते हैं, कोई परब्रह्म रूप बताते हैं और कोई आदि अन्त से रहित उत्कृष्ट महादेव स्वरूप कहते हैं। पञ्च महाभूत, इन्द्रिय, अन्तःकरण तथा प्राकृत विषय–रूप जड़ तत्त्व को अपरब्रह्म कहा गया है। इससे भिन्न समष्टि चैतन्य का नाम पर ब्रह्म है। बृहत् और व्यापक होने के कारण उसे ब्रह्म कहते हैं। प्रभो! वेदों एवं ब्रह्माजी

के अधिपति परब्रह्म परमात्मा शिव के वे पर और अपर दो रूप हैं। कुछ लोग महेश्वर शिव को विद्या अविद्या-स्वरूपी कहते हैं। इनमें विद्या चेतना है और अविद्या अचेतना। यह विद्या-अविद्या रूप विश्व जगद्गुरु भगवान् शिव का रूप ही है इसमें सन्देह नहीं है, क्योंकि विश्व उनके वश में है। भ्रान्ति, विद्या तथा पराविद्या या परम तत्त्व–ये शिव के तीन उत्कृष्ट रूप माने गये हैं। पदार्थों के विषय में जो अनेक प्रकार की असत्य धारणाएँ हैं, उन्हें भ्रान्ति कहते हैं। यथार्थ धारणा या ज्ञान नाम विद्या है तथा जो विकल्प रहित परम ज्ञान है, उसे परम तत्त्व कहते हैं। परम तत्त्व ही सत् है. इसके विपरीत असत् कहा गया है। सत् और असत् दोनों का पति होने के कारण शिव सदसत्पति कहलाते हैं। अन्य महर्षियों ने क्षर, अक्षर और उन दोनों से परे परम तत्त्व का प्रतिपादन किया है। सम्पूर्ण भूत क्षर हैं, और जीवात्मा अक्षर कहलाता है। वे दोनों परमेश्वर के रूप हैं, क्योंकि उन्हीं के अधीन हैं। शान्त स्वरूप शिव उन दोनों से परे हैं, इसलिये क्षराक्षर पर कहे गये हैं कुछ महर्षि परम कारण रूप शिव को समष्टि–व्यष्टि स्वरूप तथा समष्टि और व्यष्टि का कारण कहते हैं। अव्यक्त को समष्टि कहते हैं और व्यक्त को व्यष्टि । वे दोनों परमेश्वर शिव के रूप हैं, क्योंकि उन्हीं की इच्छा से प्रवृत्त होते हैं। उन दोनां के कारण रूप से स्थित भगवान् शिव परम कारण हैं। अतः कारणार्थ वेत्ता ज्ञानी पुरुष उन्हें समष्टि–व्यष्टि का कारण बताते हैं। कुछ लोग परमेश्वर को जाति व्यक्ति स्वरूप कहते हैं जिसका शरीर में भी अनुवर्तन हो, वह जाति कही जाती है। शरीर की जाति के आश्रित रहने वाली जो व्यावृति है, जिसके द्वारा जाति भावना का आच्छादन और वैयक्तिक भावना का प्रकाशन होता है, उसका नाम व्यक्ति है। जाति और व्यक्ति दोनों ही भगवान शिव की आज्ञा से परिपालित हैं। अतः उन महादेवजी को जाति व्यक्ति स्वरूप कहा गया है।

कोई–कोई शिव को प्रधान, पुरुष, व्यक्त और कालरूप कहते हैं। प्रकृति का ही नाम प्रधान है। जीवात्मा को ही क्षेत्रज्ञ कहते हैं तेईस तत्त्वों को मनीषी पुरुषों ने व्यक्त कहा है और जो कार्य प्रपञ्च के परिणाम का एक मात्र कारण है उसका नाम काल है। भगवान् शिव इन सब के ईश्वर, पालक, धारणकर्त्ता, प्रवर्तक, निवर्तक तथा आविर्भाव और तिरोभाव के एक मात्र हेतु हैं। वे स्वयं–प्रकाश, एवं अजन्मा है। इसलिए उन महेश्वर को प्रधान, पुरुष, व्यक्त और काल रूप कहा गया है। कारण, नेता, अधिपति और धाता बताया गया हैं। कुछ लोग महेश्वर को विराट् और हिरण्यगर्भरूप बताते हैं। जो सम्पूर्ण लोकों की सृष्टि के हेतु हैं, उनका नाम हिरण्यगर्भ है और विश्व रूप को विराट कहते हैं। ज्ञानी पुरुष भगवान् शिव को अन्तर्यामी और परम पुरुष कहते हैं। दूसरे लोग उन्हें प्राज्ञ, तैजस और विश्वरूप बताते हैं। कोई उन्हें तुरीय रूप मानते हैं और कोई सौम्य रूप। कितने ही विद्वानों का कथन है कि वे भी माता, मान, मेय और मितिरूप हैं। अन्य लोग कर्त्ता, क्रिया, कार्य, करण और कारण रूप कहते हैं। दूसरे ज्ञानी उन्हें जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति रूप बताते हैं। कोई भगवान् शिव को तुरीय रूप कहते हैं तो कोई तुरीयातीत। कोई निर्गुण बताते हैं, कोई सगुण। कोई संसारी कहते है, कोई असंसारी। कोई स्वतन्त्र मानते हैं, कोई अस्वतन्त्र। कोई उन्हें घोर समझते हैं. कोई सौम्य। कोई रागवान् कहते हैं कोई वीतराग; कोई निष्क्रिय वताते हैं कोई सक्रिय। किन्हीं के कथनानुसार वे निरिन्द्रिय हैं तो किन्हीं के मत में सेन्द्रिय हैं। एक उन्हें ध्रुव कहता है तो दूसरा अध्रुव; कोई उन्हें साकार बताते हैं तो कोई निराकार। किन्हीं के मत में अदृश्य हैं तो किन्हीं के मत में दृश्य; कोई उन्हें वर्णनीय मानते हैं तो कोई अनिर्वचनीय। किन्हीं के मत में शब्दातीत; कोई उन्हें चिन्तन का विषय मानते हैं तो कोई अचिन्त्य समझते हैं। कुछ का कहना है कि वे ज्ञान स्वरूप हैं, कोई उन्हें विज्ञान की संज्ञा देते हैं। किसी के मत में वे ज्ञेय हैं और किन्हीं के मत में

अज्ञेय। कोई उन्हें पर मानता है तो कोई अपर। इस तरह उनके विषय में नाना प्रकार की कल्पनाएँ होती हैं। इन नाना प्रतीतियों के कारण मुनिजन उन परमेश्वर के यथार्थ स्वरूप का निश्चय नहीं कर पाते। जो सर्वभाव से उन परमेश्वर की शरण में आगये हैं, वे ही उन परम कारण शिव को बिना यत्न के ही जान पाते हैं। ज़ब तक पशु (जीव) जिनका दूसरा कोई ईश्वर नहीं है, उन सर्वेश्वर, सर्वज्ञ, पुराण-पुरुष तथा तीनों लोकों के शासक शिव को नहीं देखता, तब तक वह पाशों से बद्ध हो इस दुःखमय संसारचक्र में गाड़ी के पहिये की नेमि के समान घूमता रहता है। जब यह द्रष्टा जीवात्मा सबके शासक, ब्रह्मा के भी आदि कारण, सम्पूर्ण जगत् के रचयिता, सुवर्णोपम, दिव्य प्रकाश स्वरूप परम पुरुष का साक्षात्कार कर लेता है, तब पुण्य और पाप दोनों को भली भांति हटा कर निर्मल हुआ वह ज्ञानी महात्मा सर्वोत्तम समता को प्राप्त कर लेता है।

(शिव पु० उ० खं० वाय० संहि० अध्या० ५)

शिव के शुद्ध, बुद्ध; मुक्त, सर्वमय, सर्वव्यापक एवं सर्वातीत स्वरूपका तथा उनकी प्रणवरूपता का प्रतिपाँदन

पुष्प
(९)

उपमन्यु कहते हैं—यदुनन्दन! शिव को न तो आणव मल का ही बन्धन प्राप्त है, न कर्म का और न माया का ही। प्राकृत, बौद्ध, अहंकार, मन, चित्त, इन्द्रिय, तन्मात्रा और पञ्चभूत सम्बन्धी भी कोई बन्धन उन्हें नहीं छू सका है। अमित तेजस्वी शम्भु को न काल, न कला, न विद्या, न नियति न राग और न द्वेष रूप ही बंधन प्राप्त हैं। उनमें न तो कर्म हैं, न उन कर्मों का परिपाक है, न उनके फलस्वरूप सुख और दुःख हैं, न उनका वासनाओं से सम्बन्ध हैं, न कर्मों के संस्कारों से। भूत

भविष्य और वर्तमान भोगों तथा उनके संस्कारों से भी उनका सम्पर्क नहीं है। न उनका कोई कारण है, न कर्त्ता। न आदि है, न अन्त और न मध्य है; न कर्म और कारण हैं, न अकर्त्तव्य है और न कर्तव्य ही है। उनका न कोई वन्धु है, और न अबन्धु, न नियन्ता है. न प्रेरक; न पति है, न गुरु है, न त्राता ही है। उनसे अधिक की चर्चा कौन करे, उनके समान भी कोई नहीं है। उनका न जन्म होता है न मरण। उनके लिये कोई वस्तु न वाञ्छित है और न अवाञ्छित ही। उनके लिये न विधि है न निषेध। न वन्धन है न मुक्ति। जो-जो अकल्याणकारी दोष हैं वे उनमें कभी नहीं रहते। परन्तु संपूर्ण कल्याणकारी गुण उनमें सदा ही रहते हैं, क्योंकि शिव साक्षात् परमात्मा हैं। वे शिव अपनी शक्तियों द्वारा इस सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त होकर अपने स्वभाव से च्युत न होते हुए सदा ही स्थित रहते हैं; इसलिये उन्हें स्थाणु कहते हैं। यह सम्पूर्ण चराचर जगत् शिव से अधिष्ठित है; अतः भगवान शिव सर्वरूप माने गये हैं। जो ऐसा जानता है वह कभी मोह में नहीं पड़ता।

रुद्र सर्वरूप हैं। उन्हें नमस्कार है। वे सत्य स्वरूप; परम महान् पुरुष, हिरण्यबाहु, भगवान हिरण्यपति, ईश्वर, अम्बिकापति, ईशान, पिनाकपाणि, तथा वृषभवाहन हैं। एकमात्र रुद्र ही पर ब्रह्म परमात्मा हैं। वे ही कृष्ण-पिंगल वर्ण वाले पुरुष हैं। वे हृदय के भीतर सूक्ष्मरूप से चिन्तन करने योग्य हैं। उनके केश सुनहरे रंग के हैं। नेत्र कमल के समान सुन्दर हैं। अंगकान्ति अरुण और ताम्रवर्ण की है। वे सुवर्णमय नीलकण्ठ देव सदा विचरते रहते हैं। उन्हें सौम्य, घोर, मिश्र, अक्षर, अमृत और अव्यय कहा गया है। वे पुरुष विशेष परमेश्वर भगवान् शिव काल के भी काल हैं। चेतन और अचेतन से परे हैं इस प्रपंच से भी परात्पर हैं। शिव में ऐसे ज्ञान और ऐश्वर्य देखे गये हैं, जिनसे बढ़कर ज्ञान और ऐश्वर्य अन्यत्र नहीं हैं। मनीषी पुरूषों ने भगवान् शिव को लोक

में सबसे अधिक ऐश्वर्यशाली पद पर प्रतिष्ठित बताया है। प्रत्येक कल्प में उत्पन्न होकर एक सीमित काल तक रहने वाले ब्रह्माओं को आदिकाल में विस्तारपूर्वक शास्त्र का उपदेश देने वाले भगवान शिव ही हैं। एक सीमित काल तक रहने वाले गुरुओं के भी वे गुरु हैं। वे सर्वेश्वर सदा सभी के गुरु हैं। काल की सीमा उन्हें छू नहीं सकती। उनकी शुद्ध स्वभाविक शक्ति सबसे बढ़कर है। उन्हें अनुपम ज्ञान और नित्य अक्षय शरीर प्राप्त है। उनके ऐश्वर्य की तुलना किसी से नहीं की जा सकती। उनका सुख अक्षय और बल अनन्त है। उनमें असीम तेज, प्रभाव, पराक्रम, क्षमा और करुणा भरी है। वे नित्य परिपूर्ण हैं। उन्हें सृष्टि आदि से अपने लिये कोई प्रयोजन नहीं है। दूसरों पर परम अनुग्रह ही उनके समस्त कर्मों का फल है। प्रणव उन परमात्मा शिव का वाचक है शिव, रुद्र आदि नामों में प्रणव ही सबसे उत्कृष्ट माना गया है। प्रणव वाच्य शम्भु के चिन्तन और जप से जो सिद्धि प्राप्त होती है, वही परा सिद्धि है, इसमें संशय नहीं है।

इसलिये शास्त्रों के पारंगत मनस्वी विद्वान वाच्य और वाचक की एकता स्वीकार करते हुए महादेवजी को प्रणवरूप कहते हैं। माण्डूक्योपनिषद् में प्रणव की चार मात्राएँ बतायी गयी हैं अकार, उकार, मकार और नाद। अकार को ऋग्वेद कहते हैं। उकार यजुर्वेदरूप कहा गया है। मकार सामवेद है और नाद अथर्ववेद की श्रुति है। अकार महाबीज है। वह रजोगुण तथा सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा है। उकार प्रकृति रूपा योनि है। वह सत्त्वगुण तथा पालनकर्त्ता श्री हरि है। मकार जीवात्मा एवं बीज है; वह तमोगुण तथा संहारकर्त्ता रुद्र है। नाद परमपुरुष परमेश्वर है। वह निर्गुण एवं निष्क्रिय शिव है। इस प्रकार प्रणव अपनी तीन मात्राओं के द्वारा ही तीन रूपों में इस सम्पूर्ण जगत् का प्रतिपादन करके अपनी अर्द्धमात्रा (नाद) के द्वारा शिव स्वरूप का बोध कराता है। जिनसे श्रेष्ठ दूसरा कुछ भी नहीं है जिनसे बढ़कर कोई न तो

अधिक सूक्ष्म है और न महान् ही तथा जो अकेले ही वृक्ष की भाँति निश्चल भाव से प्रकाशमय आकाश में स्थित हैं उन परम पुरुष परमेश्वर शिव से यह सम्पूर्ण जगत् परिपूर्ण है।

(शि० पु०, वा० सं०, उ० खं० अध्याय ६)

परमेश्वर की शक्ति का ऋषियों द्वारा साक्षात्कार शिव के साद से प्राणियों की मुक्ति, शिव की सेवा-भक्ति तथा पाँच प्रकार के शिव धर्म का वर्णन

पुष्प
(१०)

उपमन्यु कहते हैं—परमेश्वर शिव की स्वाभाविक शक्ति विद्या है जो सबसे विलक्षण है। वह एक होकर भी अनेक रूप से भासित होती है। जैसे सूर्य की प्रभा एक होकर भी अनेक रूप में प्रकाशित होती है। उस विद्या शक्ति से ज्ञान, इच्छा, क्रिया और माया आदि अनेक शक्तियाँ उत्पन्न हुई हैं, ठीक उसी तरह जैसे अग्नि से बहुत-सी चिनगारियाँ प्रकट होती हैं। उसी से सदाशिव और ईश्वर आदि तथा विद्या और विद्येश्वर आदि पुरुष भी प्रकट हुए हैं। परात्पर प्रकृति भी उसी से उत्पन्न हुई है। महत्तत्त्व से लेकर विशेष पर्यन्त सारे विकार तथा अज (ब्रह्मा) आदि मूर्तियां भी उसी से प्रकट हुई हैं। इसके सिवा जो अन्य वस्तुएं हैं वे सब भी उसी शक्ति के कार्य हैं, इनमें संशय नहीं है। वह शक्ति सर्वव्यापिनी सूक्ष्मा तथा ज्ञानानन्द स्वरूपिणी है उसी से शीतांशुभूषण भगवान् शिव शक्तिमान् कहलाते हैं। शक्तिमान् शिव वेद्य हैं और शक्तिरूपिणी शिवा विद्या है वे शक्ति रूपा, शिवा ही प्रज्ञा, श्रुति, स्मृति, धृति, स्थिति, निष्ठा, ज्ञानशक्ति, इच्छाशक्ति, कर्मशक्ति, आज्ञाशक्ति, परब्रह्म, परा और अपरा नाम की दो विद्याएं, शुद्ध विद्या और शुद्ध कला हैं; क्योंकि सब कुछ शक्ति का ही कार्य है। माया, प्रकृति, जीव, विकार, विकृति

असत् और सत् आदि जो भी कुछ उपलब्ध होता है, वह सब कुछ उस शक्ति से ही व्याप्त है।

वे शक्तिरूपिणी शिवादेवी माया द्वारा समस्त चराचर ब्रह्मांड को अनायास ही मोह में डाल देती है और लीलापूर्वक उसे मोह के बन्धन से मुक्त भी कर देती है। इस शक्ति के सत्ताईस प्रकार हैं; सत्ताईस प्रकार वाली इस शक्ति के साथ सर्वेश्वर शिव सम्पूर्ण विश्व को व्याप्त करके स्थित हैं। इन्हीं के चरणों में मुक्ति विराजती है। पूर्वकाल की बात है, संसार बन्धन से छूटने की इच्छा वाले कुछ ब्रह्मवादी मुनियों के मन में यह संशय हुआ। वे परस्पर मिलकर यथार्थ रूप से विचार करने लगे—इस जगत् का कारण क्या है? हम किससे उत्पन्न हुए हैं? और किससे जीवन धारण करते हैं? हमारी प्रतिष्ठा कहां है? हमारा अधिष्ठाता कौन है? हम किसके सहयोग से सदा सुख में और दुःख में रहते हैं? किसने इस विश्व की अलङ्घनीय व्यवस्था की है यदि कहें काल, स्वभाव, नियति (निश्चित फल देने का कर्म) और यदृच्छा (आकस्मिक घटना) इसमें कारण है तो यह कथन युक्ति संगत नहीं जान पड़ता। पांचों महाभूत तथा जीवात्मा भी कारण नहीं है। इन सब का संयोग तथा अन्य कोई भी कारण नहीं है; क्योंकि काल आदि अचेतन है। जीवात्मा के चेतन होने पर भी वह सुख-दुःख से अभिभूत तथा असमर्थ होनेसे इस जगत् का कारण नहीं हो सकता। अतः कौनसा कारण है, इसका विचार करना चाहिये। आपस में विचार करने पर जब वे युक्तियों द्वारा किसी निर्णय तक पहुँच न सके, तब उन्होंने ध्यानयोग में स्थित होकर परमेश्वर की स्वरूपभूता अचिन्त्य शक्ति का साक्षात्कार किया, जो अपने ही गुणों से सत्त्व, रज और तम से ढंकी हैं तथा उन तीनों से परे है। परमेश्वर की वह साक्षात् शक्ति समस्त पाशों का विच्छेद करने वाली है उसके द्वारा बन्धन काट दिये जाने पर जीव अपनी दिव्य दृष्टि से उन सर्वकारण कारण शक्तिमान् महादेवजी का दर्शन करने लगते हैं; जो जीव से लेकर

जीवात्मा तक पूर्वोक्त समस्त कारणों पर तथा सम्पूर्ण विश्व पर अपनी इस शक्ति के द्वारा शासन करते हैं वे परमात्मा अप्रमेय हैं। तदन्तर परमेश्वर के प्रसाद-योग, परम-योग तथा सुदृढ़ भक्ति योग के द्वारा उन मुनियों ने दिव्य गति प्राप्त कर ली।

श्रीकृष्ण ! जो अपने हृदय में शक्ति सहित भगवान् शिव का दर्शन करते हैं, उन्हीं को सनातन शान्ति प्राप्त होती है, दूसरों को नहीं, यह श्रुति का कथन है। शक्तिमान् का शक्ति से कभी वियोग नहीं होता। अतः शक्ति और शक्तिमान् दोनों के तादात्म्य से परमानन्द की प्राप्ति होती है। मुक्ति की प्राप्ति में निश्चय ही ज्ञान और कर्म को कोई क्रम विवक्षित नहीं है। जब शिव और शक्ति की कृपा हो जाती है; तब वह मुक्ति हाथ में आ जाती है। देवता, दानव, पशु-पक्षी तथा कीड़े-मकोड़े भी उनकी कृपा से मुक्त हो जाते हैं। गर्भ का बच्चा, जन्मता हुआ बालक, शिशु, तरुण, वृद्ध, मुमुर्षु, स्वर्गवासी, नारकी, पतित, धर्मात्मा, पण्डित अथवा मूर्ख साम्बशिव की कृपा होने पर तत्काल मुक्त हो जाते हैं इसमें संशय नहीं है। परमेश्वर अपनी स्वाभाविक करुणा से अयोग्य भक्तों के भी विविध मलों को दूर कर उन पर कृपा करते हैं। इसमें सन्देह नहीं है। भगवान् की कृपा से ही भक्ति होती है और भक्ति से ही उनकी कृपा होती है। अवस्था भेद का विचार करके विद्वान् पुरुष इस विषय में मोहित नहीं होता। कृपा प्रसाद पूर्वक जो यह भक्ति होती है, वह भोग और मोक्ष दोनों की प्राप्ति कराने वाली है। उसे मनुष्य एक ही जन्म में नहीं प्राप्त कर सकता। अनेक जन्मों तक श्रौत-स्मार्त कर्मों का अनुष्ठान करके सिद्ध, विरक्त एवं ज्ञान सम्पन्न पुरुषों पर महेश्वर प्रसन्न होते हैं और कृपा करते हैं। देवेश्वर शिव के प्रसन्न होने पर उस पशु (जीव) में बुद्धिपूर्वक थोड़ी-सी भक्ति का उदय होता है। तब वह यह अनुभव करने लगता है कि भगवान् शिव मेरे स्वामी हैं। फिर तपस्या पूर्वक वह नाना प्रकार के शैव धर्मों के पालन में संलग्न होता है।

उन धर्मों के पालन में बारम्बार लगे रहने से उसके हृदय में परा भक्ति का प्रादुर्भाव होता है। उस पराभक्ति से परमेश्वर का परम प्रसाद उपलब्ध होता है। प्रसाद से सम्पूर्ण पापों से छुटकारा मिलता है और छुटकारा मिल जाने पर परमानन्द की प्राप्ति होती है, जिस मनुष्य का भगवान् शिव में थोड़ा सा भी भक्ति भाव है, वह तीन जन्मों के बाद अवश्य मुक्त हो जाता है। उसे इस संसार में जन्म मरणादि की पीड़ा नहीं सहनी पड़ती। साङ्गा (अंग सहित) और अनङ्गा (अंगरहित) सेवा को भक्ति कहते हैं। उसके फिर तीन भेद होते हैं–मानसिक, वाचिक, और शारीरिक। शिव के रूप आदि का जो चिन्तन है, उसे मानसिक सेवा कहते हैं। जप आदि वाचिक सेवा है, और पूजन आदि कर्म शारीरिक सेवा हैं। इन त्रिविध साधनों से सम्पन्न होने वाली जो यह सेवा है इसे 'शिव धर्म' भी कहते हैं। पाँच प्रकार का शिव-धर्म बतलाया गया है तप, कर्म, जप, ध्यान, और ज्ञान। लिङ्ग पूजन आदि को 'कर्म' कहते है। चान्द्रायण आदि व्रत का नाम 'तप' है। वाचिक उपांशु और मानस–तीन प्रकार का जो शिव मंत्र का अभ्यास (आवृत्ति) है उसी को 'जप' कहते हैं। शिव का चिन्तन ही 'ध्यान' कहलाता है तथा शिव सम्बन्धी आगमों में जिस ज्ञान का वर्णन है, उसी को यहां 'ज्ञान' शब्द से कहा गया है। श्री कण्ठ शिव ने शिवा के प्रति जिस ज्ञान का उपदेश किया है, वही शिवागम है। शिव के आश्रित जो भक्तजन हैं उन पर कृपा करके कल्याण के एक मात्र साधक इस ज्ञान का उपदेश किया गया है। अतः कल्याणकामी बुद्धिमान पुरुष को चाहिये कि वह परमकारण शिव में भक्ति को बढ़ाये तथा विषयासक्ति का त्याग करे।

(शिव०, पु०, वा० सं०, उ० खं० अध्या० ७)

शिव-ज्ञान, शिव की उपासना से देवताओं को उनका दर्शन, सूर्यदेव में शिव की पूजा करके अर्घ्यदान की विधि तथा व्यासावतारों का वर्णन

पुष्प
(११)

श्रीकृष्ण बोले—भगवन्! अब मैं उस शिव-ज्ञान को सुनना चाहता हूँ, जो वेदों का सारतत्त्व है तथा जिसे भगवान् शिव ने अपने शरणागत भक्तों की मुक्ति के लिये कहा है। प्रभु शिव की पूजा कैसे की जाती है? पूजा आदि में किसका अधिकार है तथा ज्ञान–योग आदि कैसे सिद्ध होते हैं? उत्तम व्रत का पालन करने वाले मुनीश्वर! ये सब विस्तार पूर्वक बताइये।

उपमन्यु ने कहा—भगवान् शिव ने जिस वेदोक्त ज्ञान को संक्षिप्त करके कहा है, वह शैव–ज्ञान है। वह निन्दा स्तुति आदि से रहित तथा श्रवण मात्र से ही अपने प्रति विश्वास उत्पन्न करने वाला है। यह दिव्य ज्ञान गुरु की कृपा से प्राप्त होता है और अनायास ही मोक्ष देने वाला है। उसका विस्तारपूर्वक वर्णन कोई कर ही नहीं सकता है। पूर्वकाल में महेश्वर शिव सृष्टि की इच्छा करके सत्कार्य–कारणों से नियुक्त हो स्वयं ही अव्यक्त से व्यक्त रूप में प्रकट हुए। उस समय ज्ञान स्वरूप भगवान् विश्वनाथ ने देवताओं में सबसे प्रथम देवता वेदपति ब्रह्माजी को उत्पन्न किया, ब्रह्मा ने उत्पन्न होकर अपने पिता महादेव को देखा तथा ब्रह्माजी के जनक महादेवजी ने भी उत्पन्न हुए ब्रह्मा की ओर स्नेहपूर्ण दृष्टि से देखा और उन्हें सृष्टि रचने की आज्ञा दी। रुद्रदेव की कृपा-दृष्टि से देखे जाने पर, सृष्टि के सामर्थ्य से युक्त हो उन ब्रह्मदेव ने समस्त संसार की रचना की और पृथक् पृथक् वर्णों तथा आश्रमों की व्यवस्था की। उन्होंने यज्ञ के लिये सोम की सृष्टि की। सोम से द्युलोक का प्रादुर्भाव हुआ। फिर पृथ्वी, अग्नि, सूर्य, यज्ञमय विष्णु और शचीपति इन्द्र प्रकट

हुए। वे सब तथा अन्य देवता रुद्राध्याय पढ़कर रुद्रदेव की स्तुति करने लगे। तब भगवान् महेश्वर अपनी लीला करने के लिए उन सब का ज्ञान हर कर प्रसन्न मुख से उन देवताओं के आगे खड़े हो गये।

तब देवताओं ने मोहित होकर उनसे पूछा—'आप कौन हैं?' भगवान् रुद्र बोले 'श्रेष्ठ देवताओ! सबसे पहले मैं ही था इस समय भी सर्वत्र में ही हूँ और भविष्य में भी मैं ही रहूँगा। मेरे सिवा दूसरा कोई नहीं है। मैं ही अपने तेज से सम्पूर्ण जगत् को तृप्त करता हूं। मुझसे अधिक और मेरे समान कोई नहीं है। जो मुझे जानता है, वह मुक्त हो जाता है। ऐसा कहकर भगवान् रुद्र अन्तर्धान हो गये। जब देवताओं ने उन महेश्वर को नहीं देखा, तब वे सामवेद के मन्त्रों द्वारा उनकी स्तुति करने लगे। अथर्वशीर्ष में वर्णित पाशुपत-व्रत को ग्रहण करके उन अमर गणों ने अपने सम्पूर्ण अङ्गों में भस्म लगा लिया। यह देख उन पर कृपा करने के लिये पशुपति महादेव अपने गणों और उमा के साथ उनके निकट आये। प्राणायाम के द्वारा श्वास को जीतकर निद्रारहित एवं निष्पाप हुए योगीजन अपने हृदय में जिनका दर्शन करते हैं, उन्हीं महादेव को उन देवेश्वरों ने वहाँ देखा। जिन्हें ईश्वर की इच्छा का अनुसरण करने वाली पराशक्ति कहते हैं; उन सबने वामलोचना भवानी को भी वामदेव महेश्वर के वामभाग में विराजमान देखा। जो संसार को त्याग कर शिव के परमपद को प्राप्त हो चुके हैं तथा जो नित्य सिद्ध हैं, उन गणेश्वरों का भी देवताओं ने दर्शन किया। तत्पश्चात् देवता महेश्वर सम्बन्धी वैदिक और पौराणिक दिव्य स्तोत्रों द्वारा देवी सहित महेश्वर की स्तुति करने लगे। तब वृषभध्वज महादेवजी भी उन देवताओं की ओर कृपापूर्वक देखकर अत्यन्त प्रसन्न हो स्वभावतः मधुरवाणी में बोले--'मैं तुम लोगों पर बहुत संतुष्ट हूँ, उन प्रार्थनीय और पूज्यतम भगवान् वृषभध्वज को अत्यन्त प्रसन्न चित्त जानकर देवताओं ने प्रणाम करके उनसे पूछा।

देवता बोले—भगवन् ! इस भूतल पर किस मार्ग से आपकी पूजा होनी चाहिये और उस पूजा में किस का अधिकार है ? यह ठीक ठीक बतलाने की कृपा करें।

तब देवेश्वर शिव ने देवी की ओर मुसकराते हुए देखा और अपने परमघोर सूर्यमय स्वरूप को दिखाया। उनका वह स्वरूप सम्पूर्ण ऐश्वर्य–गुणों से सम्पन्न, सर्वतेजोमय, सर्वोत्कृष्ट तथा शक्तियों, मूर्तियों, अंगों, ग्रहों और देवताओं से घिरा हुआ था। उसके आठ भुजाएँ और चार मुख थे। उसका आधाभाग नारी के रूप में था। उस अद्भुत आकृति वाले आश्चर्यजनक स्वरूप को देखते ही सब देवता यह जान गये कि सूर्यदेव, पार्वतीदेवी, चन्द्रमा, आकाश, वायु, तेज, जल, पृथ्वी तथा शेष पदार्थ भी शिव के ही स्वरूप हैं। सम्पूर्ण चराचर जगत् शिवमय ही है। परस्पर ऐसा कहकर उन्होंने भगवान सूर्य को अर्घ्य दिया और नमस्कार किया। अर्घ्य देते समय वे इस प्रकार बोले 'जिनका वर्ण सिन्दूर के समान है, और मण्डल सुन्दर है, जो सुवर्ण के समान कान्तिमान आभूषणों से विभूषित हैं, जिनके नेत्र कमल के समान हैं, जिनके हाथ में भी कमल है, जो ब्रह्मा इन्द्र और नारायण के भी कारण हैं, उन भगवान् को नमस्कार है।' यों कह उत्तम रत्नों से पूर्ण सुवर्ण, कुंकुम, कुश और पुष्प से युक्त जल सोने के पात्र में लेकर उन देवेश्वर को अर्घ्य दें और कहे—'भगवान् ! आप प्रसन्न हों ! आप सबके आदि कारण हैं। आप ही रुद्र, विष्णु, ब्रह्मा, और सूर्यरूप हैं। गणों सहित आप शान्त शिव को नमस्कार है।

जो एकाग्रचित्त हो सूर्यमण्डल में शिव का पूजन करके प्रातः काल, मध्याह्नकाल और सायंकाल में उनके लिये उत्तम अर्घ्य देता है, प्रणाम करता है और इन श्रवण सुखद श्लोकों वाक्यों को पढ़ता है, उसके लिये कुछ भी दुर्लभ नहीं है। यदि वह भक्त है तो अवश्य ही मुक्त हो जाता है। इसलिये प्रतिदिन शिवरूपी सूर्य का

पूजन करना चाहिये। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के लिये मन, वाणी तथा क्रिया द्वारा उनकी आराधना करनी चाहिये।

तत्पश्चात् मण्डल में विराजमान महेश्वर देवताओं की ओर देख कर और उन्हें सम्पूर्ण शास्त्रों में श्रेष्ठ शिवशास्त्र देकर वहीं अन्तर्धान हो गये। उस शास्त्र में शिवपूजा का अधिकार, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों को दिया गया है। यह जानकर देवेश्वर शिव को प्रणाम करके देवता जैसे आये थे, वैसे चले गये। तदनन्तर दीर्घकाल के पश्चात् जब वह शास्त्र लुप्त हो गया, तब भगवान् शंकर के अंक में बैठी हुई महेश्वरी शिवा ने पतिदेव से उसके विषय में पूछा। तब देवी से प्रेरित हो चन्द्र-भूषण महादेव ने वेदों का सार निकाल कर सम्पूर्ण आगमों में श्रेष्ठ शास्त्र का उपदेश किया फिर उन परमेश्वर की आज्ञा से मैंने, गुरुदेव अगस्त्य ने और महर्षि दधीचि ने भी लोक में उस शास्त्र का प्रचार किया। शूलपाणि महादेव स्वयं भी युग-युग में भूतल पर अवतार ले अपने आश्रितजनों की मुक्ति के लिये ज्ञान का प्रसार करते हैं। ऋभु, सत्य, भार्गव, अंगिरा, सविता, मृत्यु, इन्द्र, मुनिवर वशिष्ठ, सारस्वत, त्रिधामा, मुनिश्रेष्ठ त्रिवृत्, शततेजा, साक्षात् धर्मस्वरूप नारायण, स्वरक्ष, बुद्धिमान आरुणि, कृतञ्जय, भरद्वाज, श्रेष्ठ विद्वान् गौतम, वाचःश्रवा मुनि, पवित्र सूक्ष्मायणि, तृणविन्दुमुनि, कृष्णशक्ति, शाक्तेय (पाराशर) उत्तर, जातुकर्ण्य और साक्षात् नारायण स्वरूप उन कृष्ण द्वैपायन मुनि-ये सब व्यासावतार हैं। अब क्रमशः कल्प योगेश्वरों का वर्णन सुनो। लिंग पुराण में द्वापर के अन्त में होने वाले उत्तम व्रतधारी व्यासावतार तथा योगाचार्यावतारों का वर्णन है। भगवान् शिव के शिष्यों में भी जो प्रसिद्ध हैं, उनका वर्णन है। उन अवतारों में भगवान के मुख्य रूप से चार महातेजस्वी शिष्य होते हैं। फिर उनके सैंकड़ों हजारों शिष्य प्रशिष्य हो जाते हैं। लोक में उनके उपदेश के

अनुसार भगवान् शिव की आज्ञापालन करने आदि के द्वारा भक्ति से अत्यन्त भावित हो भाग्यवान् पुरुष मुक्त हो जाते हैं।

(शि० पु० वायवोय संहिता उ० खं० अ० ८)

शिव के अवतार, योगाचार्यों तथा उनके शिष्यों की नामावली

पुष्प (१२)

श्रीकृष्ण बोले—भगवन्! समस्त युगावर्तों में योगाचार्य के व्याज से भगवान् शंकर के जो अवतार होते हैं और उन अवतारों के जो शिष्य होते हैं उन सबका वर्णन कीजिए।

उपमन्यु ने कहा—-श्वेत, सुतार, मदन, सुहोत्र. कङ्क, लौहाक्षि, महामायावी जैगीषव्य, दधिवाह, ऋषभमुनि, उग्र, अत्रि, सुपालक, गौतम. वेदशिरामुनि, गोकर्ण, गुहावासी, शिखण्डी, जटामाली, अट्टहास. दारुक लांगुली, महाकाल, शूली दण्डो, मुण्डीश, सहिष्णु, सोमशर्मा और नकुलीश्वर ये बारह कल्प के इस सातवें मन्वन्तर में युगक्रम से अट्ठाईस योगाचार्य प्रकट हुए हैं। इनमें से प्रत्येक के शान्तचित्तवाले चार-चार शिष्य हुए हैं, जो श्वेत से लेकर रुष्यपर्यन्त बताये गये हैं। मैं उनका क्रमशः वर्णन करता हूँ, सुनो! श्वेत, श्वेतशिख, श्वेताश्व, श्वेतलोहित, दुन्दुभि, शतरूप, ऋचीक, केतुमान, विकोश, विकेश, विपाश, पापनाशन, सुमुख. दुर्मुख, दुर्गम, दुरतिक्रम, सनत्कुमार, सनक, सनन्दन, सनातन, सुधामा, विरजा, शङ्ख, अण्डज, सारस्वत, मेघ, मेघवाह, कपिल, आसुरि, पञ्चशिख, वाष्कल, पराशर, गर्ग, भार्गव, अंगिरा, बलबन्धु निरामित्र, केतुश्रृङ्ग, तपोधन, लम्बोदर, लम्ब, लम्बात्मा, लम्बकेशक, सर्वज्ञ, समबुद्धि, साध्य, सिद्धि, सुधामा कश्यप, वसिष्ठ, विरजा, अग्नि, उग्र, गुरुश्रेष्ठ, श्रवण, श्रविष्ठक, कुणि, कुणबाहु, कुशरीर, कुनेत्रक, काश्यप, उशना, च्यवन, बृहस्पति, उतथ्य, कामदेव, महाकाल, महानिल, वाचःश्रवा, सुवीर, श्यावक, यतीश्वर,

हिरण्यनाभ, कौशल्य लोकाक्षि, कुथुमि, सुमन्तु, जैमिनी. कुबन्धु. कुशलकन्धरप्लक्ष, दार्भायणि, केतुमान, गौतम, भल्लवी, मधुपिङ्गा, श्वेतकेतु उशिज, वृहदश्व, देवल, कवि, शालिहोत्र, सुवेष, युवनाश्व, शरद्वसु. छगल, कुम्भकर्ण, कुम्भ, प्रबाहुक, उलूक, विद्युत शम्बूक. आश्वलायन, अक्षपाद, कणाद, वत्स, कुशिक, गर्ग, मित्रक, और रुष्य ये योगाचार्य रूपी महेश्वर के शिष्य हैं। इनकी संख्या एक सौ बारह है। ये सब के सब सिद्ध पाशुपत हैं। इनका शरीर भस्म से विभूषित रहता है। ये, सम्पूर्ण शास्त्रों के तत्त्वज्ञ, वेद और वेदांगों के पारंगत विद्वान, शिवाश्रम में अनुरक्त, शिव ज्ञान परायण, सब प्रकार की आसक्तियों से मुक्त, एक मात्र भगवान् शिव में ही मन को लगाये रखने वाले, सम्पूर्ण द्वन्द्वों को सहने वाले, धीर सर्वभूत–हितकारी, सरल, कोमल, स्वस्थ, क्रोधशून्य और जितेन्द्रिय होते हैं, रुद्राक्ष की माला ही इनका आभूषण है। उनके मस्तक त्रिपुण्ड्र से अङ्कित होते हैं। उनमें से कोई तो शिखा के रूप में ही जटा धारण करते हैं। किन्हीं के सारे केश ही जटारूप होते हैं। कोई-कोई ऐसे हैं, जो जटा नहीं रखते हैं और कितने ही सदा माथा मुंडाये रहते हैं। वे प्रायः फल–मूल का आहार करते हैं। प्राणायाम साधन में तत्पर होते हैं। 'मैं शिव का हूँ,' इस अभिमान से युक्त होते हैं। सदा शिव के चिन्तन में लगे रहते हैं। उन्होंने संसार रूपी विषवृक्ष के अंकुर को मथ डाला है। वे सदा परमधाम में जाने के लिये कटिबद्ध होते हैं। जो योगाचार्यों सहित इन शिष्यों को जान मानकर सदा शिव की आराधना करता है; वह शिव का सायुज्य प्राप्त कर लेता है, इसमें कोई अन्यथा विचार नहीं करना चाहिये।

(शि० पु० वाय० संहिता० उ० खं० अ० ९)

शिव के प्रति श्रद्धा-भक्ति, शिव-धर्म के चार पद, शिव-धर्म के अधिकारी एवं भजन की महिमा

पुष्प
(१३)

एक समय देवी पार्वतीने भगवान् शिव से पूछा 'महादेव ! जो आत्मतत्त्व आदि के साधन में नहीं लगे हैं तथा जिनका अन्तःकरण पवित्र एवं वशीभूत नहीं है, ऐसे मन्दमति, मर्त्यलोकवासी जीवात्माओं के वश में आप किस उपाय से हो सकते हैं ?'

श्री महादेवजी बोले—देवी ! यदि साधक के मन में श्रद्धा-भक्ति न हो तो पूजनकर्म, तपस्या, जप, आसन आदि, ज्ञान तथा अन्य साधन से मैं उसके वशीभूत नहीं होता हूँ। यदि मनुष्यों की मुझमें श्रद्धा हो तो जिस किसी भी हेतु से मैं उसके वश में हो जाता हूँ। फिर तो वह मेरा दर्शन, स्पर्श, पूजन एवं मेरे साथ सम्भाषण भी कर सकता है। अतः जो मुझे वश में करना चाहे, उसे पहले मेरे प्रति श्रद्धा करनी चाहिए। श्रद्धा ही स्वधर्म का हेतु है और वही इस लोक में वर्णाश्रमी पुरुषों की रक्षा करने वाली है। जो मानव अपने वर्णाश्रम-धर्म के पालन में लगा रहता है, उसी की मुझमें श्रद्धा होती है, दूसरे की नहीं। वर्णाश्रमी पुरुषों के सम्पूर्ण धर्म वेदों से सिद्ध हैं। पूर्वकाल में ब्रह्माजी ने मेरी ही आज्ञा लेकर उनका वर्णन किया था। ब्रह्माजी का बताया हुआ वह धर्म अधिक धन के द्वारा साध्य है तथा अनेक प्रकार के क्रिया कलापों से युक्त होता है। उससे मिलने वाला अधिकांश फल अक्षय नहीं है तथा उस धन के अनुष्ठान में अनेक प्रकार के क्लेश और आयास उठाने पड़ते हैं। उस महान् धर्म से परम दुर्लभ श्रद्धा को पाकर जो वर्णाश्रमी मनुष्य अनन्य भाव से मेरी शरण में आ जाते हैं, उन्हें सुखद मार्ग से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त होते हैं। वर्णाश्रम सम्बन्धी आचार की सृष्टि मैंने ही बारम्बार की है। उसमें भक्ति भाव रखकर जो मेरे हो गये हैं, उन्हीं वर्णाश्रमियों का

मेरी उपासना में अधिकार है, दूसरों का नहीं, यह मेरी निश्चित आज्ञा है। मेरी आज्ञा के अनुसार धर्ममार्ग से चलने वाले वर्णाश्रमी पुरुष मेरी शरण में आ मेरे कृपा प्रसाद से मल और माया आदि पाशों से मुक्त हो जाते हैं तथा मेरे पुनरावृत्तिरहित धाम में पहुंच कर मेरा उत्तम साधर्म्य प्राप्त करके परमानन्द में निमग्न हो जाते हैं। इसलिये मेरे बताये हुए वर्ण धर्म को पाकर अथवा न पाकर भी जो मेरी शरण ले, मेरा भक्त वन जाता है, वह स्वयं ही अपनी आत्मा का उद्धार कर लेता है। यह कोटि-कोटि गुना अधिक अलब्ध लाभ है। अतः मेरे मुख से प्रतिपादित वर्ण धर्म का पालन अवश्य करना चाहिये।

जो मोक्ष मार्ग से विलग होकर दूसरी किसी वस्तु के लिये श्रम करता है, उसके लिये वही सबसे बड़ी हानि है, वही बड़ी भारी त्रुटि है, वही मोह है और वही अन्धता एवं मूकता है। देवेश्वरि! मेरा जो सनातन धर्म है, वह चार चरणों से युक्त बताया गया है। उन चरणों के नाम हैं-ज्ञान, क्रिया, चर्या और योग। पशु, पाश और पति का ज्ञान ही, ज्ञान कहलाता है। गुरु के अधीन जो विधि-पूर्वक अध्वशोधन का कार्य होता है, उसे क्रिया कहते हैं। मेरे द्वारा विहित, वर्णाश्रमप्रयुक्त जो मेरे पूजन आदि धर्म हैं, उनके आचरण का नाम चर्या है। मेरे बताये हुए मार्ग से ही मुझ में सुस्थिर भाव से चित्त लगाने वाले साधक के द्वारा जो अन्तःकरण की अन्यवृत्तियों का निरोध किया जाता है, उसी को योग कहते हैं। देवि! चित्त को निर्मल एवं प्रसन्न बनाना अश्वमेध यज्ञों के समूह से भी श्रेष्ठ है; क्योंकि वह मुक्ति देने वाला है। विषय भोग की इच्छा रखने वाले लोगों के लिए यह 'मनःप्रसाद' दुर्लभ है। जिसने यम और नियम के द्वारा इन्द्रिय समुदाय पर विजय प्राप्त कर ली है, उस विरक्त पुरुष के लिये ही योग को सुलभ बनाया गया है। योग पूर्व पापों को हर लेने वाला है। वैराग्य से ज्ञान होता है और ज्ञान से योग। योगज्ञ पुरुष पतित हो तो भी मुक्त हो जाता है, इसमें संशय नहीं है।

सब प्राणियों पर दया करनी चाहिये। सदा अहिंसा धर्म का पालन सब के लिये उचित है। ज्ञान का संग्रह भी आवश्यक है। सत्य बोलना, चोरी से दूर रहना, ईश्वर और परलोक पर विश्वास रखना, मुझ में श्रद्धा करना इन्द्रियों को संयम में रखना। वेद शास्त्रों को पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ करना, कराना, मेरा चिन्तन करना, ईश्वर के प्रति अनुराग रखना और सदा ज्ञान शील होना ब्राह्मण के लिये नितान्त आवश्यक है। ब्राह्मण ज्ञानयोग की सिद्धि के लिये सदा इस प्रकार उपर्युक्त धर्मों का पालन करता है। प्रिये! ज्ञानी पुरुष ज्ञानाग्नि के द्वारा इस कर्ममय शरीर को क्षण भर में दग्ध करके मेरे प्रसाद से योग का ज्ञाता होकर कर्मबन्धन से छुटकारा पा जाता है। पुण्य पापमय जो कर्म है, उसे मोक्ष का प्रतिबन्धक बताया गया है; इसलिये योगी पुरुष योग के द्वारा पुण्यापुण्य का परित्याग करदे। फल की कामना से प्रेरित होकर कर्म करने से ही मनुष्य बन्धन में पड़ता है, केवल कर्म करने मात्र से ही नहीं; अतः कर्म के फल को त्याग देना चाहिये। प्रिय! कर्ममय यज्ञ द्वारा मेरी पूजा करके फिर ज्ञानयोग में तत्पर हो साधक योग का अभ्यास करे। कर्म यज्ञ से मेरे यथार्थ स्वरूप का बोध हो जाने पर जीव योग-युक्त हो मेरे यजन से विरत हो जाते हैं। उस समय वे मिट्टी, पत्थर और सुवर्ण में भी समभाव रखते हैं। जो मेरा भक्त नित्ययुक्त एवं एकाग्रचित हो, ज्ञान योग में तत्पर रहता है, वह मुनियों में श्रेष्ठ एव योगी होकर मेरा सायुज्य प्राप्त कर लेता है। जो वर्णाश्रमी पुरुष मन से विरक्त नहीं हैं, वे मेरा आश्रय ले ज्ञान, चर्या और क्रिया इन तीनों में ही प्रवृत्त होने के अधिकारी हैं। उन्हीं के अनुष्ठान की योग्यता रखते हैं। मेरा पूजन दो प्रकार का है—बाह्य और आभ्यन्तर। इसी तरह मन, वाणी और शरीर—इन त्रिविध साधनों के भेद से मेरा भजन तीन प्रकार का माना गया है। तप, कर्म, जप, ध्यान और ज्ञान—ये मेरे भजन के पांच स्वरूप है; अतः साधु पुरुष उसे पांच प्रकार का भी कहते हैं। मूर्ति आदि में जो

मेरा पूजन आदि होता है जिसे दूसरे लोग जान लेते हैं, वह या भजन 'बाह्य' पूजन या भजन कहा गया है, तथा वही भजन-पूजन जब मन के द्वारा होने से केवल अपने ही अनुभव का विषय होता है, तब 'आभ्यन्तर' कहलाता है। मुझ में लगा हुआ चित्त ही 'मन' कहलाता है। सामान्य मन को यहां मन नहीं कहा गया है। इसी तरह जो वाणी मेरे नाम के जप और कीर्तन में लगी हुई है, वही 'वाणी' कहलाने योग्य है, दूसरी नहीं तथा जो मेरे शास्त्र में बताये हुए त्रिपुण्ड्र आदि चिह्नों से अङ्कित है और निरन्तर मेरी सेवा पूजा में लगा हुआ है वही शरीर 'शरीर' है दूसरा नहीं। मेरी पूजा को ही कर्म जानना चाहिये। मेरे लिये शरीर को सुखाना ही 'तप' है। कृच्छ्र चान्द्रायण आदि का अनुष्ठान नहीं। पञ्चाक्षर मंत्र की आवृत्ति, प्रणव का अभ्यास तथा रुद्राध्याय आदि का बारम्बार पाठ ही यहाँ 'जप' कहा गया है, वेदाध्ययन आदि नहीं। मेरे स्वरूप का चिन्तन स्मरण ही 'ध्यान' है। मेरे आगमों के अर्थ को भली भांति जानना ही 'ज्ञान' है दूसरी किसी वस्तु के अर्थ को समझना नहीं।

देवि पूर्ववासनावश बाह्य अथवा आभ्यन्तर जिस पूजन में मन का अनुराग हो, उसी में दृढ़ निष्ठा रखनी चाहिये। बाह्य पूजन से आभ्यन्तर पूजन सौ गुना अधिक श्रेष्ठ है; क्योंकि उसमें दोषों का मिश्रण नहीं होता तथा प्रत्यक्ष दीखने वाले दोषों की भी वहां सम्भावना नहीं रहती है। भीतर की शुद्धि को ही शुद्धि समझनी चाहिये। जो आन्तरिक शुद्धि से रहित है, वह बाहर से शुद्ध होने पर भी अशुद्ध ही है। देवि ! बाह्य और आभ्यन्तर दोनों ही प्रकार का भजन भाव(अनुराग)पूर्वक होना चाहिये, बिना भाव के नहीं। भावरहित भजन तो एकमात्र विप्रलम्भ (छलना) का ही कारण होता है। मैं तो सदा कृतकृत्य और पवित्र हूँ, मनुष्य मेरा क्या करेंगे ? उनके द्वारा किये गये बाह्य अथवा आभ्यन्तर पूजन में उनका जो भाव (प्रेम) है, उसी को मैं ग्रहण करता हूँ।

देवि! क्रिया का एक मात्र आत्माभात्र ही है। वही मेरा सनातन धर्म है। मन, वाणी और कर्म द्वारा कहीं भी किंचिन्मात्र फल की इच्छा न रखकर ही क्रिया करनी चाहिये। देवेश्वरि! फल का उद्देश्य रखने से मेरा आश्रय लघु हो जाता है, क्योंकि फलार्थी को यदि फल न मिला तो वह मुझे छोड़ सकता है। देवि! फलार्थी होने पर भी जिस साधक का चित्त मुझमें लगा हो, वे भक्त भी मुझे प्रिय हैं। पर पूर्व संस्कारवश ही फलाफल की चिन्ता करके विवश हो मेरी शरण लेते हैं वे भक्त मुझे अधिक प्रिय हैं। परमेश्वरि! उन भक्तों के लिये मेरी प्राप्ति से बढ़कर दूसरा कोई वास्तविक लाभ नहीं तथा मेरे लिये भी वैसे भक्तों की प्राप्ति से बढ़कर और कोई लाभ की बात नहीं है। मुझ में समर्पित हुआ उनका भाव मेरे अनुग्रह से ही उनको बलपूर्वक परमनिर्वाण रूप फल प्रदान करता है।

जिन्होंने अपने चित्त को मुझे समर्पित कर दिया है, अतएव जो मेरे अनन्य भक्त हैं. वे महात्मा पुरुष ही मेरे धर्म के अधिकारी हैं। उनके आठ लक्षण बताये गये हैं। मेरे भक्तजनों के प्रति स्नेह, मेरी पूजा का अनुमोदन, स्वयं की भी मेरे पूजन में प्रवृत्ति मेरे लिये ही शारीरिक चेष्टाओं का होना, मेरी कथा सुनने में भक्ति-भाव, कथा सुनते समय स्वर, नेत्र और अङ्गों में विकार का होना, बारंबार मेरी स्मृति और सदा मेरे ही आश्रित रहकर ही जीवन-निर्वाह करना–ये आठ प्रकार के चिह्न यदि किसी म्लेच्छ में भी हो तो वह विप्र शिरोमणि श्रीमान् मुनि है। वह संन्यासी है और वही पण्डित है। जो मेरा भक्त नहीं है. वह मुझे प्रिय नहीं है। जो मेरा भक्त है. वह चाण्डाल भी हो तो भी प्रिय है। उसे उपहार देना चाहिये, उससे प्रसाद ग्रहण करना चाहिये तथा वह मेरे ही समान पूजनीय है। जो भक्ति-भाव से मुझे पत्र, पुष्प, फल अथवा जल समर्पित करता है उनके लिये मैं अदृश्य नहीं होता हूं और वह भी मेरी दृष्टि से कभी ओझल नहीं होता है।

(शि० पु० वायवीय संहिता उ० खं० अध्याय १०)

शिव, विष्णु, रुद्र और ब्रह्मा के स्वरूप का विवेचन

पुष्प
(१४)

ऋषियों ने पूछा--शिव कौन है? विष्णु कौन है? रुद्र कौन है? और ब्रह्मा कौन है? इन सब में निर्गुण कौन है? हमारे इस सन्देह का आप निवारण कीजिये।

सूत जी ने कहा—महर्षियो! वेद और वेदान्त के विद्वान् ऐसा मानते हैं कि निर्गुण परमात्मा से सर्वप्रथम जो सगुण रूप प्रकट हुआ, उसी का नाम 'शिव' है। शिव से पुरुष सहित प्रकृति उत्पन्न हुई। उन दोनों ने मूल-स्थान में स्थित जल के भीतर तप किया। वह स्थान पञ्चकोशी काशी के नाम से विख्यात है, जो भगवान् शिव को अत्यन्त प्रिय है। यह जल सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त था। उस जल का आश्रय ले योग माया से युक्त होकर श्री हरि वहाँ सोये। अर्थात् जल को अयन (निवास स्थान) बनाने के कारण फिर 'नारायण' नाम से प्रसिद्ध हुए और प्रकृति 'नारायणी' कहलायी। नारायण के नाभि कमल से जिनकी उत्पत्ति हुई, वे ब्रह्मा जी कहलाते हैं। ब्रह्मा ने तपस्या करके जिनका साक्षात्कार किया, उन्हें विष्णु कहा गया है।

ब्रह्मा और विष्णु के विवाद को शान्त करने हेतु निर्गुण शिव ने जो रूप प्रकट किया उसका नाम 'महादेव' है। उन्होंने कहा कि मैं ब्रह्मा जी के ललाट से प्रकट होऊँगा, इस कथन के अनुसार समस्त लोकों पर अनुग्रह करने के लिये जो ब्रह्मा जी के ललाट प्रकट हुए उनका नाम रुद्र हुआ। इस प्रकार रूप रहित परमात्मा सब के चिन्तन का विषय बनने के लिये साकार रूप में प्रकट हुआ। तीनों गुणों से भिन्न शिव में तथा गुणों के धाम रुद्र में उसी तरह वास्तविक भेद नहीं है, जैसे सुवर्ण और उसके आभूषण में नहीं है। दोनों के रूप और कर्म समान हैं। दोनों सबके लिये सेवनीय हैं तथा नाना प्रकार के लीला-बिहार करने वाले हैं। भयानक पराक्रमी

रुद्र सर्वथा शिव रूप ही हैं। वे भक्तों के कार्य की सिद्धि के निमित्त विष्णु और ब्रह्मा की सहायता करने के लिये प्रकट हुए हैं। अन्य जो जो देवता जिस क्रम से प्रकट हुए हैं, उसी क्रम से लय को प्राप्त होते हैं। परन्तु रुद्र देव उस तरह लीन नहीं होते। उनका साक्षात् शिव में ही लय होता है। ये प्राकृत प्राणी रुद्र में मिलकर ही लय को प्राप्त होते हैं। परन्तु रुद्र इनमें मिलकर लय को नहीं प्राप्त होते। यह भगवती श्रुति का उपदेश है। सब लोग रुद्र का भजन करते हैं, किन्तु रुद्र किसी का भजन नहीं करते। वे भक्तवत्सल होने के कारण कभी-कभी स्वयं भक्तों का चिन्तन कर लेते हैं। जो दूसरे देवताओं का भजन करते हैं, वे उसी में लीन होते हैं, इसलिये वे दीर्घकाल के बाद रुद्र में लीन होने का अवसर पाते हैं। जो कोई रुद्र के भक्त हैं, वे तत्काल शिव हो जाते हैं; अतः उनके लिये दूसरे की अपेक्षा नहीं रहती। यह सनातन श्रुति का सन्देश है। द्विजो! अज्ञान अनेक प्रकार का होता है; परन्तु विज्ञान का एक ही स्वरूप है। वह अनेक प्रकार का नहीं होता। उसको समझने का प्रकार मैं बताऊँगा, तुम लोग आदर पूर्वक सुनो। ब्रह्मा से लेकर तृण पर्यन्त जो भी कुछ यहाँ देखा जाता है, वह सब शिव रूप ही है। उसमें नानात्व की कल्पना मिथ्या है। सृष्टि के पूर्व भी शिव की सत्ता बताई गयी है, सृष्टि के मध्य में शिव बिराज रहे हैं, सृष्टि के अन्त में भी शिव रहते हैं और जब सब कुछ शून्यता में परिणित हो जाता है, उस समय भी शिव की सत्ता रहती ही है। अतः शिव को ही चतुर्गुण कहा गया है। वे ही शिव शक्तिमान होने के कारण 'सगुण' हैं। इस प्रकार वे सगुण-निर्गुण के भेद से दो प्रकार के हैं। जिन शिव ने ही भगवान विष्णु को सम्पूर्ण सनातन वेद, अनेक वर्ण, अनेक मात्रा तथा अपना ध्यान एवं पूजन दिये हैं वे ही सम्पूर्ण विद्याओं के ईश्वर हैं-ऐसी सनातन श्रुति है। अतएव शम्भु को 'वेदों का प्राकटचकर्त्ता' तथा 'वेदपति' कहा गया है। वे ही सब पर अनुग्रह करने वाले साक्षात् शंकर हैं। कर्ता, भर्ता, हर्ता, साक्षी तथा निर्गुण भी वे ही हैं। दूसरों के लिये

काल का मान है, परन्तु काल स्वरूप रुद्र के लिये काल की कोई गणना नहीं है क्योंकि वे साक्षात् स्वयं महाकाल हैं और महाकाली उनके आश्रित हैं। ब्राह्मण रुद्र और काली को एक ही बताते हैं। उन दोनों ने सत्य लीला करने वाली अपनी इच्छा से ही सब कुछ प्राप्त किया है। शिव का कोई उत्पादक नहीं है उनका कोई पालक और संहारक भी नहीं है। वे स्वयं सबके हेतु हैं, एक होकर भी अनेकता को प्राप्त हो सकते हैं और अनेक होकर भी एकता को। एक ही बीज बाहर होकर वृक्ष और फल आदि के रूप में परिणित होता हुआ पुनः बीज भाव को प्राप्त हो जाता है। इसी प्रकार शिव रूपी महेश्वर स्वयं एक से अनेक होने में हेतु हैं। यह उत्तम शिव ज्ञान तत्त्वतः बताया गया है। ज्ञानवान् पुरुष ही इसको जानता है, दूसरा नहीं।

(शि० पु० कोटिरुद्र संहिता अध्याय ४२)

शिव सम्बन्धी तत्त्वज्ञान तथा उसकी महिमा

पुष्प (१५)

सूतजी ने कहा—ऋषियो! मैंने शिवज्ञान जैसा सुना है, उसे बता रहा हूँ। तुम सब लोग ध्यान से सुनो, वह अत्यन्त गुह्य और परम मोक्ष स्वरूप है। ब्रह्मा, नारद, सनकादि मुनि व्यास तथा कपिल-इनके समाज में इन्हीं लोगों ने निश्चय करके ज्ञान का जो स्वरूप बताया है; उसी को यथार्थ ज्ञान समझना चाहिये। सम्पूर्ण जगत् शिवमय है, यह ज्ञान सदा अनुशीलन करने योग्य है। सर्वज्ञ विद्वान् को यह निश्चत रूप मे जानना चाहिये की शिव सर्वमय हैं। ब्रह्मा से लेकर तृणपर्यन्त जो कुछ जगत् दिखाई देता है, वह सब 'शिव' ही है। वे महादेवजी ही शिव कहलाते हैं। जब उनकी इच्छा होती है, तब वे इस जगत् की रचना करते हैं। वे ही सबको जानते हैं, उनको कोई नहीं जानता। वे इस जगत् की रचना करके स्वयं इसके भीतर प्रविष्ट होकर भी इससे दूर हैं। वास्तव में उनका इसमें प्रवेश नहीं हुआ है; क्योंकि वे निर्लिप्त, सच्चिदानन्द स्वरूप हैं। जैसे सूर्य आदि ज्योतियों का जल

में प्रतिबिम्ब पड़ता है; वास्तव में जल के भीतर उनका प्रवेश नहीं होता, उसी प्रकार साक्षात् शिव के विषय में समझना चाहिये। वस्तुतः तो वे स्वयं ही सब कुछ हैं। मतभेद भी अज्ञान है; क्योंकि शिव से भिन्न किसी द्वैत वस्तु की सत्ता नहीं है। सम्पूर्ण दर्शनों में मतभेद ही दिखाया जाता है। परन्तु वेदान्ती नित्य, अद्वैत तत्त्व का वर्णन करते हैं। जीव परमात्मा शिव का ही अंश है; परन्तु अविद्या से मोहित होकर अवश हो रहा है और अपने को शिव से भिन्न समझता है। अविद्या से मुक्त होने पर वह शिव ही हो जाता है। शिव सवत्र व्याप्त करके स्थित हैं और सम्पूर्ण जन्तुओं में व्यापक हैं। वे जड़ और चेतन–सबके ईश्वर होकर स्वयं ही सबका कल्याण करते हैं। जो विद्वान् पुरुष वेदान्त मार्ग का आश्रय ले उनके साक्षात्कार के लिए साधना करता है उसे वह साक्षात्काररूप फल अवश्य प्राप्त होता है। व्यापक अग्नि तत्त्व प्रत्येक काष्ठ में स्थित है; परन्तु जो उस काष्ठ का मंथन करता है; वही असंदिग्ध रूप से अग्नि को प्रकट करके देखता है। उसी तरह जो बुद्धिमान यहाँ भक्ति आदि साधनों का अनुष्ठान करता है, उसे अवश्य शिव का दर्शन प्राप्त होता है। इसमें संशय नहीं है। सर्वत्र केवल शिव है, शिव है, शिव है, दूसरो कोई वस्तु नहीं है। वे शिव भ्रम से ही सदा नाना रूपों में भासित होते हैं।

जैसे समुद्र, मिट्टी अथवा सुवर्ण–ये उपाधि भेद से नानात्व को प्राप्त होते हैं; उसी प्रकार भगवान् शंकर भी उपाधियों से अनेक रूपों में भासते हैं। कार्य और कारण में वास्तविक भेद नहीं होता। केवल भ्रम से भरी हुई बुद्धि के द्वारा ही उसमें भेद की प्रतीति होती है। भ्रम दूर होते ही भेद बुद्धि का नाश हो जाता है। जब बीज से अङ्कुर उत्पन्न होता है, तब नानात्व को प्रकट करता है; फिर अन्त में वह बीजरूप में ही स्थित होता है और अंकुर नष्ट हो जाता है। ज्ञानी बीज रूप में ही स्थित है और नाना प्रकार के विकार अंकुर रूप हैं। उन विकार स्वरूप अंकुरों की निवृत्ति हो जाने पर पुरुष फिर ज्ञानी रूप में ही स्थित होता है—इसमें अन्यथा

विचार नहीं करना चाहिये। सब कुछ शिव है और शिव ही सब कुछ हैं। शिव तथा सम्पूर्ण जगत् में कोई भेद नहीं है; फिर क्यों कोई अनेकता देखता है और क्यों एकता ढूंढ़ता है। जैसे एक ही सूर्य नामक ज्योति जल आदि उपाधियों में विशेष रूप से नाना प्रकार की दिखाई देती है, उसी प्रकार शिव भी हैं। जैसे आकाश सर्वत्र व्यापक होकर भी स्पर्श आदि बन्धनों में नहीं आता, उसी प्रकार व्यापक शिव भी कहीं नहीं बंधते। अहंकार से युक्त होने के कारण शिव का अंश जीव कहलाता है। उस अहंकार से मुक्त होने पर वह साक्षात् शिव ही है। कर्मों के भोग में लिप्त होने के कारण जीव तुच्छ है और निर्लिप्त होने के कारण शिव महान् हैं। जैसे एक ही सुवर्ण आदि चाँदी आदि से मिल जाने पर कम कीमत का हो जाता है, उसी प्रकार अहंकार युक्त जीव अपना महत्त्व खो बैठता है। जैसे क्षार आदि से शुद्ध किया हुआ उत्तम सुवर्ण आदि पूर्ववत् बहुमूल्य हो जाता है, उसी प्रकार संस्कार विशेष से शुद्ध होकर जीव भी शुद्ध हो जाता है।

पहले सद्गुरु को पाकर भक्ति भाव से युक्त हो शिव बुद्धि से उनका पूजन और स्मरण आदि करे। गुरु में शिव बुद्धि करने से सारे पाप-आदि मल शरीर से निकल जाते हैं। उस समय अज्ञान नष्ट हो जाता है और मनुष्य ज्ञानवान् हो जाता है। उस अवस्था में अहंकार मुक्त निर्मल बुद्धि वाला जीव भगवान शंकर के प्रसाद से पुनः शिव रूप हो जाता है। जैसे दर्पण में अपना रूप दिखाई देता है, उसी प्रकार उसे सर्वत्र शम्भु का साक्षात्कार होने लगता है। वही जीवन्मुक्त कहलाता है। शरीर गिर जाने पर वही जीवन्मुक्त ज्ञान शिव में मिल जाता है। शरोर प्रारब्ध के अधीन है। जो उस देह के अभिमान से रहित है; उसे ज्ञानी माना गया है। जो शुभ वस्तु को पाकर हर्ष से खिल नहीं उठता, अशुभ को पाकर क्रोध या शोक नहीं करता तथा सुख दुःख आदि सभी द्वन्द्वों में समभाव रखता है; वह ज्ञानवान् कहलाता है। आत्म चिन्तन से तथा तत्त्वों के विवेक

से ऐसा प्रयत्न करे कि शरीर से अपनी पृथकता का बोध हो जाये। मुक्ति की इच्छा रखने वाला पुरुष शरीर एवं उसके अभिमान को त्याग कर अहंकार शून्य एवं मुक्त हो सदा शिव में विलीन हो जाता है। अध्यात्म-चिन्तन एवं भगवान् शिव की भक्ति–ये ज्ञान के मूल कारण हैं। भक्ति से साधन–विषयक प्रेम की उपलब्धि बताई गई है। प्रेम से श्रवण होता है, श्रवण से सत्संग प्राप्त होता है और सत्संग से ज्ञान गुरु की उपलब्धि होती है। गुरु की कृपा से ज्ञान प्राप्त हो जाने पर मनुष्य निश्चय ही मुक्त हो जाता है। इसलिये जो समझदार है, उसे सदा शम्भु का ही भजन करना चाहिये। जो अनन्य भक्ति से युक्त होकर भगवान् शिव का भजन करता है; उसे अन्त में अवश्य ही मोक्ष प्राप्त हो जाता है। अतः मुक्ति की प्राप्ति के लिये भगवान् शंकर से बढ़कर कोई देवता नहीं है। उनकी शरण लेकर जीव संसार बन्धन से छूट जाता है।

ब्राह्मणो! इस प्रकार वहां पधारे हुए ऋषियों ने परस्पर निश्चय करके जो यह ज्ञाम की बात बताई है, इसे अपनी बुद्धि के द्वारा प्रयत्नपूर्वक धारण करना चाहिये। मुनीश्वरो! तुमने जो कुछ पूछा था, वह सब मैंने तुम्हें बता दिया। इसे तुम्हें प्रयत्न पूर्वक गुप्त रखना चाहिये। बताओ, अब और क्या सुनना चाहते हो?

ऋषि बोले--व्यास शिष्य! आपको नमस्कार है। आप धन्य हैं, शिव भक्तों में श्रेष्ठ हैं। आपने हमें शिव तत्त्व सम्बन्धी परम उत्तम ज्ञान का श्रवण कराया है। आपकी कृपा से हमारी मन की भ्रान्ति मिट गई। हम आप से मोक्षदायक शिव का ज्ञान पाकर अत्यन्त सन्तुष्ट हुए हैं।

सूतजी ने कहा--द्विजो' जो नास्तिक हो, श्रद्धाहीन हो, शठ हो, जो भगवान् शिव का भक्त न हो तथा इस विषय को सुनने की रुचि न रखता हो, उसे इस तत्त्व ज्ञान का उपदेश नहीं देना चाहिये। व्यास जी ने इतिहास, पुराणों, वेदों और शास्त्रों का बारम्बार विचार करके उनका सार निकालकर मुझे उपदेश दिया है। इसका

एक बार श्रवण करने मात्र से सारे पाप भस्म हो जाते हैं। अभक्त को भक्ति प्राप्त होती है और भक्त की भक्ति बढ़ती है दुबारा सुनने से उत्तम भक्ति प्राप्त होती है। तीसरी बार सुनने से मोक्ष प्राप्त होता है। अतः भोग और मोक्ष रूप फल की इच्छा रखने वाले लोगों को इसका बारम्बार श्रवण करना चाहिये। उत्तम फल को पाने के उद्देश्य से इस प्रकार के तत्त्व ज्ञान की पांच आवृत्तियाँ करनी चाहिये। ऐसा करने पर मनुष्य उसे अवश्य पाता है, इसमें सन्देह नहीं है क्योंकि यह व्यास जी का कथन है। इसके बार-बार श्रवण करने वाले को कुछ भी दुर्लभ नहीं है।

यह शिव–विज्ञान भगवान शंकर को अत्यन्त प्रिय है। यह भोग और मोक्ष देने वाला है, शिव भक्ति को बढ़ाने वाला है।

(शि० पु० आनन्द दा० कोटि रुद्र संहि० अध्याय ४३)

आद्या शक्ति भगवती देवी और ब्रह्म की एकता

पुष्प
(१६)

महर्षि श्री वेदव्यास जी ने विभिन्न देवताओं के नाम से विभिन्न पुराणों की रचना की; इसका अभिप्राय यही प्रतीत होता है कि संसार में अनेक प्रकार के उपासक हैं। कोई देवी का उपासक है, कोई शंकर का और कोई विष्णु का। इन सभी उपासकों को शीघ्र पर ब्रह्म–परमात्मा की प्राप्ति हो जाय, इसके लिए वेदव्यास जी ने एक देवता को प्रधानता देकर उन–उन देवताओं के नाम से पुराणों की रचना की। उनमें उन्होंने सभी उपासकों को एक पर ब्रह्म परमात्मा की ओर ही आकृष्ट किया है।

श्री शिव पुराण में बतलाया गया है कि श्री शिव से ही ब्रह्मा, विष्णु महेश की उत्पत्ति होती है एवं सृष्टि की उत्पत्ति, पालन और संहार की शक्ति प्रदान करने वाले भगवान् सदाशिव

हैं। इसी प्रकार श्री विष्णु पुराण में बतलाया गया है कि श्री विष्णु ही सृष्टि की उत्पत्ति, पालन और संहार करने वाले हैं एवं श्री मद्देवीभागवत में देवी को आद्याशक्ति बतलाकर ब्रह्मा, बिष्णु, महेश का देवी से आविर्भाव और तिरोभाव बतलाया गया है।

यों शिव पुराण में शिव को श्री विष्णु पुराण में विष्णु को और देवी भागवत् में भगवती देवी को साक्षात्–सच्चिदानन्द ब्रह्म बतलाया गया है। इसी प्रकार शिव, गणेश आदि पुराणों के सम्बन्ध में समझना चाहिये।

भाव यह है कि श्री शिव के उपासकों को यह कहा गया है कि श्री शिव ही सबसे बढ़कर हैं, उनसे बढ़कर कोई नहीं है। श्री शिव ही ब्रह्मा, विष्णु, महेश के रूप में प्रकट होकर सृष्टि की उत्पत्ति पालन और संहार करते हैं। वे ही साक्षात् पूर्ण ब्रह्म परमात्मा हैं। वे ही सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान सर्वाधार और सर्वश्रेष्ठ हैं। अतः श्री शिव के उपासकों को श्री शिव से बढ़कर किसी देवता आदि को नहीं समझना चाहिये। इसी प्रकार विष्णु के उपासक के लिए यह बतलाया गया है कि विष्णु सर्वोपरि देवता हैं उनसे बढ़कर कोई नहीं। श्री विष्णु ही ब्रह्मा, विष्णु, महेश के रूप में संसार का उत्पादन, पालन और संहार करते हैं। अतः वे ही परम उपास्य हैं।

श्री वेद व्यास जी के उपर्युक्त कथन का तात्पर्य यही है कि शंव, वैष्णव, शाक्त आदि सभी उपासक अपने अपने इष्ट देव को सर्वोपरि, सर्वशक्तिमान, सर्वाधार, सर्वज्ञ, सर्वश्रेष्ठ पूर्ण ब्रह्म परमात्मा मानकर अपने इष्टदेव में ही श्रद्धा रखें और उन्हीं की अनन्य भाव से उपासना करें। पुराणों को देखने पर यही सिद्ध होता है कि उनके प्रतिपाद्य देवताओं के नाम और रूप तो भिन्न भिन्न हैं, परन्तु लक्ष्य एक पूर्ण ब्रह्म परमात्मा का ही रखा गया है क्योंकि उन देवताओं के गुण, प्रभाव, लक्षण, महिमा और स्तुति-प्रार्थना का वर्णन करते हुए प्रत्येक देवता को ब्रह्म का रूप दिया गया है। अतः वास्तव में एक ही पर ब्रह्म परमात्मा की उपासना अनेक प्रकार से

की गई है। नहीं तो उपासक नाना प्रकार के मत मतान्तरों को मानकर यदि उन सबके अनुसार अनुष्ठान करने लगे तो वह किसी एक में भी सुदृढ़ निष्ठावान नहीं बान पाता और उसका साधन छिन्न भिन्न हो जाता है। इसलिये श्री वेदव्यास जी ने सम्पूर्ण संसार पर कृपा करके पुराणों के द्वारा उन सब उपासकों को एकनिष्ठ करते हुए एक परब्रह्म परमात्मा की ओर आकृष्ट किया है।

श्रीमद्देवी भागवत में वेदों ने भगवती देवी की स्तुति करते हुए कहा है--देवी ! आप महामाया है। जगत् की सृष्टि करना आपका स्वभाव है। आप कल्याणमय विग्रह धारण करने वाली एवं निर्गुणा हैं। अखिल जगत् आपका शासन मानता है तथा भगवान् शंकर के आप मनोरथ पूर्ण किया करती हैं। सम्पूर्ण प्राणियों को आश्रय देने के लिये आप पृथ्वी स्वरूपा हैं। प्राणधारियों के प्राण भी आप ही हैं। धी, श्री, कान्ति, क्षमा, शान्ति, श्रद्धा, मेधा, धृति और स्मृति ये सभी आपके नाम हैं। ॐ कार में जो अर्धमात्रा है; वह आपका ही निर्विशेष रूप है। गायत्री में आप प्रणव हैं। जया, विजया, धात्री, लज्जा, कीर्ति, स्पृहा और दया इन नामों से आप प्रसिद्ध हैं। माता हम आपको नमस्कार करते हैं।

(१/५/५३–५५)

श्री सूतजी ने ऋषियों को बतलाया है—विद्वान् पुरुष भी ऐसा ही कहते हैं और पुराणों ने भी घोषणा की है कि ब्रह्मा में जो सर्जन शक्ति है एवं सूर्य में जो प्रकाशन शक्ति है तथा शेष और कच्छप में जो पृथ्वी धारण करने की शक्ति है; अग्नि में जो जलाने की और वायु में जो हिलाने डुलाने की शक्ति है—यों सबमें जो शक्ति विद्यमान है वही आद्याशक्ति है। इस प्रकार सब में व्यापक रहने वाली उस आद्याशक्ति का ही 'ब्रह्म' इस नाम से निरूपण किया गया है। अतएव बुद्धिमान् पुरुष को भलीभांति विचार कर अनेक प्रकार से सदा उस आद्याशक्ति की ही उपासना करनी चाहिए।

ब्रह्मा, विष्णु, महेश उन पर ब्रह्मस्वरूपिणी भगवती पराशक्ति देवी को नित्य सनातनी समझ कर नानाविध यज्ञों का अनुष्ठान

करते और मन से सदा उनका ध्यान करते हैं। अतः विद्वान् पुरुषों को चाहिये कि वे दृढ़ निश्चय पूर्वक सदा उन चिन्मयी परमा आद्या शक्ति की ही उपासना करे।

(दे० भा० १/८/२८–३०, ३४, ४६–४८)

सभी देवता और दानवो के लिये चिन्मयी परमा शक्ति ही आराधना करने योग्य है। त्रिलोकी में इन भगवती से बढ़कर अन्य कोई भी नहीं है। यह बात सत्य है, सत्य है। वेद और शास्त्रों का भी यही सच्चा तात्पर्य एवं निर्णय है कि निर्गुण अथवा सगुण रूपा चिन्मयी पराशक्ति ही पूजनीय है। यही नहीं स्वयं भगवती देवी ने भगवान् विष्णु से कहा है कि—

सर्वं खल्विदमेवाहं नान्यदस्ति सनातनम्।

(दे० भा० १/१५/५२)

यह सारा जगत मैं ही हूँ, मेरे सिवा दूसरी कोई अविनाशी वस्तु नहीं है।'

यह आधा श्लोक ही श्रीमद्भागवत का मूल वचन है। इसमें यही प्रतिपादन किया गया है कि भगवती देवी ही यह सनातन पर ब्रह्म तत्त्व है जिसका वर्णन उपनिषद् में 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' (छान्दोग्य ३/१४/१)– यह सब निश्चय ही ब्रह्म है; और गीता में वासुदेवः सर्वमिति' (७/१९) यह सब कुछ वासुदेव ही है; सदसच्चाहमर्जुन' (९/१९) 'अर्जुन! सत् असत् सब कुछ मैं ही हूँ', तथा 'मत्तः परतरं नान्यत् किंचिदस्ति धनंजय' (७/७)—'अर्जुन! मुझ से अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है,–इन वाक्यों के द्वारा किया गया है। भगवती देवी ने ब्रह्माजी से इसी तत्त्व का वर्णन किया है।—मैं और ब्रह्म एक ही हैं। मुझ में और ब्रह्म में किंचिन्मात्र भी भेद नहीं है, जो वे हैं, वही मैं हूँ और मैं हूँ, वही वे हैं। बुद्धि के भ्रम से भेद प्रतीत हो रहा है। जो बुद्धिमान पुरुष हम लोगो के सूक्ष्म भेद को जान सकता है, वही मुक्त है। उसके इस संसार सागर से मुक्त होने में सन्देह नहीं है।

(दे० भा० ३/६/२–३)

'ब्रह्माजी ! सब मैं ही हूँ; इसे निश्चयपूर्वक जान लेना चाहिये। सम्पूर्ण देवताओं में मैं विभिन्न नामों से विख्यात हूँ–यह निश्चित बात है। मैं शक्ति रूप धारण करके पराक्रम करती हूँ। गौरी ब्राह्मी, रौद्री, वाराही, वैष्णवी, शिवा, वारुणी, कौबेरी, नारसिंही, और वासवी-सभी मेरे ही रूप हैं। जल में शीतलता, अग्नि में उष्णता, सूर्य में ज्योति एवं चन्द्रमा में शीतलता का विस्तार करने की योग्यता जिस प्रकार बनी रहे, वैसी व्याख्या करके मैं ही स्वेच्छानुसार उनके भीतर प्रविष्ट होती हूँ।'

(दे० भा० ३/६/११, १३, १४–१६)

श्री ब्रह्माजी ने नारद जी से कहा है, 'नारद ! वे परमात्मा और आद्या शक्ति दोनों एक रूप चिन्मयस्वरूप, निर्गुण और निर्मल हैं, जो शक्ति है, वही परमात्मा है और जो परमात्मा है, वही शक्ति है—ऐसा सिद्धान्त है इनके सूक्ष्म रहस्य युक्त अन्तर को कोई भी श्रद्धा-भक्ति रहित पुरुष नहीं जान पाता।

(दे० भा० ३/७/१४–१५)

भगवती देवी ने अपने अवतार लेने का प्रयोजन बतलाते हुए स्वयं कहा है––'श्रेष्ठ पुरुषो की रक्षा करना, वेदों को स्वरक्षित रखना और जो दुष्ट हैं, उन्हें मारना ये मेरे कार्य हैं, जो अनेक अवतार लेकर मेरे द्वारा किये जाते हैं। प्रत्येक युग में मैं ही उन अवतारों को धारण करती हूँ।

(दे० भा० ५/१५/२२–२३)

भगवती देवी ने हिमालय गिरि से अपना तात्त्विक स्वरूप इस प्रकार वर्णन किया गया है––'पर्वतराज ! पहले केवल मैं ही थी, मेरे सिवा दूसरी कोई नहीं थी। उस समय मेरा वह रूप अप्रतर्क्य, अनिर्देश्य, अनौपम्य और अनामय है। उसी से कोई एक शक्ति स्वतः प्रकट हो गई, उसी का नाम 'माया' प्रसिद्ध हुआ।

(दे० भा० ७/३२/२–३)

'हिमालय ! मेरी माया शक्ति ने सम्पूर्ण चराचर जगत की रचना की है। परमार्थ–दृष्टि से तो वह माया भी मुझ से कोई से भिन्न वस्तु नहीं है। व्यवहार की दृष्टि से वही यह विद्या और माया नाम से प्रसिद्ध है। तत्त्व दृष्टि से पृथक् कुछ नहीं। तत्त्व केवल एक ही है। (वह तत्त्व मैं हूँ, जो सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि करके फिर अपने असली स्वरूप-तत्त्व में विलीन हो जाती हूँ।) धरणीधर ! मुझमें ही यह सम्पूर्ण चराचर ओत प्रोत है। ईश्वर, सूत्रात्मा और विराट आत्मा मैं ही हूँ। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, गौरी, सरस्वती, लक्ष्मी मेरे ही रूप हैं तथा मैं ही सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्रगण हूँ। जो भी कोई जहां देखने और सुनने में आती है, चाहे वह भीतर हो या बाहर, उन सब में व्यापक रूप से सदा मैं ही स्थित रहती हूँ। चराचर, कोई भी वस्तु नहीं, जो मुझसे अलग हो।

(दे० भा० ७/३३/१–२, १२, १४, १६–१७)

इस प्रकार भगवती देवी ने स्वयं ही अपने को परब्रह्म परमात्मा से अभिन्न सिद्ध किया है। उस परब्रह्म स्वरूपा भगवती देवी के दो स्वरूप है— (१) निराकार और (२) साकार। इस आद्याशक्ति से सारे संसार को उत्पत्ति होती है। वेदों में आद्याशक्ति को पराशक्ति के नाम से कहा गया है। ऋग्वेद में भगवती कहती है–

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः।
अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमाश्विनोभा॥

(ऋ० १०/१२५/१)

'मैं रुद्र, वसु; आदित्य, और विश्वदेवों के रूप में विचरती हूं। वैसे ही मैं मित्र, वरुण, इन्द्र, अग्नि और अश्विनीकुमारों के रूप को धारण करती हूँ।

ब्रह्मसूत्र में भी कहा गया है—

सर्वोपेता च तद्दर्शनात् (२-१-३०)

वह पराशक्ति सर्व सामर्थ्य से युक्त है, क्योंकि यह प्रत्यक्ष देखा जाता है।

यहां भी ब्रह्म का वाचक स्त्रीलिङ्ग शब्द आया है। ब्रह्म की व्याख्या शास्त्र में स्त्रीलिङ्ग, पुल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग आदि सभी लिङ्गों में की गई है। इसी पराशक्ति को महेश्वरी, जगदीश्वरी परमेश्वरी भी कहते हैं। लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा आदि इसी शक्ति के रूप हैं। माया, महामाया, मूल-प्रकृति, विद्या, अविद्या आदि भी इसी के रूप हैं।

जिस प्रकार पुराणों में भगवान् के विराट स्वरूप का वर्णन मिलता है उसी प्रकार परब्रह्म स्वरूपा भगवती देवी का भी विराट्-रूप देवी भागवत के सातवें स्कन्ध में वर्णित है।

सोपान

(२)

प्रतिमा (मूर्ति) और उपासना

अन्तरिक्ष में अभिव्यक्त, वस्तुतः विश्व-व्यापक भगवान शिव देवता स्वानुकूल जिन जिन विशेष शक्तियों अथवा अपने भिन्न भिन्न विवर्तों द्वारा विश्व में जिन कार्यों का संचालन करते हैं, उन्हीं शक्तियों और कार्यों को व्यवहार-मार्ग से सरल रूप में समझने एवं उसकी उपासना के लिए वेदों में तथा अन्य शास्त्रों में ऋषियों ने निदान-शास्त्र के आधार पर उनके भिन्न-भिन्न शिल्पों (मूर्तियों) का निर्माण किया है। किसी भी वस्तु के सदृश-शिल्प का नाम ही

मूर्ति है। मूर्ति (प्रतिमा) देवताओं का सांकल्पिक आकार (आकृति) मुख, हस्त, वर्ण (रंग) अवस्था एवं वाहन आदि के भेद रहस्य 'तन्त्रराजतन्त्र' में इस प्रकार कहे गये हैं।

सत्त्व, रज, तम आदि प्राकृत गुणों अथवा चित्त, स्पन्द, ज्ञान, इच्छा और कृतिरूप आत्म गुणों में से एक एक गुण से संयुक्त क्षित्यादि पञ्चभूतों में से एक अथवा दो भूतों से उत्पन्न होने के कारण प्राकृत (नित्य–सिद्ध) एवं सांकल्पिक देवताओं के आकार, आयुध, वर्ण आदि में भेद हो जाता है और उससे असंख्य देवता हो जाते हैं। सांकल्पिक देवताओं के रूपों (प्रतिमाओं) में पाञ्चभौतिक शक्तियाँ मुख रूप हैं। सत्त्व, रज आदि गुण शक्तियाँ हस्तरूप हैं। शक्तियों के कार्य आयुधरूप हैं। योगियों का आवेदन है कि अचिन्त्य, अप्रमेय, निर्गुण और गुण स्वरूप परमात्मा को समझने एवं उसके साथ सम्बन्ध जोड़ने के लिये प्रतिमा की कल्पना माध्यमरूप से की गई है। परमात्मा की व्यष्टिगत उपासना से समष्टिगत परमात्मा की प्राप्ति होती है। सब जगह रहने वाला अव्यक्त, अचिन्त्य वायु; जिस प्रकार पंखों के द्वारा प्रबुद्ध (अभिव्यक्त) होने पर पसीना आदि सुखाने को क्रिया करता है, उसी प्रकार सर्वत्रगामी इन्द्र आदि सब शक्तियाँ साधक के विश्वास से एक देश में अभिव्यक्त होकर उसको मनोवाञ्छित फल प्रदान करती हैं। इसलिये उनका वह सर्वगामी स्वरूप अपने संकल्प से परिच्छिन्न (एकदेशीय) याने आत्मसात् हो जाता है।

कार्य–भेद के अनुसार उसका दो, चार, छः भुजारूप में चिन्तन किया जाता है। वस्तुत सब देवता ज्ञान और क्रिया रूप होने से विश्वरूप एवं बोधरूप हैं। अपने संकल्प से उनका जो रूप बनता है, उसे सांकल्पिक अथवा वैधानिक रूप कहते हैं। उस रूप की आकृति, वर्ण, हाथ, आयुध एवं वाहन आदि अपने कार्य भेद से होने वाले संकल्पों के भेदों से भिन्न भिन्न आकर प्रकार निर्माण हो जाते हैं। इस विषय में 'ब्रह्म-संधान' व 'तन्त्रालोक' व

'तन्त्रराजतन्त्र' ग्रन्थों में वृहद्रूप से देखा जा सकता है। उसके पाठश्लोक आदि प्रमाण रूप से दिया जाना शक्य नहीं है, उनका भाव मात्र लिखना पर्याप्त समझ कर कुछ सारांश रूप में बतलाने का प्रयास किया जाता है।

मूर्तियों का निर्माण निदानशास्त्र के आधार पर किया जाता है और संकेत का ही नाम निदान है। अमुक को अमुक समझा जावे यही निदान है। इहलौकिक और पारलौकिक दोनों भावों में निदान का समान सम्बन्ध है—जैसे शोक और प्रलय का निदानं (संकेत) काला रंग है। आपद् काल का निदान (संकेत) लाल रंग है। निरुपद्रवता का निदान (संकेत) हरित वर्ण है (हरा रंग है)। कीर्ति का निदान (सूचक) श्वेत (सफेद) रंग है। इसी प्रकार से पृथ्वी का निदान कमल है। मोहिनी शक्ति का निदान सुरा (मदिरा) है। लक्ष्मी का निदान हस्ती (हाथी) है। संहार शक्ति का निदान छिन्न मस्तक है। सकल कला एवं सकल विद्याओं का निदान (संकेत) शुक है। निदान का सम्बन्ध सजातीय भाव से ही होता है, विजातीय से नहीं। उदाहरण में इस प्रकार समझें, कि जैसे लक्ष्मी का निवास कमल है, ऐसा कहने पर लक्ष्मी का निवास पृथ्वी ही है, यह सिद्ध हो जायेगा। यह कौन नहीं जानता कि स्वर्ण, रजत, रत्न तथा समस्त अन्नादि विविध रूप धारिणी लक्ष्मी पृथ्वी से ही प्रकट होती रहती है। इसीलिये उसे 'वन्धरा' कहा गया है। लक्ष्मीजी का समुद्र से निकलने के उपाख्यान का तात्पर्य (मतलब) अन्तरिक्ष में विद्यमान् दिव्य सोम-समुद्र का स्वर्ण, रत्न, धातु, उपधातु एवं अन्नादि रूप से लक्ष्मी में परिणत हो जाना ही लक्ष्मी का समुद्रजात आविर्भाव है।

भगवान् विष्णु के हाथ में भी कमल है इसका अर्थ भी इसी प्रकार है कि पृथ्वी सम्बन्धी समस्त ऐश्वर्य भगवान् के हाथ में हैं। कमल का धारण करना पृथ्वी तत्त्व का ही धारण करना है।

इस प्रकार का विवेचन लिङ्ग पुराण में भी आया है। चार प्रकार की उपासनाओं में निदान से की जाने वाली उपासना निदान–वती कही जाती है।

उपासना के विषयों में सर्वज्ञों का आदेश है कि उसमें चित (आत्मा) अचित् (प्राण आदि) जो कोई भी जड़ चेतन पदार्थ साक्षात् अथवा परम्परा से भोग–मोक्ष का साधन हो वह उपास्य (पूज्य) है उसकी प्राप्ति का उपाय (कर्म, ज्ञान, भक्ति है यह भी) पूज्य है। उपेय की प्राप्ति में मूर्तिपूजा, काल (समय) एकादशी, अमावस्या, पूर्णिमा आदि पर्वकाल हैं। उपेय की प्राप्ति-क्रिया में स्नान सन्ध्या आदि भी सहायक होने से पूज्य हैं। उपाय में तन्मयता होने से उपेय की प्राप्ति शीघ्र होना माना गया है। पूजा का वास्तविक अर्थ है–पूज्य में आदरभाव से तल्लीन हो जाना। अब यहाँ इस प्रकार से समझलें कि जब मूर्ति ही न हो तो पूजा कैसे हो ! अतः मूर्ति होना आवश्यक हुआ। जब मूर्ति होगी तब ही उसकी पूजा में तल्लीन होना हो सकेगा।

इसी विज्ञान के आधार पर भगवान् शिव का जैसा स्वरूप शास्त्रों में ध्यान करने के लिए बतलाया गया है उसी अनुसार भगवान् शिव की मूर्ति (प्रतिमा) भी निर्माण करके पूजा की जाती है।

प्रतिमाएँ आठ प्रकार की मानी गई हैं—

शैली दारुमयी लौही लेप्या लेख्या च सैकती।
मनोमयी मणिमयी प्रतिमाष्टविधा स्मृता॥

श्रीमद्भागवत (११/२७/१२)

पाषाणमय, काष्ठमय, लोहमय, याने धातुमय, दीवार पर लीप पोत कर बनायी गयी, चित्रलिखित, रेणु (मृण्मय), मनोमय, मणिमय इस प्रकार की मूर्तियाँ निर्माण होती हैं।

मूर्तियों की प्रतिष्ठा विषयक प्रार्थना में आता है--

'उद्नो दिव्यस्य नों धातरीशानः वि ष्याः दृतिम् ।।
(अथर्ववेद ७/ ८/१)

अहोरात्र के धाता हमारे ईश्वर ! तुम इस मूर्ति को अपना शरीर कल्पित करो ।'

एहि अश्मानमातिष्ठ आश्मा भवतु ते तनूः ।
कृण्वन्तु विश्वेदेवा आयुष्टे शरदः शतम् ।।
(अथर्ववेद २/१३/४)

हे ईश्वर ! यहां इस पाषाण-प्रतिमा में विराजिये, यह पाषाण प्रतिमा आपका शरीर हो। समस्त देवगण इस शरीर की आयु शत वर्ष करें।

सोपान
(३)

भगवान शिव लिङ्गाकार तथा पीठ योनि रूप में क्यों ?

भगवान् शिव एक मात्र ब्रह्मरूप होने के कारण 'निष्कल' निराकर कहे गये हैं। रूपवान् होने के कारण उन्हें 'सकल' भी कहा गया है। अतएव वे सकल और निष्फल दोनों ही हैं। शिव के निष्कल निराकार होने के कारण ही उनकी पूजा का आधारभूत-लिंग भी निराकार ही प्राप्त हुआ है अर्थात् शिव-लिंग शिव के निराकार स्वरूप का प्रतीक है। इसी प्रकार शिव के सकल यानि साकार होने के कारण उनकी पूजा का आधारभूत विग्रह साकार प्राप्त होता है अर्थात् शिव का साकार विग्रह उनके साकार

स्वरूप का प्रतीक होता है। सकल और अकल (समस्त अंग–आकार सहित साकार और अंग–आकार से सर्वथा रहित निराकार) रूप होने से ही वे 'ब्रह्म' शब्द से कहे जाने वाले परमात्मा हैं। यही कारण है कि सब लोग लिङ्ग (निराकार) और मूर्ति (साकार) दोनों में ही सदा भगवान्-शिव की पूजा करते हैं। शिव से भिन्न जो दूसरे देवता हैं। वे साक्षात् ब्रह्म नहीं हैं। इसलिये कहीं भी उनके लिये निराकार लिङ्ग नहीं उपलब्ध होता। लिंग साक्षात् ब्रह्म का प्रतीक है। भगवान् शिव ब्रह्म स्वरूप और निष्कल (निराकार) हैं इसलिये उन्हीं की पूजा में निष्कल लिंग का उपयोग होता है। सम्पूर्ण वेद शास्त्रों का यही मत है। शिव पुराण विद्येश्वर संहिता अध्याय ५, ६ का सारांश भी इसी प्रकार है। प्रायः 'लिंग' शब्द का साधारण अर्थ 'चिह्न' या 'लक्षण' है। सांख्य दर्शन में प्रकृति को, प्रकृति से विकृति को भी लिङ्ग कहते हैं। देव–चिह्न के अर्थ में लिंग-शब्द शिवजी के ही लिंग के लिए आता है और प्रतिमाओं को मूर्ति कहा जाता है। इसका कारण यही है कि औरों का आकार मूर्तिमान् के ध्यान के अनुसार होता है; परन्तु लिंग में आकार या रूप का कोई स्वरूप या उल्लेख नहीं है। यह चिह्न भी पुरुष की जननेन्द्रिय का सा है, जिसे लिङ्ग कहा जाता है, परन्तु इसके विषय में स्कंद पुराण में कहा है--

'लयनाल्लिङ्गमुच्यते'

अर्थात् इसमें लय या प्रलय होता है, इसी से उसे 'लिङ्ग' कहा जाता है। प्रलय की अग्नि में सब कुछ भस्म होकर शिवलिंग में समा जाता है। वेद शास्त्र भी लिङ्ग में ही लीन हो जाते हैं। फिर सृष्टि के आदि (आरंभ) में लिङ्ग से ही सब के सब प्रकट होते जाते हैं और अन्त में उसी में सम्पूर्ण विश्व का लय हो जाता है।

किन्तु आजकल के युवा समाज के स्त्री–पुरुष जो इन धार्मिक कार्यों से अनभिज्ञ (अनजान) हैं नास्तिक प्रवृति के हैं धार्मिक

पुस्तकों का अध्ययन नहीं करते और न ही धार्मिक जानकार विद्वानों से अपने मन में उत्पन्न हुई शंकाओं का समाधान करते और इन बातों की अवहेलना कर अपने अज्ञानवश परस्पर वार्तालाप में भगवान् शिव और माता उमा के विषय में शिवलिङ्ग मूर्ति को लिङ्ग और माता पार्वती के रूप में जो पीठ होती है, उसको योनि संज्ञा बतलाकर अश्लीलता का भाव निर्माण कर अपना मनोरंजन करते पाये जाते हैं। जिससे उनके अज्ञान का ही परिचय मिलता है। यदि वे इस विषय में थोड़ी भी रुचि लें तो पायेंगे कि वास्तव में यह स्त्री-पुरुषों की जननेन्द्रिय लिङ्ग योनि को पूजा नहीं है बल्कि यह विश्व-नियन्ता ईश्वर का स्वरूप चिह्न है। है। इस विषय में शास्त्र-सम्मत बहुत प्रमाण हैं उनमें से कुछ एक प्रमाण ये हैं--

मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम् ।
तस्यावयवभूतस्तु व्याप्तं सर्वमिदं जगत् ।।

माया प्रकृति है। और महेश्वर प्रकृति-माया के अधिष्ठाता मायी हैं। माया के द्वारा उन्हीं के अवयव भूत जीवों से समस्त संसार परिव्याप्त हो रहा है।

इस प्रकार यह अव्यय सदाशिव सृष्टि की रचना के निमित्त दो हो जाते हैं क्योंकि सृष्टि बिना द्वैत (आधार आधेयों) के हो नहीं सकती। आधेय-चैतन्य पुरुष बिना आधार (प्रकृति उपाधि) के व्यक्त नहीं हो सकता। इसी कारण इस सृष्टि में जितने पदार्थ हैं उनमें आभ्यन्तर चेतन और बाह्य प्राकृतिक आधार अर्थात् उपाधि (शरीर) देखे जाते हैं। दृश्यादृश्य सब लोकों में इन दोनों की प्राप्ति होती है। इसी कारण इस अनादि चैतन्य परम पुरुष परमात्मा की 'शिव' संज्ञा सृष्ट्युन्मुख होने पर अनादि लिंग है। और उस परम आधेय के आधार देने वाली अनादि प्रकृति का नाम योनि है क्योंकि ये दोनों इस अखिल चराचर विश्व के परम कारण

हैं। शिव-लिंग रूप में पिता और प्रकृति योनि रूप में माता हैं। इसी प्रकार से श्री भद्भगवद्गीता में भी भगवान् श्री कृष्ण ने कहा है--

ममयोनिर्महद् ब्रह्म तस्मिन् गर्भं दधाम्यहम्।
सम्भवः सर्वभूतानां ततोभवति भारत ॥

(अध्याय १४ श्लोक ३)

महद् ब्रह्म (महान् प्रकृति) मेरी योनि है, जिसमें मैं बीज देकर गर्भ का संचार करता हूँ और इसी से सब भूतों की उत्पत्ति होती है।

इसी अनादि सदाशिव-लिंग और अनादि प्रकृति-योनि से समस्त सृष्टि उत्पन्न होती है इसमें आधेय बीज प्रदाता (लिंग) और आधार बीज को धारण करने वाली (योनि) का संयोग आवश्यक है। इन दोनों के संयोग के बिना कुछ नहीं उत्पन्न हो सकता। इस परम भाव का महर्षि मनु महाराज ने मनुस्मृति में इस प्रकार से वर्णन किया है—

द्विधा कृतात्मनो देहमर्द्धेन पुरुषोऽभवत्।
अर्द्धेन नारी तस्यां स विराजमसृजत्प्रभुः ॥

सृष्टि के आरम्भ समय परम पुरुष अपने ही अर्द्धाङ्ग से प्रकृति को निकाल कर उसमें समस्त सृष्टि की उत्पत्ति करते हैं।

इस प्रकार शिव का लिंग-योनि भाव और अर्द्धनारीश्वर भाव एक ही वस्तु होती हैं। सृष्टि के बीज को देने वाला परम लिंग रूप शिव जब अपनी प्रकृति रूपा नारी (योनि) से आधार (आधेय) की भाँति संयुक्त होते हैं। तभी सृष्टि की उत्पत्ति होती है अन्यथा नहीं। इस प्रकार श्री शिव अपनी तेजोमयी प्रकृति को धारण कर उससे आच्छादित होकर व्यक्त होते हैं, नहीं तो उनका व्यक्त होना किसी भी प्रकार संभव नहीं हो सकता।

इस प्रकार यह शिव की पूजा जो शिवालयों में या घर में लिंग रूप में की जाती है यह 'शिवलिंग-योनि' प्रकृति और पुरुष के संयोग से होने वाली सष्टि को उत्पत्ति के सूचक हैं।

इस प्रकार यह परम परात्पर जगत्पिता और दयामयी जगन्माता के आदि सम्बन्ध के भाव की द्योतक है। अतः यह परम पवित्र और सुमधुर भाव है इसमें भी किसी प्रकार से अश्लीलता का आक्षेप या हास्य करना सब प्रकार से अज्ञान और पाप के अतिरिक्त और क्या हो सकता है। यह अनादि प्रकृति पुरुष का सम्बन्ध परम सृष्टि–यज्ञ है इसी का परिणाम यह सुन्दर सृष्टि है। पाराशरपुराण में कहा गया है;

सर्वकारणमीशानः साम्ब सत्यादिलक्षणः।
न विष्णुर्न विरश्चिश्च न रुद्रो नापरः पुमान्॥
श्रुतयश्च पुराणानि भारतादीनि सत्तम।
शिवमेव सदा साम्बं हृदि कृत्वा ब्रुवन्ति हि॥

श्रुतियों स्मृतियों एवं पुराणों में जहाँ कहीं अन्यान्य देवताओं को जगत् का कारण बतलाया है, उसका पर्यवसान भी श्री शंकरजी में ही है। इसमें स्पष्ट कहा है। सत्य, ज्ञान, अनन्त वही है। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र आदि उनके अधीन हैं, उनकी आज्ञा तथा कृपा के बिना कोई कुछ नहीं कर सकते। जैसे श्वेताश्वतर उपनिषद् में आया है—

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः
सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।

यह शिव सभी देवताओं, सभी जीवों, सभी स्थानों और लोकों में व्याप्त है। सभी विश्व इसी में है। और सभी विश्व में यह है। विश्व का आकार स्वरूप हम आप कोई अपने नेत्रों से देखने में समर्थ नहीं हैं। तो शास्त्रों, वेदों, पुराणों का आधार ही मानने योग्य है। इन सभी ग्रन्थों में विश्व का रूप मुर्गी के अण्डे के आकार का बतलाया गया है। और शिवलिङ्ग का आकार भी इसी प्रकार का है। तो इससे यही सिद्ध होता है कि यह विश्व का ही आकार चिह्न शिव–लिङ्ग है।

लिङ्ग पुराण के तीसरे अध्याय में लिखा है—महेश्वर भगवान् अलिंग हैं। प्रकृति प्रधान ही लिंग है। महेश्वर निर्गुण हैं, प्रकृति सगुण है। प्रकृति या लिङ्ग के ही विकास और विस्तार से विश्व की सृष्टि होती है। सारा ब्रह्माण्ड लिङ्ग के अनुरूप बनता है। ब्रह्माण्ड रूपी ज्योतिर्लिङ्ग अनन्तकोटि हैं। सारी सृष्टि लिंग के ही अन्तर्गत है, लिंगमय है और अन्त में लिंग में ही सृष्टि का लय भी होता है। इसी प्रकार का भाव स्कन्दपुराण में भी आया है। वह इस प्रकार है।

आकाशं लिङ्गमित्याहुः पृथ्वी तस्य पीठिका।
आलयः सर्वदेवानां लयनाल्लिङ्गमुच्यते॥

आकाश लिंग है, पृथ्वी उसकी पीठिका है, सब देवताओं का आलय है। इसमें सबका लय होता है, इसी लिये इसको लिङ्ग कहते हैं।

आकाश को लिंग कहा गया है, आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से भी यह उक्ति बहुत स्पष्ट सिद्ध होती है। पश्चात्य देश जर्मनी के विश्वविख्यात गणिताचार्य अलबर्ट एंस्टैन ने अपने गणितशास्त्राधार पर सिद्ध किया है कि अनन्त आकाश वक्र है, पर वलय के-से वक्र के अनुरूप है। देशमात्र वक्र है, जो कि लिंग का ही रूप है। देश, काल और वस्तु इन्हीं तीन पदार्थों से यह तमाम विश्व बना है। यह तीनों ही लिंगवत् वक्र हैं। उपादान (बनने वाली) वस्तु ही जब वक्र हैं तो जितनी वस्तुएं इन उपादानों से बनी हैं—विद्युत्कणों, परमाणुओं और अणुओं से लेकर ब्रह्माण्ड तक सम्पूर्ण सृष्टि वक्र है, और लिंग रूप में है। वस्तुतः जिसे सीधी रेखा कहते हैं वह कोई अस्तित्व नहीं रखती, वह केवल वक्र का ही अंश मात्र कही जा सकती है।

एंस्टैन महोदय का यह सापेक्षवाद आज के युग में पाश्चात्य विज्ञान पर शासन कर रहा है। उनकी विचारधारा के सिद्ध सिद्धान्तों

के अनुसार पृथ्वी को आकर्षण शक्ति कोई वस्तु नहीं है। पृथ्वी प्रदेश की वक्रता के ही कारण प्रत्येक वस्तुएं गिरती लुढ़कती है। वस्तु की मात्रा जिस पिण्ड में जितनी अधिक है उतनी ही वक्रता उस पिण्ड में बढ़ी हुई है। इसलिये उसमें उतना ही अधिक खिंचाव देखने में आता है।

इस प्रकार से आकाश भी एक लिंगमय माना जाता है जो अनन्त है। अब आकाश लिंग की अपेक्षा समता में कोई भी वस्तु कोई भी पिण्ड या लिंग नहीं हो सकते। इस प्रकार से कोई भी आकाश में गई हुई वस्तु पिण्ड या समूह उसमें ठहरना संभव नहीं है। आखिर आकाश में गई हुई वस्तु उसके वक्र रूप होने से वहाँ नहीं ठहर पाती और वह किसी नजदीक होने वाले पिंड समूह पृथ्वी आदि स्थान पर ही आकर ठहरती है। इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि यह आकाश भी ब्रह्माण्डमय है और ब्रह्माण्ड भी आकाशमय ही है और इनका यह स्वरूप भी शिवलिंगमय ही है।

परमात्मा-सत्ता जो निर्गुण, निराकार, निर्विकार है विवृत्त होकर इसी वक्राकार में विकसित होती है जिसे भी चिह्न मात्र ही कह सकते हैं और इसी चिह्न के रूप में अनादि और अनन्त विविधता का विकास होता है इस अमूर्त और अरूप परमात्मा की मूर्ति और रूप का आविर्भाव इसी लिंग रूप में हो सकता है इसलिये यह लिंग स्वरूप परात्पर परतम ब्रह्म का ही लिंग याने चिह्न है। इस प्रकार पाश्चात्य आधुनिक विज्ञान के आधार पर भी भगवान् शिव का इस लिग के रूप में स्थान होना युक्तियुक्त सिद्ध होता है।

इस उपर्युक्त सिद्धान्त की पुष्टि शिव पुराण वायवीय संहिता के छठे अध्याय में भगवान वासुदेव ने शिव लिंग स्वरूप वर्णन से इस प्रकार से की है—

स्रष्टा त्वं सर्वजगतां रक्षिता सर्वदेहिनाम्।
हर्ता च सर्वभूतानां त्वां विनैवास्ति कोऽपरः॥

इस उपर्युक्त वर्णन से लिङ्गोपासना सृष्टि के परम रहस्य की साक्षी मिलती है और प्रवृत्ति मार्ग का ठीक पता लगता है, और धीरे धीरे इसकी पूजा आराधना करके अभ्यास बढ़ाने पर इस उपासना का रहस्य उपासक (पूजक) के अनुभव में आने लगता है, और यथार्थ निवृत्ति-मार्ग का रास्ता मिल जाता है फिर उपासक उसी रास्ते जाकर सद्गति को प्राप्त होता है।

अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि इस प्रकार इस ब्रह्म का आकार बनाकर ही पूजा आराधना करना क्यों आवश्यक हुआ ? अन्य कई धर्मावलम्बी भी ईश्वर को तो मानने वाले हैं मगर वह कोई आकार प्रकार नहीं बनाये हैं इस विषय को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता हैं-वैसे तो कोई भक्त जिस भाव से ब्रह्म या ईश्वर को भजता है वह उसी भाव से गन्तव्य स्थान को प्राप्त कर लेता है सभी नदी नाले अनेक मार्गों से वहते हुए अन्त में समुद्र में ही जाकर मिलते हैं किन्तु जिनका रास्ता टेढ़ा मेढ़ा है वह देरी में पहुँचते हैं और किसी नदी तालाब में जल थोड़ा हो और रास्ता टेढ़ा हो तो वह जल उस रास्ते से ठीक समुद्र में नहीं पहुँच पाता है क्योंकि रास्ते की दूरी पार करने में अधिक समय लगेगा इसलिये इस नदी नाले के जल को चाहे थोड़ा हो या अधिक समुद्र में पहुँचाया ही जावे यह हमारा उद्देश्य रूपी उदाहरण है। इसलिये किसी प्रकार रास्ता सीधा हो और थोड़ी दूरी हो जावे तो हमारी वह पूजा, आराधना, साधना आदि शीघ्र ही लाभप्रद हो और इसके लिये किसी प्रकार का चिह्न या मूर्ति परमावश्यक है। इसी प्रकार मूर्ति और शिवलिंग चिह्नादि द्वारा पूजा साधना करना आसान हो जाता है। जब कि कोई आकार या मूर्ति न हो तो साधना-अर्चना किसकी की जावे और कैसे किया जावे और उस पूजा प्रार्थना में ध्यान या भावपूजक किस तरह से किस प्रकार का करे।

साकार का अवलम्बन करके ही निर्गुण-निराकार ब्रह्म की भावना की जाती है। साकार के बिना निराकार में स्थिति लाभ

नहीं होता। सब कुछ साकार ही दृष्टिगोचर होता है, परन्तु धीरे धीरे अभ्यास के द्वारा निराकार की उपलब्धि हो जाती है तथा उसमें स्थिति प्राप्त की जाती है। भगवान् चिन्मय, अद्वितीय, कलारहित, रूपरहित होते हुए भी उपासक को कृतार्थ करने हेतु उसके ध्येय रूप में उपस्थित होते हैं।

'ब्रह्मणो रूप कल्पना-कर्त्तरि षष्ठी'।

इस पद को स्पष्ट करने हेतु महामुनि अगस्त्य जी ने कहा—

सर्वेश्वरः सर्वमयः सर्वभूतहितेरतः।
सर्वेषामुपकाराय साकारोऽभून्निराकृति॥

जो सर्वेश्वर, सर्वमय, सब भूतों के हित में लगे रहने वाले हैं वे ही सब के उपकार के लिये निराकार होते हुए भी साकार हुए हैं और यह साकार रूप भी मनुष्य की ही कल्पना नहीं हैं, स्वयं भगवान् ही अपनी शक्ति से रूप धारण करते हैं। इसके लिये श्रीमद्भगवत गीता के १६ वें अध्याय में वर्णित दैवी सम्पति के लिये भगवान् से आत्म निवेदन का जो भाव है उसके अनुकूल हो जाओ तथा १२ वें अध्याय में कहे हुए भक्त के लक्षणों से युक्त हो जावो तो कोई कारण नहीं रह जाता कि भगवान् आशुतोष शिव साधक, पूजक के निकट आविर्भूत न होवें (अवश्य प्रकट हो जायेगें); किन्तु ऐसी पुस्तकों को पढ़ना व भाव निश्चय रूप से बना लेना यह साधक का ही अभ्यास कार्य है न कि किसी उपदेश का।

इस प्रकार की साधना पूजा अभ्यास करने से ही शिव का यह रूप है या नहीं, शास्त्र पुराण सत्य है या सिर्फ कल्पना मात्र है, मनुष्य की लेखनी का चातुर्य ही है, इत्यादि नाना प्रकार के सन्देह दूर हो जाते हैं। केवल पुस्तक की विद्या के आगे कोई नहीं जा सकता। इस विषय की अच्छी पुस्तकों के पढ़ने या ऐसे कुछ समझे हुए मनुष्यों के संत्सग से प्राप्त उपदेशों को बार बार ग्रहण कर अभ्यास व मनन करने पर उसी अनुसार अपने

चरित्र को बना लेने तथा भगवान् की कृपा प्राप्त करना ही परम पुरुषार्थ समझकर कार्य करने से भगवान् शिव अवश्य दया करते हैं।

भिद्यने हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥

भगवान् शिव की दृष्टि पड़ते ही हृदय में अनेक प्रकार के विचारों की जो ग्रन्थियाँ पड़ी हुई हैं वे टूट जावेंगी और सर्व प्रकार के संशय दूर हो जायेंगे और सभी प्रकार के कर्मों का क्षय हो जायेगा।

ऐसा होने पर मनुष्य स्वयं शिवमय हो जायेगा। अपने जीवन में घटित होने वाले वैसे तो अनेकों उदाहरणों का प्रत्येक मनुष्य अनुभव कर सकता है, किन्तु प्रसंगवश इस विषय में एक उदाहरण प्रस्तुत कर देना उचित व आवश्यक है कि आप हम सभी जब पाँच छह वर्ष की उम्र के थे, और अपने समान उम्र वालों में खेलते थे अपने माँ बाप से प्यार दुलार व अपनी आवश्यक वस्तुएँ प्राप्त कर प्रसन्न होते थे, उस समय क्या आप सभी यह भी जानकारी रखते थे कि हमारी बच्चों वाली दुनियाँ के अलावा अन्य कोई दुनियाँ या संसार भी है? या कोई कार्य है? सभी इसके उत्तर में यही कहेंगे कि कोई ज्ञान था। ज्यों ज्यों उम्र बढ़ी और अधिक अनुभव हुए। दुनियाँ के आगे के ज्ञान सीखे देखे तभी तो सबको आज का यह वर्तमान समय देखने को मिला। आज हम सब की जो स्थिति है उसका प्रतिबिम्ब या कल्पना भी बाल्यावस्था में अपने मस्तिष्क में नहीं थी। दूसरी तरफ यदि आप सभी को उक्त छोटी उम्र के बालकों के साथ उन्हीं में खेल खिलौने देकर बिठा दिया जाय तो क्या हम उन बालकों की तरह उनके खेल खेलकर उनकी तरह समस्त क्रिया-कलाप करके खुश होंगे? तो आप सभी कहेंगे कि नहीं।

इसका कारण क्या है? आखिर हम सब वैसे वातावरण में रह तो चुके ही हैं किन्तु आप अब ऐसा क्यों नहीं कर सकते? इसका उत्तर स्पष्ट है। आप कहेंगे कि हम अब बड़े हो गये ऐसे कार्यों में मन

नहीं लगता है। तो फिर आप स्वयं ही सोच लें कि ईश्वर प्राप्ति या उसकी अर्चना, उपासना या इस विषय के ज्ञान से बड़ा कार्य (काम) क्या हो सकता है। यदि आप उसके विषय में कुछ ज्ञान प्राप्त करलें और उसको प्रसन्न करलें तो क्या बात बाकी बच रहेगी? वह सब कुछ दे सकता है। अगर आप सांसारिक (इहलौकिक) सुख चाहें तो वह भी दे सकता है, इस संसार रूपी बन्धन (दुःख) से छुटकारा चाहो तो वह भी करा सकता है। मनुष्य जिस प्रकार के विचार या अभ्यास से जैसा बनना चाहता है, उसी लगन से कार्याभ्यासरत रहता है, तो वैसी ही बुद्धि, बल आगे बढ़ते जाते हैं, और अन्त में अपने लक्ष्य को प्राप्त करता है। आप कह सकते हैं कि शिव की पूजा में क्या रखा है? ऐसा करने से क्या हो सकता है, हमको तो इसमें कुछ दिखाई नहीं देता, खामख्वाह की एक बकवास है। इसके उत्तर में कोई प्रत्यक्ष प्रमाण तो पेश नहीं किया जा सकता क्योंकि यह कोई बाजार में मिलने वाली वस्तु (पदार्थ) तो है नहीं जो खरीदी या लाई जा सके, परन्तु इसको कुछ इस प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है।

जब आप आठवीं दसवीं कक्षा में रहे होंगे तब सब कुछ लिखना पढ़ना तो सीख गये होंगे किन्तु उस समय जबकि आपका कोई रास्ता निर्धारित नहीं था यथा, डॉक्टर होना है, इञ्जीनियर होना है, या अकाउण्टेण्ट या वकील आदि आदि होना है। तब आप क्या ख्याल करते थे, कुछ नहीं सिर्फ जो भी स्कूल में पढ़ाया जाता था उसे पढ़कर याद कर लेना ही सही उद्देश्य समझते थे, आज भी आप अपने को उपर्युक्त विचारों की तरह ख्याल करें और आप इस पूजा आराधना साधना द्वारा अपना लक्ष्य ईश्वर प्रेम प्राप्ति मोक्ष निर्धारित कर, अभ्यास करें। पूरे नियम विचार से कार्यरत रहें। जैसे जैसे आप आगे बढ़ते जायेंगे तो अपने अभीष्ट पूर्ति में अवश्य सफल होंगे, और जिस प्रकार आपने दसवीं कक्षा से ऊपर पढ़ते समय अपने लक्ष्य डॉक्टर, इञ्जीनियर, अकाउन्टेण्ट, वकील

आदि वनने का निर्धारित कर उसी विषय में अभ्यासरत होकर सफलता प्राप्त की, इसी प्रकार इस विषय में भी समझ लें और जैसे आपने अपना लक्ष्य निर्धारित कर जिस विषय को चुन कर उस विषय की कक्षा में प्रवेश लिया फिर उसी विषय का पठन मनन अभ्यास आरम्भ किया और ज्यों ज्यों त्रैमासिक अर्धवार्षिक वार्षिक परीक्षाओं में सफलता मिलती थी, आपका उत्साह एवं अभ्यास बढ़ता जाता था, प्रसन्नता होती थी । इसी प्रकार इस विषय में भी होने लगेगी । इन दोनों बातों में अन्तर कुछ भी नहीं है । न कोई सन्देह करने की आवश्यकता है । जैसे पुस्तकें अपने गुरु द्वारा पढ़नी व समझनी होती हैं उसी प्रकार से पुस्तकों व गुरु द्वारा पठन मनन करने की आवश्यकता है । वह कर सकते हैं, किन्तु अभ्यास व लगन, उत्साह यह सब आपको अपने शरीर व मन द्वारा ही करना होगा । अभ्यास करते करते निश्चित मंजिल का मार्ग स्वयमेव बनता जायेगा, जो साधक व साध्य दोनों को एक कर देगा और अपने लक्ष्य की सिद्धि प्राप्त हो जायेगी ।

सोपान

(४)

द्वादश–ज्योतिर्लिंग

वेद, उपनिषद, श्रुति, स्मृति, पुराण, धर्मशास्त्र ग्रन्थों में अनेक प्रकार के शिव-चरित्र और उनके सम्बन्ध में अनेक कथाएँ हैं । इसी प्रकार से उनकी अनेक स्थापन क्रियाएँ और अनेक ही

आकार प्रकार का विवरण और अनेक ही पूजा विधियाँ लिखी हैं, जिनसे शिव तत्त्व का ज्ञान मिलता है और उनमें भक्ति, प्रीति, अनुराग की वृद्धि होती है। इसी के प्रभाव से भारत में छोटी से छोटी बस्ती जिसको हमारी भाषा में ढाणी कहा जाता है और बड़े से बड़े शहर जिसको महानगर या महानगरी कहा जाता है, सभी में शिव मन्दिर या शिवालय या शिवस्थान कहा जाता है। असंख्य शिवमन्दिर हैं। इसी प्रकार गृहस्थियों के घरों में शिव-मूर्तियाँ रखी जाती हैं। उनका अगणित पुरुष-स्त्री पूजन प्रार्थनादि भक्ति-भाव से करते हैं। यदि ऐसे सभी शिवों की गणना की जावे तो उनकी संख्या कई लाखों करोड़ों पर पहुंच सकती है और उनके पूजक उपासकों की संख्या भी इसी प्रकार अधिकाधिक गणना में आ सकती है।

इन सभी शिवलिङ्गों की पूजा उसी प्रकार भक्तिभाव से की जाती है जिस प्रकार काशी विश्वनाथ, सेतुबन्ध रामेश्वर, सोमनाथ, ओंकारेश्वर आदि की की जाती है। बड़ी बस्तियों या वड़े विशाल मन्दिरों या भव्य आयोजनों में हजारों लाखों उपासकों की उपस्थिति होती है। छोटे शिव मन्दिरों या शिवस्थानों में विराजी हुई मूर्ति का एक, दो, दस, पचास स्त्री-पुरुष पूजन करते हैं और जो फल पूजार्थी चाहते हैं वही अपनी अभीष्ट कामनाओं की पूर्ति भी पाते हैं जैसे कि बड़े विशाल शिव मन्दिर में स्थापित शिवलिङ्गों की पूजा, अर्चना द्वारा पाते हैं। इसमें प्रधानता भक्तिभाव विश्वास अनुराग प्रेम की ही है।

ऐसे भगवान् शिव के आकार प्रकार आदि का पूर्ण वर्णन कैसे किया जा सकता है? किन्तु कुछ शास्त्रों के आधार पर या जिस किसी प्रकार देखने सुनने में आया है उसके द्वारा ही यथाशक्ति विवरण देने का प्रयास किया गया है।

भारतवर्ष में मुख्य द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग का वर्णन व महात्म्य विशेष रूप से प्रधानता रखता है जिनके नाम व स्थान इस प्रकार

हैं। इनके लिये शिव पुराण में लिखा है कि वैसे तो शिव सर्वव्यापी है, किन्तु द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में उनका विशेषांश विद्यमान है।

भगवान शंकर प्राणियों के कल्याण के लिये ही तीर्थ तीर्थ में लिङ्ग रूप में वास करते हैं। जिस-जिस पुण्य–स्थान में भक्त जनों ने उनकी अर्चना (पूजन प्रार्थना) की हैं उसी स्थान में वे आविर्भूत हुये और ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में सदा के लिये वहीं अवस्थित हो गये। यों तो शिवलिङ्ग असंख्य हैं फिर इनमें द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग प्रधान हैं, इनका बड़ा महात्म्य है। जो कोई नित्य प्रातःकाल उठकर इनके नामों का पाठ करता है उसके सात जन्मों के पापों का नाश हो जाता है। जिस जिस कामना को लेकर जो भले आदमी इसका पाठ करते हैं उनकी कामना भी पूरी होती है। इन शिवलिंगों के दर्शन पूजन आदि से पापों का व क्लेशों का नाश होता है। जिसपर भगवान् शिव प्रसन्न हो जाते हैं उसके (अशुभ-शुभ दोनों प्रकार के) कर्म क्षय हो जाते हैं अर्थात् पुनर्जन्म नहीं होता। उसे भगवान् अपने में लय कर लेते हैं।

सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकार्जुनम्।
उज्जयिन्यां महाकालमोङ्कारं परमेश्वरम् ॥
केदारं हिमवत्पृष्ठे डाकिन्यां भीमशङ्करम्।
वाराणस्यां च विश्वेशं त्र्यम्बकं गौतमी तटे ॥
वैद्यनाथं चिताभूमौ नागेशं दारुका वने।
सेतुबन्धे च रामेशं घुश्मेशं च शिवालये ॥
द्वादशैतानि नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत्।
सप्त जन्म कृतं पापं स्मरणेन विनश्यति।
यं यं काममपेक्ष्यैव पठिष्यन्ति नरोत्तमाः।
तस्य तस्य फलप्राप्तिर्भविष्यति न संशयः ॥

एतेषां दर्शनादेव पातकं नैव तिष्ठति ।
कर्मक्षयो भवेत्तस्य यस्य तुष्टो महेश्वरः ॥

(शिवपुराण ज्ञा० स० अध्याय ३८)

द्वादश ज्योतिर्लिंगों का परिचय इस प्रकार है—

श्री सोमनाथ

(१)

श्री सोमनाथ शिव-लिंग काठियावाड़ प्रान्त में श्री प्रभास क्षेत्र में है। जहाँ पर लीला बिहारी भगवान श्रीकृष्ण ने यदुवंश का संहार तथा जरा नामक व्याध के बाण से अपनी नरलीला संवरण की थी। इस पुण्य प्रभास क्षेत्र सहित श्री सोमनाथ का पुराणों के आधार पर परिचय इस प्रकार मिलता है।

दक्ष प्रजापति के सत्ताईस कन्याएँ हुई। उसने अपनी सभी कन्याओं का विवाह चन्द्रदेव के साथ कर दिया; परन्तु चन्द्रमा का स्नेह केवल रोहिणी पर रहा इस कारण से अन्य छब्बीस कन्याओं को बड़ा दुःख रहता था। उन्होंने अपनी यह दुःख भरी गाथा पिता से कही। दक्ष प्रजापति ने चन्द्रमा को बहुत कुछ समझाया; किन्तु चन्द्रमा ने उस पर कोई ध्यान नहीं दिया तो दक्ष प्रजापति क्रुद्ध हो गये और अन्त में उन्होंने चन्द्रमा को शाप दिया कि तुम्हारे क्षय रोग हो जाये। फलतः चन्द्रमा को क्षय रोग हो गया। चन्द्रमा सुधाकर हैं, सुधा वर्षा करते हैं फलतः सुधा वर्षा करने का कार्य रुक गया। चराचर में त्राहि-त्राहि मच गई। चन्द्रमा ने सभी देवताओं, इन्द्र और वशिष्ठादि ऋषि मुनियों से प्रार्थना की किन्तु उपाय न बन पड़ा। तब चन्द्रमा ने ब्रह्माजी से प्रार्थना की। ब्रह्माजी ने आदेश दिया कि सभी देवताओं के साथ चन्द्रमा प्रभास क्षेत्र में जाये और वहाँ पर भगवान् मृत्युञ्जय (शिव) की आराधना करें, उनके प्रसन्न होने से चन्द्रमा अवश्य रोग मुक्त हो जायेंगे। सभी देवता चन्द्रमा सहित पितामह की यह आज्ञा सुनकर प्रसन्न हो गये और देवमण्डली सहित प्रभास क्षेत्र

में पहुंचे और भगवान् मृत्युञ्जय की अर्चना तथा अनुष्ठान आरंभ कर दिया, मृत्युञ्जय मन्त्र से पूजा जप होने लगे। समस्त देवताओं सहित चन्द्रमा ने छः मास तक बड़ी कठिन तपस्या की। दस करोड़ मन्त्र जाप यज्ञ अनुष्ठान हुआ तब भगवान् आशुतोष संतुष्ट हुए। प्रकट होकर वरदान दे मृत्युञ्जय भगवान् ने मृत्यु तुल्य कष्ट पा रहे चन्द्रमा को अमरत्व प्रदान किया। कहा कि सोच मत करो। कृष्ण पक्ष में प्रतिदिन तुम्हारी एक एक कला क्षीण होगी, पर साथ ही शुक्ल पक्ष में उसी क्रम से एक एक कला बढ़ जाया करेगी और इस प्रकार से प्रत्येक पूर्णिमा को तुम पूर्ण चन्द्र हो जाया करोगे। इस प्रकार कलाहीन कलाधर पुनः कलायुक्त हो गये और चराचर में सुधाकर की सुधा किरणों द्वारा पुनः प्राण संचार होने लगा। फिर समस्त देवों सहित चन्द्रमा की प्रार्थना स्वीकार कर भवानी सहित शंकर भक्तों के उद्धारार्थ ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में सर्वदा के लिये इस क्षेत्र में वास कर प्रतिष्ठित हो गये। महाभारत, श्रीमद्भागवत और स्कन्द पुराण आदि पुण्य ग्रन्थों में इस प्रभास क्षेत्र कीं बड़ी महिमा लिखी हुई है। कहा है जो इस पवित्र स्थान प्रभास क्षेत्र में प्रवाहित पूत–सलिला सरस्वती के संगम के दर्शन एवं सागर संगीत (जो समुद्र की हिलोरों से ध्वनि उठती है) की ध्वनि सुन लेता है। उसके पाप पहाड़ इस प्रकार से भाग जाते हैं जैसे जंगल में वनराज सिंह के पहुँचते ही मृगों के झुण्ड भाग जाते हैं।

प्राचीन सोमनाथ मन्दिर जिसके जोड़ का कहीं अपरिमित जवाहरात व स्वर्ण मण्डित मन्दिर नही कहा जा सकता, मुसलमान शासकों द्वारा कई बार तोड़ा व लूटा गया जिसके भग्नावशेष वहाँ पड़े हैं। प्राचीन ध्वसांवशेष पर ही अब स्वर्गीय सरदार पटेल की प्रेरणा से मन्दिर निर्माण कार्य आरम्भ होकर यह पुनीत कार्य पूर्ण हो चुका है। मन्दिर समुद्र के किनारे पर अवस्थित है।

मन्दिर अच्छे सुन्दर ढंग का कलापूर्ण दर्शनीय बना है। मन्दिर के बाहर के प्राङ्गण की दीवार से समुद्र की लहरें स्पर्श होती

हैं। सायकाल सूर्यास्त समय का दृश्य देखने योग्य होता है। नवीन शिवलिंग विग्रह की प्रतिष्ठा हो चुकी है।

जब प्राचीन मन्दिर ध्वस्त हो गया था तब सोमनाथ मन्दिर के नाम से इन्दौर की महारानी अहिल्या बाई ने सम्वत् १८३१ में एक मन्दिर और बनवा दिया था जो समुद्र तट से थोड़ी दूरी पर बना हुआ है। इसमें सोमनाथ का ज्योतिर्लिङ्ग गर्भगृह के नीचे गुफा के रूप में बाईस सीढ़ियों के नीचे जाने पर दृष्टिगोचर होता है ऐसा यहाँ के लोगों का कहना है। यह प्राचीन शिवलिंग था। वही यहां प्रतिष्ठापित है। यहां दीप ज्योति बराबर जलती रहती है।

सोमनाथ प्रभास क्षेत्र पहुँचने के लिये पश्चिमी रेल्वे का टर्मिनस वेरावल स्टेशन है। सोमनाथमेल से अहमदाबाद धोला धोलक, जेतलसर, जूनागढ़ होकर आ जा सकते हैं। वीरमगांव, राजकोट, जेतलसर व जूनागढ़ होकर भी वेरावल आना जाना हो सकता है। देहली की ओर से महसाना, बीरमगांव, राजकोट, जेतलसर व जूनागढ़ होकर वरावल आया जा सकता है। वेरावल स्टेशन से गांव और प्रभास पाट्टण के लिये बस व घोड़े के तांगे मिलते हैं। वेरावल में पाटण द्वार के पास बस स्टेण्ड है जहाँ से पाट्टण जाने वाली बसें मिलती हैं। वेरावल प्रभास पट्टण से तीन मील दूर है।

(श्री मल्लिकार्जुन)

(२)

मद्रास प्रान्त के कृष्णा जिले में तथा कृष्णा नदी के तट पर श्री शैल पर्वत है, जिसे दक्षिण का कैलाश माना गया है। महाभारत, शिवपुराण, पद्मपुराण आदि अनेक धर्म ग्रन्थों में इसका वर्णन मिलता है। श्री शैल पर्वत पर जाकर श्री शिव का पूजन करने से अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है, तथा श्रीशैल पर्वत का दर्शन करने से ही अनेक कष्ट दूर होते हैं, अनन्त सुख प्राप्त होते हैं और आवागमन

से मुक्ति प्राप्त होती है, ऐसा माहात्म्य पुराणों में कई स्थानों में लिखा हुआ मिलता है।

इस स्थान के सम्बन्ध में पौराणिक कथा इस प्रकार है कि शंकर सुवन श्री गणेश और स्वामी कार्तिकेय विवाह के लिये लड़ने लगे। एक चाहते थे कि मेरा विबाह पहले हो दूमरे चाहते थे मेरा विवाह पहले हो। अन्त में भवानी–शंकर ने यह निर्णय दिया कि जो कोई पहले पृथ्वी की परिक्रमा कर डालेगा, उसी का विवाह पहले होगा।

यह सुनते ही स्वामी कार्तिकेय तो दौड़ पड़े किन्तु गणेशजी महाराज स्थूलकाय थे इसलिए शीघ्रतापूर्वक दौड़ने में स्वामी कार्तिकेय से बाजी मारना संभव न दिखाई दिया। किन्तु बुद्धिबल था। शीघ्र ही उन्होंने एक उपाय निकाल लिया। आपने माता पार्वती और पिता महेश्वर को आसन पर बैठाकर उन्हीं की सात परिक्रमा कर डाली और पूजन किया।

इम विषय में रुद्र संहिता खण्ड (४) अध्याय (१६) में लिखा है–

पित्रोश्च पूजनं कृत्वा प्रक्रान्तिं च करोति यः।
तस्य वै पृथिवीजन्यं फलं भवति निश्चितम् ॥

(रुद्र० सं० ४ अध्याय० १६)

इस प्रकार के नियम के अनुसार पृथ्वी की प्रदक्षिणा के फल को पाने के अधिकारी बन गये। इधर जब तक स्वामी कार्तिकेय वापस आये, तब तक बुद्धि–विनायक श्री गणेशजी का विश्वरूप प्रजापति की सिद्धि व ऋद्धि नाम की दो पुत्रियों के साथ सम्पन्न हो चुका था। विवाह ही नहीं बल्कि सिद्धि के गर्भ से 'क्षेम' और ऋद्धि के गर्भ से 'लाभ' इस प्रकार दो पुत्र भी हो चुके थे और उनकी गोद में खेलने भी लगे थे। मंगल कामना से इधर उधर की लगाने में प्रवीण देवर्षि नारद महाराज से यह समाचार पाकर स्वामी कार्तिकेय जल उठे और माता पिता के चरण छूने का सत्कार करके रूठ कर क्रौञ्च-पर्वत

पर चले गये, माता पार्वती व भगवान् शंकर ने नारद जी को भेजकर बुलाया भी किन्तु वे नहीं आये। अन्त में माता का हृदय व्याकुल हो उठा और जगदम्बा माता पार्वती भगवान् शंकर को लेकर क्रौञ्च पर्वत पर पहुंची; किन्तु ये उनके आने की खबर पाते ही वहाँ से भाग खड़े हुए और तीन योजन दूर जाकर डेरा डाल दिया। क्रौञ्च पर्वत पर पहुँच कर श्री शंकर जी ज्योतिर्लिंग के रूप में प्रकट हुए और तब से ही मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिंग के रूप से विख्यात हैं।

दूसरी कथा इस प्रकार से मिलती है कि किसी समय इस क्रौञ्च पर्वत के निकट चन्द्रगुप्त नामक राजा की राजधानी थी। उसकी कन्या किसी विशेष विपत्ति से बचने के लिये अपने पिता के महल से भाग निकली और इस पर्वतराज की शरण ली। वहाँ पर ग्वालों के साथ कन्द-मूल और दूध से अपना जीवन निर्वाह करने लगी। उसके पास एक सुन्दर श्याम गौ थी। कोई चुपचाप उस गाय का दूध दुह लेता था। एक दिन संयोग से चोर को दूध दुहते समय उसने:देख लिया और क्रोध में भर कर मारने दौड़ी, पर गाय के पास पहुँचने पर उसे शिवलिङ्ग के अतिरिक्त कुछ न मिला तब उस राजकुमारी ने उस शिव-लिङ्ग पर एक सुन्दर मन्दिर बनवा दिया। यही शिव-लिंग मल्लिकार्जुन नाम से प्रसिद्ध है। मन्दिर की निर्माण कला अत्युत्तम है। पुरातत्त्ववेत्ताओं के अनुमान से यह मन्दिर लगभग दो हजार वर्ष पुराना है। लोगों का कहना है कि इस शिव स्थान पर पूजा अर्चना के लिए बड़े बड़े राजा महाराजा हमेशा ही आते रहे हैं। छत्रपति शिवाजी भी पधारे थे। उन्होंने एक धर्म शाला भी बनवाई थी। तब इस स्थान में अनेकों शिव-लिंग प्राप्त हुए थे। इस शिव मन्दिर के पास ही देवी जगदम्बा का भी एक अलग मन्दिर है। यहाँ पार्वती माता को 'भ्रमराम्बा' कहते हैं।

इस स्थान के लिये जहाँ से भी जाना हो वहाँ की रेल्वे से मद्रास पहुँचना चाहिये जो दक्षिण रेल्वे का प्रमुख स्टेशन है। वहाँ

से बैंजवाड़ा जायें। वहाँ से गुंटकल जाने वाली छोटी लाइन पकड़ कर फिर १८८ मील चलकर नन्दवाल स्टेशन पर उतरें। वहाँ से मोटर बस द्वारा २८ मील दूर आत्माकूर ग्राम पहुँचे, फिर वहाँ से बैलगाड़ी पर बैठकर नागाहुटी पहुँच कर वहाँ पर श्री महादेव जी और वीरभद्र स्वामी के तथा कई पवित्र झरनों के दर्शन करें। यहाँ से भी मल्लिकार्जुन स्थान इकतीस मील दूर है। मार्ग मनोरम है किन्तु रास्ता दुर्गम व पहाड़ियों से युक्त है और लूटपाट का भी भय रहता है। बीच बीच में कई एक विश्राम स्थान भी बने हुए हैं। रास्ते में पीने योग्य पानी नहीं मिलता है। अतः आत्माकूर से अपने साथ पीने का पानी ले लेना चाहिए। श्री मल्लिकार्जुन में नीचे पाँच मील उतरने के बाद कृष्णा नदी के स्नान एवं दर्शन का आनन्द मिलता है। कृष्णा यहाँ पाताल गंगा कही जाती है। इसके स्नान दर्शन का भी बड़ा माहात्म्य है। हैदराबाद (दक्षिण) के पास के के यात्री लोग कुरनूल स्टेशन पहुँच कर आत्मकूर जा सकते हैं।

श्री महाकालेश्वर

(३)

श्री महाकालेश्वर–ज्योतिर्लिङ्ग मालव प्रदेश में क्षिप्रा नदी के तट पर उज्जयिनी (उज्जैन) नगरी में है। इस उज्जयिनी की (जिसका नाम पुराणों में अवन्तिका भी है) सुप्रसिद्ध सप्तपुरियों में गणना की जाती है। स्कन्द पुराण के अवन्ती-खंड में इस नगरी के विषय में महान् पुण्यतम वर्णन है। महाभारत व शिवपुराण में भी बड़ी महिमा लिखी है। क्षिप्रा में स्नान करके ब्राह्मण को भोजन कराने से ही समस्त पाप नष्ट होते हैं और दरिद्र की दरिद्रता नाश होकर धनवान् हो जाता है। भगवान् महाकाल के दर्शन पूजन से सभी कामनाएँ सिद्ध होती हैं। क्षिप्रा में स्नान कर महाकाल का दर्शन कर लेने से मृत्यु की कोई चिंता नहीं रहती है, क्योंकि उत्तम गति का अधिकारी हो जाता है।

यहाँ महाराज विक्रमादित्य का २४ खम्भों का दरबार मण्डप, मङ्गलेश्वर (मङ्गल ग्रह का स्थान), भर्तृहरि की गुफा और सांदीपान ऋषि का आश्रम, कालिदास को विद्या प्रदान करने वाली कालीजी व हरसिद्धि स्थान मुख्य है; महाकाल मन्दिर के पास ही बड़े गणेश भी दर्शनीय हैं। सांदीपनि मुनि से यहाँ इसी आश्रम में भगवान श्री कृष्ण व बलराम तथा सुदामा ने विद्या पढ़ी थी। राजा विक्रमादित्य की राजधानी भी यही उज्जयिनी नगरी है। महाकवि कालिदास राजा विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक थे। बृहस्पति के सिंह राशि में आने पर यहाँ कुम्भ का मेला लगता है।

महाकाल की स्थापना के सम्बन्ध में पौराणिक इतिहास रूप में दो कथाएँ उपलब्ध होती हैं।

(१) एक समय उज्जैन नगरी में चन्द्रसेन नाम के एक राजा थे। भगवान् शंकर के बड़े भक्त थे। एक दिन वे भगवान् शिव की पूजा में तन्मय हो रहे थे। श्री कर नाम का एक पाँच वर्षीय गोप बालक अपनी माँ के संग वहाँ आ गया। शिव पूजन को देखकर उसे बड़ा कौतूहल हुआ और उसी प्रकार की पूजा स्वयं भी करने को उत्कण्ठित हो गया। घर जाते समय रास्ते में से एक सुन्दर सा पत्थर का टुकड़ा उठा ले गया और घर पहुँचकर उसी को शिव लिङ्ग के रूप में स्थापित कर स्नान कराकर पुष्प चन्दनादि से श्रद्धापूर्वक पूजा करने लगा और ध्यान मग्न हो गया। बहुत देरी हो गई। उसका ध्यान न छूटा। माता भोजन के लिये बुलाती रही बहुत आवाज देने पर भी बालक का ध्यान भंग न हुआ। अन्त में माता ने वह शिव स्वरूप पत्थर जिसकी वह लड़का पूजा करता था उठा कर फेंक दिया और लड़के का हाथ पकड़कर उसे जबरदस्ती रसोईघर में ले जाने लगी। सरल हृदय शिव भक्त बालक रोने लगा, भगवान् शिव को पुकारने लगा और बैठा रहा। माता हताश होकर दूसरे कार्यों में लग गई। बच्चे का विलाप जारी रहा इस विलाप अवस्था में मूर्च्छा आ गई। आखिर भोले-

नाथ प्रसन्न हुए। वालक होश में आया, नेत्र खोले तो देखा कि एक अतिविशाल स्वर्ण कपाट युक्त मन्दिर खड़ा है उसके अन्दर एक अति प्रकाशयुक्त मंदिर खड़ा है और उसके अन्दर एक अति प्रकाशयुक्त ज्योर्तिलिङ्ग देदीप्यमान हो रहा है। बच्चे को वहुत आश्चर्य हुआ और वह उसी समय उस स्थान पर भगवान् शिव की स्तुति करने लगा। पीछे से माता ने यह दृश्य देखा तो आनन्द में भरकर अपने पुत्र को उठाकर गले लगाया। उधर राजा चन्द्रसेन को जव इस अद्भुत् घटना का समाचार मिला तो वह भी वहाँ दौड कर पहुँचा और आने पर बात को सच्चाई पाकर बच्चे को प्यार करने लगा। इतने में ही अञ्जनी-पुत्र श्री हनुमानजी वहाँ प्रकट हुए और जो उस स्थान पर उपस्थित थे उनसे कहने लगे—मनुष्यो, संसार में शीघ्र कल्याण करने वाला भगवान् शिव को छोड़कर अन्य कोई नहीं। तुम लोग इस गोप कुमार को प्रत्यक्ष देख रहे हो इसने कौनसी तपस्या की है। जो फल बड़े २ ऋषि-मुनि सहस्रों वर्ष की कठिन तपस्या से भी नहीं पाते वह इस वालक ने अनायास ही प्राप्त कर लिया। यह भगवान् आशुतोष की दया का ही प्रत्यक्ष फल है। इससे तुम लोग भी इसके दर्शन से कृतार्थ हो गये और स्मरण रखो कि इस बालक की आठवीं पीढ़ी में महा यशस्वी नन्द नाम के गोप का जन्म होगा, जिनके यहाँ भगवान् श्रीकृष्ण पुत्र रूप में अनेक प्रकार की अद्भुत लीलाएँ करेंगे। इतना कहकर भगवान् महावीर हनुमान जी अन्तर्ध्यान हो गये और इन महाकाल भगवान् की पूजा अर्चना करते-करते अन्त में श्रीकर गोप और राजा चन्द्रसेन सपरिवार शिवधाम गये।

दूसरी कथा इस प्रकार है—किसी समय इस उज्जैन (अवन्तिकापुरी) में एक अग्निहोत्री वेदपाठी ब्राह्मण था। जिसने अपने देवप्रिय, प्रियमेधा, सुकृत और सुव्रत नाम के चार पुत्रों के साथ शिवभक्ति तथा धर्मनिष्ठा की ख्याति प्राप्त कर ली थी। उसकी कीर्ति सुन कर ब्रह्माजी से वर प्राप्तकर एक महामदान्ध

दूषण नामक असुर, जो रत्नमाल पर्वत पर निवास करता था, अपनी सेना सहित चढ़ आया और लोगों को कष्ट देने लगा। अन्ततः उस ब्राह्मण की शिवभक्ति के प्रताप से भगवान शिव प्रकट हुए और एक हुंकार की, इसी से वह असुर अपनी सेना सहित इस संसार से विदा हो गया। पीछे संसार के कल्याण हेतु वहीं वास करने का उस ब्राह्मण को वरदान देकर भगवान् शिव अन्तर्ध्यान हो गये। तब से शिवलिंग के रूप में वहाँ सदा के लिये विराजमान हो गये।

भगवान् शिव यहाँ पर भयंकर "हुंकार" से प्रकट हुए इसी से इनका नाम (महाकाल) पड़ा। यह महाकाल शिव मन्दिर बड़ा विशाल पञ्चमंजिला है तथा क्षिप्रा नदी से थोड़ी दूर पर स्थित है। मन्दिर के ऊर्ध्वभाग में भगवान् ओङ्कारेश्वर की प्रतिमा है और सबसे नीचे की मंजिल में जो पृथ्वी की सतह से भी काफी नीचे है श्री कालेश्वर विराजमान हैं।

यात्री लोग क्षिप्रा में रामघाट पर तथा कोटितीर्थ नामक कुंड में स्नान व श्राद्ध करके अगस्त्येश्वर, कोटीश्वर, केदारेश्वर, हरसिद्धि देवी (महाराज विक्रमादित्य की कुलदेवी) आदि के दर्शन करते हुए महाकालेश्वर पहुँचते हैं। प्रातःकाल प्रतिदिन महाकाल के चिताभस्म लगाया जाता है। उस समय पूजन श्रृंगार युक्त शिव के दर्शन का अधिक महत्त्व माना जाता है।

इस स्थान पर पहुंचने के लिये मध्यरेल्वे की भोपाल-उज्जैन और आगरा उज्जैन लाइनें हैं तथा पश्चिमरेल्वे की नागदा-उज्जैन और फतेहाबाद उज्जैन लाइनें हैं। इनमें से किसी भी लाइन से जहाँ से नजदीक पड़ता हो पहुंचा जा सकता है।

* * *

ओङ्कारेश्वर, अमलेश्वर अथवा ओङ्कारेश्वर मान्धाता

(४)

यह स्थान ओङ्कारेश्वर मालवा–प्रांत से नर्मदा–नदी के तट पर टापू के रूप में पर्वत पर अवस्थित है। शिव-पुराण में श्री ओंकारेश्वर और श्री अमलेश्वर के दर्शन तथा नर्मदा स्नान का बड़ा माहात्म्य लिखा है। स्नान से ही नहीं नर्मदा-दर्शन से पापों का नाश होना व पवित्र होना लिखा है। श्री ओंकारेश्वर और श्री अमलेश्वर के दर्शन से महापातकों का नाश होना, अभीष्ट (कामना) सिद्ध होना व पुण्यप्रद होना लिखा है। इस स्थान पर नर्मदा की दो धाराएँ होकर बीच में एक टापू सा एक मील के क्षेत्र में बना हुआ एक पर्वत है जिसको मान्धाता पर्वत या शिवपुरी कहते हैं। एक धारा पर्वत के उत्तर की ओर बहती है और दूसरी दक्षिण की ओर। दक्षिण की ओर बहने वाली प्रधान धारा समझी जाती है। इसे नाव में बैठकर पार करना होता है। नाव के नर्मदा की धार के बीच पहुँचने पर दोनों ओर का दृश्य सुहावना लगता है। इसी मान्धाता पर्वत पर श्री ओंकारेश्वर मन्दिर है। प्रसिद्ध सूर्यवंशीय राजा मान्धाता ने जिसके पुत्र अम्बरीष और मुचुकन्द दोनों प्रसिद्ध भगवद्भक्त हुए हैं तथा स्वयं बड़े तपस्वी एवं यज्ञों के कर्त्ता थे, इसी स्थान पर घोर तपस्या करके शंकर जी को प्रसन्न किया था। इसी से इसका नाम मान्धता पड़ गया। मन्दिर में दो कोठरियों में से होकर जाना पड़ता है। अन्दर अन्धेरा रहने से दीपक हमेशा जलता रहता है।

श्री ओङ्कारेश्वर लिंग गढ़ा हुआ नहीं है। प्राकृतिक रूप में है। इसके चारों ओर हमेशा जल भरा रहता है। इस मंदिर की एक विशेषता यह भी है कि यह ओंकारेश्वर शिवलिंग मंदिर के

गुम्बज के नीचे नहीं है और शिखर पर महाकालेश्वर की मूर्ति है। इस पर्वत को ही ओङ्कारेश्वर रूप माना जाता है और इसकी परिक्रमा की जाती है। प्राचीन मन्दिरों में सिद्धेश्वर महादेव दर्शनीय हैं। परिक्रमा में और कई मन्दिर भी मिलते हैं। इस पवित्र स्थान के स्थित होने से नर्मदा के धारा प्रवाह से साक्षात् ओंकारेश्वर दृश्य बनता है। ओंकारेश्वर मन्दिर उस ओंकार में चन्द्र स्थानीय लगता है। मन्दिर में शिव जी के समीप पार्वती जी की मूर्ति भी है। यहाँ महादेव जी को चने की दाल भी चढ़ाई जाती है। यात्रियों को रात्रि में शयन आरती के दर्शन अवश्य करने चाहिये।

कार्तिक शुक्ला १५ पूर्णिमा को इस स्थान पर बड़ा भारी मेला लगता है शिवपूजन के समय में जो भी शिवजी पर चढ़ाया जाता है, उसे पुजारी लोग जो जलहरी में हाथ लगाये रहते हैं, अपने हाथ पर छोड़ने को कहते हैं। उनका कहना है कि जलहरी में छिद्र है जिसका सीधा सम्बन्ध नर्मदा जी में है, जो कुछ चढ़ाया जाता है, वह नर्मदा जी में चला जाता है। इसलिए वे तुरन्त चढ़ावा ले लेने की चेष्टा करते हैं। सोमवार को शिवजी की पञ्चमुखी स्वर्ण प्रतिमा को नाव पर जलविहार कराया जाता है।

यह स्थान स्वास्थ्य के लिये हितकर तथा अत्युत्तम कहा जाता है। यहाँ इस स्थान पर पहुंचने के लिये इन्दौर से बस मिलती है। इन्दौर से ४७ मील दूर है और उज्जैन से खंडवा जाने वाली पश्चिम रेल्वे की छोटी लाइन पर ओंकारेश्वररोड़ नामक स्टेशन है तथा रतलाम से खण्डवा जाने वाली लाइन पर भी यह ओंकारेश्वर रोड़ स्टेशन आता है। उज्जैन से ओंकारेश्वर रोड़ ८६ मील व खण्डवा से ३७ मील दूर है। बसें भी मिलती हैं पता लगा लेना चाहिये। ओंकारेश्वर रोड़ स्टेशन से यह स्थान ७ मील दूर है। सड़क के दोनों ओर सघन हरी भरी वृक्षावली है, मौसम सुहावना व ठण्डा लगता है, अगल बगल में छोटी व सघन हरी भरी पहाड़ियाँ हैं, सागवान के बड़े बड़े वृक्ष से पहाड़ियाँ ढँकी हुई सुन्दर लगती हैं, जो ठेठ

नर्मदा के तीर तक चली गई हैं। वहाँ किनारे पर दो छोटी छोटी पुरी अगल बगल में स्थित हैं। इन्हें 'विष्णुपुरी' और 'ब्रह्मपुरी' कहते हैं। इन दोनों के बीच में कपिलधारा नामक नदी बहती है, जो नर्मदा में जा मिलती है। ब्रह्मपुरी और विष्णुपुरी में पक्के घाट बने हुए हैं और कई मन्दिर भी हैं। कई लोग ओंकारेश्वर परिक्रमा नाव पर भी करते हैं, क्योंकि पैदल में कष्ट अधिक होता है। इस ओंकारेश्वर के लिये स्कन्दपुराण रेवाखण्ड अध्याय २२ में लिखा है–

देवस्थानसमं ह्येतत् मत्प्रसादाद् भविष्यति ।
अन्नदान तपः पूजा तथा प्राण विसर्जनम् ।
ये कुर्वन्ति नरास्तेषां शिवलोक निवासनम् ॥

ओंकारेश्वर तीर्थ अलौकिक है। भगवान् शंकर की कृपा से यह देवस्थान के तुल्य है। यहाँ जो अन्न-दान, तप, पूजा करते अथवा मृत्यु को प्राप्त होते हैं उनका शिवलोक में निवास होता है।

इसी प्रकार से अमरे(ले)श्वर–माहात्म्य कहा है। स्कन्द पुराण रेवा खण्ड (२८/१३३) में लिखा है–

अमराणां शतैश्चैव सेवितो ह्यमरेश्वरः ।
तथैव ऋषिसंघैश्च तेन पुण्यतमो महान् ॥

महान् पुण्यतम अमरेश्वर तीर्थ सदा सैकड़ों देवता तथा ऋषि संघों द्वारा सेवित है। अत एव यह महान् एवं पवित्र स्थान है।

द्वादश ज्योतिर्लिंगों में ओंकारेश्वर की गणना है। इस ज्योतिर्लिंग की एक विशेषता यह है कि यहां दो ज्योतिर्लिंग हैं। ओंकारेश्वर और अमलेश्वर। इन दोनों को द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों की गणना करते समय एक ही गिना जाता है।

श्री केदारनाथ

(५)

श्री केदारेश्वर की बड़ी महिमा है। उत्तराखण्ड में श्री बद्रीनाथ और केदारनाथ—ये दोनों ही बड़े तीर्थ हैं। दोनों के दर्शनों

का बड़ा माहात्म्य है। श्री केदारनाथ के सम्बन्ध में लिखा है कि जो व्यक्ति केदारेश्वर के दर्शन किये बिना बद्रीनाथ की यात्रा करता है, उसकी यात्रा निष्फल होती है।

अकृत्वा दर्शनं वैश्य ! केदारस्याघनाशिनः।
यो गच्छेद् बद्रीं तस्य यात्रा निष्फलतां व्रजेत् ॥
(केदारखण्ड)

केदारेश्वर सहित नर-नारायण-मूर्ति के दर्शन का फल समस्त पापों का नाश करता है और जीवन मुक्ति की प्राप्ति करता है। इसी प्रकार से और भी कहा है-

तस्यैव रूपं दृष्ट्वा च सर्वपापैः प्रमुच्यते।
जीवनमुक्तो भवेत् सोऽपि यो गतो बद्रीवने ॥
दृष्ट्वा रूपं नरस्यैव तथा नारायणस्य च।
केदारेश्वरनाम्नश्च मुक्तिभागी न संशय ॥

केदारेश्वर (केदारनाथ) ज्योतिर्लिंग की कथा इस प्रकार है—

हिमालय के केदार शृंग पर विष्णु भगवान् के अवतार महातपस्वी नर और नारायण ऋषि तपस्या करते थे। उनकी आराधना से प्रसन्न होकर भगवान् शंकर प्रकट हुए और उनकी प्रार्थना के अनुसार ज्योतिर्लिंग के रूप में वहाँ सर्वदा वास करने का वर प्रदान कर पर्वतराज-हिमालय की केदार नाम की चोटी पर अवस्थित हो गये। शिखर के पूर्व की ओर अलकनन्दा के सुरम्य तट पर बद्रीनारायण अवस्थित हैं और पश्चिम में मन्दाकिनी। ये ये दोनों नदियाँ रुद्रप्रयाग में मिल जाती हैं और देवप्रयाग में इनकी मिली हुई धारा गङ्गोतरी से आई हुई भागीरथी गङ्गा से मिल जाती है। इस प्रकार जब हम गङ्गा स्नान करते हैं, तब हमारा सीधा सम्बन्ध श्री बदरी और श्री केदार के चरणों से हो जाता है।

श्री केदारमन्दिर मन्दाकिनी के घाट पर पहाड़ी ढंग का बना हुआ है। भीतर मंदिर में अन्धकार रहता है और दीपक के प्रकाश से ही शंकरजी के दर्शन होते हैं। शिवलिङ्ग अनगढ़ एक छोटे से टीले के समान है। सम्मुख की ओर यात्री जल-पुष्पादि चढ़ाते हैं और दूसरी ओर भगवान् के शरीर में घी लगाते हैं तथा बांह भरकर मिलते हैं। मूर्ति चार हाथ लम्बी और डेढ़ हाथ मोटी है।

मन्दिर के जगमोहन में द्रौपदी सहित पाँचों पांडवों की बड़ी मूर्तियाँ हैं। मन्दिर के पीछे कई कुण्ड हैं। जिनमें आचमन व तर्पण किया जाता है।

इस स्थान पर पहुँचने के लिये मार्ग किसी भी भाग से दिल्ली पहुँचकर वहाँ से रेलद्वारा हरिद्वार होकर है। यह स्थान हरिद्वार से १५० मील (एक सौ पचास मील) और ऋषिकेश से १३२ (एक सौ बत्तीस) मील दूर है। हरिद्वार से ऋषिकेश तक रेल व बसें जाती हैं। अब ऋषिकेश से आगे भी बसें चलने लगी हैं किन्तु कब कहाँ से कहाँ तक चलती हैं, यह स्थाई प्रबन्ध सर्वदा एक सा नहीं रहता है। यात्री को ऋषिकेश में बस सवारी आदि के विषय में यथा समय पता कर लेना चाहिये। पैदल का भी रास्ता है। रुद्रप्रयाग से केदारजी तक रास्ता दुर्गम है। पैदल यात्रा के अतिरिक्त कण्डी या झप्पान जिसको इधर के पहाड़ी कुली ढोते हैं ले जाया जा सकता है। किराया आदि उसी समय वहाँ तय किया जाता है। बद्रीनाथ के यात्री प्रायः केदार जी होकर ही जाते हैं। जिस रास्ते से जाते हैं, उससे न लौटकर रामनगर की ओर से लौटते हैं। यात्रा मार्गों में यात्रियों की सुविधा के लिए बीच–बीच में चट्टियाँ भी बनी हुई हैं। यहाँ गर्मी में सर्दी बहुत पड़ती है। कपड़े, ऊनी स्वेटर, कम्बल आदि साथ होना जरूरी है। कहीं कहीं तो बर्फ जमी हुई मिलती है।

मिलती है। श्री केदारेश्वर पहाड़ी तीन ओर से बर्फ से ढकी रहती है। शीतकाल में वहाँ रहना ही नहीं हो सकता है। कार्तिक की पूर्णिमा या इससे पहले ही पंडे लोग श्री केदारजी की पञ्चमुखी मूर्ति को, जो यहाँ स्थापित ज्योतिर्लिङ्ग से अलग और रहती है। लेकर नीचे स्थान (ऊखीमठ) में जहाँ रावलजी (महन्त महाराज) रहते हैं, चले आते हैं। फिर छः मास बाद मेष संक्रान्ति लगने पर बर्फ काटकर रास्ता बनाते हुए फिर जाकर मन्दिर के पट खोल देते हैं। मन्दिर व रास्ता आदि सभी बर्फ से ढक जाते हैं। सभी के ऊपर से बर्फ काट कर हटानी होती है।

श्री भीमशङ्कर

(६)

श्री भीमशङ्कर-ज्योतिर्लिङ्ग बम्बई से पूर्व की ओर ७० मील के अन्त पर और पूना से उत्तर की ओर तियालीस मील की दूरी पर भीमा नदी के तट पर स्थित है।

द्वादश लिंग स्मरण व प्रार्थना में जो पद 'डाकिन्यां भीमशंकरम्' आया है इस वचन के अनुसार यहां 'डाकिनी' ग्राम या पहाड़ आदि कोई बड़े या पक्के रूप में स्थान का पता नहीं चलता; किन्तु उपर्युक्त ज्योतिर्लिङ्ग सह्याद्रि पर्वत पर अवस्थित है और भीमा नदी वहीं से निकलती है। मुख्य मूर्ति में से थोड़ा थोड़ा जल झरता है। मन्दिर के पास ही दो कुण्ड हैं, जिनको प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ नाना फड़नवीस ने बनवाया था। मन्दिर के पास एक छोटी वस्ती है।

इसकी कथा इस प्रकार है-भगवान् शंकर ने त्रिपुरासुर का वध करके इसी स्थान पर विश्राम किया था। उस समय यहां अवध का भीमक नामक सूर्य वंशीय राजा तपस्या करता था। भगवान् शंकर उसकी तपस्या देखकर प्रसन्न हो गये और उसे साक्षात् दर्शन दिये। राजा ने उनसे हमेशा यहां रहने की प्रार्थना की तो वे शिव-

लिग रूप में वहाँ स्थित हो गये तब से यह ज्योतिर्लिंग भीमशङ्कर नाम से विख्यात है।

Acc. No.. 8247

यह भीमशंकर का स्थान वन के मार्ग से पर्वत पर है, वहां तक पहुंचने के लिये कोई भी सुविधापूर्ण साधन व मार्ग नहीं है। केवल शिव रात्रि पर पूना से भीमशंकर के पास तक बस जाती है। किसी को अन्य समय में जाना हो तो नासिक से बस द्वारा ८८ मील जा सकते हैं। आगे ३६ मील मार्ग पैदल, बैलगाड़ी, टैक्सी आदि करके ही तय करना पड़ता है। दूसरा मार्ग बम्बई पूना मार्ग पर नेरल स्टेशन पर उतर कर वहाँ से पैदल ५४ मील जाना होता है। बम्बई से ९८ (अठाणवें) मील तले गांव उतर कर वहाँ से मोटर बस द्वारा यह स्थान एक सौ मील दूर है। मार्ग बहुत कष्टकर है। भीमशंकर के पास कई धर्मशालाएं है किन्तु सूनी पड़ी रहती हैं। पण्डों के भी कच्चे झोपड़ों के आठ दस घर हैं, वहाँ ठहरा जा सकता है। उसके पास ही पर्वत शिखर पर देवीजी का मन्दिर है। और देवी मन्दिर से नीचे उतरने पर श्री भीमशंकर मन्दिर मिलता है।

इसी ज्योतिर्लिङ्ग भीमशंकर का दूसरा स्थान होने का वर्णन मिलता है वह इस प्रकार है—शिव पुराण के आधार पर भीमशंकर का ज्योतिर्लिङ्ग आसाम प्रान्त में कामरूप जिले में पूर्वोत्तर रेल्वे के गौहाटी स्टेशन के पास ब्रह्मपुर पहाड़ी पर अवस्थित है। इसकी कथा इस प्रकार है कि कामरूप–देश में 'कामरूपेश्वर' नामक एक प्रतापी शिव भक्त राजा हुए। वे नित्य प्रति भगवान् शिव के पार्थिव पूजन में तल्लीन रहते थे। उन्हीं दिनों वहाँ 'भीम' नामक एक महाराक्षस प्रकट हुआ और धर्मोपासकों को नाना प्रकार के कष्ट देने लगा। वह राक्षस राजा कामरूपेश्वर की ख्याति सुनकर वहाँ पहुँचा। ध्यानावस्थित राजा को ललकार कर कराल कृपाण दिखा कर कहने लगा--रे दुष्ट ! शीघ्र बता यह क्या कर रहा है ? नहीं तो तेरा सिर अभी उड़ा देता हूं। शिव भक्त राजा ध्यान से

डिगा नहीं। उसने मन ही मन भगवान् शंकर का स्मरण किया और कहा—

भजामि शङ्करं देवं स्वभक्तपरिपालकम्

अर्थात् हे राक्षसराज ! मैं भक्तों के प्रतिपालक भगवान् शङ्कर का भजन कर रहा हूँ।

यह सुन कर वह राक्षस भीम शिवजी की निन्दा करके राजा को उनकी पूजा करने से मना करने लगा, किन्तु वह राजा किस प्रकार से मान सकता था। वह शिव पूजन में मग्न रहा।

तब उस राक्षस भीम ने अपनी तेजधार तलवार निकाल कर राजा कामरूपेश्वर पर वार किया; पर तलवार राजा पर न पड़ कर पार्थिव-शिवलिंग पर पडी। तत्क्षण ही भगवान् शंकर प्रकट हुए और उस भीम नामक राक्षस का प्राणान्त कर दिया। सर्वत्र आनन्द छा गया। देवता व ऋषिगण भगवान् शिव से वहीं रहने को प्रार्थना करने लगे। जिसे भगवान् शिव ने सहर्ष स्वीकार किया।

इत्येवं प्रार्थितः शम्भुर्लोकानां हितकारकः।
तत्रैव स्थितवान् प्रीत्या स्वतन्त्रो भक्तवत्सलः॥

बस तभी से इस ज्योतिर्लिङ्ग का नाम भीमशंकर पड़ा।

इस स्थान पर पहुँचने का मार्ग ठीक ज्ञात नहीं हो सका, इसलिए कोई वर्णन नहीं दिया जा रहा है। इच्छुक यात्री स्वयं ज्ञात करें।

श्री विश्वेश्वर

(७)

श्री विश्वेश्वर-ज्योतिर्लिङ्ग वाराणसी (बनारस) या जिसे काशी कहा जाता है, में विराजमान हैं। इस पवित्र पुरी की बड़ी महिमा है। बड़े बड़े ऋषि-मुनि, धार्मिक विद्वानों का कहना है कि इस पुरी का प्रलय काल में भी लोप नहीं होता। उस समय भगवान्

शङ्कर इसको त्रिशूल पर धारण कर लेते हैं। और सृष्टिकाल आने पर इसे नीचे उतार देते हैं। यही नहीं आदि सृष्टि-स्थली यही भूमि बतलाई जाती है। इसी स्थान पर भगवान् विष्णु ने सृष्टि उत्पन्न करने की कामना से तपस्या करके महादेव आशुतोष को प्रसन्न किया था और फिर उनके शयन करने पर उनके नाभिकमल से ब्रह्मा जी उत्पन्न हुए, जिन्होंने समस्त संसार की रचना की थी। इन्हीं की अर्चना से वशिष्ठ जी महाराज तीनों लोकों में पूजित हुए तथा राजर्षि विश्वामित्र ब्रह्मर्षि कहलाये। सर्व तीर्थमयी, सर्वसंतापहारिणी एवं मोक्षदायिनी काशी की महिमा ऐसी है कि कैसी ही स्त्री या पुरुष एवं जीव हो, यहाँ प्राण त्याग करने से ही उसे मुक्ति मिल जाती है। भगवान् भोलेनाथ मरते हुए प्राणी के कान में तारक-मंत्र उपदेश करते हैं, जिससे वह आवागमन से छूट जाता है। तारक मंत्र से शिवजी द्वारा उपदिष्ट होने से अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है और वह मोक्ष का अधिकारी हो जाता है। जैसे शास्त्रों में भी लिखा है–

विषयासक्तचित्तोऽपि त्यक्तधर्मरतिर्नरः।
इह क्षेत्रे मृतः सोऽपि संसारे न पुनर्भवेत्॥

अर्थ—'विषयासक्त' अधर्म निरत व्यक्ति भी यदि इस काशी क्षेत्र में मृत्यु को प्राप्त हो तो उसे भी पुनः संसार बन्धन में नहीं आना पड़ता।

काशी में अनेक तीर्थ-स्थान हैं। ज्योतिर्लिंग-विश्वेश्वर बिन्दुमाधव, ढुण्डिराज-गणेश, दंडपाणि-कालभैरव, गुहा (उतरवाहिनी) गङ्गा माता, अन्नपूर्णा तथा मणिकर्णिका आदि कई शिव-स्थान हैं।

आनन्द कानन में दशाश्वमेध, लोलार्ककुण्ड, बिन्दुमाधव, केशव और मणिकर्णिका ये पाँच मुख्य समझे जाते हैं।

काशी में उत्तर की ओर ॐकारखण्ड, दक्षिण में केदारखण्ड और बीच में विश्वेश्वर खंड है, जहाँ बाबा विश्वनाथ का प्रसिद्ध

मन्दिर है। कहा जाता है कि इस मन्दिर की स्थापना अथवा पुनः स्थापना शङ्कर के अवतार भगवान् आद्य शंकराचार्य महाराज ने स्वयं अपने कर कमलों से की थी।

इस प्राचीन मन्दिर की प्रसिद्ध मूर्ति संहारक बादशाह औरंगजेब ने नष्ट भ्रष्ट कर दी थी और उसके स्थान में एक मस्जिद बनवा दी, जो अब भी मौजूद है। प्राचीन मूर्ति ज्ञानवापी में पड़ी हुई बतलाई जाती है। कुछ समय बाद ही उक्त मन्दिर से थोड़ी दूर हट कर परम शिवभक्ता इन्दौर की महारानी अहिल्याबाई ने सोमनाथ आदि मन्दिरों की भाँति विश्वनाथ का एक सुन्दर नया मन्दिर बनवा दिया और पञ्जाब-केसरी महाप्रतापी राजा रणजीत सिंह ने इस पर स्वर्ण-कलश चढ़वा दिया।

काशी में अनेक सुन्दर घाटों के अतिरिक्त हिन्दू विश्वविद्यालय, बौद्धों का सारनाथ और भगवान् विश्वनाथ का बिरला मन्दिर जो अभी कुछ वर्षों पूर्व ही निर्मित हुआ है दर्शनीय स्थान हैं। काशी के लिये मत्स्यपुराण में लिखा है––

जपध्यानविहीनानां ज्ञानवर्जितचेतसाम्।
ततो दुःखहतानां च गतिर्वाराणसी नृणाम्॥

अर्थात् जप, ध्यान और ज्ञान से रहित एवं दुःखों द्वारा चिन्ता की अग्नि में जलते हुए मनुष्यों के लिये काशीपुरी ही एक मात्र गति है। यह वाराणसी (बनारस) या काशी नगरी उत्तर रेल्वे की शाखा पर अवस्थित है और पूर्वोत्तर रेल्वे का स्टेशन है शहर में यात्रियों को ठहरने हेतु अनेक धर्मशालाएँ व होटल हैं।

नोट—काशीवास की आवश्यकता व माहात्म्य-फल इसी पुस्तक में अलग से लिखा है वह भी पढ़ना चाहिये।

श्रीं त्र्यम्बकेश्वर

(८)

श्री त्रयम्बकेश्वर ज्योतिर्लिंग वम्बई प्रान्त के नासिक जिले में है। नासिक रोड़ स्टेशन से यह स्थान छह मील दूर नासिक–पंचवटी है।

इस स्थान पर ही लक्ष्मण जी ने रावण की बहिन शूर्पणखा की नाक काटी थी और यहीं सीताहरण हुआ था। नासिक रोड़ से नासिक पञ्चवटी तक बस मिलती हैं, नासिक रोड़ से नासिक पञ्चवटी अठारह मील दूर है। मार्ग सुरम्य है। यहाँ के ब्रह्म गिरि नामक पर्वत से पूत सलिला गोदावरी निकलती है।

जो माहात्म्य उत्तर–भारत में पाप-मोचनी गङ्गा जी का है, वही यहाँ दक्षिण में गोदावरी जी का है। दक्षिण में यह गंगा नाम से ही प्रख्यात है। जैसे इस पृथ्वी पर गंगावतरण का श्रेय सूर्यवंशीय राजा भागीरथ को है, वैसे ही गोदावरी जी का प्रवाह ऋषि श्रेष्ठ गौतम जी महाराज की घोर एवं कठिन तपस्या का फल है, जो उन्हें भगवान् आशुतोष द्वारा प्राप्त हुआ था। जैसे भागीरथ जी के प्रयत्न से पृथ्वी पर लाई गङ्गा भागीरथी कहलाती है इसी प्रकार से गौतम जी की तपस्या व प्रयत्न से लाई गोदावरी जी का दूसरा नाम गौतमी कहलाता है। इसकी भी वहुत बड़ी महिमा है। बृहस्पति के सिंह राशि में आने पर यहाँ बहुत बड़ा मेला लगता है। कुंभ के अवसर पर गोदावरी स्नान का भारी माहात्म्य है। इस पुण्यप्रदा गोदावरी जी के उद्गम स्थान के समीप अवस्थित त्र्यम्बकेश्वर भगवान् की पूजा, अर्चना एवं दर्शन का बड़ा माहात्म्य है। गौतम ऋषि तथा गोदावरी की प्रार्थनानुसार भगवान् शिव ने इस स्थान में वास करने की कृपा की और त्र्यम्बकेश्वर के नाम से अवस्थित हुए।

मन्दिर के अन्दर एक छोटे से गड्ढे में तीन छोटे छोटे शिवलिंग हैं जो ब्रह्मा, विष्णु और शिव इन तीन देवताओं के

प्रतीक है। शिव पुराण के लेखानुसार त्र्यम्बकेश्वर के दर्शन और पूजन करने वाले को इस लोक और परलोक में सर्वदा आनन्द रहता है। ब्रह्मगिरि पर्वत के ऊपर जाने के लिये चौड़ी चौड़ी सात सौ सीढ़ियाँ बनी हैं। सीढ़ियों को चढ़ने के बाद 'रामकुण्ड' व 'लक्ष्मण कुण्ड' मिलते हैं और शिखर पर पहुँचने के बाद गौमुख से निकलती हुई इस भगवती गोदावरी के दर्शन होते हैं।

इस स्थान पर पहुंचने के लिये मध्य रेल्वे की जो लाइन इलाहाबाद से वम्वई गई है उसी लाइन पर बम्बई से एक सौ सतरह मील तथा अठारह स्टेशन इधर नासिक रोड़ स्टेशन है।

श्री वैद्यनाथ

(९)

श्री वैद्यनाथ ज्योतिर्लिङ्ग की स्थापना के विषय में कथा इस प्रकार है कि एक बार राक्षसराज रावण हिमालय पर जाकर शिवाजी की प्रसन्नता के लिये घोर तपस्या करने लगा और अपने सिर काट काटॅकर शिवलिंग पर चढ़ाने शुरु कर दिये। एक एक करके नौ सिर चढ़ा दिये। दसवाँ सिर काटने को ही था कि शिवजी प्रसन्न होकर प्रकट हो गये। उन्होंने उसके दसों सिर पहले की ही भाँति भली प्रकार लगा दिये और प्रसन्न होकर वर माँगने को कहा तो रावणने उस शिवलिङ्ग को लंका में ले जाकर स्थापित करने की आज्ञा माँगी। शिवजी ने आज्ञा दी की यदि रास्ते में वह इसे पृथ्वी पर रख देगा तो यह वहीं अचल हो जायेगा। आखिर यही हुआ। रावण उस शिवलिङ्ग को लेकर चला, परन्तु मार्ग में 'चिताभूमि' में आने पर उसे लघुशङ्का करने की आवश्यकता हो गई। वह उस शिवलिंग को एक अहीर को थमा कर लघुशङ्का को चला गया। इधर उस अहीर ने उसे बहुत अधिक भारी अनुभव कर भूमि पर रख दिया। बस भगवान् शिव वहीं पर स्थापित हो गये। रावण लौट कर आया, उसने उठाने में पूरी शक्ति

लगा दी किन्तु उसे नहीं उखाड़ सका और निराश होकर मूर्ति पर अपना अंगूठा गड़ा कर लंका को चला गया। इधर ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओं ने आकर उस शिवलिङ्ग की पूजा की और उस शिवलिङ्ग का दर्शन करके वहीं उसी स्थान पर प्रतिष्ठा की और स्तुति करके स्वर्ग को चले गये। यह वैद्यनाथ ज्योतिर्लिङ्ग महान् फलों का देने वाला है। इस स्थान का जलवायु बहुत अच्छा है। अनेक रोगी रोग मुक्ति के लिये यहाँ आते हैं। जैसीडीह में एक आरोग्य भवन नाम की संस्था है। रोगी व यात्रियों के लिये ठहरने का प्रबन्ध है। जैसीडीह से वैद्यनाथधाम केवल तीन मील दूर है। बहुत से यात्री जैसीडीह आरोग्य भवन में ही ठहरते हैं और पूजन दर्शन हेतु गाड़ी से या रिक्शा द्वारा आते जाते रहते हैं। वैद्यनाथधाम में भी धर्मशाला व अन्य कितनी ही कोठियाँ हैं। वैसे जैसीडीह से वैद्यनाथधाम तक सड़क है। सड़क के दोनों ओर अनेक कोठियाँ कलकत्ते व बिहार प्रान्त के अनेक सेठों द्वारा बनाई हुई हैं उनमें स्वास्थ्य लाभ हेतु अनेक मालिक व उनके सम्बन्धी आते जाते रहते हैं। खाली कमरे रहने पर किराये पर भी दिये जाते हैं। कलकत्ते के नजदीक शुद्ध जलवायु सेवन करने योग्य यह पवित्र स्थान है। भजन, स्मरण व स्वास्थ्य लाभ हेतु उत्तम स्थान है। जैसीडीह व वैद्यनाथधाम अलग २ दो बस्तियाँ हैं। बिहार व बंगाल के दर्शनार्थी यात्रियों के अतिरिक्त भारत के अनेक प्रान्तों से दर्शनार्थी यात्री हर साल लाखों की संख्या में पहुंचते हैं। जिनमें कई हजार की संख्या स्वास्थ्य लाभ लेने वालों की है।

मुख्य वैद्यनाथ मन्दिर से थोड़ी दूरी पर एक तालाब है, जिस पर पक्के घाट बने हुए हैं। इस तालाब के पास भी एक धर्मशाला है। शिवलिंग मूर्ति ग्यारह अंगुल ऊँची है और उस पर अब भी शिरोभाग में जरा सा गड्ढा है। यात्री लोग यहाँ दूर-दूर से जल लाकर चढ़ाते हैं। यात्री लोग अपने कन्धों पर कावड़ लिये पैदल यात्रा करके भी पहुँचते है। यहाँ इस प्रकार चढ़ाने को जल

लेकर आते हैं और वह जल भगवान् शिव पर चढ़ाते हैं, इसका बड़ा माहात्म्य माना जाता है। कुष्ट के रोग से मुक्ति इस वैद्यनाथ शिवलिंग की पूजा एवं दर्शन द्वारा होना अधिक कहा जाता है। इससे कुष्ट के रोगी और रोगियों की संख्या से अधिक पहुंचते हैं। वैसे स्थान स्वास्थ्य लाभ, भजन स्मरण के लिये बहुत ही अत्युत्तम, पवित्र व पुण्यतम है।

यहाँ इस स्थान पर पहुंचने का मार्ग संथाल परगने के पूर्वी रेल्वे के जैसीडीह स्टेशन पर होकर है। जैसीडीह स्टेशन से एक ब्रांच लाइन वैद्यनाथ गई है, जो तीन मील दूर ही है।

कई लोग इस उपर्युक्त स्थान को वैद्यनाथ न मानकर, हैदराबाद (दक्षिण) के पास परलीग्राम में स्थित शिवलिंग को वैद्यनाथ शिवलिंग मानते हैं; किन्तु शिव पुराण में द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों के सम्बन्ध में जो तालिका दी है, उसमें 'चिताभूमौ' पद आया है और चिताभूमि इसी स्थल जैसीडीह के पास वाले स्थान का नाम है। इससे यही वास्तव में वैद्यनाथ ज्योतिर्लिङ्ग है। परली ग्राम जो हैदराबाद दक्षिण के पास है, कुछ लोग उसको वैद्यनाथ मानते हैं उसका भी संक्षिप्त परिचय दिया जाता है।

बम्बई से इलाहाबाद जाने वाली मध्यरेल्वे लाइन पर बंबई से १६२ (एक सौ बासठ) मील दूर मनमाड़ स्टेशन है। वहां से पूर्णा को एक लाइन गई है। इस लाइन पर परभनी नामक जंक्शन है, वहां से परली तक एक ब्रांच लाइन गई है। इस परली स्टेशन से थोड़ी दूरी पर परलीग्राम के पास श्री वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग है। यह मन्दिर भी बहुत पुराना है और इसका जीर्णोद्धार इन्दौर की स्वर्गीय शिवभक्ता महारानी अहिल्याबाई ने कराया था। मन्दिर पर्वतशिखर पर बना हुआ है। पास ही छोटी सी नदी भी बहती है। वहाँ एक छोटा सा शिवकुण्ड भी है। पर्वतशिखर पर चढ़ने की सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। कुछ लोग इसको वैद्यनाथ ज्योतिर्लिङ्ग मानते हैं किन्तु शिवपुराण में लिखित "चिताभूमौ" पद यहाँ इस

स्थान के लिये उपयुक्त नहीं हो सकता, जैसी-डीह वाले ही वैद्यनाथ के लिये सही प्रतीत होता है।

श्री नागेश्वर

(१०)

श्री नागेश्वर ज्योतिर्लिङ्ग का स्थान गोमती द्वारका से बेट द्वारका जाते समय कोई बारह तेरह मील रास्ते में मिलता है। द्वारका से इस स्थान पर पहुँचने के लिये मोटर या बैलगाड़ी का अपने तौर पर प्रबन्ध किया जा सकता है। द्वारका जाने के लिये राजकोट तक वही मार्ग है जो वरावल सोमनाथ के लिये है। जिसके लिये सोमनाथ विवरण में लिखा है। राजकोट से पश्चिम रेल्वे की नारमगांव ओखा लाइन से द्वारका पहुंचा जा सकता है।

श्री नागेश्वर ज्योतिर्लिङ्ग के सम्बन्ध में कथा इस प्रकार है। एक सुप्रिय नामक वैश्य था, जो बड़ा धर्मात्मा सदाचारी और शिवजी का भक्त था। एक समय वह नौका पर सवार होकर कहीं जा रहा था। अकस्मात् दारुक नामक एक राक्षस ने आकर नौका पर आक्रमण किया और उसमें बैठे हुए समस्त यात्रियों को ले जाकर अपनी पुरी के कारागार में बन्द कर दिया; किन्तु सुप्रिय की शिवार्चना बन्द न हुई। वह तन्मय होकर शिवार्चना करने में संलग्न रहा और अन्य साथियों को भी प्रेरणा देता रहा।

यह खबर पाकर दारुक वहाँ पहुँचा। सुप्रिय को ध्यान में देख कर कहने लगा 'रे वैश्य यह आँख मूँदकर कौन सा षड्यंत्र रच रहा है और जोर जोर से डांट फटकार बताने लगा, किन्तु उस सुप्रिय का ध्यान भङ्ग न हुआ। तब दारुक अपने अनुचरों को सुप्रिय की हत्या करने का आदेश दे दिया। वह भक्तभयहारी शिवजी को पुकारने लगा। उसकी पुकार पर उसे कारागार में ही भगवान् शिव ने एक ऊँचे स्थान पर चमकते हुए सिंहासन में स्थित ज्योतिर्लिंग के रूप में दर्शन दिया और अपना पाशुपतास्त्र देकर

अन्तर्ध्यान हो गये। इस पाशुपतास्त्र से समस्त राक्षसों का संहार करके सुप्रिय स्वर्ग को चला गया। भगवान् शिव के आदेशानुसार ही इस ज्योतिर्लिंग का नाम नागेश पड़ा। इसके दर्शन-पूजन का बड़ा माहात्म्य है। श्री नागेश्वर के वर्णन में आया है।

एतद् यः श्रृणुयान्नित्यं नागेशोद्भवमादरात्।
सर्वान् कामनियाद्द् धीमान् महापातकनाशनान्॥
(शिव० पुरा० को० रु० सं० अध्याय ३० श्लोक ४४)

अर्थात् जो आदरपूर्वक इस उपाख्यान् को इसकी उत्पत्ति और माहात्म्य सुनेगा, पढ़ेगा, वह समस्त पापों से मुक्त होकर समस्त ऐहिक सुखों को भोगता हुआ, अन्त में भगवान् नागेश्वर के परमपद को प्राप्त होगा।

नागेश्वर नाम के दो शिवलिंग और भी होना मालुम हुआ है।

(१) दक्षिण (हैदराबाद) जिलान्तर्गत अवढा ग्राम में।

(२) उत्तर भारत में नैनीताल के पास अल्मोड़ा ग्राम से सतरह मील उत्तर पूर्व में स्थित यागेश (जागेश्वर) नाम से हैं।

किन्तु शिवपुराण के अनुसार द्वारिका के पास वाले नागेश्वर-ज्योतिर्लिङ्ग को ही ठीक माना जा सकता है।

श्री सेतुबन्ध-रामेश्वर

(११)

श्री सेतुबन्ध-रामेश्वरम् ज्योतिर्लिङ्ग महान् प्रसिद्ध है। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्री रामचन्द्रजी के कर कमलों द्वारा इसकी स्थापना हुई थी। इसके विषय में जो कथाएँ मालूम हुई हैं, उनका वर्णन इस प्रकार है—

लङ्का पर चढ़ाई करने के लिये जाते समय भगवान् रामचन्द्र जी इस स्थान पहुँचे तब उन्होंने समुद्र तट पर बालुका से शिवलिंग निर्माण कर उसका पूजन किया था।

इस प्रकार यह भी कथा है कि समुद्र-तट पर भगवान् श्री राम जल पी रहे थे इतने में एकाएक आकाशवाणी सुनाई दी–मेरी पूजा किये बिना ही जल पीते हो। इस आकाशवाणी को सुनकर भगवान् ने बालुका की शिवमूर्ति निर्माण कर शिवजी की पूजा की और भगवान् शिव से ही रावण पर विजय प्राप्त करने का आशीर्वाद मांगा जो भगवान् शिव ने सहर्ष प्रदान किया। और लोकोपकारार्थ ज्योतिर्लिंग रूप में सदा वास करने की जो सभी ने उस समय प्रार्थना की थी वह भी सहर्ष स्वीकार की। भगवान् श्री राम ने शंकर जी की स्थापना और पूजा करके इस रामेश्वरम् शिव की बड़ी महिमा गाई है।

जो रामेश्वरम् शिव ज्योतिर्लिङ्ग का दर्शन करेंगे, वह शरीर त्याग कर मेरे लोक को प्राप्त करेंगे, जो यहाँ गंगाजल लाकर इस पर चढ़ायेंगे, वे मनुष्य मुक्ति को प्राप्त होंगे, जो मनुष्य शुद्ध मन से छल छिद्र त्यागकर बिना किसी कामना के इनकी पूजा करेंगे वे मेरी परम भक्ति को प्राप्त कर लेगें। जो मनुष्य इस स्थान पर आकर इस समुद्र का दर्शन कर लेंगे वे मनोवाञ्छित कामना व अभीष्ट सिद्धि प्राप्त करेंगे और बिना किसी कामना के दर्शन, स्नान, स्पर्श पूजनादि करेंगे वे निस्संदेह इस संसार सागर से पार हो जायेंगे।

एक कथा इस प्रकार है–जब रावण का वध करके श्री राम सीताजी व अपनी बन्दर सेना सहित लङ्का से वापस आये तब समुद्र पार करके इस स्थान पर अपना पहला विश्राम किया। उसी समय बहुत से ऋषि मुनियों ने वहाँ पहुँचकर भगवान् श्री राम की अनेक प्रकार से स्तुति की। श्री रामचन्द्रजी ने उनका बड़ा आदर मान–सत्कार किया और उनके सामने निवेदन किया की मुझे पुलस्त्य कुल का विनाश करने के कारण ब्रह्महत्या का पातक लगा है। इसलिये आप लोग बतलाइये कि इस पाप से मुक्ति पाने का क्या उपाय है? तब ऋषि-मुनि-महात्माओं ने एक ही स्वर में भगवद्-

गुण गान करते हुए यही व्यवस्था दी कि आप शिव-लिङ्ग की स्थापना कीजिये, इससे आप इस पाप से मुक्त हो जायेंगे।

भगवान् श्री राम ने अञ्जनानन्दन महावीर हनुमानजी को कैलाश जाकर शिवलिङ्ग लाने का आदेश दिया। वे उसी समय कैलाश चले गये परन्तु वहाँ उनको शिवजी के दर्शन नहीं हुए इसलिये वहाँ पर वे शिव दर्शनार्थ तप करने लगे। तब भगवान् शिव प्रकट हुए और उनसे शिवलिङ्ग प्राप्त कर लौटे तो वहाँ पर ज्येष्ठ शुक्ला दशमी बुधवार को अत्यन्त शुभ मुहूर्त में शिव स्थापना हो चुकी थी। ऋषि-मुनियों ने हनुमानजी के आने में देरी होना समझकर पुण्यकाल शुभमुहूर्त न निकल जाये, इस आशंका से तुरंत शिवलिङ्ग स्थापना करने की प्रार्थना की। तदनुसार श्री जानकी जी द्वारा बालुका निर्मित-शिवलिंग की स्थापना कर दी गई। श्री हनुमान जी को यह सब देखकर बड़ा क्षोभ हुआ और वे भगवान् श्रीराम के चरणों में गिर पड़े। श्री राम ने उनकी पीठ पर हाथ फेरते हुए समझाया और उनके पहुंचने से पूर्व शिव-लिङ्ग स्थापन का कारण भी बतलाया और उनके सन्तोष के लिये कहा कि अच्छा तुम इस स्थापित शिवलिंग को उखाड़ डालो। मैं इसी स्थान पर तुम्हारे द्वारा लाये हुए शिवलिंग को स्थापित कर दूँगा। हनुमानजी बड़े प्रसन्न हुए। तत्क्षण ही उस स्थापित शिवलिंग को उखाड़ने को झपटे पर हाथ लगाने से मालूम हुआ कि यह कार्य कोई आसान नहीं है। यह बालुका लिङ्ग वज्र बन गया है। अपना पूर्ण बल लगाया और अन्त में अपनी पूँछ भी लपेट दी और किलकारी मार कर खूब जोर लगाकर झटके दिये किन्तु शिवलिंग टस से मस नहीं हो सका, उल्टे हनुमानजी जोर से धक्का खाकर एक कोस दूर जाकर मूर्छित होकर गिर पड़े और उनके मुख आदि शरीर छिद्रों से रुधिर बहने लगा। श्री रामजी आदि सभी व्याकुल हो गये। श्री सीताजी हनुमानजी के शरीर पर हाथ फेरने लगी और रुदन करने लगी। बहुत समय पश्चात् उनकी

मूर्छा दूर हुई। सन्मुखासीन भगवान् श्रीराम पर दृष्टि जाने पर साक्षात् परब्रह्म के रूप में दर्शन हुए। आत्मग्लानिपूर्वक वे झट श्रीराम के चरणों में पड़कर स्तुति करने लगे। भगवान् श्रीराम ने उन्हें सांत्वना देते हुए कहा कि तुमने भूल की जिससे इतना अधिक कष्ट मिला। मेरे इस स्थापित शिवलिङ्ग को संसार की समूची शक्ति भी नहीं उखाड़ सकती। श्री महादेवजी के अपराध से तुमको यह फल मिला। अब कभी ऐसा मत करना।

फिर भगवान् श्रीराम ने श्री हनुमानजी द्वारा लाये हुए शिव-लिङ्ग को भी थोड़ी ही दूरी पर स्थापित कर दिया और उसका नाम 'हनुमदीश्वर' रख दिया।

श्री रामेश्वरम् और हनुमदीश्वर–इन दोनों शिवलिङ्गों की महिमा भगवान् ने अपने मुख से इस प्रकार वर्णन की है—

स्वयं हरेण दत्तं तु हनुमन्नामकं शिवम्।
सम्पश्यन् रामनाथं च कृतकृत्यो भवेन्नरः॥
योजनानां सहस्रेऽपि स्मृत्वा लिङ्गं हनूमतः।
रामनाथेश्वरं चापि स्मृत्वा सायुज्यमाप्नुयात्॥
ते नेष्टं सर्वयज्ञैश्च तपश्चाकारि कृत्स्नशः।
येन दृष्टौ महादेवौ हनुमद्राघवेश्वरौ॥

(स्क० पुरा० ब्र० ख० से० मा० अध्याय ४५)

अर्थात् स्वयं भगवान् शिव के दिये हुए हनुमान्नामक शिव–लिंग का तथा श्री रामनाथेश्वर का दर्शन करके मनुष्य कृतार्थ हो जाता है। हजार योजन की दूरी पर से भी श्री हनुमदीश्वर तथा रामनाथेश्वर का स्मरण करके मनुष्य शिव सायुज्य को प्राप्त होता है। जिसने श्री हनुमदीश्वर तथा राघवेंश्वर महादेव जी का दर्शन कर लिया, उसने सारे यज्ञ और तप कर लिये।

श्री रामेश्वरम् धाम भारत के चारधाम तीर्थों की गणना में आता है। श्री रामेश्वर जी का मन्दिर लगभग १००० फुट लम्बा

छः सौ पचास फुट चौड़ा और एक सौ पचीस फुट ऊँचा है। इस विशाल मन्दिर में श्री शिवजी की प्रधान लिङ्ग-मूर्ति के अतिरिक्त, जो लगभग एक हाथ से भी अधिक ऊँची है, और भी अनेक सुन्दर शिव मूर्तियाँ तथा अन्य मूर्तियाँ हैं। नन्दी की एक बहुत बड़ी मूर्ति है। श्री शंकर पार्वती जी की चल मूर्तियाँ भी हैं, जिनकी वार्षिकोत्सव के अवसर पर सोने और चाँदी के वाहनों पर सवारी निकाली जाती है। चाँदी के त्रिपुण्ड्र तथा श्वेत उत्तरीय के कारण लिग की शोभा और भी बढ़ जाती है। मन्दिर के अन्दर बाईस कुएँ हैं। जो तीर्थ कहलाते हैं। इनके जल में स्नान करने का बड़ा माहात्म्य है। इन सब कुओं का जल मीठा है। किन्तु मन्दिर के बाहर के सभी कुओं का जल खारा है। कहते हैं, भगवान् ने स्वयं अपने अमोघ बाणों द्वारा इन कूपों का निर्माण किया था। इनमें भिन्न भिन्न तीर्थों का जल मंगवा कर डाला गया था। इनमें से कुछ के नाम इस प्रकार हैं।

गङ्गा, यमुना, गया, शङ्ख, चक्र, कुमुद, इसके अतिरिक्त रामेश्वर धाम में ही और तीर्थ हैं जिनको रामतीर्थ अमृतवाटिका, हनुमानकुण्ड, ब्रह्महत्यातीर्थ, विभीषणतीर्थ, माधवकुण्ड, सेतुमाधव, नन्दिकेश्वर और अष्टलक्ष्मीमण्डप नाम से कहा जाता है। गङ्गोत्तरी के गंगाजल को श्री रामेश्वर पर चढ़ाने का बड़ा माहात्म्य है और इसके लिये यहाँ कुछ कर के रूप में लिया जाता है। जो यात्री गंगाजल साथ में नहीं ले जाते वे वहां के अधिकारियों से मूल्य देकर गंगाजल खरीद सकते हैं। श्री रामेश्वरम् से बीस मील दूर धनुष्कोटि नामक स्थान है। इस स्थान पर यात्री लोग श्राद्ध करते हैं। धनुष्कोटि तक रेलमार्ग है। इस स्थान पर ही श्रीराम ने समुद्र पर कुपित होकर बाण-संधान किया था। धनुष्कोटि बड़ा बन्दरगाह भी है जहाँ से वर्तमान लंका (सीलोन) से जहाज आते जाते रहते हैं।

रामेश्वरम् जाने के लिए दक्षिण भारत का प्रसिद्ध नगर मद्रास रेल द्वारा या किसी प्रकार की सुविधा युक्त सवारी हवाई

जहाज या जैसे जल बोट द्वारा पहुँचने पर, मद्रास से दक्षिण रेल्वे द्वारा त्रिचनापल्ली होते हुए रामेश्वरम् पहुंचा जा सकता है।

इस यात्रा में और भी तीर्थ हैं। लक्ष्मण तीर्थ है जहाँ मुण्डन और श्राद्ध कराते हैं। समुद्र स्नान, अर्घ्यदान और गन्धमादन पर्वत पर स्थित 'रामझरोखे' से समुद्र एवं सेतु के दर्शन का भी बड़ा माहात्म्य है। सेतु के बीच अनेक तीर्थ हैं। जिनमें मुख्य नाम इस प्रकार हैं—चक्रतीर्थ, वेतालवरद, पापविनाशन, सीतासर, मंगल-तीर्थ, अमृतवापिका, ब्रह्मकुण्ड, अगस्त्यतीर्थ, जयतीर्थ, लक्ष्मीतीर्थ, अग्नितीर्थ, शुकतीर्थ, शिवतीर्थ, कोटितीर्थ, साध्यामृत तीर्थ और मानस तीर्थ। इस सेतुबन्ध रामेश्वरम् में भगवान् शिव और राम दोनों एक साथ मिले हैं। कई पुराणकथाओं के आधार से भगवान शिव द्वारा ही महावीर हनुमान का अवतार धारण करना पाया जाता है, वह भगवान् राम की सहायतार्थ ही अवतीर्ण हुए थे।

इसलिये भगवान् शिव व पवनकुमार महावीर हनुमानजी को श्रीराम का चरित्र बहुत प्रिय है। भगवान् शिव व हनुमानजी के स्थान व विग्रह मूर्ति के समक्ष श्री रामचरित्रों का पाठ करने, कथा सुनने व औरों को सुनाने से भक्तों को अभीष्ट कार्य सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। संस्कृत व हिन्दी में अनेक रामायण ग्रन्थ लिखे गये हैं; जिनको पढ़ने, सुनने से भगवान् की भक्ति, रामायण ग्रन्थों का महत्त्व व भगवान् के विभिन्न चरित्रों का ज्ञान प्राप्त होता है। इनमें मुख्य ग्रन्थ इस प्रकार हैं।

राम रहस्योपनिषद्
रामोत्तरतापिनी उपनिषद्
वेदान्त शास्त्र की उपबृंहण रामामण —स्कन्द रामायण
आनन्द रामायण
अगस्त्य रामायण
वशिष्ठ रामायण
श्वेतकेतु रामायण

महाकाली रामायण
रघुवंश
अद्भुत रामायण
पद्मपुराणचे रामायण
रविअग्निवरुणरामायण
भरत रामायण

मंगल रामायण
बृहस्पति संहिता
याज्ञवल्क्य रामायण
पुलस्त्य रामायण
भरद्वाज रामायण
महा रामायण
मार्तण्ड संहिता
कपिल संहिता
पुरुषोत्तम संहिता
जैमिनी संहिता
शिव रामायण
शैव रामायण
आगमपंचरात्र रामायण
गुहा गुह्यक रामायण
हनुमन्तरामायण नाटक
मत्स्य-कूर्म-वराह रामायण
कालिकाखण्डिचे रामायण
श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण
अध्यात्म रामायण

महाभारतचे रामायण
सांगे पुराण (क्रौंच ऋषि द्वारा लिखित)
धर्म रामायण
शिवाभवानी रामायण
आत्म रामायण
भावार्थ रामायण
कथासरित्सागर
तुलसी कृत रामायण
राधेश्याम रामायण
अग्निवेश रामायण
लोमश रामायण
अब्द रामायण
श्रीब्रह्म रामायण
वस्वै रामायण
मानस पीयूष नामक रामचरितमानस की टीका लेखक बाबू शीतल-सहायजी, इतने बड़े आकार में रामायण पर अन्य टीका दृष्टि में नहीं आई

इन उपर्युक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त छोटी बड़ी कई रामायण लिखी गई हैं और संस्कृत व हिन्दी भाषा के अलावा अन्य भाषाओं में भी रामायण पुस्तकें मिलती हैं । इनके द्वारा जैसी जिसकी रुचि हो, जिस भाषा का ज्ञान हो, उसी के द्वारा लाभ उठाने की चेष्टा करनी चाहिये । भगवान् के ग्रन्थों का जो जिस रूप में पठन मनन करता है भगवान् उसको उसी प्रकार का फल प्रदान करते हैं ।

श्री घुश्मेश्वर

(१२)

श्री घुश्मेश्वर-ज्योतिर्लिङ्ग, जिसको घुसृणेश्वर या घृष्णेश्वर भी कहते हैं, के स्थान पर पहुँचने का मार्ग इस प्रकार है—

मध्य रेल्वे की मनमाड़ पूर्णा लाइन पर मनमाड़ से ६६ (छियासठ) मील दूर दौलताबाद स्टेशन है। वहाँ से १२ मील बेरूलगाँव के पास यह स्थान है। स्टेशन से बैलगाड़ी की सवारी मिलती है। मोटर से जाना हो तो दौलताबाद न उतरकर औरंगाबाद स्टेशन पर उतरना चाहिये जो दौलताबाद से अलग स्टेशन है। दौलताबाद स्टेशन से गंतव्य स्थान तक जाने का मार्ग पहाड़ी और बड़ा सुहावना है। मार्ग में दौलताबाद का किला है। यह दौलताबाद का किला घृष्णेश्वर से दक्षिण में पाँच मील पर एक पहाड़ की चोटी पर है। यहाँ धारेश्वर-शिवलिंग और श्री एकनाथजी के गुरु श्री जनार्दन महाराज की समाधि है। यहाँ से आगे एलोरा की गुफाएँ दर्शनीय हैं। एलोरा जाने के लिये दौलताबाद से पूर्ववर्ती एलोरा रोड स्टेशन पर उतरना चाहिए। एलोरा में कैलाश नामक गुफा सबसे सुन्दर एवं श्रेष्ठ है और पहाड़ को काटकर बनाई हुई है। गुफा कारीगरी की दृष्टि से बहुत ही सुन्दर है। यह न केवल हिन्दुओं का ही ध्यान अपनी ओर खींचती है अपितु अन्य धर्मावलम्बी एवं अन्य देशवासी जन भी इसकी अद्भुत रचना को देखकर मुग्ध होते हैं। एक श्यावेल नामक पाश्चात्य विद्वान् सज्जन ने तो दक्षिण भारत के सभी मन्दिरों को इस कैलाश के नमूने पर बना हुआ बतलाया है। एलोरा इतना सुन्दर स्थान है कि बौद्ध और जैन तथा अन्य धर्मावलम्बी मुसलमानादि भी इसकी ओर आकर्षित हुए हैं और उन्होंने भी इन सुरम्य पहाड़ियों पर अपने-अपने स्थान बनाये हैं। कुछ लोग एलोरा के कैलाश मन्दिर को ही घुश्मेश्वर का असली स्थान मानते हैं। श्री

घृष्णेश्वर-शिव और देवगिरि दुर्ग के बीच सहस्र लिङ्ग पातालेश्वर, सूर्येश्वर हैं तथा सूर्यकुण्ड और शिवकुण्ड नामक सरोवर हैं। यह बहुत प्राचीन स्थान है।

श्री घुश्मेश्वर-ज्योतिर्लिङ्ग के स्थापित होने की कथा इस प्रकार है—दक्षिण देश में देवगिरि पर्वत के निकट सुधर्मा नामक एक ब्राह्मण रहता था। उसकी पतिपरायणा पत्नी का नाम सुदेहा था। दोनों में परस्पर सद्भाव था, इस कारण वे बड़े सुखी थे। किन्तु ज्यों-ज्यों उमर बड़ी होती गई उनके एक चिन्ता हो गई कि उनके पीछे कोई सन्तान न थी। ब्राह्मण देवता ने कुंडली आदि गणित लगाकर निश्चय किया कि सुदेहा की कोंख से कोई संतान न होगी और यह बात उसने सुदेहा को भी बतला दी किन्तु सुदेहा को इस पर संतोष नहीं हुआ और वह अपने पति से दूसरा विवाह करने का आग्रह करने लगी ब्राह्मण ने बहुत समझाया पर वह न मानी और अपनी वहिन घुश्मा से विवाह करने की जिद्द करने लगी कि वह मेरी सहोदरा है। उससे मेरा अत्यन्त स्नेह है। उससे मेरा किसी प्रकार से मनोमालिन्य होने की आशंका बिल्कुल नहीं है। हम दोनों एक मन दो तन होकर रहेंगी।

सुधर्मा अपनी पत्नी के इस आग्रह को अधिक दिन न टाल सका और उसकी बात मानकर घुश्मा के साथ विवाह करके उसे ले आया। दोनों बहनें प्रेमपूर्वक रहने लगीं। घुश्मा अतीव सुलक्षणा गृहिणी थी। वह अपने पति की सब प्रकार से सेवा करती और बड़ी वहिन को मातृवत् मानती थी और साथ ही साथ वह भगवान् शिव की अनन्य भक्ता भी थी। नित्यप्रति १०८ (एक सौ आठ) शिवलिङ्ग निर्माण करके उनका विधिवत् पूजन करती। भगवान् शंकर के प्रसाद से थोड़े ही दिन बाद गर्भ रहा और समय पर पुत्र-रत्न का जन्म हुआ। सुधर्मा के साथ-साथ सुदेहा के आनन्द की भी सीमा न रही किन्तु कुछ समय पश्चात् ही राक्षसी वृत्ति ने उसकी मति बदल दी और वह ईर्ष्या करने लगी और उसको अब अपनी बहन

की सूरत देखे न सुहाती न उस पुत्र के प्रति ही कुछ प्रेम रहा। मन ही मन जलने लगी। ज्यों-ज्यों वह बालक बड़ा होता जाता था त्यों-त्यों ही ईर्ष्या की अग्नि तेज होती जा रही थी। जब समय पाकर लड़का बड़ा हो गया और उस लड़के का विवाह होकर वधू घर में आ गई, तब तो वह ईर्ष्या एक बहुत बड़ा वृक्ष बन गई। वह सोचने लगी हा--अब तो जो कुछ भी है वह सब घुष्मा ही है। मैं तो कुछ भी नहीं रही। मेरा अब इस घर में क्या है। यह पुत्र व पुत्रवधु तो इसी के हैं, ये सभी मेरी संचित सम्पत्ति को हड़पने वाले हैं। ऐसे खोटे-खोटे विचारों से अपने हृदय को भर लिया और उनका विनाश करने को विचार पक्का कर लिया।

एक दिन जब वह लड़का रात्रि में सो रहा था, इस कुमति से ग्रसित हुई उस सुदेहा मौसी ने जाकर चुपचाप हत्या करके उसके शव को पास ही के एक सरोवर में छोड़ दिया, जिसमें घुश्मा अपने पूजा किये हुए पार्थिव लिङ्ग छोड़ा करती थी। प्रातःकाल उठकर उसकी पत्नी ने देखा कि पति पलंग पर नहीं है और पलंग पर रक्त के निशान पूर्णरूप से हैं। वह अभागी चीख मारकर रो पड़ी। बात ही बात में घर में कुहराम मच गया। बेचारे सुधर्मा की एक आँख थी वह भी फूट गई। परन्तु घुश्मा को कहाँ क्या हो रहा है कुछ ध्यान ही नहीं। वह अपने कमरे में बैठी शिवजी की सेवा में तन्मय हो रही थी, किसी ओर उसका ध्यान ही नहीं जाता। उसने नित्य के अनुकूल नित्यकर्म समाप्त किया फिर शिवलिङ्गों को तालाब में ले जाकर छोड़ा। भगवान् शिव की लीला बड़ी विचित्र है। एकाएक उस सरोवर के अन्दर से जो उसका लड़का मर चुका था, भला चंगा निकल कर आया और अपनी माता से प्रार्थना करने लगा--माता मैं मरकर पुनः जीवित हो गया हूँ। ठहरो मैं भी साथ चलता हूँ। लड़का आकर माता के चरणों में लोट गया। परन्तु उस घुश्मा को ऐसे ही मालूम हुआ कि जैसे वह घर से बाहर जाकर आता तब पैरों में पड़ता था न उसको मरने

का शोक हुआ न अब उसके पुनः जीवित होकर मिलने का हर्ष हुआ। उसने तो यही समझा कि भगवान् शिव की ही यह कोई लीला है और वह फिर भगवान् शिव के ही ध्यान में मग्न हो गई। भगवान् शिव ने भी उसकी तन्मयता को देखकर अब अधिक विलम्ब नहीं किया, झट से उसके समक्ष प्रकट हो गये। वे उसकी सौत की इस काली करतूत को बर्दाश्त न कर सके। अपने त्रिशूल से उसका सिर छेदन को तैयार हुए तब ही घुश्मा ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की–हे प्रभु आप मुझपर प्रसन्न हैं तो मेरी इस बहिन को क्षमा कर दें। अवश्य ही इसने यह महान् घोर पाप किया है पर अब यह आपके दर्शन से मुक्त हो जायेगी। आप उसे भी दर्शन दें। आपके दर्शन करने से, आपकी कृपा हो जाने पर कोई भी पापी बना नहीं रह सकता है। हे भगवान् आप उसे भी क्षमा करो। उसने जो भी पाप किया है उसके अकल्याण में किसी प्रकार से मैं निमित्त न बन सकूँ। भगवान् शिव उसकी ऐसी उदारतापूर्ण नीति पर अधिक प्रसन्न हुए तथा उससे और वर माँगने को कहा तो घुष्मा ने फिर अपनी बड़ी बहिन सुदेहा को दर्शन कराके पाप मुक्त करने की प्रार्थना की और यह वरदान मांगा कि आप सर्वदा इस स्थान पर वास करें जिससे सारे संसार का कल्याण हो। उस पर भगवान् शिव ने सुदेहा को भी दर्शन देकर पाप मुक्त किया और सर्वदा के लिये ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में वहाँ वास करने लगे और घुश्मेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हुए। उस तालाब का नाम भी तव से शिवालय हो गया। इस घुश्मेश्वर की बड़ी महिमा गाई है।

ईदृशं चैव लिङ्ग च दृष्ट्वा पापैः प्रमुच्यते ।
सुखं संवर्धते पुंसां शुक्लपक्षे यथा शशी ॥

(शिव० पुरा० ज्ञान० स० अध्याय ५२ श्लोक ८२)

अर्थात् घुश्मेश्वर महादेव के दर्शन से सब पाप दूर हो जाते हैं और सुखों की वृद्धि उसी प्रकार होती है, जिस प्रकार शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा की वृद्धि होती है।

सोपान

(५)

अष्टमूर्ति शिवलिंग

भगवान् शिव के अतिरिक्त इस ब्रह्माण्ड में कुछ भी नहीं है और यह शिव नाम ब्रह्म का ही है।

'सर्वं खल्विदं ब्रह्म'—यह सभी कुछ ब्रह्ममय है। शिवपुराण में महादेवजी (शिवजी) ने स्वयं कहा है—

अहं शिवः शिवश्चायं त्वं चापि शिव एव हि।
सर्वं शिवमयं ब्रह्म शिवात् परम् न किंचन ॥

'ब्रह्मन्! मैं शिव, तुम शिव, सब कुछ शिवमय है। शिव के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। इसी प्रकार से भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है—

मया ततमिदं सर्वम् जगदव्यक्तमूर्तिना।

अर्थात् मेरी इस अव्यक्त मूर्ति द्वारा यह समस्त संसार व्याप्त हो रहा है।

वैसे सृष्टि निर्माणकर्त्ता, पालनकर्त्ता व प्रलयकर्ता होने के कारण ब्रह्मा, विष्णु, शिवनाम से कहे जाते हैं, परन्तु इन तीनों ही कार्यों में बिना किसी शक्ति के न उत्पत्ति हो सकती है न पालन हो सकता है और न प्रलय ही होना संभव है, इसलिए चौथा स्वरूप व नाम शक्ति है, जिसको माया, लक्ष्मी, भगवती आदि विविध नामों से कहा जाता है। इन चारों के नाम अनन्त हैं। उनको कहीं भी किसी भी नाम से कहा गया हो, इन चारों के

अतिरिक्त किसी से कुछ न हुआ है, न होता है और न होने वाला है। इन चारों का कारण मूल बीज रूप से वही ब्रह्म भगवान् शिव ही हैं।

इन भगवान् शिव की अष्ट मूर्तियाँ प्रत्यक्ष रूप हैं। जिनके नाम ये हैं––

शर्व, भव, रुद्र, उग्र, भीम, पशुपति, महादेव और ईशान। ये ही शर्व आदि अष्ट मूर्तियाँ पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, क्षेत्रज्ञ, सूर्य और चन्द्रमा को अधिष्ठित किये हुए हैं। इन्हीं अष्ट मूर्तियों द्वारा विश्व के कण–कण में व्यापक हो रहे उन्हीं परम कारण भगवान् (शिव) की सर्व प्रकार की भावनाओं द्वारा आराधना करनी चाहिये।

ॐ शर्वाय क्षितिमूर्त्तये नमः (पृथ्वी)
ॐ भवाय जलमूर्त्तये नमः (जल)
ॐ रुद्राय अग्निमूर्त्तये नमः (अग्नि)
ॐ उग्राय वायुमूर्त्तये नमः (हवा)
ॐ भीमाय आकाशमूर्त्तये नमः (आकाश)
ॐ पशुपतये यजमानमूर्त्तये नमः
(पूजन आराधना करने वाला यजमान)
ॐ महादेवाय सोममूर्त्तये नमः (चन्द्रमा)
ॐ ईशानाय सूर्यमूर्त्तये नमः (सूर्य)

पृथ्वी जल आदि पञ्च सूक्ष्म भूत हैं। जीवात्मा ही क्षेत्रज्ञ है। जीव ही यजमान रूप से यज्ञ या किसी भी प्रकार की उपासना, आराधना, पूजा आदि करने वाला है, इसीलिये उसे यजमान कहा गया है और पाश याने माया से बन्धा हुआ यह जीव है इसे ही पशु कहा गया है। इस जीव का उद्धार करने वाले भगवान् शिव हैं, इसीलिये उनको पशुपति भी कहा गया है। वे ही दया करके जीव को माया रूपी पाश से मुक्त करते हैं।

शिव पुराण में कहा गया है कि भगवान शिव की ये अष्ट मूर्तियाँ समस्त संसार को व्याप्त किये हुए हैं। जिस तरह किसी वृक्ष की मूल (जड़) को सिञ्चन करने से वृक्ष की सभी शाखाएँ, टहनियाँ, पत्ते आदि हरे भरे होते हैं, उसी प्रकार विश्वात्मा शिव का पूजन करने से उनका जगद्रूप शरीर पुष्टि-लाभ करता है। शिव की पूजा शिव-लिंग पर जल, पुष्पादि अन्य सामग्री चढ़ा कर तो करते ही हैं इसके अतिरिक्त और भी पूजन प्रकार हैं। शिव-पूजकों के लिये वे भी परमावश्यक हैं,। सभी प्राणियों को अभयदान, सबके प्रति अनुग्रह, सभी का उपकार, अपने से हीन की सभी प्रकार से सहायता पूज्यों और माननीयों का सम्मान आदि सभी शिव की आराधना के ही अंग हैं। इनके बिना शिव पूजन निष्फल हो जाती है।

जिस प्रकार पिता, पुत्र–पौत्रादि के आनन्द से आनन्दित होता है, उसी प्रकार अखिल विश्व की प्रीति से भगवान् शिव भी आनन्दित होते हैं। कोई जीव किसी को पीड़ा पहुंचाता है तो अष्ट मूर्तिधारी भगवान् शिव का ही अनिष्ट होता है। इस प्रकार वे अपनी अष्ट मूर्तियों द्वारा अखिल विश्व को अधिष्ठित किये हुये हैं। उन्हीं परम कारण भगवान् शिव की सर्वतोभावेन आराधना करनी चाहिये।

'सब भूतों में और आत्मा में ब्रह्म अथवा शिव का दर्शन होने लग जाये ऐसा ही मन में पूर्ण ध्यान और आत्मा में अनुभूति होने लगे तब जन्म मरण से मुक्ति होती है। इस ध्यान और अनुभूति में संशय व कमी नहीं रखनी चाहिये। इसी भाव की उत्पत्ति के लिए इन अष्ट मूर्तियों की पूजा कही गई है। वास्तव में यह जीव-देह ही देवालय है। माया से मुक्त होने पर यह जीव ही सदाशिव हो जाता है। अज्ञान, काम, क्रोध, मद, लोभ आदि का त्याग कर "सोऽहं" भाव से उन्हीं सदाशिव की पूजा करनी चाहिये।

देही देवालयः प्रोक्तो जीवो देवः सदा शिवः।
त्यजेदज्ञाननिर्माल्यं सोंऽहंभावेन पूजयेत्॥

अर्थात् इसी के भाव को हृदय में धारण कर लेना चाहिये और इसी प्रकार के भगवान् शिव का अपने हृदय–कमल में आत्म-लिंग का अनुभव करते हुये निर्मल चित्त से श्रद्धा रूपी नदी के जल से समाधि-ध्यान सुमनों (पुष्पों) द्वारा मोक्ष प्राप्ति के लिये पूजन करना चाहिये।

अष्टमूर्ति शिवलिंग सभी तीर्थ हैं, इनका परिचय इस प्रकार है–

सूर्य रूप शिव

(१)

सूर्य प्रत्यक्ष देवता है। शिव और सूर्य में कोई भेद नहीं है इसके अनेक प्रमाण हैं। अतः सूर्य देवता के समक्ष खड़े होकर जल पुष्पादि पूजन सामग्री निवेदन करके प्रार्थनादि करना चाहिये। जहाँ सूर्य मन्दिर हो वहाँ मन्दिर में भी पूजन प्रार्थना की जा सकती है। कुछ विद्वान सज्जनों के विचार से इसका तीर्थस्थान कोणार्क सूर्य मन्दिर बतलाया जाता है जो उड़ीसा प्रान्त में बहुत प्राचीन मन्दिर है। यह मन्दिर शिल्प कला कृतियों के कारण भारतीयों का ही नहीं अपितु बाहर विदेशों से आये हुए पर्यटकों का भी आकर्षणयुक्त स्थान है। यहाँ पहुँचने के लिये उड़ीसा की राजधानी भुवनेश्वर या जगदीशपुरी से बस से या प्राइवेट टैक्सी आदि द्वारा पहुंचा जा सकता है। भुवनेश्वर से बस द्वारा ४४ मील है, और जगदीशपुरी से मोटर बस द्वारा ५४ मील है। कोणार्क में अब कोई बस्ती नहीं है। न कोई ठहरने का स्थान है। मंदिर में अब आराध्य मूर्ति भी कोई नहीं है। वर्षा के समय में यहाँ कोई बस या टैक्सी नहीं जाती है। भोजन भी जाने वाले को साथ ले जाना चाहिये क्योंकि निकटतम साधारण ग्राम चार मील से कम दूर नहीं है। कोणार्क प्राचीन पद्मक्षेत्र कहा जाता है। एक बार भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र के पुत्र साम्ब को कुष्ठ रोग हो गया था, तब भगवान् की आज्ञा से ही इस स्थान पर कोणादित्य की आराधना की थी। कुष्ठ रोग दूर हुआ तब साम्ब ने यहाँ यह मन्दिर निर्माण कराया था। सूर्यमूर्ति

स्थापित की थी। आक्रमणकारियों ने इस मन्दिर का ध्वंस कर दिया। अब इसमें स्थापित सूर्य मूर्ति नहीं है। यह सूर्य मूर्ति अब जगदीशपुरी में बतलाई जाती है। मूर्ति न होने पर भी इस स्थान का परिचय देना आवश्यक था। यह मन्दिर शिल्प कलाकृतियों के कारण विश्वविख्यात है। किसी समय यह स्थान सौर-सम्प्रदाय का प्रधान केन्द्र था। पास में ही चन्द्रभागा नदी है। यहाँ माघ शुक्ला सप्तमी का स्नान महा पुण्यप्रद माना जाता है। मंदिर बहुत विशाल और ऊँचा था। आततायियों ने तोड़ा और लूटा। ऊपर का शिखर भी टूट गया और फिर किसी कारण से मन्दिर कुछ भूमि में धँस भी गया है। अब मूल विमान (श्री मन्दिर) तो है नहीं केवल भोग मण्डप का कुछ भाग खड़ा है। इसके पीछे कुछ दूरी पर सूर्यपत्नी संज्ञा का मन्दिर है, वह भी भग्न दशा में है। यहाँ एक राजकीय संग्रहालय भवन बना हुआ है, जिसमें मन्दिर के अनेक अंश संगृहीत हैं, कुछ एक मूर्तियाँ खण्डित व अखण्डित उसमें रखी हैं। इस मन्दिर का जो अंश खड़ा है, उसमें सभी मूर्तियाँ कलापूर्ण हैं, किन्तु प्रायः अश्लील हैं।

वैसे तो भारत में सूर्य के और भी कई स्थानों में मन्दिर पाये जाते हैं किन्तु प्राचीन तीर्थ स्थान रूप से कहे गये हैं, उनका ही वर्णन देना उचित प्रतीत होता है। इसी प्रकार के एक प्राचीन सूर्य मन्दिर का परिचय इस प्रकार है।

सूर्यनार-कोइल

यह स्थान दक्षिण भारत मायावरम् से १५ (पन्द्रह मील) आगे तिरुवड मरुदूर स्टेशन से दो मील दूर है। यहाँ परम्परा से भगवान् सूर्य की आराधना होती आई है। मन्दिर में भगवान् सूर्य की प्रधान मूर्ति है, उसके सामने बृहस्पति की भी प्रतिमा है। यहाँ ही एक मण्डप में पूरे नवग्रहों की मूर्तियाँ हैं। यहाँ के शिलालेखों से पाया जाता है कि यह मन्दिर बहुत प्राचीन समय में कुलोत्तुङ्ग प्रथम का बनाया हुआ है।

चन्द्रमा रूप शिव

(२)

चन्द्रमा रूप शिव का स्थान–काठियावाड़ देश (गुजरात) का सोमनाथ मन्दिर है जो प्रभास क्षेत्र में है।

चन्द्रमा का दूसरा तीर्थस्थान शिवलिङ्ग चन्द्रनाथ नाम से पूर्वी बंगाल (बंगला देश) में चटगाँव नगर से ३४ मील उत्तर-पूर्व में एक पर्वत पर स्थित है। स्थान का नाम सीता कुण्ड है। श्री चन्द्रनाथ का मन्दिर पर्वत के सर्वोच्च शिखर पर है, जो समुद्र तट की सतह से चार सौ गज ऊँचा है। देवी पुराण के चैत्र माहात्म्य में लिखा है कि यह त्रयोदश ज्योतिर्लिङ्ग है, जो पहले गुप्त था और कलियुग में लोकहितार्थ प्रकट हुआ है। इसके लिये लिखा है कि काशी, प्रयाग, भुवनेश्वर, गङ्गासागर, गङ्गा और नैमिषारण्य के दर्शन से जो फल मिलता है, श्रीचन्द्रनाथ क्षेत्र में स्नान पूजन करने से वही फल मिलता है। इसके निकट लगभग बीस तीर्थ स्थान और भी हैं।

श्री पशुपतिनाथ (यजमानमूर्त रूप)

(३)

नेपाल में पशुपतिनाथ महादेव तीर्थ हैं। पशुपतिनाथ लिङ्ग रूप में नहीं हैं, मानुषी विग्रह रूप में विराजमान हैं। मन्दिर चीनी और जापानी ढंग का बना हुआ है और नेपाल राज्य की राजधानी काठमाण्डू में बागमती नदी के दक्षिण किनारे पर आर्या घाट के समीप अवस्थित है। मूर्ति स्वर्ण-निर्मित तथा पञ्चमुखी है। इसके आसपास चाँदी का जँगला बना हुआ है, जिसमें पुजारी को छोड़कर अन्य किसी की तो बात ही क्या, स्वयं नेपाल नरेश भी प्रवेश नहीं कर सकते हैं। नेपाल राज्य में बिना पासपोर्ट के अन्य बाहर के लोगों का प्रवेश बन्द है, परन्तु महाशिव रात्रि के अवसर पर बिना पासपोर्ट भी जाकर पशुपति नाथ के दर्शन कर सकते हैं। नेपाल नरेश अपने को पशुपतिनाथ का दीवान कहते हैं। इस मन्दिर में भगवान् पशुपतिनाथ के खजाने में एक मुख वाले रुद्राक्षों की माला व सर्प-

मणि रखी हुई है जो बहुत ही दुर्लभ पदार्थ हैं। मन्दिर के उच्च प्रबन्धकों की विशिष्ट आज्ञा द्वारा ही इसके दर्शन कराये जा सकते हैं।

शिव काञ्चीं का क्षितिलिङ्ग

एकामेश्वर (भूतत्त्व लिङ्ग)

(४)

यह एकामेश्वर-शिवलिंग शिवकाञ्ची में है। यह पञ्चतत्त्व लिंगों में भूतत्त्वलिंग माना जाता है। वैसे यहाँ बहुत से मन्दिर हैं; किन्तु यही मुख्य मन्दिर माना जाता है।

मद्रास धनुष्कोटि लाइन पर मद्रास से ३५ मील दूर चेंगल पेट स्टेशन हैं वहाँ से एक लाइन अमरकोणम् तक जाती है। इस लाइन पर चेंगलपेट से बाईस मील काञ्जीवरम् स्टेशन है और मद्रास, चेंगलपेट, अमरकोणम्, तिरुपति, तिरुवण्णमलै आदि से यहाँ पर बसें आती हैं। इनसे पहुंचा जा सकता है। यहाँ स्टेशन का नाम काञ्जीवरम् हैं और गाँव का नाम काञ्चीपुरम् है। इस शिव मूर्ति पर जल नहीं चढ़ाया जाता। सुगन्धित, चमेली तैल से स्नान कराया जाता है। मन्दिर बहुत विशाल और सुन्दर बना हुआ है। अन्दर अनेक देव मूर्त्तियों के साथ एक पाषाण मूर्ति भगवान् शंकराचार्य की भी है। मन्दिर के 'गोपुरम्' पर हैदरअली की तोपों से लगे हुए गोलों के चिह्न अब तक मौजूद हैं। अप्रेल मास में यहाँ का प्रधान वार्षिकोत्सव होता है जो पन्द्रह दिन तक रहता है।

इस काञ्ची पुरी की सप्त मोक्षदा पुरियों में गणना होती है। यह हरिहरात्मक पुरी है। इस नगर के दो भाग हैं-शिव काञ्ची और विष्णु काञ्ची। बस्ती एक ही है। दो पुरियाँ दो मोहल्लों की तरह हैं। गर्मी के दिनों में पानी की कमी हो जाती है।

इस मन्दिर के दो बड़े बड़े घेरे बने हुये हैं। पूर्व के घेरे में पहली कक्षा में प्रधान गोपुर जो दस मंजिल ऊँचा है। द्वार के दोनों ओर सुब्रह्मण्यम् तथा गणेश जी के मन्दिर हैं। दूसरे कक्ष में शिव-

गङ्गा सरोवर है। इस सरोवर में ज्येष्ठ के महोत्सव में उत्सव-मूर्त्तियों को जलविहार कराया जाता है। उस समय बड़ा मेला होता है। सरोवर के दक्षिण मण्डप में श्मशानेश्वर शिवलिंग है। इस घेरे से मिला हुआ मुख्य मन्दिर का द्वार है।

मुख्य मन्दिर के तीन द्वारों के भीतर श्री एकामेश्वर शिवलिंग स्थित है। लिंग-मूर्ति श्याम है। कहा जाता है कि यह मूर्ति बालुका-निर्मित है। लिंग मूर्ति के पीछे श्री गौरीशंकर की युगल मूर्ति है। अभिषेक सुगन्धित चमेली के तैल से ही होता है। प्रति सोमवार को सवारी निकलती है।

मुख्य मन्दिर के दो परिक्रमाएँ हैं। पहली परिक्रमा में क्रमशः शिवभक्तगण, गणेशजी, एक सौ आठ-शिवलिंग, नन्दीश्वर-लिंग, चण्डिकेश्वर-लिंग तथा चन्द्रकण्ठ बालाजी की मूर्तियाँ हैं। दूसरी परिक्रमा में कालिका देवी, कोटि-लिंग, तथा कैलाश-मन्दिर है, जिसमें शिव-पार्वती की स्वर्णमयी उत्सव की युगल मूर्ति है। जगमोहन में चौसठ योगिनियों की मूर्तियाँ हैं। एक अलग मन्दिर में श्री पार्वती जी का विग्रह है। इसके पश्चात् एक मन्दिर में स्वर्ण-कामाक्षी देवी है। दूसरे मन्दिर में अपनी दोनों पत्नियों सहित सुब्रह्मण्य स्वामी की मूर्ति है।

एकामेश्वर मन्दिर के प्राङ्गण में एक बहुत प्राचीन आम का वृक्ष है। यात्री इस वृक्ष की पूजन परिक्रमा करते हैं। इसके नीचे चबूतरे पर एक छोटे मन्दिर में तपस्या में लगी हुई कामाक्षी पार्वती की मूर्ति है। एकामेश्वर-मन्दिर से लगभग दो फर्लांग पर स्टेशन की तरफ कामाक्षा देवी का मन्दिर भी है। यह दक्षिण भारत का सर्वप्रधान शक्तिपीठ है। कामाक्षा देवी, आद्याशक्ति, भगवती त्रिपुर सुन्दरी की ही प्रति मूर्ति है। इन्हें काम कोटि भी कहते हैं। इसके अतिरिक्त शिव काञ्ची में और बहुत से मन्दिर हैं जिनका वर्णन विस्तारभय से यहाँ नहीं किया गया है। शिव काञ्ची में शिव

मन्दिरों की संख्या एक सौ आठ है और विष्णु काञ्ची में भी अनेक मन्दिर हैं जो बड़े विशाल, सुन्दर व कलापूर्ण हैं।

श्री जम्बूकेश्वर (जल तत्त्वलिङ्ग)

(५)

यह जलतत्त्वलिङ्ग मद्रास प्रान्त के त्रिचनापल्ली स्थान से थोड़ी ही दूर आगे है। 'श्रीरङ्गनाथ' से एक मील पर जम्बूकेश्वर 'अप-लिङ्ग' है। अतः जलहरी के नीचे से जल बराबर ऊपर उठता हुआ नजर आता है। स्थापत्य शिल्प की दृष्टि से यह मन्दिर भी बहुत उत्तम बना हुआ है। मन्दिर के बाहर पाँच परकोटे हैं। तीसरे परकोटे में एक जलाशय है जहाँ स्नान किया जाता है। यहां जम्बू (जामुन के पेड़) का भी बड़ा माहात्म्य है। यह मन्दिर एक सौ वीघा के घेरे में है। द्वार से मन्दिर में प्रविष्ट होने पर जो पहला मण्डप आता है उसमें चार सौ स्तम्भ लगे हुए हैं। दूसरे मण्डप में एक हजार स्तम्भ लगे हुए हैं। श्री जम्बूकेश्वर शिवलिङ्ग मन्दिर पाँचवे घेरे में विराजमान है। लिङ्ग-मूर्ति के नीचे से जल बरावर आता रहता है जिससे जलहरी से ऊपर निकल कर निज मन्दिर में भरता रहता है। इसी प्रकार सभी प्रांगण भी जल में भरे रहते हैं। वैसे ही जल निकलने के द्वार भी वने हुए हैं। उनसे जल निकलता भी रहता है, जलहरी में जल के बीच में ऊपर निकले हुए शिवलिङ्ग के दर्शन होते रहते हैं। इस जम्बूकेश्वर मन्दिर के पीछे जामुन का एक बहुत प्राचीन वृक्ष है, इससे ही इसका नाम जम्बूकेश्वर है। आदि शंकराचार्य ने इस जम्बूकेश्वर की आराधना की थी।

श्री तिरुपराणमलैवा अरुणाचलेश्वर

अग्नितत्त्वलिङ्ग (तेजोमयलिङ्ग)

(६)

तिरूवण्णमलैवा अरुणाचलम् में अग्नितत्त्व लिङ्ग या तेजोमय-लिंग की पूजा होती है। दक्षिण भारत में तिरुवण्णमलै स्टेशन

है यहाँ से अरुणाचल एक मील है। काञ्ची व तिरुपति तीर्थों से मोटर बसें यहाँ पहुँचने को मिलती हैं। यहीं पर अरुणाचलेश्वर का स्थान है।

अरुणाचलेश्वर का बहुत बड़ा विशाल मन्दिर उत्तम शिल्प–कला का उदाहरण है। मन्दिर के पाँच घेरे बने हुए हैं, इनका गोपुर दस मंजिल का बना हुआ है। पाँचवें घेरे के अन्दर अरुणा चलेश्वर शिवलिंग स्थित है मन्दिर में अनेक देवी देवताओं के स्थान व प्रतिमाएँ हैं। इस क्षेत्र का बड़ा माहात्म्य है। यहाँ पार्वतीजी ने तपस्या की थी। भगवान् शिव अरुणाचल पर्वत पर अग्नि-शिखा के रूप में आविर्भूत हुए और जगत का अन्धकार दूर हुआ था। यहां का सबसे बड़ा उत्सव कार्तिक की पूर्णिमा को होता है। इस उत्सव के अवसर पर पुजारी लोग एक बड़े पात्र में बहुत–सा कपूर जलाकर उस पात्र को ऊपर से ढक देते हैं, ऊपर का पात्र उठाने पर प्रज्वलित अवस्था में ही उसे बाहर मण्डप में ले जाते हैं, जहाँ भगवान् का मानुषी विग्रह घुमा फिराकर रखा जाता है। वहां ढके हुए पात्र को खोल दिया जाता है और ज्योति रूप लिंग के दर्शन किये जाते हैं। उसी समय मन्दिर के शिखर पर भी बहुत कपूर जला दिया जाता है, मंदिर के ऊपर कपूर की वह ज्योति, लिङ्गरूप में दिखाई देती हैं, उस समय कई मन कपूर इस प्रकार की ज्योति में खर्च होता है। घी की मशालें भी ज्योति रूप में प्रज्वलित की जाती हैं। मण्डप में जो पात्र में ज्योतिर्लिंग रूप तेजोमय अग्नि तत्त्व लिंग होता है, उसके दर्शन पूजन भेंट आदि की जाती हैं इसे ही अग्नितत्त्वलिंग माना जाकर विशिष्ट पूजा होती है। इस अरुणाचल पर्वत पर भी कार्तिक शुक्ला १५ पूर्णिमा से कई दिन पूर्व ही एक पहाड़ की चोटी पर एक बड़े पात्र में बराबर कपूर की ज्योति जलाई जाती है, ज्यों–ज्यों कपूर जलता रहता है उसमें कपूर और डालते रहते हैं और वह जलता रहता है। यह अग्नि-शिखा पर्वत पर उठती हुई कई मील दूर तक दिखाई देती रहती

है। इस उत्सव के समय नित्य ही भीड़ होती रहती है; परन्तु कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा को तो लाखों की संख्या में यात्री पहुंचकर इस कपूर ज्योति-तत्व-लिंग के दर्शन पूजनादि करते हैं बहुत बड़ा मेला होता है। इसके दर्शन पूजन का बड़ा माहात्म्य है। मन्दिर बहुत बड़ा है कई गोपुर व घेरे पार करने के बाद अरुणाचलेश्वर का निज मंदिर है। निज मंदिर में पाँच द्वारों के भीतर शिवलिंग प्रतिष्ठित है। इसकी परिक्रमा में पार्वती, गणेश, नवग्रह, दक्षिणामूर्ति शिवभक्तगण, नटराज आदि देवताओं के दर्शन होते हैं अरुणाचलेश्वर के निजमंडप से उत्तर में पार्वतीजी का भी बहुत बड़ा मंदिर है उसमें श्री पार्वती जी की भव्य मूर्ति प्रतिष्ठित है।

श्री कालहस्तीश्वर (वायु तत्त्व लिङ्ग)

(७)

श्री कालहस्तीश्वर शिव-लिंग का पूजन दर्शन वायुतत्त्व-लिङ्ग मान कर किया जाता है। इस स्थान पर पहुँचने के लिये मद्रास, चेंगल पेट एवं तिरुपति से बसें मिलती हैं। विल्लुपुरम् गूडूर लाइन पर रेनीगूंटा से १५ पन्द्रह मील (तिरुपति इष्ट से २१ इक्कीस मील) पर काल हस्ती स्टेशन है। स्टेशन से काल हस्ती लगभग डेढ़ मील है।

स्टेशन से चलने पर कुछ दूर बाद स्वर्ण मुखी नदी है। उसको उसको पार करने के लिये पुल बना हुआ है पुल पार करने पर एक कैलाश गिरि पहाड़ी है। नन्दीश्वर ने कैलाश के तीन शिखर पृथ्वी पर स्थापित किये थे उनमें से एक यह माना जाता है पहाड़ी से सटा हुआ यह श्री काल हस्तीश्वर का मन्दिर है। मन्दिर का घेरा विस्तृत है। दो परिक्रमाऐं तो बाहर के घेरे की है। मन्दिर के मुख्य स्थान पर भगवान् शिव की लिङ्ग मूर्ति है। यही वायु तत्त्व-लिंग है अतः इस शङ्कर मूर्ति का पुजारी या अन्य कोई भी स्पर्श नहीं करते हैं। मूर्ति के पास ही एक स्वर्ण-पट्ट स्थापित है सभी पूजन

सामग्री आदि-चढ़ाई जाती है, वह सभी इसी स्वर्ण-पट्ट पर चढ़ाई जाती है, एवं जो पूजा कोई भी यहाँ आकर करते हैं वह इस स्वर्ण पट्ट पर ही करते हैं। इस स्वर्ण पट्ट मूर्ति में मकड़ी, सर्पफण तथा हाथी के दाँतों के चिह्न स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। यहाँ पर पहले मकड़ी, सर्प देवता तथा हाथी ने भगवान् शंकर की आराधना की थी। उन तीनों के अर्चना, वन्दना करने पर भगवान् शिव यहाँ हमेशा के लिये शिव-लिङ्ग रूप में स्थापित हुए। अतः (श्री–मकड़ी, काल-सर्प, हस्ती-हाथी) श्री कालहस्तीश्वर नाम से विख्यात हुये।

मन्दिर में ही भगवती पार्वती का पृथक मन्दिर है। परिक्रमा में गणेशजी, चार शिव-लिंग, कार्तिकेय, सहस्रलिङ्ग, चित्रगुप्त, यमराज, धर्मराज, चण्डिकेश्वर, नटराज, सूर्य, बाल सुब्रह्मण्य, काशी-विश्वनाथ, रामेश्वर, लक्ष्मी गणपति, बाल गणपति, तिरुपति बालाजी, सीताराम, हनुमान, परशुरामेश्वर, शनैश्चर-भूतगणपति, कनक दुर्गा, शिव भक्त बृद, अविमुक्त लिंग, काल भैरव तथा दक्षिण मूर्ति आदि मूर्तियाँ स्थापित हैं।

मन्दिर में ही गाण्डीवधारी अर्जुन तथा पशुपति भगवान् शिव की मूर्तियाँ भी हैं। यहां जो अर्जुन की मूर्ति दिखाई देतो है इसको पण्डे लोग कण्णप्प भील की मूर्ति बतलाते हैं, जिसने भगवान् शिव को अपने नेत्र निकाल कर चढ़ाये थे, बड़ा शिवभक्त था। यहाँ इकावन शक्तिपीठों में से एक शक्तिपीठ स्थान भी है। इन दोनों ही स्थानों का बड़ा माहात्म्य है।

श्री चिदम्बरम् (आकाश तत्त्व–लिङ्ग)

(८)

चिदम्बरम् (शिव-लिङ्ग) की पूजा आकाश तत्त्व लिङ्ग मानकर की जाती है।

इस स्थान पर पहुंचने के लिये मद्रास धनुष्कोटि लाइन में बिल्लुपुरम् से ५० मील दूर चिदम्बरम् स्टेशन है। मन्दिर स्टेशन

से एक मील दूर है। दक्षिण भारत का सुप्रसिद्ध नटराज मन्दिर भी यही है। इस मन्दिर का घेरा भी एक सौ बीघा में है। घेरे के अन्दर अनेक दर्शनीय मन्दिर हैं। यहाँ इस मन्दिर का गोपुर नौ-मंजिल ऊँचा है। चार घेरे पार करने पर पाँचवें घेरे में नटराज मन्दिर है। सभा मण्डप के आगे स्वर्ण मंडित स्तम्भ है। मंडप में अनेकों मूर्तियाँ हैं। आँगण के मध्य में कसौटी के काले पत्थर का श्री नटराज का निज मन्दिर है। शिखर पर भी स्वर्ण पत्र मँडे हुए हैं, मन्दिर में नृत्य करते हुए भगवान् शिव की स्वर्ण निर्मित बहुत सुन्दर मूर्ति है। झाँकी महान् ही भव्य है। पास ही पार्वतीजी, तुम्बरु, नारदजी आदि कई देवताओं की छोटी स्वर्णमूर्तियाँ स्थापित हैं।

नटराज मन्दिर के निजी घेरे के बाहर (चौथे घेरे में) उत्तर की ओर एक मन्दिर है सामने सभामण्डप है। कई ड्योढ़ियों के भीतर भगवान् शंकर का लिङ्ग-मय विग्रह है। यही चिदम्बरम् का मूल विग्रह है। महर्षि व्याघ्रपाद तथा पतञ्जलि ने इसी मूर्ति की अर्चना की थी। उनकी आराधना से प्रसन्न होकर शंकर प्रसन्न हुये थे और उसी समय उन्होंने ताण्डव-नृत्य किया था। उसी स्मृति में यह नटराज मूर्ति स्थापित हुई थी। आदि मूर्ति तो लिंग मूर्ति ही है। इसी मन्दिर में एक ओर पार्वती जी की मूर्ति भी है।

इसी मन्दिर के घेरे में एक ओर एक धोबी एवं चाण्डाल तथा दो अन्य शूद्रों की मूर्तियाँ भी हैं। ये बड़े शिव भक्त हुए हैं, जिन्हें भी भगवान् शंकर ने दर्शन दिया था। श्री नटराज के दाहिनी ओर काली दीवार में एक यन्त्र खुदा हुआ है। यहाँ पर स्वर्ण (सोने) निर्मित मालाएँ लटकती रहती हैं। यह नीला शून्याकार ही आकाश तत्त्व लिंग माना जाता है। इसके अतिरिक्त यहाँ आकाश ही आकाश है यही भगवान् शिव का आकाश लिंग है। चिदम्बरम् का अर्थ है--(चित्त=ज्ञान, अम्बर =आकाश) चिदाकाश। इस स्थान पर प्रायः पर्दा पड़ा रहता है। लगभग ११ ग्यारह बजे दिन को अभिषेक होता है। उस

समय तथा रात्रि में फिर अभिषेक होता है इसके दर्शन होते हैं। यहाँ सम्पुट में रखे हुए दो शिव-लिंग हैं। एक स्फटिक मणि का है, दूसरा नील मणि का है। स्फटिक मणि वाली मूर्ति को चन्द्र मौलीश्वर तथा नीलम वाली मूर्ति को रत्न सभापति कहते हैं। इसी प्रकार एक स्वर्ण मण्डित दक्षिणावर्त शंख है। इनके भी दर्शन दिन के ११ ग्यारह बजे अभिषेक समय ही कराये जाते हैं।

इसी प्रसंग में कुछ विशिष्ट महत्त्वपूर्ण दुर्लभ वस्तुओं का वर्णन अप्रासंगिक नहीं होगा। इन निम्नलिखित वस्तुओं का महान् महत्त्व व फल माहात्म्य कहा गया है, अतएव संक्षिप्त में परिचय दिया जाता है।

दक्षिणावर्त शंख, एकमुखी रुद्राक्ष, गजमुक्ता, सर्पमणि, पारस-मणि, उदम्बर (गूलर) का पुष्प, शुद्धपारद निर्मित ठोस शिवलिंग, दक्षिणावर्त गोमती चक्र, शिवलिंगाकार नीलमणि बड़ा, ये नौ महारत्न कहे गये हैं। यह इस संसार में है और होते हैं; किन्तु बहुत ही दुर्लभ हैं। किसी विशिष्ट व्यक्ति को ही विशेष अवस्था में भगवान् शिव की कृपा से ये प्राप्त होते हैं और किसी विशिष्ट स्थान व अवसर पर भाग्य से ही दर्शन व पूजन का अवसर मिल पाता है। सर्वाधिक बड़ा नीलमणि शिवलिंग इस समय में श्री-द्वारका जी के मन्दिर में स्थापित है। इसके विषय में सुना गया है कि इसको अंग्रेज अपने शासन काल में भारत से इंगलैण्ड ले गये थे, और अब तक वहीं था। अब जगद्गुरु शंकराचार्य महाराज शारदा पीठाधीश्वर द्वारका की प्रेरणा व धर्म प्राण जनता के आग्रह व अदम्य, उत्साह परिश्रम व भारत के प्रधान शासकों द्वारा इंगलैण्ड से दो वर्ष पूर्व भारत में ले आया गया और स्वर्ण के सुन्दर आवरणों से वेष्टित कर स्थापित कर दिया गया है। मूर्ति बहुत सुन्दर हल्के बैंगनी रंग की लगभग दस बारह अंगुल लम्बी और साधारण ढंग के मोटे मनुष्य की पाँचों अंगुली मिलादें इतनी मोटी है, इससे बड़ी नीलमणि और कहीं नहीं बतलाई जाती है। इसके पूजन का तो

कहना ही क्या दर्शन मात्र से ही शनि ग्रह के दोष शान्त हो जाते हैं। एकमुखी रुद्राक्ष की पूरी माला एवं सर्पमणि पशुपति नाथ महादेव काठमांडू (नैपाल) के खजाने में विशेष सुरक्षा में हैं, विशिष्ट पदाधिकारियों की विशिष्ट आज्ञा से ही दर्शन कराये जा सकते हैं। ये उपर्युक्त सभी पदार्थ वस्तुएँ अमूल्य निधि कही जाती हैं।

इस चिदम्बरम् (आकाश-तत्त्व-लिङ्ग) नटराज मन्दिर में निज मन्दिर से बारह घेरे में आते ही कनक सभा मिलती है, इसके पूर्वी व पश्चिमीय द्वारों पर नाट्यशास्त्रोक्त १०८ मुद्राएँ खुदी हुई हैं। इस मन्दिर का अनूठी कारीगरी से तैयार किया हुआ प्रधान (गोपुर) सहस्र स्तम्भ मंडप तथा शिवगङ्गासरोवर द्राविड़ स्थापत्य शिल्पकला के अद्भुत नमूने हैं। मन्दिर के सामने ड्योढ़ी पर एक पीतल की चौखट बड़ी विशाल सुन्दर देखने ही योग्य है। यहाँ पर रात्रि में सैकड़ों दीपक जलाये जाते हैं। जून तथा दिसम्बर में दो बड़े उत्सव होते हैं जिनको 'तिरुमञ्जनम्' और 'अद्रादर्शनम्', कहा जाता है। दोनों अवसरों पर बड़ी घूमधाम से सवारी निकलती है और कई दिनों तक बहुत भीड़ बनी रहती है। चिदम्बरम् में एक विश्वविद्यालय भी है और एक विशाल पुस्तकालय भी है जो भारत में ही नहीं बल्कि संसार भर के प्रसिद्ध पुस्तकालयों की गणना में आता है। इसमें संसार भर की सभी पुस्तकों का संग्रह किया जाता रहा है।

यह भगवान् शिव का अष्टमूर्ति वर्णन समाप्त किया जाता है।

सोपान

(६)

प्राचीन शास्त्राधारों के अतिरिक्त स्थापित शिव-लिङ्ग जिनकी अधिक मान्यता है

द्वादश ज्योतिर्लिंग व अष्टमूर्ति शिवलिंग स्थानों के अतिरिक्त कुछ शिवलिङ्ग ऐसे हैं, जिनकी भी बहुत अधिक मान्यता है। उनकी नामावली इस प्रकार है–

नामशिवलिङ्ग	स्थान
सुन्दरेश्वर	मदुरा (दक्षिण भारत)
कुंभेश्वर	कुम्भकोणम् (दक्षिण भारत)
बृहदीश्वर	तंजौर (दक्षिण भारत)
पक्षी तीर्थ	चेंगलपेट (दक्षिण भारत)
अमरनाथ	कश्मीर (काश्मीर प्रान्त)
वैद्यनाथ पपरोला	काँगडा (पंजाब) उत्तर भारत
ताड़केश्वर	पश्चिम बंगाल सेवड़ाफुली स्टेशन के पास
कण्डारिया महादेव	खुजराहो (मध्य प्रदेश)
गौरी-शंकर	जबलपुर (मध्य प्रदेश)
भुवनेश्वर	भुवनेश्वर (उड़ीसा)
एकलिंग	उदयपुर (राजस्थान)
सर्वेश्वर	जयस्तम्भ के पास चित्तौड़ (राज०)
स्तम्भेश्वर	जयस्तम्भ के पास चित्तौड़ (राज०)
हरीश्वर	मानसरोवर के पास (हिमालय)

व्यासेश्वर	काशी (बनारस) के पास (उ० प्रदेश)
मध्यमेश्वर	काशी (बनारस) उत्तर प्रदेश
हाटकेश्वर	बड़नगर अहमदाबाद दिल्ली लाइन पर महसाणा स्टेशन है इससे २१ मील दूर है
मुक्त परमेश्वर	अरुणाचल (दक्षिण भारत)
प्रतिज्ञेश्वर	क्रौंच पर्वत (दक्षिण भारत)
कपालेश्वर	क्रौंच पर्वत (दक्षिण भारत)
कुमारेश्वर	क्रौंच पर्वत (दक्षिण भारत)
अजय भ्रमरेश्वर	महेन्द्र पर्वत पर
गोला गोकर्णनाथ	कानपुर के पास (उत्तर प्रदेश)
महाबलेश्वर	महाबलेश्वर (पूना के पास)
शत-लिङ्ग	कमानियां ग्राम जिसको रामनाथ कासी भी कहते हैं। (जिला महेन्द्रगढ़) नारनौल के पास यह ग्राम है (हरियाणा) प्रान्त

सोपान

(७)

नर्मदेश्वर (बाण लिङ्ग)

ओंकारेश्वर रोड़ स्टेशन से २० मील दूर और उसके पास के स्टेशन सनावद से १६ सोलह मील भगवान् नर्मदेश्वर का स्थान है। मध्य रेल्वे की बम्बई दिल्ली लाईन पर खण्डवा से २१ इक्कीस मील

पर वीर स्टेशन है। वहाँ से पन्द्रह मील दूर पर पुनासा गांव तक पक्की सड़क है। आगे पाँच मील तक पैदल मार्ग है।

इस स्थान पर नर्मदा जी का सबसे बड़ा प्रपात है। लगभग पचास फुट ऊँचे से जल यहाँ पर गिरता है। आसपास में सघन वन है। प्रपात के नीचे कुण्ड है। इस कुण्ड से बाणलिंग निकाले जाते हैं। इस स्थान का नाम धावड़ी कुंड है।

अधिकांश नर्मदेश्वर (बाण लिंग) लोग यहाँ से ही ले जाते हैं। यहाँ पर अनेक बार बहुत सुन्दर नर्मदेश्वर लिंग मिलते हैं। यहाँ के अतिरिक्त अन्य किसी स्थान से नर्मदा से शिवलिंग न निकाले जावें ऐसा तो कोई प्रमाण नहीं है, किन्तु इस स्थान से शिवलिंग निकाल कर ले जाने और इसकी पूजा करने का लोग विशेष महत्त्व मानते हैं।

वैसे ओंकारेश्वर या अन्य पुण्य स्थल तीर्थस्थान जो भी नर्मदा के किनारे पर हैं वहाँ से कहीं पर भी नर्मदा से निकालकर लोग नर्मदेश्वर शिवलिंग ले जाते हैं। वही नर्मदेश्वर शिव (बाणलिङ्ग) कहलाते हैं।

नर्मदा से ग्रहण किया हुआ या नर्मदा से निकालकर लाया हुआ बाणलिङ्ग किसी से भी ग्रहण कर उसकी पूजा एवं दर्शन किया सकता है। यह सभी प्रकार की अभिलाषा और मुक्ति दोनों को प्रदान करने वाला है। नर्मदेश्वर (बाणलिंग) की पूजा अनेक देवताओं व देवताओं के राजा इन्द्र ने तथा मनुष्य व राक्षसों ने की और अपनी अभीष्ट कामना फल सिद्धियाँ प्राप्त की हैं, इसकी अनेक कथाएँ हैं।

ऐसे बाणलिङ्ग को लेकर वेदी पर स्थापन करके पूजा करना अतिश्रेष्ठ है। वेदी (पीठिका) ताम्बा, स्फटिक मणि (एक प्रकार का खास-पत्थर), स्वर्ण, चाँदी, पत्थर की बनाया जाना उचित बतलाया है।

नर्मदेश्वर (वाणलिङ्ग) ग्रहण करने की विधि इस प्रकार है—नर्मदेश्वर को लेकर एक छोटी तराजू या काँटा लेवे जिसमें शिवलिंग की तुलाई का काम ठीक हो सके। एक पलड़े में शिवलिंग रखे दूसरे पलड़े में चावल रखे। फिर तोले। फिर दूसरी बार थोड़ी देर रुक कर उन्हीं चावलों द्वारा उसी शिवलिंग को फिर तोले। यदि शिवलिंग हल्का ठहरे तो गृहस्थों के लिये अत्युत्तम है और पूजन करने योग्य है। तीन या पाँच, सात बार तोलने पर भी तोल वरावर ही निकले तो उस लिंग को जल में छोड़ देवे ग्रहण न करे। यदि बार-बार तोलने पर शिवलिंग भारी निकले तो वह उदासीन साधुओं विरक्तों के लिये उत्तम पूजन करने योग्य कहा है। इस प्रकार तोल द्वारा कमी वेशी होती है, यही बाणलिंग की पहचान कही है। जब वाणलिंग होना निश्चय हो जावे तव संस्कार करना चाहिये। संस्कार करने के पश्चात् पूजा आरंभ करनी चाहिये।

पहले सामान्य पूजन-विधि द्वारा गणेशादि की पूजा करे। फिर नर्मदेश्वर (बाणलिङ्ग) को स्नान करावे, स्नान कराके इस मंत्र से ध्यान करे—

ॐ प्रमत्तं शक्तिसंयुक्तं बाणाख्यं च महाप्रभम्।
कामबाणान्वितं देवं संसारदहनक्षमम्॥
शृंगारादिरसोल्लासं बाणाख्यं परमेश्वरम्॥

इस ध्यान को मन व मुख से (शुद्ध सुन्दर ढंग से) पढ़ना चाहिये। फिर मानसोपचार से तथा फिर से ध्यान करके पूजा करे। हो सके जहाँ तक षोडशोपचार पूजन करे, फिर जप यथा-शक्ति करके, स्तवन पाठ करना या कराना चाहिये।

जप या तो 'त्र्यम्बकं यजामहे' मंत्र का या 'ॐ नमः शिवाय' मंत्र का करे फिर स्तवन करे या स्वयं नहीं कर सकते हों तो ऐसे पंडित ब्राह्मण द्वारा करावे जो इस विषय का विद्वान् हो। स्तवन के लिए पुस्तकें निम्न प्रकार हैं—

पवमान सूक्त, रुद्र सूक्त, नीलरुद्र सूक्त, त्वरित मन्त्र, लिङ्ग-सूक्त, अथर्वशीर्ष, ऋग्वेद, सामवेद तथा शिव सम्बन्धी पञ्च ब्रह्म–मंत्र, शिव मन्त्र। इनके द्वारा स्तवन करने वाला विद्वान् कहीं नहीं मिले तो कुछ स्तोत्र इसी पुस्तक के अन्तिम प्रकरण में दिये गये हैं उनके द्वारा ग्रहण करना चाहिये, बाणलिंग (नरमदेश्वर) शिवलिंग पूजन में आवाहन व विसर्जन नहीं किया जाता है।

कुछ बातों की जानकारी (ज्ञान) होना बाणलिंग (नर्मदेश्वर) गृहण करके पूजन करने वाले के लिए आवश्यक हैं क्योंकि अज्ञान से कोई निन्दनीय बाणलिंग ले लिया जाने पर उसकी पूजा से कोई अनिष्ट होने की आशंका रहती है, वे बातें ये हैं--

कर्कश (खुरदरा) होने से पुत्र, दारा (स्त्री) क्षय होना लिखा है। चिपटा होने से गृह भंग होना लिखा है।

एक पार्श्व गोल हो, एक पार्श्व चिपटा हो, वह स्त्री पुत्रादि को पीड़ा कारक लिखा है।

शिरोदेश (सिर के ऊपर से) फूटा खरदड़ा होने से व्याधि होना लिखा है। छिद्रयुक्त होने से प्रवास होना लिखा है।

लिंग में कणिका होने से व्याधि होना लिखा है।

एक भाग तीक्ष्णाग्र (याने गोल हो और ऊपर ऊपर से पतला चोंचदार हो), वक्र शीर्ष (याने सिर की ओर से टेढ़ा हो), यह सभी अनिष्टकरर्ता माने गये हैं। यह लिंग निन्ध कहे गये हैं। इनको ग्रहण करना व पूजा करना वर्जित है अतः ऐसे न ग्रहण करे न पूजा करें।

अतिस्थूल (बड़ा मोटा), अतिकृश (बहुत पतना), स्वल्प (बहुत छोटा) भूषण युक्त (जिनके उपर से जेवर माला आदि के प्रकार की धारियां बनी हों), ऐसे शिवलिंग भी गृहस्थों के लिए वर्जित कहे गये हैं मेघाभ (मेघ रंग के) और कपिलवर्ण (शहद के रंग) का, शिवलिंग नर्मदेश्वर अत्युत्तम माने गये हैं। (किन्तु इनमें

अति छोटा अति मोटा गृहस्थी के लिये ठीक नहीं होता है), गृहस्थी को इस प्रकार का भी ग्रहण नहीं करना चाहिये न पूजन करना चाहिए। भौंरे के रंग के समान काला लिंग सपीठ हो या अपीठ सुसंस्कृत याने शुभ लक्षणों से युक्त हो तो मंत्र संस्कार रहित (याने मंत्र संस्कार न भी किया हुआ हो) तो भी ऐसा ग्रहण कर पूजन दर्शन करना श्रेष्ठ अत्युत्तम कहा गया है।

नर्मदेश्वर (बाणलिंग) प्रायः कमल गट्टे सदृश (समान) अत्युत्तम माना गया है।

पक्की जामुन फल या मुर्गी के अण्डे के आकार का उत्तम कहा है।

श्वेत, नील और शहद के रंग का, या कुछ पीला रंग लिए हुए हो, या कुछ पीले रंग में हल्की सी लाली मिले हुए रंग का हो जैसे कि कुछ पुराने शहद का रंग होता है ऐसा हो। इस प्रकार के शिव-लिंग नर्मदेश्वर (बाणलिंग) गृहस्थियों के ग्रहण करने व पूजन करने योग्य व उत्तम फलप्रद माने गये हैं।

इनको बाणलिंग इस प्रकार कहा गया है। नर्मदा तट पर बाणासुर ने तपस्या की उसकी तपस्या से भगवान् शिव प्रसन्न हुए, और वर मांगने को कहा तब बाणासुर ने कहा कि आप बहुत तपस्या करने पर प्रकट हुए, इसलिये नर्मदा तट के पर्वतों पर लिंग रूप में प्रत्येक पत्थर में सर्वदा निवास करें और यह पाषाण (पत्थर) नर्मदा में गिरकर आपके समान सभी मनुष्यों अन्य जीवधारियों के पूजन करने पर फलदाता होते रहें और आपके ही रूप के सदृश हों। तब भगवान् शिव ने कहा कि बाणासुर मैं तुम्हारे ऊपर बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। तुमने जैसा है वैसा ही होगा। तब से नर्मदा में पड़े हुए सभी पाषाण (पत्थर) कंकर शंकर कहे जाते हैं। एक बाणलिंग की पूजा करने से अनेक शिव-लिंगों की पूजा का फल प्राप्त होता है।

यह उपर्युक्त विवरण कई पुस्तकों के पठन मनन करने पर सारांश रूप में लिखा गया है। बाणलिंग के तोल आदि का प्रकरण

विवरण सूत संहिता पर आधारित है । यह चावलों द्वारा तोल का प्रकरण केवल (नर्मदेश्वर) बाणलिंग ग्रहण पूजन में ही प्रयुक्त करने का है, अन्य शिवलिंगों के विषय में नहीं है ।

शिव लिंग किस प्रकार के उत्तम होते हैं यह उपर्युक्त प्रकार अन्य शिवलिंगों (मूर्तियों) के ग्रहण निर्माण व पूजन में भी देख लेना आवश्यक है ।

सोपान

(८)

विभिन्न पदार्थों द्वारा निर्मित शिवलिङ्ग

भारत में प्रायः सभी प्रान्तों में शिव-लिंग पूजन का प्रचलन व मान्यता है ।

पार्थिव शिवलिंग की पूजा भी की जाती है । यह एक या दो तोले के लगभग मिट्टी लेकर बनाना चाहिये । ब्राह्मण सफेद, क्षत्रिय लाल, वैश्य पीली और शूद्र को काली मिट्टी लेकर बनाना चाहिये । जहाँ इस प्रकार की मिट्टी न मिले वहाँ दूसरे प्रकार की याने अन्य रंग की मिट्टी मिले उसे ही लेकर बनाया जा सकता है । पार्थिव-शिव-लिङ्ग अपने दाहिने हाथ के अंगूठे के ऊपर वाले पोरवे के प्रमाण का बनाना चाहिए ।

साधारणतया सभी लिंग अंगुष्ठ प्रमाण ही बनाये जाते हैं । पाषाणादि (पत्थर) के लिंग मोटे व बड़े भी बनाये जाते हैं । लिंग से दुगुने प्रमाण की वेदी और आधे प्रमाण की योनि पीठ होना चाहिए । लिंग की लम्बाई कम होने से शत्रु वृद्धि होती है, ऐसी

शास्त्रों की मान्यता है। योनि (पीठ) बिना या मस्तकादि अंग बिना लिंग बनाकर पूजन करना अशुभ माना गया है। लिंग प्रायः सुलक्षण सुन्दर होना चाहिए, अलक्षण अमंगलकारी होता है।

लिङ्ग मात्र की पूजा में पार्वती व शिव दोनों की पूजा हो जाती है। लिंग के मूल में ब्रह्मा, मध्य भाग में त्रिलोकनाथ विष्णु और ऊपर प्रणवाख्य (ॐ रूप) महादेव जी की स्थिति है और वेदी महादेवी है और लिङ्ग-महादेव हैं। ऐसा मानकर ही शिव पूजन विधान बनाया गया है। इससे उपर्युक्त सभी देवताओं की पूजा शिव-लिङ्ग की पूजा करने से हो जाती है, ऐसा शास्त्रों का कथन है।

अनेक पदार्थों के शिवलिंग निर्माण कर अनेक अभीष्ट कार्यों की सिद्धि हेतु पूजन करने का प्रकरण भी है। जिसमें सर्वाधिक माहात्म्य फलसिद्धिप्रद पारदनिर्मित शिव-लिंग का माना गया है। प्रायः विशेष व साधारण शिव मन्दिरों व सभी शिवालयों में पाषाण-मय (पत्थर के) शिवलिङ्गों की स्थापना पाई जाती है यह स्थावर (स्थापित) मूर्तियाँ होती हैं। किसी अन्य स्थानों पर ले जाई नहीं जा सकती हैं। स्थिर ही रहती हैं।

नर्मदेश्वर (बाणलिङ्ग) या सोने चाँदी आदि के छोटे शिव-लिङ्ग जङ्गम (चल) मूर्तियाँ कही जाती हैं। जिसकी पूजन करने वाले व्यक्ति कहीं भी जायें अपने साथ ले जा सकते हैं।

शास्त्रों के अनुसार अनन्त शिव हैं और उनके अनन्त ही स्वरूप और अनन्त ही निर्माण विधियाँ है। किन्तु संक्षिप्त में कुछ स्वरूप श्रद्धालु भक्तों की अभीष्ट कामना पूर्ति हेतु पूजन अर्चना करने के लिये कुछ प्रकार लिखे जाते हैं। विस्तृत वर्णन बृहत्गरुड पुराण में है।

विविध कामना सिद्धि हेतु अनेक पदार्थों के शिवलिङ्ग निर्माण किये जाते हैं।

(१) गन्ध–लिंग

दो भाग कस्तूरी व चार भाग चन्दन और तीन भाग कुंकुम से बनाया जाता है। इसकी पूजा शिव का सायुज्य प्राप्त करने के लिए की जाती है।

(२) पुष्प--लिङ्ग

विविध प्रकार के सौरभमय पुष्पों (फूलों) से बनाया जाता है। इसकी पूजा पृथ्वी (भूमि) प्राप्ति या पृथ्वी का आधिपत्यं प्राप्त करने के लिए की जाती है।

(३) रजोमय--लिङ्ग

मिट्टी (बालुका) द्वारा बनाया जाता है। इसकी पूजा विद्या, रत्न और शिव सायुज्य प्राप्त करने के लिए की जाती है।

(४) यव, गो, धूम शास्तिज--लिङ्ग

जो, गेहूँ, चावल तीनों का आटा समान भाग लेकर बनाया जाता है। इसकी पूजा श्री (धन), शरीर-पुष्टि और पुत्र-सन्तान प्राप्ति के लिए की जाती है।

(५) सिता खण्डमय--लिङ्ग

मिश्री के बने हुए सिट्टे का बनाया जाता है। इसका पूजन रोग से छुटकारा प्राप्त करके आरोग्यता प्राप्त करने हेतु किया जाता है।

(६) लवणज--लिंग

हरताल त्रिकटु (सोंठ मिर्च पीपल) को लवण में मिलाकर बनाया जाता है। इसका पूजन वशीकरण के लिए किया जाता है।

(७) तिलपिष्टोन्थ--लिङ्ग

तिलों को भिगो दें। फिर पीस कर पीठी बनालें इसके बाद उस पीठी से शिवलिङ्ग निर्माण करे। इसका पूजन सभी प्रकार की अभिलाषा सिद्धि हेतु किया जाता है।

(८) भस्ममय-लिङ्ग

किसी यज्ञ कुण्ड से ली हुई भस्म लेकर इसका शिवलिङ्ग निर्माण किया जाता है। इसका पूजन भी सर्वप्रकार के फल प्राप्त करने हेतु किया जाता है।

(९) गुड़ोत्थ-लिङ्ग

गुड़ की डली का बनाया जाकर किसी से प्रीति करना हो या प्रीति बढ़ाना हो, इस हेतु पूजन किया जाता है।

(१०) शर्करामय-शिवलिंग

चीनी जो भोजनादि के कार्य में आती है, इसको लेकर शिव लिंग निर्माण किया जाता है। इसका पूजन करने से सुख शान्ति का लाभ प्राप्त होता है।

(११) वंशांकुरमय-शिवलिङ्ग

बाँस वृक्ष के नवीन कोमल अंकुर लेकर इसका शिवलिंग निर्माण कर पूजन करने से वंश वृद्धि होती है। बच्चे होकर न जीते हों तो उसके जीवित रहने लगते हैं।

(१२) दधिदुग्धोद्भव-लिंग

दही को गाढा बनाकर उसमें दुग्ध (दूध) मिश्रित करके बनाया जाता है। इसका पूजन करने से कीर्ति, लक्ष्मी व सुख प्राप्त होते है।

(१३) धान्यज-शिवलिङ्ग

धान्य में गुड़ आदि चिपकने वाला पदार्थ मिला कर, शिवलिंग बनाया जाकर पूजन करने से धान्य वृद्धि होती है।

१४ फलोत्थ-लिंग

फलों को धागे आदि में पिरोकर, बाँध कर, शिवलिंग रूप में बनाया जाकर, पूजन करने से अनेक प्रकार की फल सिद्धि प्राप्त होती है।

१५ धात्रीफलमय–लिंग

फलों को या तो किसी प्रकार बाँध कर धागे में पिरोकर शिवलिंग रूप बनावे अथवा इसकी पिष्टी बनाकर उससे बनाया जावे इसका पूजन करने से मुक्तिप्रद होता है।

१६ नवनीतज-शिवलिंग

वृक्षों के नये नये कोमल पत्ते लाकर उसका शिवलिंग निर्माण कर पूजन करने से, कीर्ति और सौभाग्य प्राप्त होता है।

१७ दूर्वाकाण्डज - शिवलिंग

दूर्वा के स्वच्छ नर्म लच्छे पवित्र स्थान में से तोड़ कर लाये और उनका शिवलिंग निर्माण कर पूजन करने से, अल्पमृत्युनाशक रोगों से मुक्ति मिलती है, उम्र वृद्धि होती है।

१८ कपूरज -- शिवलिंग

कपूर से निर्माण कर पूजन करने से भगवान् शंकर में भक्ति की वृद्धि होती है और मुक्ति प्राप्त होती है।

१९ अयस्यान्तकमणिज -- शिवलिङ्ग

निर्माण कर पूजन करने से सिद्धि प्राप्त होती है।

२० मौक्तिक-शिवलिङ्ग

मोतियों का शिवलिंग निर्माण कर, पूजन करने से सौभाग्य अचल होता है। यह विशेष रूप से स्त्रियों के प्रयोग करने का है। पुरुष भी इसका पूजन करता है तो उसकी भी भाग्य वृद्धि होती है।

२१ स्वर्णनिर्मित-शिवलिङ्ग

स्वर्ण का शिव लिंग निर्माण करा कर, पूजन करने से धन धान्य, सुख समृद्धियों की वृद्धि होतो है, मृत्यु होने पर मुक्ति मिलती है।

२२ रजतमय-शिवलिङ्ग

चाँदी का शिवलिंग निर्माण कराकर उसका पूजन करने से धन धान्य वृद्धि होती है।

२३ पीतलज-शिवलिङ्ग

शुद्ध पीतल द्वारा निर्माण कराकर, पूजन करने से धन वृद्धि होती है।

२४ वैदूर्यजमणि-लिंग

निर्माण कराके पूजन करने से शत्रुओं का दर्पनाश होता है। पूजक की प्रशंसा व विजय होती है।

२५ स्फटिकमणि-लिङ्ग

निर्माण करके पूजन करने से सर्व प्रकार की फल सिद्धि प्राप्त होती है।

२६ विविधरत्नमणिमय-लिंग

अनेक प्रकार के रत्न मणियों द्वारा निर्मित शिव-लिङ्ग की पूजा करने से, सर्व कामनाओं की सिद्धि व सर्व प्रकार के शुभ फलों की प्राप्ति होती है।

२७ महारसेश्वर - शिवलिंग

पारद (पारा) का शिवलिङ्ग (जिसको महारसेश्वर) शिव-लिङ्ग कहा गया है। पारद छिन्न पक्ष रहित हो आर्द्रता रहे नहीं, गरुता पारद में जिस प्रकार होती है उसी प्रकार बनी रहे, चाँदी सदृश ठोस प्रकार का हो जाय, रंग श्वेत ही बना रहे, इस प्रकार से पारद निर्मित शिवलिङ्ग की पूजा करने से सर्वकार्य सिद्धि होती है और मरने पर मुक्ति मिलती है। ऐसे शिव लिंग का माहात्म्य सर्वाधिक माना गया है। इसके दर्शन मात्र से ही पापों का नाश होना तथा पुण्य लाभ होना लिखा है। इसका पूर्ण रूप से माहात्म्य व फल अलग इसी पुस्तक में लिखा गया है, वह देखना चाहिये।

इन उपर्युक्त प्रकारों के अतिरिक्त और भी कई प्रकार के शिविलङ्ग निर्माण कर पूजन करने की विधियाँ फल, माहात्म्य आदि का वर्णन मिलता है, किन्तु पुस्तक के विस्तार भय से उनका यहाँ समावेश नहीं हो पाया है। इतना ही पर्याप्त समझ कर छोड़ दिया है।

उक्त विषय में एक बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि ताम्र सीसक, शङ्ख, कांसा, लोहा, रक्तचन्दन इन द्रव्यों के शिवलिङ्ग निर्माण करके कलियुग में पूजन करना मना है, अतः नहीं करना चाहिये।

सोपान

(६)

पार्थिव-लिङ्ग निर्माण व पूजन

वेद-शास्त्रों में पार्शिव शिवलिंग निर्माण, पूजन के विस्तृत वर्णन लिखे हैं। यहाँ इसके प्रकार को संक्षेप में लिखा जाता है जिससे थोड़े समय में ही इस प्रकार की पूजा का लाभ प्राप्त हो सके।

पार्थिव-लिङ्गपूजा भोग और मोक्ष दोनों प्रदान करने वाली कही गई है। प्रातःकाल ही उठकर शौच, दन्तधावन, स्नानादि द्वारा शुद्ध होकर नित्यकर्म, संध्या, पूजनादि जो नित्य करते हों करलें, फिर हाथ पैर धोकर आचमनादि करके एकाग्रचित्त शिव-स्मरण-पूर्वक, भस्म, रुद्राक्ष धारण करें। तत्पश्चात् सम्पूर्ण मनोवांछित फल की सिद्धि के लिये ऊँची भक्ति-भावना के साथ उत्तम पार्थिव-

लिंग की विधिवत् भली प्रकार से पूजन करें। नदी या तालाब के किनारे, पर्वत पर, वन में, शिवालय में अथवा और किसी पवित्र अच्छे रमणीक बाग बगीचे आदि स्थान में पार्थिव पूजा करने का विधान है। ऐसे स्थान में जाकर ही करनी चाहिये। किसी शुद्ध पवित्र स्थान से निकाली हुई मिट्टी को अच्छी प्रकार शद्ध रूप से लाकर बड़ी सावधानी के साथ शिवलिंग निर्माण कर (इसमें यह ध्यान रखें कि मिट्टी किसी अपवित्र स्थान की न हो, मिट्टी में कोई अन्य दूषित पदार्थ, जीव, कीड़ा-मकोड़ा या कंकरी आदि अन्य पदार्थ मिश्रित न हों), मिट्टी साफ-सुथरी चिकनी हो। ब्राह्मण के लिये श्वेत, क्षत्रिय के लिये लाल, वैश्य के लिए पीली और शूद्र के लिये काली मिट्टी से शिव-लिंग निर्माण करना कहा जाता है।

जिस स्थान पर ऐसा पार्थिवलिंग निर्माण कर पूजन करने का निश्चय किया है उसके नजदीक स्थान पर जैसे रंग की मिट्टी मिले वैसे रंग की ही लेकर निर्माण कर सकते हैं। ऐसी मिट्टी को खोदकर कुछ नीचे स्थान से पृथ्वी से निकाल कर संग्रह कर शुद्ध स्थान पर ही रखें। फिर उसको अपनी दृष्टि व अंगुलियों से शुद्ध व साफ करलें। जल में भिगोकर मिट्टी को रौंधकर सान कर पिण्डी सी बनालें। शिव-लिङ्ग मूर्ति अपने दाहिने हाथ के अंगूठे से छोटी न हो किन्तु चार अंगुल से बड़ी भी न हो, इस प्रकार की निर्माण करें। फिर इस प्रकार की मिट्टी से पीठ भी निर्माण करलें। पीठ अर्घाकार हो। नाप में शिवलिङ्ग से दुगुनी हो। नीचे से खाट के पाये के आकार की हो। नीचे टिकने वाला भाग कुछ चौड़ा हो। फिर बीच में सँकड़ा हो, फिर ऊपर से चौड़ा होकर उसपर अर्घाकार आकार पीठिका का हो, बीच में शिव-लिंग स्थापन हो सके ऐसा गहरा छेद हो, निर्माण करें। फिर भोग पदार्थ, एवं स्वास्थ्य रक्षा, घर गृहस्थ में, सुख, शांति, समृद्धि, वंशवृद्धि, धन, धान्य वृद्धि हेतु भक्ति नमन पूर्वक श्रद्धा से उसका पूजन करना चाहिये। वैसे इसके बहुत से प्रकार व अनेकों विधियाँ और मन्त्रादि हैं; किन्तु बहुत ही

संक्षिप्त और सुलभ विधियों को चुन चुन कर यहाँ लिखने का प्रयास किया है, जिससे शास्त्रों में लिखे हुए विधान की अवहेलना भी न हो और प्रत्येक साधारण मनुष्य शास्त्रीय जटिलताओं के कारण इस लाभ से वंचित भी न रहे।

पार्थिव-लिङ्ग की पूजा भगवान् शिव के नामों से करनी बतलाई गई है। यह पूजा सभी अभीष्ट कामनाओं को पूर्ण करने वाली है। भगवान् शिव के नाम इस पूजा में इस प्रकार कहे गये हैं—हर, महेश्वर, शम्भु, शूलपाणि, पिनाकधृक्, शिव, पशुपति और महादेव ये क्रमशः आठ हैं। इनके प्रथम नाम के द्वारा अर्थात् 'ॐ हराय नमः' इस प्रकार नाम का उच्चारण करते हुए पार्थिव लिंग बनाने की मिट्टी निकाल कर लावें। दूसरे नाम अर्थात् 'ॐ महेश्वराय नमः' का उच्चारण करते हुए लिंग निर्माण करें। फिर 'ॐ शम्भवे नमः' उच्चारण करते हुए (बोलते हुए) उस पार्थिव लिंग की प्रतिष्ठा करें। तत्पश्चात् 'ॐ शूलपाणये नमः' कहकर (उच्चारण कर) पार्थिव लिंग में भगवान् शिव का आवाहन करें। फिर 'ॐ पिनाकधृषे नम' उच्चारण करते (बोलते) हुए उस शिव-लिंग को स्नान करावें। फिर 'ॐ नमः शिवाय' बोलते हुए उसकी पूजा करें। फिर 'ॐ पशुपतये नमः' बोलकर क्षमा प्रार्थना करें और फिर अन्त में 'ॐ महादेवाय नमः' बोलकर आराध्यदेव शिव का विसर्जन करें। याने प्रत्येक नाम के आरम्भ में ॐकार और अन्त में चतुर्थी विभक्ति के साथ 'नमः' पद लगाकर, जैसा ऊपर सभी नामों के साथ लगाकर बतलाया गया है। बड़े आनन्द और नमन व भक्ति-भाव से इस प्रकार की पूजा सम्बन्धी कार्य सम्पन्न करने चाहिये। फिर षडक्षर मंत्र से अंग-न्यास और करन्यास की विधि भली भाँति सम्पन्न करें

अंग न्यास और करन्यास का प्रयोग इस प्रकार समझना चाहिये—

8247

करन्यास-प्रकार

ॐ ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः १
ॐ नं तर्जनीभ्यां नमः २
ॐ मं मध्यमाभ्यां नमः ३
ॐ शिं अनामिकाभ्यां नमः ४
ॐ वां कनिष्ठिकाभ्यां नमः ५
ॐ यं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ६
इति करन्यासः ।

अङ्गन्यास-प्रकार

ॐ ॐ हृदयाय नमः १
ॐ नं शिरसे स्वाहा २
ॐ मं शिखायै वषट् ३
ॐ शिं कवचाय हुम् ४
ॐ वां नेत्रत्रयाय वौषट् ५
ॐ यं अस्त्राय फट ६

इतिहृदयादि षडङ्गन्यास

यहां करन्यास और हृदयादि षडङ्ग न्यास के छः छः वाक्य दिये हैं। इनमें करन्यास के प्रथम वाक्य को पढ़कर दोनों तर्जनी अंगुलियों से अंगुष्ठों का स्पर्श करना चाहिये। शेष वाक्यों को पढ़कर अंगुष्ठों से तर्जनी आदि अंगुलियों का स्पर्श करना चाहिए। इसी प्रकार अंगन्यास में भी दाहिने हाथ से हृदयादि अंगों के स्पर्श करने की विधि है। केवल कवच न्यास में दाहिने हाथ से बायीं भुजा और बायें हाथ से दायीं भुजा का स्पर्श करना चाहिये।

'अस्त्राय फट्' इस अन्तिम वाक्य को पढ़ते हुए दाहिने हाथ को सिर ऊपर से ले आकर बायीं हथेली पर ताली बजाना चाहिये।

इस प्रकार न्यास कर लेने के पश्चात् ऐसी छबि का, जो कैलास पर्वत पर एक सुन्दर सिंहासन के मध्य भाग में विराजमान हैं, जिनके वाम भाग में भगवती उमा उनसे सटकर बैठी हुई हैं, सनक सनन्दन आदि भक्तजन जिनकी पूजा कर रहे हैं, तथा जो भक्तों के दुःख-रूपी दावानल को नष्ट कर देने वाले हैं, अप्रमेय शक्तिशाली ईश्वर हैं, उन विश्व विभूषण भगवान् शिव का ध्यान व चिन्तन करना चाहिये। भगवान महेश्वर का प्रतिदिन इसी प्रकार ध्यान करें-उनकी अङ्ग कान्ति चाँदी के पर्वत की भाँति गौर वर्ण है। वे अपने मस्तक पर मनोहर चन्द्रमा का मुकुट धारण किये हुये हैं। रत्नों के आभूषण धारण करने से उनका श्री अंग और भी उद्भासित हो रहा है। उनके चार हाथों में क्रमशः परशु, मृग मुद्रावर एवं अभय मुद्रा सुशोभित हैं। वे सदा प्रसन्न रहते हैं। कमल के आसन पर बैठे हैं और देवता लोग चारों ओर खड़े होकर उनकी स्तुति कर रहे हैं। उन्होंने वस्त्र के स्थान पर व्याघ्र चर्म धारण कर रखा है। वे इस विश्व के आदि हैं बीज (कारण) रूप हैं तथा सबका दुःख हर लेने वाले हैं। उनके पाँच मुख हैं और प्रत्येक मुख मण्डल में तीन-तीन नेत्र हैं।

(यह उपर्युक्त ध्यान शिव पुरा० विद्येश्वर संहिता अध्या० २० श्लोक ५१, ५२ का सारांश है)

इस प्रकार ध्यान तथा उत्तम पार्थिव लिङ्ग का पूजन करके गुरु के दिये हुए पञ्चाक्षर-मंत्र का विधिपूर्वक जप करें। और हो सके तो स्वयं या किसी विद्वान् सन्तोषी शुद्ध पण्डित द्वारा स्तुतियों से भगवान् शिव का स्तवन तथा शतरुद्रिय (यजु० १६ वें अध्याय के मंत्रों) का पाठ करें या करावें।

तत्पश्चात् अञ्जलि में अक्षत और पुष्प लेकर उत्तम भक्ति भाव से निम्न प्रकार से प्रेम और प्रसन्नता के साथ भगवान् शंकर से इस प्रकार प्रार्थना करें।

सबको सुख देने वाले, कृपानिधान भूतनाथ शिव मैं आपका हूँ। आपके गुणों में ही मेरे प्राण बसते हैं, अथवा आपके गुण ही मेरे प्राण हैं, मेरे जीवन सर्वस्व हैं। मेरा चित्त सदा आपके ही चिन्तन में लगा हुआ है। यह जानकर मुझ पर प्रसन्न होइए। कृपा कीजिये। हे शंकर मैंने अनजान में अथवा जान बूझ कर यदि कभी आपका जप और पूजन आदि किया हो तो आपकी कृपा से वह सफल हो जाये। हे गौरीनाथ! मैं आधुनिक युग का महान् पापी हूं, पतित हूँ और आप सदा से ही परम महान् पतित-पावन हैं। इस बात का विचार करके आप जैसा चाहें, वैसा करें। हे महादेव सदाशिव! वेदों, पुराणों नाना प्रकार के शास्त्रीय सिद्धान्तों और विभिन्न महर्षियों ने भी आपको पूर्ण रूप से नहीं जाना। फिर मैं कैसे जान सकता हूं।

हे महेश्वर मैं जैसा हूँ, वैसा ही, उसी रूप में सम्पूर्ण भाव से आपका हूं। आपके ही आश्रित हूं, इसलिए आप से रक्षा पाने योग्य हे परमेश्वर! आप मुझ पर प्रसन्न होइये, इस प्रकार बोलते हुये मन से भाव भी ऐसे ही रखने चाहिये। ध्यान अन्यत्र नहीं जाना चाहिये।

(यह प्रार्थना शिव पुराण विद्य० अध्याय २० श्लोक ५६ से ६० का भावार्थ है।)

इस प्रकार प्रार्थना करके हाथ में लिये अक्षत और पुष्प भगवान् शिव के ऊपर चढ़ा देवे और उन शम्भुदेव को भक्ति भावपूर्वक सामने लेट कर साष्टांग प्रणाम करें। तदन्तर शुद्ध बुद्धि से उपासक शास्त्रोक्त विधि से इष्टदेव भगवान् शिव की परिक्रमा करे, फिर श्रद्धापूर्वक स्तुतियों द्वारा देवेश्वर शिव की स्तुति करे। इसके पश्चात् गला बजाकर (गले से अव्यक्त शब्द का उच्चारण करके) पवित्र एवं विनीत चित्त वाला पूजक भगवान् शिव को फिर प्रणाम करे। फिर आदरपूर्वक जय जयकार बोले और इसके बाद विसर्जन करे।

उस प्रकार से की गई पार्थिव-शिव-लिंग पूजन इस संसार में अनेक भोग सुख समृद्धि प्रदान करने वाली और फिर मोक्ष प्रदान करने वाली कही गई है तथा भगवान् शिव के भक्ति भाव को बढ़ाने वाली है। पार्थिव-शिव-लिंग पूजा कोटि कोटि यज्ञों के समान फल देने वाली कही गई है। कलियुग में मनुष्यों के लिये यह शिव-लिंग पूजन जैसा श्रेष्ठ दिखाई देता है वैसा दूसरा कोई साधन नहीं है। यह समस्त शास्त्रों का निश्चित एक ही मत है। इस प्रकार किया हुआ शिव-लिंगपूजन संसारिक सभी प्रकार के भोग और अन्त में मोक्ष देने वाला कहा गया है।

शिव-लिंगों के तीन प्रकार कहे हैं–उत्तम मध्यम, और अधम। जो चार अंगुल ऊँचा और देखने में सुन्दर चिकना तथा वेदी युक्त हो, उस शिव-लिंग को शास्त्रज्ञ महर्षियों ने उत्तम कहा है। उस से आधे नाप वाले को मध्यम और उससे भी आधे नाप वाले को अधम कहा गया है।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र अथवा विलोम संकर-कोई भी क्यों न हो, सभी अपने अधिकार अनुसार वैदिक अथवा तान्त्रिक मन्त्रों एवं पुराणोक्त पूजा पद्धति द्वारा सदा आदरपूर्वक शिव-लिंगों की पूजा कर सकते हैं। यह इतना सा भेद मन्त्रों का भी मन्त्र न जानने वालों या यज्ञोपवीतधारी और अयज्ञोपवीतधारी होने से कहा गया है। अधिक कहने से क्या लाभ है। शिवलिङ्ग पूजन करने में स्त्रियों व अन्य सभी प्रकार के मनुष्यों का समान अधिकार है। ऋषि मुनि शास्त्रज्ञ विद्वानों की आज्ञा अनुसार कर्म धर्म करने करने उचित हैं। अन्य मन माने रास्ते अपनाना उचित नहीं। महर्षि दधीचि और गौतमादि ऋषियों के शाप से जिन मनुष्यों का चित्त धार्मिक व शास्त्र सम्मत कार्यों के लिये दग्ध हो जाता है, या हो गया है, उन द्विजों का भी चित्त ऐसे पुण्यतम कार्यों में नहीं लगता है। सत्कर्मों की अवेहलना करके अन्य दूसरे कार्यों मे मन लगता है, उनके उत्तम सत्कर्म संचित पुण्य भी निकृष्ट कार्यों में लगे रहने से

क्षीण हो जाते हैं, और सांसारिक सुखदायक भोग्य सब साधन होते हुये प्राप्त सुख साधनों के उत्तम भोग नहीं प्राप्त कर पाते हैं और उनके उत्तम मनोरथ कभी सफल नहीं होते। यह अपने पूर्वजन्म-संचित कर्मों या इह जन्म संचित कर्मों का ही फल है। ये सभी बातें उदाहरण रूप मे प्रत्यक्ष देखने को पर्याप्त रूप से मिलती हैं। स्वयं देखकर अनुभव कर सकते हैं। शिव भक्तों के लाभार्थ यह पार्थिव शिव-लिंग पूजन विधि व माहात्म्य संक्षेप में कहा गया है।

इस उपर्युक्त पार्थिव शिव-लिंग पूजन के अनुसार ही शिव-लिंग मूर्ति मिट्टी के स्थान पर बालुका मिट्टी या छोटे दाने की बजरी की भी निर्मित कर पूजा की जाती है, इसकी शिवलिंग मूर्ति व पीठ निर्माण में बालुका मिट्टी या छोटे दाने वाली बजरी में केवल जल डालकर मूर्ति निर्माण नहीं की जा सकती है इसलिए उस बालू मिट्टी में या बजरी में इतना गुड़ मिलाया जावे कि उसके गाढ़े चेप से बालुका या बजरी के कण परस्पर चिपक जावें और फिर हल्के हाथ से उस मूर्ति व पीठ पर हलका गुड़ व पानी मिश्रित कर हाथ बार-बार लगाकर सुडौल व चिकना करना चाहिए तभी शिवलिंग व पीठ निर्माण हो सकेगा नहीं तो निर्माण नही हो सकेगा और यदि कुछ हल्की चिकनी मिट्टी मिलाकर बना भी ली जावे तो जलधारादि पूजन समय चढ़ाने पर मूर्ति बैठ जायेगी। इसी प्रकार की सावधानी हेतु यह भी ध्यान रखने के लिए दर्शाया गया है।

पार्थिव-लिंग निर्माण व पूजन विधान जो ऊपर कहा गया है उसमें मिलाकर एक पूजा विधान और भी कहा गया है। वह इस प्रकार है—उपर्युक्त प्रकार से शिव निर्माण करके नैवेद्य अर्पण किया जाता है वहाँ तक तो ऊपर कहा हुआ प्रयोग काम में लेवें फिर भगवान् शिव की त्रिभुवनमयी आठ मूर्तियों का भी वहीं उसी स्थान पर पूजन करें। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश,

सूर्य, चन्द्रमा तथा यजमान इस प्रकार ये भगवान् शिव की आठ मूर्तियाँ कही गई हैं, इनका और इनके साथ-साथ ही शर्व, भव, रुद्र, उग्र, भीम, ईश्वर, महादेव तथा पशुपति इस नाम के भगवान् शिव की भी अर्चना करें। तदन्तर चन्दन, अक्षत और बिल्वपत्र लेकर वहाँ ईशान आदि के क्रम से भगवान् शिव के परिवार का भी उत्तम भक्तिभाव से पूजन करें। ईशान, नन्दी, चण्ड, महाकाल, भृङ्गी, वृष, स्कन्द, कपर्दीश्वर, सोम तथा शुक्र ये दस शिव के परिवार कहे जाते हैं जो कलश से दसों दिशाओं में पूजनीय हैं। तत्पश्चात् भगवान् शिव के समक्ष वीरभद्र और पीछे कीर्तिमुख का पूजन करके विधिपूर्वक ग्यारह रुद्रों की पूजा करें। इसके बाद पञ्चाक्षर मंत्र का जप करके शत रुद्रिय स्तोत्र का व अन्य प्रकार की स्तुतियों का तथा पञ्चांग का पाठ करें। तत्पश्चात् परिक्रमा और नमस्कार करके शिवलिङ्ग का विसर्जन करें। इस प्रकार उपर्युक्त पूजा भी उपर्युक्त नाम के शिव देवताओं की व शिव-परिवार की, जिनके करने की इच्छा हो और भक्ति जागृत हो वहीं इस प्रकार से ऊपर कहे हुए में मिलाकर सभी की पूजा करें, नहीं तो ऊपर जो प्रकार कहा है उसी प्रकार से कर लेवें। इस प्रकार पार्थिव शिव का निर्माण व पूजन विधान जो सब प्रकार से सरल है और आसानी से किया जा सकता है, उसी प्रकार से सम्पूर्ण निर्माण व पूजन प्रकार आदर सहित कहा गया है। रात्रि में जो भी देव कार्य करने हों वह सदा उत्तर की ओर मुख करके ही बैठकर करने चाहिये। इसी प्रकार यह उपर्युक्त शिव पूजन भी उत्तराभिमुख ही होकर करें। यहाँ शिव-लिंग स्थापित हो. उससे पूर्व दिशा का आश्रय लेकर न बैठें या न खड़े हों क्योंकि यह दिशा भगवान् शिव के आगे या सामने पड़ती है (इष्ट देव का सामना न रोकें।) शिव-लिंग से उत्तर में भी न बैठें, क्योंकि उधर शिव का का वामाङ्ग है, जिसमें शक्ति स्वरूप देवी उमा विराजमान हैं। पूजक को शिव-लिंग से पश्चिम दिशा में भी नहीं बैठना चाहिये

क्योंकि वह भगवान् शिव का पीठ भाग है। पीछे की ओर से पूजा करना उचित नहीं है। इसलिये बाकी बची हुई दक्षिण दिशा ही इस कार्य के लिये उचित होती है। इस प्रकार शिव-लिंग से दक्षिण में बैठें। इस प्रकार अपना मुख उत्तर की ओर करके ही पूजन करने वाले को बैठना चाहिये। जो पूजा करने वाला हमेशा त्रिपुण्ड्र न भी लगाता हो तो भी ऐसी पूजा के समय तो उसे त्रिपुण्ड्र अवश्य लगाना चाहिये और रुद्राक्ष की माला भी पहन कर या लेकर ही बैठना चाहिये और बिल्वपत्र भी पूजा आरम्भ करने से पहले ही लाकर डण्ठल तोड़ कर, टूटे फूटे कटे, जाला मकड़ी आदि लगे हुओं को अलग करके, कोई अपवित्र पदार्थ पक्षियों को विष्ठा (बीट) आदि लगी हो तो उनको देख कर शुद्ध प्रकार से ठीक दशा में करके साथ लेकर ही बैठना चाहिये। इसी प्रकार से अन्य सामग्रियाँ पूजन की सही तालिका के अनुसार देखकर मिलाकर और किसी प्रकार से अपवित्र जीवाणु पदार्थादि मिश्रित न हों, सड़ी गली गन्दी हुई न हों, देख सम्हाल कर ही पूजन में बैठें, और शिव पूजन आरम्भ करते समय यदि भस्म न मिले तो वहाँ उसी स्थान के आस-पास के शुद्ध स्थान की मिट्टी से अपने ललाट में त्रिपुण्ड्र अवश्य लगा लेना चाहिये। जो इस विधि को उपर्युक्त विधि में मिला कर दोनों प्रकार की मिश्रित पूजा न करना उचित समझें वे उपर्युक्त प्रकार से ही कर सकते हैं। वह भी पूजा प्रकार व शिव-लिंग शास्त्र सम्मत ही है।

(शिव पुराण विद्येश्वर संहि० अध्याय २१ के आधार से लिखा गया है)

पार्थिव लिङ्ग निर्माण तथा पूजन की संक्षिप्त और अति सरल विधि

उपर्युक्त विधि को भी बहुत सरलतापूर्वक संक्षिप्त रूप में समझाने का प्रयास किया है किन्तु इससे भी एक सरल विधि और है वह भी शिवभक्तों के लाभार्थ बतलाने का प्रयास किया जाता है।

'ॐ हराय नमः' मन्त्र से मिट्टी लेकर 'ॐ महेश्वराय नमः' मन्त्र से दाहिने हाथ के अंगूठे के ऊपर के पोर बराबर लिङ्ग बनावे। तीन भाग में बाँटें। ऊपरी भाग को लिंग, मध्य को गौरी पीठ और नीचे के अंश को वेदी कहते हैं। दाहिने या बायें किसी एक ही हाथ से लिङ्ग बनावे। असमर्थ दोनों हाथ भी लगा सकता है। शिव–लिङ्ग बन जाये तो उसके सिर पर नन्ही सी मिट्टी की गोली बनाकर रख दें। यह बज्र कहा जाता है। पूजने वाला कोई दूसरा हो तो शिव के गात्र पर हाथ रखकर 'ॐ हराय नमः' और 'ॐ महेश्वराय नमः' कहे। पूजा के समय षोड़शोपचार की पूजन सामग्री (सोलह प्रकार की पूजन सामग्री) में बिल्वपत्र परमावश्यक हैं। पूजक के माथे पर भस्म या मिट्टी का त्रिपुण्ड्र और गले में रुद्राक्ष की माला जरूर होनी चाहिये। आसन शुद्धि, जल शुद्धि, गणेशादि देवताओं की पूजा करके भगवान् शंकर का इस प्रकार ध्यान करें–

ओ३म् ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं।
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवरा भीतिहस्तं प्रसन्नम्॥
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं।
विश्वाद्यं विश्ववीजं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्॥

यह ध्यान पढ़कर मानसोपचार से पूजन करे, फिर वही ध्यान पाठ करके शिव-लिंग के मस्तक पर पुष्प रखे। तब 'ॐ पिनाकधृक इहागच्छ, इहागच्छ, इहातिष्ठ. इहातिष्ठ, इह संनिधेहि, इह संनिरुद्धच स्वः, इह संनिरुद्धच स्वः, अत्राधिष्ठानं कुरु, मम पूजां ग्रहाण' इस प्रकार आवाहनादि करे। आवाहनादि पाँच मुद्रा दिखा कर करते हैं। पीछे 'ॐ शूलपाणे इह सुप्रतिष्ठितो भव' मन्त्र से लिंग-प्रतिष्ठा करे। फिर 'ॐ पशुपतये नमः' मन्त्र से तीन बार शिव के मस्तक पर जल चढ़ावे। फिर मस्तक पर रखा हुआ वज्र (मिट्टी की डली) फेंक कर चार साबुत आखा चढ़ावे। फिर पाद्यादि दशोपचार 'ॐ एतत् पाद्यम् ओ३म् नमः' शिवाय नमः।

इदमर्घ्यम् 'ॐ नमः शिवाय नमः' इत्यादि क्रम से मन्त्र के साथ करे। शिव के अर्घ्य में केला और बेल पत्र देना होता है और स्नान के पहले मधुपर्क। इसके बाद शिव की अष्ट मूर्ति की पूजा करनी होती है। गन्ध पुष्प लेकर पूर्व से लेकर उत्तरवर्त्ती मार्ग से आठवीं दिशा अग्नि कोण पर आकर समाप्त करना होगा।

'एते गन्धपुष्पे ॐ शर्वाय क्षितिमूर्त्तये नमः, (पूर्व), 'एते गन्धपुष्पे ॐ भवाय जलमूर्त्तये नमः' (ईशान) 'एते गन्धपुष्पे ॐ रुद्राय अग्निमूर्त्तये नमः' (उत्तर), 'एते गन्धपुष्पे ॐ उग्राय वायुमूर्त्तये नमः' (वायव्य), 'एते गन्ध पुष्पे ॐ भीमाय आकाशमूर्त्तये नमः' (नैऋत्य), 'एते गन्धपुष्पे ॐ महादेवाय साममूर्त्तये नमः' (दक्षिण), 'एते गन्धपुष्पे ॐ ईशानाय सूर्यमूर्तये नमः' (अग्नि कोण) इस तरह अष्ट मूर्ति पूजा के अनन्तर यथाशक्ति जप करे। फिर जप और पूजा का भी विसर्जन 'गुह्यातिगुह्य' इत्यादि मन्त्रों से करे। फिर दाहिने हाथ का अंगुष्ठ (अंगूठा) और तर्जनी मिला कर उसके द्वारा 'नमः' शब्द का उच्चारण करते हुये दाहिना गाल बजाये। इसके बाद में महिम्न स्तोत्र या और कोई शिव-स्तुति पढ़ना चाहिए। फिर प्रणाम करके दाहिने हाथ से अर्घ्य जल से आत्म समर्पण करके शिव-लिङ्ग के मस्तक पर थोड़ा जल चढ़ावे और कृताञ्जलि हो क्षमा प्रार्थना करें।

आवाहनं न जानामि नैव जानामि पूजनम् ।
विसर्जनं न जानामि क्षम्यतां परमेश्वर ॥

इस प्रकार क्षमा-प्रार्थना करके विसर्जन करना चाहिए। ईशान कोण में जल से एक त्रिकोण मण्डल बनाकर पीछे संहार मुद्रा द्वारा एक निर्माल्य पुष्प सूंघते हुए त्रिकोण मण्डल के ऊपर डाल देना चाहिए। इस समय में ऐसा सोचना चाहिए याने मन में विचार लाना चाहिए कि भगवान् शंकर ने मेरे हृत्-कमल याने हृदय में प्रवेश किया है। इसके पश्चात् 'एते गन्धपुष्पे ॐ चण्डेश्वराय

नमः, ॐ महादेव क्षमस्व, कहकर (उच्चारण कर) भगवान् शिव को मण्डल के ऊपर रख देवे। ॐ नमः शिवाय उच्चारण करे। फिर साष्टाङ्ग प्रणाम कर हाथ जोड़ लेवें। ॐ नमः शिवाय ॥

सोपान

(१०)

विचित्र, अद्भुत, असाधारण शिवलिङ्ग तथा शिव-मन्दिरों का वर्णन

भगवान् शिव की महती कृपा से आन्तरिक प्रेरणा हुई कि शिव सम्बन्धित वर्णन का संग्रह होना चाहिए। इसी के फलस्वरूप जो कुछ बन पाया है वह यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। संग्रह में कुछ अद्भुत असाधारण शिव-लिंग व शिव मन्दिरों का वर्णन मिला है, जिसका जनसाधारण के ज्ञान हेतु परिचय कराया जाता है। प्रत्येक मनुष्य यह जानकर आश्चर्यान्वित हुये बिना न रहेगा कि विश्व में किस किस प्रकार के शिव-लिंग व शिव मन्दिर हैं।

मणिमय, स्फटिक मणिमय, स्वर्ण, रजत (चाँदी), ताम्र, पीतल, चन्दन, बर्फ द्वारा स्वतः निर्मित, रुद्राक्षरूप, जल निर्मित, अग्नि शिखा निर्मित शिव-लिंग हैं, कई एक स्थानों पर सैंकड़ों हजारों फुट के शिव-लिंग हैं जो सैंकड़ों मनुष्य एक साथ उठायें तो उठाना कभी संभव न हो, कई स्थानों पर सैंकड़ों हजारों की संख्या में एक ही स्थान पर शिव-लिंग स्थापित पाये जाते हैं, कुछ शिव-लिंग अद्भुत कलापूर्ण आकृति में निर्मित हैं। इसी प्रकार कई एक शिव मन्दिर या उनके गुम्बज स्वर्ण - मण्डित हैं और एक

बृहद् आकार व प्रकार में अद्भुत् शिल्पकलायुक्त निर्मित हैं। कुछ कुछ शिवलिङ्ग-मूर्तियाँ ऐसी भी हैं जो पाषाण की हैं किन्तु प्रतिवर्ष बढ़ रही हैं। पाषाण के कुछ एक ऐसे शिवलिंग हैं, जो स्वयं बढ़ते हैं और उनके सहारे जिस प्रकार केले के वृक्ष के जड़ से निकलकर कल्ले चलते हैं उसी प्रकार कल्ले निकलकर बढ़ रहे हैं। एक स्थान पर ऐसा भी शिवलिंग है जो पृथ्वी में स्थिर रूप से स्थापित होते हुए भी स्वयं हिलने लगता है। उस समय बहुत यात्री दर्शन करते हैं और फिर स्वयं ही स्थिर हो जाता है। तब कितने ही मनुष्यों के पकड़ कर हिलाने पर भी टस से मस नहीं हो सकता। कुछ एक ऐसे हैं जो पारदर्शी हैं। शिवलिंग मूर्ति के एक ओर हाथ कर देने से दूसरी ओर से हाथ, अंगुलियाँ व हस्तरेखाएँ दिखाई देती हैं। कुछ एक ऐसे भी हैं जिनमें शिवलिङ्ग मूर्ति में स्वतः ही त्रिपुण्ड्र एक ओर से दूसरी ओर तक पाषाणमय रूप में ही स्थित है। कुछ एक ऐसे भी हैं जिनमें चन्द्रमा का निशान भी प्राकृतिक रूप में बना हुआ है। कोई एक लिङ्ग मूर्ति प्राकृतिक रूप में स्वर्ण रेखांकित है।

एक पहाड़मय ऐसा शिव-लिंग है कि जिसकी कमलपुष्प के समान सोलह पंखुड़ियाँ अर्घाकार हैं और उनके बीच में पर्वत की एक चोटी शिवलिंगाकार स्थापित है। ये प्राकृतिक बने हुये हैं। एक पहाड़ के एक मील के क्षेत्र में कुराई द्वारा कमरे, सभा मण्डप व शिव-लिंगादि मूर्तियाँ पाषाण (पत्थर) को कुराई द्वारा काटकर निर्माण की गई हैं। कोई चूना मसाला नहीं लगाया गया है। इसी प्रकार का एक शिव मन्दिर पहाड़ के चार मील क्षेत्र में कुराई कटाई द्वारा ही निर्माण किया हुआ है जिसमें भगवान्-शिव के अतिरिक्त अन्य-अनेक देवताओं की मूर्तियाँ भी खुदी हुई हैं।

(१) विशालतम शिव-लिङ्ग

यह शिव-लिंग गरियावन्द (रायपुर मध्य प्रदेश से जा सकते हैं) से डेढ मील वभनी डोंगरी के मार्ग पर जंगलों के बीच में है।

इसकी ऊँचाई ४० फुट घेरा १५० फुट, तथा वजन हजारों टन है। प्रतिमा प्राकृतिक तथा अनादि है।

(२) खुजराहों में कंडारिया महादेव

(महान कलापूर्ण)

खुजराहो (मध्य प्रदेश) में महादेव मन्दिरों की संख्या २२ है। सभी उत्तम कलापूर्ण हैं, किन्तु सब में अधिक कलापूर्ण कंडारिया महादेव मन्दिर प्रसिद्ध है। इसमें बहुत कारीगरी है। दो फुट से ऊँची मूर्तियों की संख्या ८७२ है। छोटी मूर्तियों की संख्या हजारों है। यह स्थान खुजराहो महोबा से ३३ मील आगे उसी लाइन में हरपालपुर स्टेशन है, जहाँ से खुजराहो के लिये मार्ग है। यह स्थान छत्रपुर से २७ मील तथा पन्ना से २५ मील है। यहाँ पहुँचने के लिये पन्ना, छत्रपुर, सतना, महोबा से बसें मिलती हैं, किन्तु फिर भी कुछ दूर पैदल चलना पड़ता है।

(३)कैलाश-शिव-लिङ्ग (पहाड़मय)

यह पहाड़मय शिव-लिङ्ग है, जो कैलाश पर्वत पर ही लिङ्गाकार में स्थित है। यह स्थान उत्तराखण्ड हिमालय में ही है। यह हिमालय की ही एक चोटी का रूप है। यह मानसरोवर से लगभग बीस मील दूर है। इसकी ऊँचाई समुद्र स्तर से उन्नीस हजार फुट है। इस चोटी के दर्शन मानसरोवर से भी कुछ दूर पहले ही होने लगते हैं। यह चोटी कसौटी के काले पत्थर की है। आस पास अन्य दूसरे रंग की छोटी चोटियाँ और हैं उनका दृश्य अर्घाकार षोडषकमलदल जैसा है। बीच में यह चोटी काले रंग की बिलकुल शिवाकार प्राकृतिक रूप में बनी हुई है। भगवान् शिव का यह दिव्य धाम है और साधारण मनुष्य के पहुंचने योग्य स्थान नहीं है। यहाँ बर्फ पर सीधा चढ़ना होता है। पर्वतारोहण की विशिष्ट तैयारी के बिना शक्य नहीं है। इसके दूर से दर्शन एवं परिक्रमा करने पर अद्भुत शान्ति एवं पवित्रता का अनुभव होता है।

उज्जनक में विशाल मन्दिर में विशाल शिव-लिङ्ग

(४)

नैनीताल (उत्तराखंड) जिले में काशीपुर प्रख्यात नगर है। काशीपुर से उज्जनक स्थान एक मील दूर है। इसका शिव-लिङ्ग दो मंजिल से ऊँचा है। दोनों बाहों में भेंटा न जा सके इतना मोटा है। मन्दिर महान् विशाल है। मन्दिर के बाहर (१०८) रुद्र स्थापित हैं। कई लोग इसको ही भीमशंकर (द्वादश लिङ्गों में गणना वाला) मानते हैं।

(५) काशी में एक ही स्थान पर १५१ शिव-लिङ्ग

काशी (उत्तार प्रदेश) के प्रसिद्ध विश्वनाथ मन्दिर में वायव्य कोण में एक स्थान पर १५१ शिव-लिङ्ग स्थापित हैं। काशी को बनारस या वाराणसी भी कहते हैं।

(६) तिलभाण्डेश्वर, काशी (बनारस)

काशी (बनारस उत्तर प्रदेश) में बंगाली टोला मोहल्ले में तिलभाण्डेश्वर शिवमन्दिर हैं। इसमें शिव-लिङ्ग मूर्ति साढ़े चार फुट ऊँची है। यहाँ शिवरात्रि व प्रत्येक सोमवार को अच्छी भीड पूजन व दर्शन करने वालों की होती है। काशी उत्तर प्रदेश का प्रसिद्ध नगर है। यह ग्रांड ट्रंक रोड पर स्थित है। पूर्वोत्तर व उत्तरी रेल्वे का जंकशन है। बनारस छावनी, बनारस सीटी, काशी स्टेशन हैं।

(७) असंख्यात शिव-लिङ्ग तीर्थ

असंख्यात तीर्थ शिव-लिङ्ग—यहाँ अनगिनत ही शिव-लिङ्ग स्थापित हैं। यह स्थान काशी की पंच कोसी परिक्रमा करते हैं उसमें चौथे दिन की परिक्रमा में आता है। काशी, बनारस,

वाराणसी तीन स्टेशन हैं। बनारस उत्तर प्रदेश के मुख्य नगरों में है। पूर्वोत्तर व उत्तारी रेल्वे का मुख्य जंकशन है।

(८) काश्मीर प्रान्त में अमरनाथ महादेव

यह स्थान समुद्र स्तर से १६००० फुट की ऊँचाई पर है। यह पर्वत की एक गुफा है जो साठ फुट लम्बी व लगभग पच्चीस तीस फुट चौड़ी है और पन्द्रह फुट ऊँची है। इसमें प्राकृतिक रूप से बर्फ की ही शिव-पीठ अर्घाकार है। शिव-लिङ्ग प्रायः जाड़े में वृहत् आकार में बनता है। अन्य ऋतुओं में छोटे आकार में दिखाई देता है। कभी भी पूर्णतः लुप्त नहीं होता। इसी गुफा में एक गणेशपीठ तथा एक पार्वतीपीठ भी (बर्फ) हिम से बनता है। यह शिवलिंग मन्द गति से क्षीण भी होता रहता है और फिर इसी प्रकार बढ़ता भी है। यहाँ एक अद्भुत् बात यह भी देखने में आती है कि लिंग-पीठ (बर्फ का चबूतरा) ठोस पक्की बर्फ का होता है जबकि गुफा के बाहर मीलों तक सर्वत्र बर्फ कच्ची ही मिलती है। इस गुफा में अन्दर जाने पर शीत बहुत ही कम मालूम देता है। गुफा में अन्दर जाने पर यात्री को एक अनिवर्चनीय अद्भुत सात्त्विकता तथा शान्ति का अनुभव होता है जो उसे आप्लुत करती रहती है। हिमालय प्रदेश की यात्रा में इस अमरनाथ की यात्रा सुगम बतलाई जाती है और सर्वाधिक यात्री इस यात्रा में जाते हैं। इस यात्रा में ऊनी कपड़े, ऊनी मोजे, सिर ढकने का टोपा (मंकी कैंप), गुलुबन्द, ऊनी दस्ताने, एक छड़ी (लकड़ी), तीन कम्बल, थोड़ी खटाई, नीबू का आचार, सूखे आलू बुखारा, बरसाती, टार्च और यदि हो सके तो स्टोव, थरमस, चाय, चीनी साथ ले जाना आवश्यक हैं। ये सामान दूर से लेजाना सम्भव न हो सके तो पहलगाँव से खरीदे जा सकते हैं। भोजन तो जहाँ ठीक स्थान है मिलता है, किन्तु कुछ नाश्ता जलपान हेतु खुश्क रूप में बना हुआ साथ रहे तो उत्तम है। इस यात्रा में ठहरने का स्थान पहल गाँव ही है। यहाँ से अमरनाथ यात्रा में तीन दिन लगते

हैं। प्रायः यात्रा पैदल की जाती है। असमर्थ यात्री के लिये व सामान ढोने को खच्चर व कुली भी मिलते हैं। अपनी सुविधा अनुसार प्रबन्ध वहाँ जाकर किया जा सकता है। यह अमरनाथ यात्रा श्रावणी पूर्णिमा को होती है। आषाढ की पूर्णिमा को भी यात्री अधिक संख्या में पहुंचते हैं। वैसे कोई निश्चित तिथि आवश्यक नहीं है। जुलाई के प्रथम सप्ताह से अगस्त के अन्तिम दिनों तक यात्री प्रायः पहलगाँव से जाते ही रहते हैं। यह अमरनाथ का पावन क्षेत्र काश्मीर प्रान्त में पड़ता है। काश्मीर जाने के लिये यात्री को अपने जिलाधीश का अनुमति-पत्र (परमिट) पाना आवश्यक है। पहले से प्रार्थना पत्र देकर करा लेना चाहिये। प्रायः प्रत्येक रेल्वे स्टेशन से काश्मीर की राजधानी श्रीनगर के लिए तीन महीने तक का रिटर्न टिकट मिल सकता है। इस विषय में अपने नजदीक स्टेशन से पूछताछ कर सकते हैं। कश्मीर यात्रा के लिये अन्तिम स्टेशन पठानकोट है, जो सुन्दर नगर है। वैसे काश्मीर प्रान्त में अनेक तीर्थ स्थान दर्शनीय हैं। पर्यटकों के आमोद प्रमोद के लिए अनेक रमणीक, प्राकृतिकसौन्दर्ययुक्त स्थान हैं। जिसका वर्णन यहाँ पूर्ण रूप से होना संभव नहीं किन्तु वर्णन अमरनाथ महादेव का है अतः यात्री को काश्मीर की राजधानी श्रीनगर पहुंचना चाहिये। वहाँ मोटर बस आदि से और जहाँ से पैदल जाना होता है वह सभी सुविधाओं को ध्यान में रखकर व्यवस्था कर सकते हैं। श्रीनगर से पहलगाँव जाना होगा। श्रीनगर, पहलगाँव में होटल आदि की व्यवस्था है।

(६) श्री राजेश्वरी विद्यामन्दिर

बागरमऊ (उत्तर-प्रदेश)

कानपुर उत्तर प्रदेश का प्रसिद्ध शहर है। कानपुर सेन्ट्रल स्टेशन से जो लाइन बालामऊ जाती है उसी लाइन पर यह बागरमऊ स्टेशन है। यहाँ पर एक अद्‌भुत मन्दिर है जो तन्त्रशास्त्र के आधार

पर निर्मित है। इस मन्दिर का नाम राजेश्वरी विद्यामन्दिर है। मुख्य मन्दिर के बरामदे से लगे नीचे दोनों ओर दो शिव मन्दिर हैं। इसमें पूर्व के मन्दिर में लिङ्ग-मूर्ति है। इस लिङ्गमूर्ति में श्वेत, रक्त, पीत तथा चन्द्रबिन्दु आदि के चिह्न हैं। पश्चिम के मन्दिर में रक्त वर्ण, पञ्चमुख, चतुर्भुज शिव-मूर्ति है।

मुख्य मन्दिर के भीतर अष्टधातुमयी जगदम्बा की मनोहर मूर्ति है। आसन के नीचे चतुर्दल कमल पर ब्रह्मा जी स्थित हैं। कमल दल पर क्रमश: 'वं श षं सं' ये बीजाक्षर अंकित हैं। इसके बाद षटदल पर विष्णु भगवान् स्थित हैं। इसके दलों पर 'वं भं मं यं रं लं' ये अक्षर उत्कीर्ण हैं। बीच में षोडशदल कमल पर सदाशिव विराजमान हैं। दलों पर अ से अ: तक के सोलह स्वर-वर्ण अंकित हैं। इसके बायीं ओर नीलवर्ण दशदल पद्म पर ड से फं तक के वर्णों के साथ रुद्र की मूर्ति है। आगे वाम पार्श्व में द्वादशदल रक्त कमल पर कं से ठं पर्यन्त वर्ण तथा ईश्वर मूर्ति है। इन पञ्च देवताओं के ऊपर श्वेत कमल है। उसमें हं क्षं बीजाक्षर हैं तथा सदाशिव लेटे हैं। सदाशिव की नाभि से निकले कमल पर जगदम्बा की मूर्ति विराजमान हैं। कुण्डलिनी योग के आधार पर बना हुआ अपने ढंग का यह एक ही मन्दिर कहा जाता है।

(१०) श्री दुग्धेश्वर नाथ (महादेव)

ग्राम रुद्रपुर; (गोरखपुर)

गोरखपुर-भटनी लाइन पर गौरी बाजार स्टेशन है। वहाँ से दस मील दक्षिण में रुद्रपुर गांव में श्री दुग्धेश्वर महादेव का मन्दिर है। यह महाकाल का उपलिंग माना जाता है। इसके लिये शास्त्रों में लिखा है–

महाकालस्य यल्लिङ्ग दुग्धेशमिति विश्रुतम्।

यहाँ शिवरात्री पर तथा अधिक मास आता है तब मेला लगता है। अनेक बार यह शिव-लिंग स्वत: हिलने लगता है और

चोबीस घंटे तक हिलता रहता है, फिर स्वतः स्थिर हो जाता है। स्थिर हो जाने पर अनेक मनुष्यों द्वारा प्रयत्न करने पर भी उसे हिलाया नहीं जा सकता। मूर्ति के हिलने की घटना ज्ञात इतिहास में अनेक बार हो चुकी है।

(११) होजाई ग्राम के पास जोगी जान नदी के किनारे

आसाम प्रदेश

आसाम में पूर्वोत्तर रेल्वे की पाण्डुतिन सुकिया लाइन पर गोहाटी से तिराणवे मील दूर होजाई स्टेशन है। होजाई अच्छा शहर है। इस शहर से चार मील पर जोगी जान नाम की नदी है। इसके किनारे वन था। किसानों ने खेती करने हेतु वन को काट कर साफ किया। वन काटने पर मिट्टी के बड़े-बड़े टोले मिले। उन टीलों के खोदने पर वहाँ उन टीलों में मन्दिरों के भग्नावशेष तथा शिव-लिङ्ग मिले। यहाँ इस प्रकार से पाँच शिव-लिङ्ग प्राप्त हुए। ये लिङ्ग-मूर्तियाँ विशाल और अनेक टन वजन की हैं। बीच वाले शिवलिंग के स्थान पर स्थानीय मारवाड़ी व्यापारियों ने मन्दिर-निर्माण करा दिया है। अब शिवरात्रि पर मेला होता है। इसी जोगी जान नदी के दूसरे तट (किनारे) से एक मील दूर पर इसी प्रकार वन काटने पर टीलों में ग्यारह शिव-लिङ्ग की विशालमूर्तियाँ कितने-कितने ही टन वाली निकली हैं जिन्हें कई-कई सौ आदमी एक साथ ताकत लगाकर भी नहीं उठा सकते हैं। मूर्तियाँ व जलहरियाँ ठीक हालत में हैं।

(१२) मुक्तिनाथ महादेव, शिवसागर टाउन (आसाम)

आसाम प्रदेश में शिवसागर स्थान में मुक्तिनाथ महादेव का प्रसिद्ध मन्दिर है। अहोम वंश के राजा शिव सिंह ने यह मन्दिर बनवाया था। यह स्वयम्भू-लिङ्ग माना जाता है। स्वयं भगवान् शिव ने राजा को दर्शन देकर मन्दिर निर्माण का आदेश दिया था। मन्दिर

पर सवा मन सोने का स्वर्ण-कलश चढ़ा हुआ है। शिव मन्दिर के बायीं ओर विष्णु-मन्दिर और दाहिनी ओर भगवती-मन्दिर है। उत्तर की ओर बहुत बड़ा विशाल सरोवर है। शिव रात्रि को मेला लगता है। पाण्डुतिन सुकिया लाइन पर सिमल गुड़ी स्टेशन से एक लाइन मोरेन हाट तक जाती है। इसी लाइन पर सिमल गुड़ी से दस मील पर शिवसागर टाउन स्टेशन है।

(१३) सूर्य चक्र महादेव (उन्नाव म. प्र.)

दतिया (मध्य प्रदेश) से दस मील दूर उन्नाव ग्राम है और झाँसी से यह स्थान छह मील है। झाँसी से यहाँ तक मोटर बसें चलती हैं।

यहाँ पर यह सूर्यचक्र है जिसे यहाँ वाले बालाजी कहते हैं। एक काले पत्थर पर सूर्य भगवान् की मूर्ति खुदी हुई है। सूर्य भगवान् शिव के ही प्रतिरूप हैं इसकी पुष्टि शास्त्रों में भी मिलती है। यह सूर्यचक्र इस प्रकार से स्थापित है कि प्रातः सूर्योदय होते समय सर्व प्रथम किरणें इस पर पड़ती हैं। यहाँ रथ यात्रा और रङ्ग पंचमी को मेला लगता है।

(१४) महाशिव (सरसेड़, जिला छतरपुर, म. प्र.)

ग्राम सरसेड़ जिला छतरपुर (मध्य प्रदेश) में एक पहाड़ पर मन्दिर है। श्री शिव जी की पिण्डी शनैः शनैः बढ़ रही है और पहाड़ भी ऊँचा होता जा रहा है। तीस चालीस वर्ष पूर्व तक के देखने वाले मनुष्यों का कहना है कि दर्शनार्थी मन्दिर में केवल घुसकर सीधे बैठे सकते थे। ऐसी हालत तीस चालीस वर्ष पूर्व थी; किन्तु अब निहर कर खड़े हो जाते हैं। शिव-लिङ्ग पहले की अपेक्षा अधिक बड़ा और मोटा हो गया है। बसन्त पंचमी तथा शिव रात्रि पर मेला लगता है। यह स्थान हरपालपुर स्टेशन से २ मील दूर पश्चिम में है।

(१५) श्री बड़े महादेव (जेवर)

ग्राम जेवर (जिला टीकम गढ़), मध्य प्रदेश में एक बस्ती के बीच में प्राचीन मन्दिर है जिसमें शंकर जी की केवल एक ही पिण्डी के आस-पास कई पिण्डियाँ भूमि से स्वतः ही और प्रकट हो गयी हैं जो प्रति वर्ष शनैः शनैः बढ़ रही हैं। सम्प्रति तीन बहुत बड़ी हैं, तीन मझली हैं और दो छोटी निकल आयी हैं। यह स्थान रानीपुर रोड़ स्टेशन मे ४ मील दूर दक्षिण में है।

(१६) श्री बैजनाथ महादेव (गरौंली, छत्रपुर म.प्र.)

ग्राम गरौंली (जिला छत्रपुर-म. प्र.) में यह शंकर जी धसान नदी की धारा के बीच में एक चट्टान पर स्वयं प्रकट हुए थे और प्रति वर्ष बढ़ते जा रहे हैं। अनेक मनुष्य यहाँ जाकर अनुष्ठान करते हैं। संक्राति पर बड़ा मेला लगता है।

(१७) श्री जोगेश्वर महादेव (बांदकपुर, सागर)

मध्य प्रदेश की बीना कटनी लाइन पर दमोह से नौ मील दूर बाँदकपुर स्टेशन है। यह स्थान जिला सागर मध्य प्रदेश में है यहाँ का शिव-लिंग शनैः शनैः बढ़ता है। गगांजल व नर्मदा जल लोग ले जाकर चढ़ाते है। बसन्त पंचमी व शिवरात्रि को मेला लगता है।

(१८) श्री मठ कोलेश्वर महादेव ग्राम (सीतानगर-म.प्र.)

दमोह स्टेशन से सतरह मील सुनार नदी के तट पर सीता नगर अच्छा कस्बा है। यहां महर्षि बाल्मीकि का आश्रम होना और महारानी सीता जी का द्वितीय वनवास स्थान आश्रम होना कहा जाता है। यहाँ पर सुनार, कोपरा, एवं बेंक नदियों का संगम है। इस संगम-स्थान पर मठ कोलेश्वर महादेव मन्दिर है। मन्दिर बहुत प्राचीन है। यह स्वयम्भू लिङ्ग माना जाता है। इसके लिए लोकोक्ति प्रचलित है कि यह मन्दिर एक ही रात्रि में विश्वकर्मा ने

बनाया था। कलश नहीं बनाया जा सका इसलिये कलश नहीं है। यहाँ का शिव-लिंग स्वतः शनैः शनैः बढ़ रहा है। आस पास में और भी मन्दिर है।

(१९) पिपरिया घाट (म. प्र.)

मध्य रेल्वे में जबलपुर से (इटारसी की ओर) बासठ मील पर करेली स्टेशन है। करेली से सागर तक जाने वाली पक्की सड़क के किनारे नर्मदा तट पर करेली से ९ मील दूर पर ब्रह्माण्ड घाट है। इस ब्रह्माण्ड घाट से चौदह मील पर नर्मदा जी के दक्षिण तट पर गरारू ग्राम है। इस गरारू ग्राम से चार मील दूर पर दक्षिण तट पर पिपरिया घाट स्थान है। यहाँ पर भगवान् शंकर की लिङ्ग मूर्ति पाँच फुट से भी ऊँची है।

(२०) श्री भुवनेश्वर महादेव (उड़ीसाप्रांत)

उड़ीसा में हावड़ा वाल्टेयर लाइन पर कटक खुर्दा रोड़ में बीच में कटक से अठारह मील दूर भुवनेश्वर स्टेशन है। यह भुवनेश्वर उड़ीसा की राजधानी है। स्टेशन से मन्दिर तीन मील दूर है। स्टेशन से भुवनेश्वर मन्दिर जाने को ताँगे व रिक्शे मिलते हैं। यह नगर भी काशी के समान ही शिव मन्दिरों का नगर है। मुख्य मन्दिर लिङ्गराज मन्दिर है। इसी को भुवनेश्वर महादेव कहते हैं। निज मन्दिर में शिव-लिङ्ग मूर्ति वस्तुतः बुद-बुद लिङ्ग है। शिव-लिङ्ग शिला में बुद-बुद के उठे हुये अंकुर होने के ही कारण इसको बुद-बुद लिङ्ग कहा जाता है जो अगणित हैं। इसलिये इसको कोटि लिङ्ग भी कहते हैं। इस पर चक्राकार स्वरूप भी हैं, इसलिये इसको हरि-हरात्मक शिव-लिङ्ग भी माना जाता है और इस प्रकार की मान्यता होने से इसकी पूजा हरिहर मन्त्र से ही होती है। त्रिभुजात्मक होने से इन्हें हरगौर्यात्मक तथा दीर्घ होने से काल रुद्रात्मक माना जाता है।

यात्री स्वयं अन्दर जाकर पूजा कर सकते हैं। मन्दिर विशाल है और कलात्मक मनोहर शिल्प-सौन्दर्य युक्त है। एक ही मूर्ति में अनेक प्रकार के स्वरूप हैं। यह विचित्रता अन्य किसी स्थान पर नहीं पाई जाती।

(२१) श्री पञ्चरत्नेश्वर शिव (नासिक पंचवटी)

मध्य रेल्वे की बम्बई से दिल्ली जाने वाली लाइन पर नासिक रोड़ प्रसिद्ध स्टेशन है। स्टेशन से नासिक चार मील और पञ्चवटी पाँच मील है। स्टेशन से नासिक जाने के लिये मोटर, बस, ताँगे, टेक्सी आदि मिलते हैं। नासिक व पञ्चवटी वस्तुत: एक ही नगर है। इस नगर के बीच गोदावरी नदी है। गोदावरी का दक्षिण तटभाग नासिक कहलाता है। उत्तरी भाग पञ्चवटी कहलाता है। दोनों तटों पर ही अनेक देवालय हैं। यात्री प्राय: पञ्चवटी में ठहरते हैं। वहाँ ठहरने में दर्शनार्थी को सुविधा रहती है। नासिक में एक नीलकण्ठेश्वर महादेव हैं। इसके सामने दशाश्वमेध तीर्थ है। महाराज जनक ने यहाँ यज्ञ पूर्ति करके इस नील कण्ठेश्वर महादेव की स्थापना की थी। पीछे अड़तालीस सीढ़ी ऊपर चढ़ने पर पञ्चरत्नेश्वर शिवलिङ्ग है। जिसके ऊपर पाँच चाँदी के मुख लगाये हुये हैं।-

(२२) श्री तिलभाण्डेश्वर महादेव

श्री पञ्चरत्नेश्वर महादेव, जिनका वर्णन ऊपर लिखा गया है, के पास ही तिलभाण्डेश्वर-शिव हैं। यह शिव-लिङ्ग मूर्ति दो फुट ऊँची और पाँच फुट घेरे की है।

(२३) श्री महाबलेश्वर महादेव

महाबलेश्वर महाराष्ट्र सरकार का ग्रीष्मकालीन आवास स्थान है। यह महाबलेश्वर वाटर स्टेशन से चालीस मील दूर है। पूना से ७८ मील दूर है। पूना से बस मिलती हैं। यहाँ महाबलेश्वर

मन्दिर में जो महाबलेश्वर शिव-लिङ्ग है उसमें रुद्राक्ष के आकार के छिद्र हैं जिनमें से जल पूरित होकर बराबर जल निकलता रहता है और उसी से पाँच नदियों का उद्गम होता है—सावित्री, कृष्णा, बेण्या, ककुद्मनि, (कोयन) और गायत्री ।

(२४) श्री शत-लिङ्ग (कमानियाँ–हरियाणा)

पश्चिमी रेल्वे की रेवाड़ी फुलेरा शाखा लाइन पर नारनौल स्टेशन है। यहाँ से छैं मील दक्षिण कमानियाँ ग्राम है, यहाँ एक शिव मन्दिर है। उसमें स्वयम्भू-लिंग है। उसके पास सैकड़ों की संख्या में शिव-लिंग स्थापित हैं। (इस स्थान को रामनाथ-काशी भी कहते हैं) यहाँ और भी अनेक देवालय मन्दिर हैं। शिव रात्रि पर मेला भी होता है।

(२५) श्री सहस्र-शिव (केशवराय-पाटण, राजस्थान)

श्री केशवराय-पाटण स्थान (कोटा डिवीजन) राजस्थान में है। यह एक प्राचीन तीर्थ क्षेत्र है जो काल प्रभाव से नष्ट हो चुका है। प्राचीन नगर मिट्टी में दबा पड़ा है। अब जो नगर है वह नवीन बसा है। पश्चिम रेल्वे की बम्बई दिल्ली लाइन पर कोटा जंक्शन है। यहाँ से केशवराय-पाटण केवल पाँच मील दूर है। कोटा से आठ मील पर बूँदी रोड स्टेशन है। वहाँ से केशवराय पाटण तीन मील दूर है। कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा को यहाँ अच्छा मेला होता है।

चर्मण्वती (चम्बल) नदी के तट पर यह प्राचीन जम्बू अरण्य क्षेत्र है। यहाँ पट्टनपुर ग्राम है। यहाँ लगभग एक मील तक नदी पर पक्के घाट हैं। यहाँ श्री केशवराय-विष्णु तीर्थ भी है। यह केशव राय-पाटण स्थान पहले वन था। यहाँ पांडव अज्ञातवास में रहे थे। उन्होंने यहाँ पाँच शिव लिङ्ग श्री जम्बूमार्गेश्वर के पास स्थापित किये थे और सहस्र लिङ्ग भी स्थापित किये थे। पांडवों के ठहरने

का स्थान पांडव यज्ञशाला कहा जाता है। यह यज्ञशाला अब भी है और अनेक तीर्थ व अनेक ही मन्दिर व देवालय हैं। यहाँ परशुरामजी व अन्य कई ऋषियों ने तपस्या की थी। ऐसा कहा जाता है।

(२६) श्री गोपेश्वर-शिव मन्दिर मगवास

(झालावाड़--राज०)

राजस्थान में झालावाड़ से कुछ दूर वदराना गांव है। बदराना से दक्षिण में चार मील दूर मगवास गांव है। मगवास गांव से पूर्व की ओर एक मील दूर श्री गोपेश्वर शिवमन्दिर है। यह मन्दिर पर्वत को काटकर बनाया गया है। पर्वत की शिला को ही काट-काटकर पूरा मन्दिर, खम्भे तथा शिव-पार्वती एवं नन्दिकेश्वर की मूर्तियाँ निर्मित किये गये हैं।

(२७) श्री नीलकण्ठ महादेव, सतलाना

(बीकानेर–राज०)

मारवाड़ जंक्शन से वीकानेर जाने वाली लाइन पर लूनी स्टेशन से एक लाइन मुनावाव तक गई है। इस लाइन पर लूनी से तीन मील दूर सतलाना स्टेशन है। यहाँ सरोवर के ऊपर श्री नीलकण्ठ महादेव मन्दिर है। इस मन्दिर का शिवलिंग हरे वर्ण का है और उसमें चन्द्रमा तथा त्रिपुण्ड्र नैसर्गिक रूप से वने हुए हैं। ऐसी दिव्य मूर्ति अन्यत्र दुर्लभ है। यह स्वयम्भू लिंग है।

(२८) श्री समुजेश्वर महादेव (जोधपुर–राजस्थान)

समुजेश्वर महादेव जोधपुर से ३२ मील पश्चिम में है। जोधपुर से बाड़मेर और रानीवाड़ा जाते समय बीच में धुंदाड़ा स्टेशन है। उक्त स्टेशन से यह चार मील दूर है। यहाँ से एक मील उत्तर लूनी नदी है। यह समुजेश्वर महादेव मन्दिर बहुत प्राचीन है। मन्दिर के आस पास कई शिलालेख और नग्न मूर्तियाँ मिलती हैं।

श्रावण के प्रथम सोमवार को मेला लगता है। श्रावण में इस मूर्ति पर चाहे जितना जल चढ़ावें जल मन्दिर के बाहर नहीं निकलता; किन्तु अन्य महीनों में जल चढ़ाये बिना ही जल मूर्ति के नीचे से निकलता रहता है।

(२९) श्री ताडकेश्वर मन्दिर (जयपुर-राज.)

यह मन्दिर जयपुर के किसी महाराजा द्वारा निर्मित है। मन्दिर की इमारत दो मंजिल की है। मुख्य द्वार और तीसरी मंजिल का राजमहलों की तरह छतरियों के रूप में निर्माण हुआ है। इस मन्दिर में गणेशजी की मूर्ति एक वर्ष के हाथी के बराबर की है और नन्दि की मूर्ति पीतल की अच्छे बड़े नागौरी या हरियाणा के सांड के बराबर बनी हुई है और तीन मण्डपों में शिवलिंग मूर्ति स्थापित हैं। मुख्य शिव-लिंग का नाम श्री ताड़केश्वर महादेव है। नित्य प्रति सैकड़ों की संख्या में मनुष्य दर्शन-पूजन हेतु पहुंचते हैं। सोमवार व सोम प्रदोष को अधिक पूजक-दर्शक आते हैं। शिवरात्रि पर काफी अच्छी भीड़ रहती है। मन्दिर में सुन्दर पच्चीकारी का काम बेलबूँटों द्वारा किया गया है जो पुराना होने से धूमिल होता जा रहा है। मुख्य द्वार पर ध्वजा, डमरू, त्रिशूल स्वर्णमण्डित हैं और स्वर्णमण्डित लाट पर लगे हुए हैं। जयपुर शहर के निवासियों की बड़ी मान्यता है। मन्दिर शहर के बीच में राजमहलों के त्रिपोलिया दरवाजा के पास चौड़े रास्ते में है। जयपुर राजस्थान की राजधानी व राजस्थान के प्रमुख शहरों में है।

(३०) श्री महादेवजी का मन्दिर, नवलगढ़ जिला झुंझनू (राज०)

सवाई माधोपुर से जयपुर होती हुई एक छोटी रेल्वे लाइन लोहारू गई है। इसी लाइन पर नवलगढ़ स्टेशन है। नवलगढ़ कस्बा जिला झुँझनू, शेखावटी के प्रमुख कस्बों की गणना में आता

है। नवल गढ़ स्टेशन के पास ही एक शिव-मन्दिर है जो नवलगढ़ के ठाकुर साहब ने अपने पूर्वज की स्मृति में बनाया था। इसमें स्थापित शिव-लिङ्ग मूर्ति सफेद पारदर्शक है। एक ओर हाथ या कोई वस्तु करने पर दूसरी ओर से स्पष्ट देखने में आती है और दियासलाई की तीली को प्रज्वलित कर एक ओर करने से दूसरी ओर से देखने पर मूर्ति का रंग लाल दिखायी देता है। जलेरी, सर्प, त्रिशूल चाँदी के बने हुये हैं, मन्दिर में संगमरमर व टायल लगी हुई हैं।

(३१) श्री भीमेश्वर-महादेव, (दाक्षारामम्-द० भारत)

सामल कोट से एक रेल्वे लाइन काकनाड़ा तक जाती है। काकनाड़ा से द्राक्षारामम् के लिये बसें जाती हैं, दूरी पन्द्रह मील है। यहाँ द्राक्षारामम् में एक बड़ा सरोवर है। सरोवर के समीप ही श्री भीमेश्वर महादेव हैं। भगवान् शंकर की लिङ्ग मूर्ति इतनी विशाल है कि मन्दिर के बाहर भूमि वाले भाग से ही यात्री को शिव-लिंग मूर्ति के दर्शन होते हैं। लोगों की मान्यता है कि प्रजापति दक्ष का यज्ञस्थल यह है। इसी स्थान पर सती ने देहोत्सर्ग किया था। इस स्थान की बड़ी मान्यता व प्रसिद्धि है।

(३२) श्री आदिपुरीश्वर शिवमन्दिर
तिरुवत्तिपुर (मद्रास)

मद्रास से आठ मील दूर एक छोटा सा कस्बा है। यह मद्रास का ही उपनगर है। मद्रास से मोटर बस जाती है। अन्य सवारी भी मिलती हैं। यह आदिपुरीश्वर शिवमंदिर मद्रास से भी पहले का निर्मित कहा जाता है। इस शिव मंदिर की दीवारों से एक प्रकार की ध्वनि जो वेद मंत्रों के समान हो इस प्रकार से स्वतः सुनाई देती है। यहाँ के मनुष्यों का विश्वास है कि कोई ऋषि यहाँ सहस्रों वर्षों से अलक्षित रहते हुए तपस्या में लीन है। यह उनके

ही मुख से निकलती हुई वेद मन्त्रों की ध्वनि है। मन्दिर का घेरा विशाल है। मध्य भाग में आदिपुरीश्वर महादेव शिवलिंग स्थापित है और इसी घेरे में श्री त्यागराज एवं काशी विश्वनाथ के भी सुन्दर मन्दिर हैं। घेरे के अन्दर ही त्रिपुर सुन्दरी देवी का भव्य मंदिर है। त्रिपुर सुन्दरी भगवती की मूर्ति अत्यन्त प्रभावोत्पादक है।

(३३) श्री महाबली पुरम् शिव–मन्दिर

महाबलीपुरम् स्थान पक्षी तीर्थ से नौ मील दूर है, समुद्र के किनारे पर यह प्रसिद्ध स्थान है। पक्षी तीर्थ से महाबली पुरम् तक बसें जाती हैं।

महाबलीपुर में चार मील के क्षेत्र में पहाड़ों को काट कर दीवार, छत, मूर्तियाँ मण्डप आदि निर्मित किये गए हैं। एक गाँव के पास पत्थर काट कर लंगूर के समान बन्दरों का एक समूह बनाया गया है। इसी के समीप सात अन्य देवी मूर्तियाँ हैं। यहाँ से कुछ थोड़ी दूर पर एक साढ़े चार फुट ऊँचा शिव-लिंग स्थापित है, जिस पर बहुत ही सुन्दर नक्काशी की हुई हैं। इससे कुछ दूर पर नन्दी की मूर्ति है। इससे आगे इसी प्रकार से पहाड़ को काट कर गुफाओं में अनेकों देवताओं की मूर्तियाँ, कलापूर्ण मण्डप, कमरे आदि लगभग पचीस स्थानों में निर्मित किये हुये हैं। स्थान दर्शनीय हैं। यहाँ इन स्थानों को दिखाने वाले दिग्दर्शक भी मिलते हैं।

(३४) श्री एकाम्रेश्वर महादेव, (काञ्चीपुरम्)

मद्रास-धनुष्कोटि लाइन पर मद्रास से ३५ मील दूर चोंगल पेट स्टेशन है। वहाँ से एक लाइन अमरकोनम् तक जाती है। इसी लाइन पर बाईस मील दूर काँजीवरम् स्टेशन है। स्टेशन से लगभग एक मील दूर सर्वतीर्थ नाम का सुविस्तृत तीर्थ है यह शिव काञ्ची का मुख्य तीर्थ है। यहाँ इस सरोवर के बीच में छोटा सा बहुत सुन्दर मन्दिर है। और भी अनेक मन्दिर हैं जिनमें मुख्य मन्दिर काशी विश्व नाथ का है।

इस सर्व तीर्थ सरोवर के पास ही एक फर्लांग पर एकाम्रेश्वर शिव-मन्दिर बहुत विशाल बना हुआ है। मन्दिर के प्रांगण में एक प्राचीन आम का वृक्ष है इसकी भी पूजा-परिक्रमा की जाती है। मन्दिर के दक्षिण गोपुर (द्वार) के सामने मण्डप है। इस के स्तम्भों पर बहुत सुन्दर मूर्तियाँ बनी हुई हैं। मन्दिर के दो बड़े बड़े घेरे हैं। पूर्व के घेरे में दो कक्षाएँ हैं। पहली कक्षा में प्रधान गोपुर दस मंजिल ऊँचा है। यहाँ के द्वार के दोनों ओर सुब्रह्मण्यम् तथा गणेश-जी के मन्दिर है। दूसरी कक्षा में शिवगंगा सरोवर है। इसमें उत्सव मूर्तियों का जल विहार होता है। उस समय बहुत बड़ा मेला लगता है। सरोवर के दक्षिण मण्डप में श्मशानेश्वर शिव मण्डप में स्थापित है। इस घेरे से मिला हुआ मुख्यमन्दिर का द्वार है। मुख्य मन्दिर में तीन द्वारों के अन्दर श्री एकाम्रेश्वर शिव-लिंग स्थापित है। लिंग मूर्ति श्याम है। कहा जाता है कि यह मूर्ति बालुका निर्मित है। इसके पीछे गौरी शंकर की युगल मूर्ति है। यहाँ इस एकाम्रेश्वर पर जल नहीं चढ़ाया जाता। चमेली के सुगन्धित तैल से अभिषेक किया जाता है। प्रति सोमवार को भगवान् की सवारी लगती है।

मुख्य मन्दिर की दो परिक्रमाएँ हैं। पहली परिक्रमा में क्रमशः शिव-भक्त गण, गणेशजी, एक सौ आठ (१०८) शिव-लिंग, नन्दीश्वर लिंग, चन्द्रकण्ठ बालाजी की मूर्तियाँ है। दूसरी परिक्रमा में कालिका देवा, कोटि लिंग तथा कैलास मन्दिर है। इस कैलास मन्दिर में शिव-पार्वतो की स्वर्णमयी युगल मूर्ति है। जगमोहन में ६४ (चोसठ) योगिनियों की मूर्तियाँ हैं। एक अलग मन्दिर में श्री पार्वती जी का श्रीविग्रह है। इसके पश्चात् एक मन्दिर में स्वर्ण कामाक्षी देवी हैं। दूसरे मंदिर में अपनी दोनों पत्नियों सहित सुब्रह्मण्य स्वामी की मूर्ति है। यहाँ इस स्थान में अनेकों मंडप व अनेकों ही मूर्तियाँ स्थापित हैं। मंदिर बहुत कलापूर्ण है। इसके अतिरिक्त शिव काञ्ची में अनेकों देवताओं के अनेकों ही मन्दिर हैं किन्तु शिव-मंदिरों की संख्या एक सौ आठ (१०८) कही जाती है। सब मन्दिरों का पूर्ण परिचय यहाँ स्थानाभाव से दिया जाना संभव नहीं है।

(३५) अनेक मुखवाले अनेक शिव, नूमेन (गुना–मध्य प्रदेश)

ग्राम का नाम नूमेन है। इसका प्राचीन नाम तुम्बवन है। गुना जिले के अशोक नगर परगने में यह स्थान मध्य-प्रदेश प्रान्त में है। इस स्थान पर बहुत अधिक शिव–लिंग पाये जाते हैं। उनमें त्रिमुख, पञ्चमुख, सप्तमुख, शतमुखादि अनेक मुख वाले अनेक शिव-लिंग हैं। यहाँ विन्ध्यवासिनी देवी का भी मन्दिर है। अशोक नगर स्टेशन से यह स्थान पाँच मील है। यह राजा मयूरध्वज की राजधानी कहा जाता है। यह विन्ध्यवासिनी देवी उन्हीं की आराध्या हैं। यहाँ मंदिर में राजा, मयूरध्वज की मूर्ति स्थापित है।

(३६) श्री साम्बसदाशिव-लिङ्ग, कल्लूर (मैसूर)

उदीपी या शृंगेरी से मोटर बसें कुंदापुर जाती हैं। कुंदापुर बस लाइनों का केन्द्र है, यहाँ से तीस मील कल्लूर है। कुंदापुर या चिकमगलूर से यहाँ बसें आती हैं। इस ग्राम कल्लूर में मुकाम्बिका देवी का मन्दिर है। परशुराम जी द्वारा स्थापित सात मुक्ति-क्षेत्रों में यह क्षेत्र भी है। यह देवी स्थान सिद्धपीठ माना जाता है। यह मुकाम्बिकादेवीमन्दिर विशाल बना हुआ है। इस प्रदेश के लोग यहाँ दर्शनार्थ अच्छी संख्या में आते हैं। यह प्रधान शक्तिपीठ है यहाँ स्वर्ण रेखांकित साम्बसदाशिव-लिंग है। इसकी स्थापना आदि शंकराचार्य द्वारा होना कहा जाता है। यहाँ सौपर्णिका नदी भी है।

(३७) श्री चेन्न केशव व कथेचेन्द्रिगराय के मन्दिर (वेलूर–मैसूर)

मैसूर राज्य के तीर्थ स्थानों में वेलूर का विशेष स्थान है। मैसूर आरसी केरे दक्षिण-रेल्वे की लाइन के हासन रेल्वे स्टेशन से पच्चीस मील दूर है। बंगलोर हरिहर पूना लाइन के वाणावर स्टेशन

से अठारह मील दूर दक्षिण पश्चिम में है। हालविद से दस मील दूर है। सभी जगह से बसें मिलती हैं। मुख्य मंदिर चेन्न केशव का है मंदिर बहुत विशाल है और बहुत कलापूर्ण अनेकों मंडप व अनेकों ही देवता स्थापित हैं। मंदिर नक्षत्रों की आकृति के आधार पर बना हुआ है। यह बहुत अद्भुत बुद्धि व कला का प्रतीक है। मुख्य मंडप में भगवान् चतुर्भुज की मूर्ति लगभग सात फुट ऊँची है।

इसी प्रकार इस मंदिर के दक्षिण में कप्पे के चित्रराय का मंदिर है। इसमें भी बहुत कला युक्त अनेक सुन्दर मंडप व अनेकों ही देवमंडप स्थापित हैं। एक मंडप में शिव मन्दिर स्थापित है। इसमें शिव लिंग मूर्ति सात फुट से भी ऊँची है। दोनों ही मन्दिर शिल्प-कला के अद्भुत नमूने हैं।

(३८) स्फटिक मणिमयशिव (रामेश्वरम्, द० भारत)

श्री रामेश्वरम् दक्षिण भारत का महान् प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। मद्रास से धनुष्कोटि तक दक्षिण रेल्वे की सीधी लाइन है। इस लाइन पर पाम्बन् स्टेशन से एक लाइन रामेश्वरम् तक जाती है। श्री रामेश्वरम् का वर्णन द्वादश ज्योतिर्लिंगों में विस्तृत रूप से से किया गया है। इसी रामेश्वरम् मन्दिर में जो विशाल रूप से बीस बीघा भूमि के विस्तार में निर्मित है एक स्थान में स्फटिक मणिमय शिवलिंग अत्यन्त स्वच्छ तथा पारदर्शी स्थापित है। इसके दर्शन प्रातः साढ़े चार बजे से पांच बजे तक होते हैं। यात्री सवेरे इसका दर्शन करके तब स्नान करने जाते हैं। मन्दिर खुलते ही प्रथम इसकी पूजा होती है। इस मूर्ति पर दुग्ध धारा चढ़ाते समय मूर्ति के स्पष्ट दर्शन होते हैं। पूजन होने के पश्चात् मूर्ति पर चढ़ा हुआ दुग्धादि पञ्चामृत प्रसाद रूप में यात्रियों को दिया जाता है।

(३९) श्री बृहदीश्वर महादेव (तंजौर–द० भारत)

बृहदीश्वर महादेव मन्दिर तंजौर (दक्षिण भारत) में है। कुम्भ कोणम् से चौबीस मील पर तंजौर स्टेशन है। यह अच्छा बड़ा

नगर है। जो कावेरी नदी के तट पर बसा हुआ है। तंजौर में दो किले हैं। छोटे किले में यह बृहदीश्वर मन्दिर है। किले में प्रवेश करने पर प्रथम कक्ष में मैदान के पश्चात् गोपुर है। गोपुर के भीतर एक चोकोर मण्डप है। उसमें चबूतरे पर एक बड़ी विशाल नन्दी की मूर्ति है। यह सोलह फुट लम्बा, तेरह फुट ऊँचा तथा सात फुट मोटा है और एक ही पत्थर का है। इसका वजन सात सौ मन आंका गया है। यह मूर्ति इस स्थान पर ४०० (चार सौ) मील दूरी से लाकर स्थापित की गई बतलाई जाती है।

नन्दी मण्डप के सामने ऊंचे चबूतरे पर विशाल बृहदीश्वर मंदिर है। कई मंडपों में जाने के बाद मुख्य मंडप में बृहदीश्वर शिवलिंग स्थापित है। यह शिवलिङ्ग नर्मदा में से निकालकर स्वप्नादेशानुसार चोलवंश के राजराजेश्वर नाम के महाराज ने स्थापित किया था। यह मन्दिर सात वर्ष में बनकर तैयार हुआ था। मंदिर बड़ा उत्तम व कलापूर्ण है। मन्दिर के शिखर की ऊँचाई दो सौ फुट है। शिखर पर स्वर्ण कलश लगा हुआ है यह कलश जिस पत्थर पर लगा हुआ है उसका आकार बहुत बड़ा है। कहा जाता है कि इस पत्थर का वजन (दो हजार दो सौ) २२०० मन है। उन दिनों क्रेन आदि यन्त्रों का साधन नहीं था। इतने बड़े भारी पत्थर को इतने ऊँचे चढ़ाकर यथास्थान बैठा देना आश्चर्य की बात है। इस स्थान के पास कई सौ कोसों तक कोई पत्थर या पहाड़ी इधर नहीं है। ये सभी पत्थर कहीं बहुत ही दूर से लाये गये प्रतीत होते हैं। इस मंदिर के घेरों में कई मंदिर व कितने ही देवताओं के अलग-अलग सरोवर मण्डप आदि बने हुए हैं। मुख्य मंदिर की परिक्रमा में दो ओर बरामदों में अनेक शिवलिंगों की पंक्तियाँ लगी हुई हैं। इस मंदिर का शिव-लिंग बृहदाकार होने से मंदिर का नाम बृहदीश्वर मन्दिर उपयुक्त ही लगता है। शिव-लिङ्ग मूर्ति भव्य और दर्शनीय है।

(४०) श्री विरूपाक्ष या हम्पीश्वर महादेव

विजयनगर—(द० भारत)

इस नगर का घेरा चौबीस मील में है। इस ग्राम को इस समय हम्पी कहा जाता है। इस नगर के बीच में विरूपाक्ष मंदिर है। यहाँ के लोग इसे हम्पीश्वर कहते हैं। यह विरूपाक्ष मंदिर हासपेट से नौ मील दूर है। हासपेट से यहाँ बस पहुंचती है। मंदिर विस्तृत व कलापूर्ण है। दो दरवाजे पार करने पर श्री विरूपाक्ष मंदिर में पहुँचते हैं। निज मंदिर पर स्वर्णकलश चढ़ा हुआ है। विरूपाक्ष मूर्ति शिव-लिङ्गाकार है। पूजन के समय शिवलिंग पर स्वर्ण की शृंगार-मूर्ति स्थापित की जाती है। मन्दिर के आंगन में से ही तुङ्गभद्रा की नहर भी बहती है। इस मंदिर के अग्निकोण में ऊँची भूमि पर एक मंडप में बारह हाथ ऊँची श्री गणेशजी की मूर्ति है। मूर्ति एक ही पत्थर की बनी हुई है। इस नगर व स्थान के पास अनेक पहाड़-पहाड़ियां हैं जिनमें अनेकों गुफायें हैं। इन गुफाओं में बंदर रहे थे। यह स्थान किष्किंधा के समीप है। माल्यवान पर्वत (स्फटिक शिला) पर रामचंद्रजी व लक्ष्मण जी ने वर्षा ऋतु के समय चार माह तक निवास किया था। इसी के नजदीक क्षेत्र में एक नृसिंह मंदिर भी है। नृसिंहजी की मूर्ति पर शेषनाग के फण का छत्र है। शेष नाग के फण तक मूर्ति पन्द्रह हाथ ऊँची है। नृसिंह मंदिर के पास ही एक छोटे शिव मन्दिर में एक बहुत बड़ा और स्थूल (मोटा) शिव-लिंग स्थापित है। इसका अर्घा भूमि से चार हाथ ऊँचा है। अर्घे के चारों ओर जल भरा रहता है। यह विशाल शिव-लिङ्ग प्रणवाङ्कित बना हुआ है।

(४१) श्री मीनाक्षी मन्दिर (मदुरा द० भारत)

मदुरा स्टेशन दक्षिण भारत में त्रिचनापल्ली-तूतीकोरिन लाइन पर त्रिचनापल्ली से छियाणवें मील दूर है। मदुरा नगर

वेगा नदी के किनारे पर है। पुराने ग्रन्थों में इसका नाम मधुरै है। इसे कई पुस्तकों में दक्षिण मधुरा भी लिखा है। रामेश्वरम् जाने वाले यात्री साधारणतया यहाँ भी अवश्य जाते हैं क्योंकि यह स्थान अत्युत्तम तथा रामेश्वरम् के नजदीक है। स्टेशन से मदुरा नगर एक मील है। मदुरानगर के मध्यभाग में मीनाक्षी मन्दिर है। यह मन्दिर निर्माणकला की भव्यता के लिये प्रसिद्ध है। मन्दिर बाईस बीघा भूमि पर बना हुआ है। इसमें चारों ओर चार मुख्य गोपुर (दरवाजे) हैं। वैसे इस मन्दिर में छोटे-बड़े सभी मिलाकर देखें तो सत्ताईस गोपुर हैं। सबसे अधिक ऊँचा दक्षिण का गोपुर और सबसे सुन्दर पश्चिम का गोपुर है। बड़े गोपुर ग्यारह मंजिल ऊँचे हैं।

गोपुर में प्रवेश करने पर पहले एक मंडप मिलता है, इसमें फल-फूल की दूकानें हैं। इसका नाम नगर मंडप है। इसके आगे अष्ट शक्ति मंडप है। इसमें स्तम्भों के स्थान पर लक्ष्मी जी की आठ मूर्तियाँ आठ स्थानों पर हैं। यही छत को स्तम्भों के रूप में उठाये हुये हैं। यहाँ द्वार के दाहिने ओर सुब्रह्मण्यम् तथा बांई ओर श्री गणेश जी की मूर्ति है। इससे आगे मीनाक्षी नायकम् मंडप है। इस मंडप में दूकानें लगी हुई हैं। इस मंडप के पीछे एक अंधेरा मंडप है। इसमें भगवान् विष्णु के मोहिनी रूप, शिव, ब्रह्मा, विष्णु तथा अनसूया जी की कलापूर्ण मूर्तियाँ हैं अंधेरे मंडप से आगे स्वर्ण पुष्करिणी सरोवर है। कहा जाता है ब्रह्म हत्या लगने पर इन्द्र इसी सरोवर में छिपे थे। तमिल भाषा में इसे "पोत्तामरै-कुलम्" कहते हैं। सरोवर के चारों ओर मंडप है। इन मंडपों में तीन ओर भित्तियों पर भगवान् शंकर की ६४ (चौसठ) लीलाओं के चित्र बने हैं।

मन्दिर के सम्मुख के मंडप के स्तम्भों में पाँचों पांडवों की मूर्तियाँ (एक-एक स्तम्भ में एक-एक की) और शेष सात स्तम्भों में सिंह की मूर्तियाँ हैं। सरोवर के पश्चिम भाग में एक मंडप है।

तमिल-भाषा में इसका नाम "किलिकुंडु-मंडप" है। इसमें पिंजड़ों में कुछ पक्षी पाले गये हैं। इस स्थान पर एक पत्थर का गोला है। सिंह के मुख में अंगुली डालकर घुमाने से वह गोला घूमता है। पत्थर में इस प्रकार की शिल्प कला की निपुणता आश्चर्यकारी है। पांडव मूर्तियों वाले मंडप को 'पुरुष मण्डप' कहते हैं। इसमें एक मूर्ति ऐसी बनी है जिसका आधा भाग पुरुष का और आधा मृग का है। इस मण्डप के सामने ही मीनाक्षी देवी के निज मन्दिर का द्वार है। द्वार के दक्षिण में एक छोटा सुब्रह्मण्य मन्दिर है। इसमें स्वामी कार्तिकेय तथा उनकी दोनों पत्नियों की मूर्तियाँ हैं। द्वार पर दोनों ओर पीतल की द्वारपाल की मूर्ति है।

कई ड्योढ़ियों के भीतर श्री मीनाक्षी देवी की भव्य मूर्ति है। बहुमूल्य वस्त्राभूषणों से देवी का श्याम विग्रह सुभूषित रहता है। मन्दिर के मंडप के दाहिनी ओर देवी का शयन मन्दिर है। मीनाक्षी देवी का शिखर स्वर्णमंडित है। मन्दिर के सम्मुख बाहर स्वर्णमंडित स्तम्भ है। मीनाक्षी मन्दिर की भीतरी परिक्रमा में अनेक देवी देवताओं की मूर्तियों के दर्शन होते हैं। निज मन्दिर के परिक्रमा-मार्ग में ज्ञान शक्ति, क्रिया शक्ति और बल शक्ति की मूर्तियाँ स्थापित हैं। परिक्रमा में सुब्रह्मण्यम् मन्दिर के एक भाग के निर्माता नरेश तिरूमल तथा उनकी दो रानियों आदि की मूर्तियाँ हैं। मीनाक्षी मन्दिर के दर्शन करके बाहर निकल कर सुन्दरेश्वर मन्दिर की ओर चलने पर मीनाक्षी तथा सुन्दरेश्वर मन्दिर के मध्यस्थ द्वार के सामने श्री गणेश जी का मन्दिर है। इसमें गणेश जी की विशाल मूर्ति है। यह मूर्ति ("बड़ी पुर") सरोवर खोदते समय मिली थी। वहाँ से लाकर यहाँ प्रतिष्ठित की गई थी। सुन्दरेश्वर मन्दिर के प्रवेश-द्वार पर द्वारपालों की मूर्तियाँ हैं। इन प्रस्तर मूर्तियों से आगे द्वारपालों की धातु-प्रतिमायें हैं। सुन्दरेश्वर मन्दिर के सम्मुख पहुंचने पर प्रथम नटराज के दर्शन होते हैं। इन्हें 'नेलली=अंवलम, (तमिल भाषा में) अर्थात् चाँदी से मढा हुआ

कहा जाता है। यह तांडव नृत्य करती भगवान् शिव की मूर्ति चिदम्बरम् की नटराज मूर्ति से बड़ी है। मूर्ति के मुख को छोड़कर सर्वांग पर चाँदी का आवरण चढ़ा है। चिदम्बरम् में नटराज मूर्ति का बाम पद ऊपर उठा है और यहाँ दाहिना पद ऊपर उठा है। सुन्दरेश्वर मन्दिर के सामने भी स्वर्ण मण्डित स्तम्भ है और मन्दिर का शिखर भी स्वर्ण मंडित है कई डचोढ़ियों के भीतर अर्घे पर सुन्दरेश्वर-स्वयम्भू लिङ्ग सुशोभित है। उस पर स्वर्ण त्रिपुण्ड्र लगा है।

मन्दिर के बाहर जग मोहन में आठ स्तम्भ हैं; जिन पर भगवान शंकर की विविध लीलाओं की अत्यन्त सजीव मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। इनका शिल्प नैपुण्य अद्भुत है, जिनमें पत्थर में ही शृङ्खला बनाई गयी हैं। इस शृङ्खला की कड़ियाँ लोहे की शृंखला के समान घूम सकती हैं। यहीं पर वीरभद्र एवं अघोरभद्र की विशाल उग्र मूर्तियाँ शिव गणों के सामर्थ्य की प्रतीक के समान स्थिर हैं।

इसी मंडप में एक ओर, तमिल भाषा में जिसे “कौर क्काल अम्मा” नाम से कहा जाता है, शिवभक्ता की मूर्ति है। नवग्रह मंडप में नवग्रहों की मूर्तियाँ हैं। निज मन्दिर की परिक्रमा में श्री गणपति, हनुमान जी, दंडपाणि सरस्वती, दक्षिण मूर्ति, सुब्रह्मण्यम् आदि अनेक देवताओं के दर्शन होते हैं। परिक्रमाओं में प्राचीन कदम्ब वृक्ष का अवशेष सुरक्षित है। यहीं कदम्ब वृक्ष के मूल में भगवान् सुन्दरेश्वर (शिव) ने मीनाक्षी का पाणिग्रहण किया था। मन्दिर के दक्षिण-पश्चिम उत्सव-मंडप में मीनाक्षी, सुन्दरेश्वर, गंगा और पार्वती की स्वर्णमूर्तियाँ हैं। परिक्रमा में पश्चिम की ओर एक चन्दनमय महालिंग है। मन्दिर के सम्मुख एक मंडप में नन्दी की मूर्तियाँ हैं। वहाँ से सहस्रमंडप में जाते हैं। यह नटराज का सभा मंडप है। इस सहस्र स्तम्भ में मनुष्याकार से ऊँची शिव-भक्तों तथा देव-देवियों की मूर्तियाँ हैं, इनमें से वीणा-धारिणी सरस्वती की

मूर्ति बहुत कलापूर्ण एवं आकर्षक है। इस मंडप में श्री नटराज का श्याम विग्रह प्रतिष्ठित है। इसी मंडप में भक्त कण्णप्य भील की भी खड़ी मूर्ति हैं।

बड़े मन्दिर के पूर्व में एक शतस्तम्भ मंडप है। इसमें एक सौ बीस (१२०) स्तम्भ है। प्रत्येक स्तम्भ में नायक वंश के राजाओं की तथा रानियों की मूर्तियाँ बनी है। द्वार के पास शिकारियों तथा पशुओं की मूर्तियाँ बनी हुई है। समीप ही मीनाक्षी-कल्याण-मंडप है। चैत्र में इसमें मीनाक्षी सुन्दरेश्वर का विवाह महोत्सव होता है उस उत्सव के समय मीनाक्षी–सुन्दरेश्वर विवाह हो जाने पर यहाँ अनेक वर-वधुएं एक साथ ही अल्प व्यय में अपना विवाह सम्पन्न करा जाते हैं। मन्दिर के पूर्व की ओर गोपुर के सामने "तमिल भाषा में जिसे "पुदुमण्डप" (बसन्त मंडप) कहते हैं। इसके प्रवेश द्वार पर घुड़सवारों तथा सेवकों की मूर्तियाँ हैं। भीतर शिव-पार्वती के पाणि ग्रहण के आकार की मूर्ति है। पास में भगवान् विष्णु की मूर्ति है। इसमें नटराज की भी मनोहर मूर्ति है।

पूर्व गोपुर के पूर्वोत्तर सप्त समुद्र नामक सरोवर है कहा जाता है कि मीनाक्षी की माता काञ्चन माला की समुद्र स्नान की इच्छा होने पर भगवान् शंकर ने इस सरोवर में सात धाराओं में सातों समुद्रों का जल प्रकट कर दिया था। मदुरा को भगवान् शिव की लीला नगरी ही समझना चाहिए। यहाँ भगवान् शिव के हमेशा ही उत्सव होते रहते हैं।

चैत्र मास में मीनाक्षीसुन्दरेश्वर-विवाहोत्सव होता है, जो दस दिन चलता है। इस समय रथ यात्रा भी होती है। वैशाख में शुक्ल पक्ष पञ्चमी से आठ दिन तक वसन्तोत्सव होता है।

अषाढ–श्रावण के पूरे महिने उत्सव होते हैं। अषाढ में मीनाक्षी-देवी की विशेष पूजा होती है। श्रावण में भगवान् शंकर की चौसठ लीलाओं के स्मरणोत्सव होते हैं। ये लीलायें

भगवान् शंकर ने मीनाक्षी के साथ मदुरा में प्रत्यक्ष की थीं–ऐसा माना जाता है।

भाद्रपद में तथा आश्विन में नवरात्र महोत्सव एवं अमावस्या-पूर्णिमा के विशेषोत्सव होते हैं। मार्गशीर्ष आर्द्रा नक्षत्र में नटराज का अभिषेक होता है और अष्टमी को वेकाल भैरव ग्राम की रथ यात्रा होती है। पौष पूर्णिमा को मीनाक्षी देवी की रथयात्रा होती है। माघ में शिव-भक्तों के स्मरणोत्सव होते हैं। फाल्गुन में मंदन-दहनोत्सव होता है तथा सुब्रह्मण्यम् की विवाह यात्रा मनाई जाती है।

❀ कथा ❀

भगवान् सुन्दरेश्वर (शिव) के विषय में कहा जाता है कि पहले यहाँ कदम्ब का वन था। कदम्ब के नीचे भगवान् सुन्दरेश्वर का स्वयम्भू लिंग था। देवता उसकी पूजा कर जाते थे। श्रद्धालु पांड्य-नरेश मलयध्वज को इसका पता चला उन्होंने उस लिंग मूर्ति के स्थान पर मन्दिर बनवाने तथा वहीं नगर बसाने का संकल्प किया। स्वप्न में भगवान् शंकर ने राजा के संकल्प की प्रशंसा की और दिन में एक सर्प के रूप में स्वयं आकर नगर की सीमा का निर्देश कर गये।

पांड्य नरेश के कोई सन्तान नहीं थी। राजा मलयध्वज ने अपनी पत्नी काञ्चनमाला के साथ सन्तान प्राप्ति के लिये दीर्घ काल तक तपस्या की। राजा की तपस्या तथा आराधना से प्रसन्न होकर भगवान् शंकर ने उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिया और आश्वासन दिया कि उनके एक कन्या होगी।

साक्षात् पार्वती (भगवती) ही अपने अंश से राजा मलयध्वज के यहाँ कन्या रूप में अवतीर्ण हुई।

उनके विशाल सुन्दर नेत्रों के कारण माता-पिता ने उनका नाम मीनाक्षी रखा। राजा मलयध्वज कुछ काल पश्चात् कैलासवासी हो गये। राज्य का भार रानी काञ्चनमाला ने सम्हाला।

मीनाक्षी के युवती होने पर साक्षात् भगवान् सुन्दरेश्वर ने उससे विवाह करने की इच्छा व्यक्त की। रानी काञ्चनमाला ने बड़े समारोह के साथ मीनाक्षी का विवाह सुन्दरेश्वर (शिव) के साथ कर दिया और मीनाक्षी के सभी आनन्द, आमोद, प्रमोद, सुख साधनों के लिये अनेक प्रकार के दहेज दिये और सभी प्रकार के आनन्ददायक प्रबन्ध कर दिये।

(४२) श्री नीलपेश्वर महादेव, (तिन्नेवली)

त्रिचनापल्ली—तूती कोरन लाइन पर मदुरा से उनासी मील दूर मणीआची स्टेशन है। मणीआची से एक लाइन तेनकाशी शंकोटा तक जाती है। इस लाइन पर मणीआची से १८ (अठारह) मील (तेनकाशी से ४३ मील) पर तिरुनेल्वली स्टेशन है। स्टेशन पर अंग्रेजी में बोर्ड पर तिन्नेवली लिखा हुआ है। यह नगर ताम्रपर्णी के किनारे पर बसा है। अच्छा नगर है। यहाँ बहुत से मन्दिर हैं किन्तु मुख्य मन्दिर नीलप्पेश्वर महादेव मन्दिर है। नगर में ताम्रपर्णी के सहारे कई मन्दिर और मध्य में भी कई मन्दिर हैं किन्तु यह नीलप्पेश्वर मन्दिर नगर के दूसरे भाग में स्थित है। इस मन्दिर के दो भाग हैं। एक में शिव मन्दिर है दूसरे में श्री पार्वती मन्दिर है।

मन्दिर में भीतर जाने पर "तेप्पकुलम्" सरोवर है इसके बाम भाग में सहस्र स्तम्भ मण्डप है निज मन्दिर के सम्मुख दो स्वर्णमण्डित स्तम्भ हैं। पास में ही नन्दी की विशाल मूर्ति है। निज मन्दिर में भूमि के स्तर से कुछ नीचे उतरने पर श्री ताम्रेश्वर शिव-लिङ्ग का दर्शन होता है। सामने ही नटराज मूर्ति भी है। बगल के दूसरे मन्दिर में नीलप्पेश्वर नामक स्वयम्भू महालिङ्ग है।

इस मन्दिर के द्वार पर श्री गणेशजी की मूर्ति है। श्री गणेशजी के बगल में शेषशायी भगवान् विष्णु की विशाल मूर्ति है। समीप में ही एक मन्दिर में शिव पार्वती की प्रतिमा है। यहाँ परिक्रमा में रावण की मूर्ति है। आगे परिक्रमा में ही श्री लक्ष्मी तथा श्री नटराज के दर्शन हैं। मन्दिर के दूसरे भाग में पार्वती जी का प्रधान मन्दिर है। उसका वर्णन विस्तार भय से नहीं लिखा जा रहा है।

(४३) श्री सुब्रह्मण्यम् मन्दिर तिरूच्चेन्दूर (द० भारत)

आलवार तिरूनगरी से सतरह मील (तिन्नेवली से ३८ मील) पर समुद्र के किनारे तिरूच्चेन्दूर स्टेशन है। दक्षिण भारत में सुब्रह्मण्यम् स्वामी के प्रमुख छह तीर्थ स्थानों में से तिरूच्चेन्दूर प्रधान सुब्रह्मण्य-तीर्थ है। समुद्र के किनारे ही सुब्रह्मण्य स्वामी का विशाल मन्दिर है। मन्दिर के सामने समुद्र तट की ओर बहुत बड़ा मण्डप है। इस मण्डप में होकर ही यात्री मन्दिर में आते हैं, कई द्वार पार करने पर सुब्रह्मण्यम् स्वामी का निज मन्दिर मिलता है। स्वर्णमण्डित सुब्रह्मण्यम् (स्वामी कार्तिकेय) की मूर्ति बहुत सुन्दर आकर्षक स्थापित है। मन्दिर की परिक्रमा में सुब्रह्मण्यम के कई रूपों में श्री विग्रह हैं तथा और भी देव मूर्तियाँ स्थापित हैं।

(४४) श्री द्रोणेश्वर या दीपिया महादेव (गुजरात)

पश्चिमी रेल्वे की खिजड़िया-वेरावल लाइन पर तलाला स्टेशन से एक लाईन देलवाड़ा तक जाती है। इसी लाइन पर ऊना स्टेशन है। ऊना नगर से इकीस मील दूर तुलसी स्याम स्थान है जहां गर्म पानी का स्रोत है। सात कुंड हैं। तीर्थ समझा जाता है। धर्मशाला भी यात्रियों के ठहरने को बनी है। तुलसी स्याम से यह स्थान आठ मील है जिसका नाम द्रोणेश्वर या दीपिया महादेव है। सवारी के लिये बस मिलती है। यहाँ शङ्करजी की लिङ्ग मूर्ति पर पर्वत से

अखण्ड जलधारा गिरती रहती है। समीप में ही एक धर्मशाला यात्रियों के ठहरने के लिये बनी हुई है। इस स्थान पर नारदादित्य, साम्बादित्य, अपरनारायण तथा चतुर्मुख विनायक के मन्दिर हैं।

(४५) श्री नील कंठ महादेव मंदिर, मुटेड़ी (गुजरात)

अहमदाबाद से लाइन खेड़ ब्रह्मा तक जाती है इसी पर ईडर स्टेशन है। ईडर ग्राम से दस मील दूर मुटेड़ी ग्राम के पास पहाड़ व जङ्गलों से घिरे हुये स्थान में श्री नीलकण्ठ महादेव मन्दिर है। यह स्वयम्भू-लिङ्ग है। इसकी ऊँचाई पाँच फुट है। एक ब्राह्मण को स्वप्न में शिव ने दर्शन देकर मन्दिर बनाने का आदेश दिया। जिसने इस मन्दिर का निर्माण किया। श्रावण में यहाँ मेला होता है।

(४६) श्री मुन्धेड़ा–महादेव, जादर (गुजरात)

गुजरात प्रान्त में ईडर से आठ मील पर जादर स्टेशन है, यहाँ से ग्राम एक मील दूर है। मन्दिर के चारों ओर किले के रूप में दीवारें मजबूत बनी हुई हैं। मन्दिर एक निम्ब वृक्ष के नीचे बना हुआ है। निम्ब की सभी शाखाओं के पत्ते कड़वे हैं किन्तु वृक्ष की जो शाखा शिव मन्दिर के ऊपर फैली हुई हैं उस के पत्ते मीठे हैं। भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी को मेला होता है।

(४७) श्री उत्कण्ठेश्वर महादेव (गुजरात)

पश्चिमी रेल्वे पर आनन्द और अहमदाबाद के बीच में नड़ियाद स्टेशन है। नड़ियाद से कपड़वणज तक एक लाइन जाती है। कपड़वणज से यह स्थान दस मील दूर है। कपड़वणज में देवी, वैजनाथ, सोमनाथ के मन्दिर हैं। उत्कण्ठेश्वर को यहाँ के लोग उँटड़िया महादेव कहते हैं। मन्दिर एक ऊँचे टीले पर निर्मित है। मन्दिर के पास धर्मशाला भी है। शिव लिङ्ग बड़ा हैं। उसमें छोटे-छोटे अगणित शिव लिङ्ग बने हुये हैं। श्रावण में मेला होता है।

(४८) श्री योगेश्वर गुफा मन्दिर, अम्बोली (बम्बई)

बम्बई भारत का प्रसिद्ध नगर है। बम्बई से लगभग अठारह मील दूर गोरे गांव स्टेशन है। वहाँ से २१ (इक्कीस) मील दूर दक्षिण अम्बोली गाँव के पास यह योगेश्वर गुफा है। यह इलोरा की कैलास गुफा को छोड़कर भारत का सबसे बड़ा गुफा मन्दिर है। इसमें बहुत से कमरों में मूर्तियाँ भग्न अवस्था में हैं। बीच का बड़ा कमरा सुरक्षित है। उसमें श्री महादेवजी का निज मन्दिर है। शिव मूर्ति बहुत विशाल व अत्युत्तम है। गुफा, मूर्तियाँ व कमरे सभी का शिल्प-नैपुण्य सराहनीय है। ये पहाड़ काट कर निर्मित किये गये हैं। अलग किसी पाषाण (पत्थर) को तोड़ जोड़कर नहीं वनाये गये हैं। गुफा में रोशनी का साधन होने पर ही दर्शन हो सकते हैं। गुफा बहुत दूरी तक गहरे अन्धेरे की है।

(५६) ऐलिफेण्टा गुफा (बम्बाई)

ऐली फेण्टा गुफा समुद्र के मध्य एक द्वीप में है। इसका प्राचीन नाम धारापुरी है। बम्बई के 'भाऊचाधक्का' नामक बन्दरगाह से प्रति रविवार को यहाँ स्टीमर जाता है। यहाँ गुफा मन्दिर के बाहर एक हाथी की मूर्ति थी (जो भग्न अवस्था में बम्बई अजायबघर में है)। इसी कारण इसका नाम अंग्रेजों ने एलिफेण्टा (हाथी गुफा) रख दिया। वास्तव में यह प्राचीन धारापुरी है। यह द्वीप चार मील क्षेत्र में है। यहाँ शिव रात्रि को मेला लगता है। जहाँ स्टीमर लगता है, उस स्थान से एक मील पर पर्वत को औजारों द्वारा काटकर उसी पहाड़ में मन्दिर, गुफा, कमरे, मण्डप व मूर्तियाँ पहाड़ के पाषाण की कुराई द्वारा ही निर्मित किये गये हैं। अन्य पत्थर या पत्थरों के कोई जोड़-मिलान करके या अन्य किसी प्रकार के मसाले से नहीं बनाये गये हैं। इनमें एक त्रिमूर्ति गुफा है। यह विशाल व मुख्य है। इसमें ब्रह्मा, विष्णु,

तथा शिव की मूर्तियाँ हैं। तेरह-तेरह फुट ऊँची द्वारपालों की मूर्तियाँ हैं। एक कमरे में १६ (सोलह) फुट ऊँची अर्द्धनारीश्वर शिव की मूर्ति है। उसके दायें ब्रह्माजी की व बायें विष्णु की मूर्ति है। पश्चिम के अलग कमरे में शिव पार्वती की ऊँची सुन्दर मूर्तियाँ हैं। एक अलग कमरे में शिव-पार्वतीजी के विवाह की मूर्तियाँ हैं। एक कमरे में शिव-लिङ्ग स्थापित है। वहाँ भी द्वारपालों की बड़ी-बड़ी मूर्तियाँ हैं। एक कमरे में जो कि पश्चिम की ओर है कपाल-धारी शिव की विशाल मूर्तियाँ हैं। एक ओर रावण ने कैलाश उठा कर रखा है तथा एक ओर दक्ष यज्ञ का विनाश हो रहा है।

(५०) इलोरा गुफा (वेरूल)

मध्य रेल्वे की काचीगुड़ा (हैदराबाद)—मनमाड़ लाइन पर मनमाड़ से इकहत्तर मील दूर औरंगाबाद स्टेशन है। इससे आठ मील पहले दौलताबाद स्टेशन तथा चोदह मील पहले एलोरा रोड़ स्टेशन है; परन्तु इन स्थानों से सवारी कम ही मिल पाती हैं। एलोरा औरंगाबाद से ही जाना सुविधाजनक है। औरंगाबाद से बस द्वारा यहाँ पहुंच सकते हैं। औरंगाबाद में बस मिलती है। यह इलोरा नाम अंग्रेजों का रखा हुआ है। वास्तव में इस गाँव का नाम वेरूल गाँव है। इन गुफाओं को वेरूल गुफा कहा जाता है।

ये गुफाएँ पर्वत काटकर औजारों से शिल्पियों द्वारा खुदाई व कुराई से बनी हुई हैं। पाषाण (पत्थरों) के खण्ड जोड़े हुये नहीं हैं। इन गुफाओं का विस्तार एक मील से अधिक दूरी में है। यहाँ ३४ गुफाएँ हैं। नम्बर १ से १३ तक की गुफाएँ बौद्ध धर्म से संबन्धित है तथा संख्या १४ से २९ तक की गुफाओं में पौराणिक आधार पर अनेक चित्र बने हुये हैं। इनमें कैलास मन्दिर अत्यन्त मनोहर व कलापूर्ण है। पर्वत को काटकर प्रांगण, कमरे, मण्डप, भगवान् शङ्कर की लीला मूर्तियां तथा अन्य अवतार चरित्रों की भी मूर्तियां खुदाई द्वारा बनी हुई हैं। रामेश्वर, सीता—नहानी, इन्द्र गुफा, छोटा

कैलास, जगन्नाथ सभा, आदि गुफा दृश्य सनातन धर्मावलम्बियों को अधिक आकर्षित करने वाली हैं। वैसे कला की दृष्टि से सभी प्रशंसा योग्य और उत्कृष्ट कला की प्रतीक हैं। संख्या गुफा ३० से ३४ तक जैन गुफा मन्दिर बने हुये हैं।

(५१) श्री अष्टमुखी पशुपतिनाथ (मन्दसौर)

श्री पशुपतिनाथ की अष्टमुखी विशाल मूर्ति ऐतिहासिक नगर दशपुर (मंदसौर) मध्यप्रदेश में शिवना नदी से प्रकट हुई जो श्री महादेव घाट पर विक्रम संवत् २०१८ सन् १९६१ में स्थापित की गई। यह विश्व में अद्वितीय मूर्ति है इसकी ऊँचाई सवा सात फीट है, गोलाई सवा ग्यारह फीट है एवं इसका वजन १२५ मन यानी ४५ क्विंटल के लगभग है। मूर्ति के आठों मुख भिन्न-भिन्न प्रकार के हैं।

भगवान् शिव की यह अष्टमुखी विशाल प्रतिमा मन्दसौर के पास शिवना नदी में न जाने कितनी शताब्दियों से जलमग्न रही। सर्व प्रथम इस मूर्ति का आभास सन् १९४० में उदाजी नामक धोबी को हुआ। नगर के सेवाभावी कर्मठ कार्यकर्ताओं और धर्मप्राण जनता के सहयोग से यह मूर्ति १४ बैल जोड़ी के सहारे नदी से निकाली गई। विक्रम संवत् २०१८ में पूज्यपाद स्वामी श्री प्रत्यक्षानन्दजी महाराज की प्रेरणा से स्थानीय महादेव घाट पर शास्त्रोक्त विधि से इसकी प्रतिष्ठा की गई। स्थापना होने के पश्चात् मन्दिर निर्माण हुआ। अब दर्शनार्थी यात्रियों की सुविधा व आवश्यकतानुसार अन्य भवनों का निर्माण कार्य चल रहा है।

अजमेर से खण्डवा जाने वाली पश्चिमी रेल्वे लाइन पर मन्दसौर स्टेशन है। दूसरी ओर से पहुँचने वालों को पश्चिमी रेल्वे की दिल्ली-बम्बई लाइन पर स्थित रतलाम स्टेशन पर उतर कर वहाँ से अजमेर से खण्डवा जाने वाली छोटी लाइन से मन्दसौर पहुंचना पड़ता है। मन्दसौर स्टेशन से पशुपति नाथ महादेव मन्दिर लगभग एक मील दूर है। तांगा सवारी मिलती है।

सोपान
(११)

शिव-लिङ्ग पूजा की प्राचीनता व विश्व-व्यापकता

शिव-लिङ्ग की पूजा, वन्दना अनादि काल से जगद् व्यापक है। ख्रीष्टीय धर्म प्रचार के पूर्व पाश्चात्य देशों में भी प्रायः सभी जातियों में किसी न किसी रूप में व किसी न किसी नाम मे शिव-लिङ्ग पूजा प्रचलित पाई जाती है। रोमक और यूनान दोनों देशों में क्रमशः 'प्रियेयस' और 'फुल्लुस' के नाम से लिङ्ग की पूजा-अर्चनादि होती थी। दोनों ही देशों में प्राचीन धर्म लिङ्ग-पूजा थी। वृष (बैल) को मूर्ति भी लिङ्ग के साथ पूजी जाती थी। पूजा धूप, दीप, पुष्पों द्वारा होती थी। इसी प्रकार मिस्र देश में भी 'हर' और 'ईशि' देवता का नाम बोलकर उपासना की जाती थी। इन तीनों देशों में फाल्गुन मास में ही वसन्तोत्सव के रूप में लिङ्ग पूजा का बड़ा समारोह होता था। यही समय शिव रात्रि महोत्सव का होता है। मिस्र में 'ओसिरिः' नाम के देवता, इथियोपिया के चन्द्र शैल से निकली हुई नील नदी के अधिष्टाता माने जाते हैं। कैलास पर्वत (हिमालय) के चन्द्र-गिरि से निकली हुई गङ्गा है और इसी पर्वत से निकली हुई पश्चिमगामी सिन्धु नदी है। इसी का दूसरा नाम नील भी है। दोनों ही भगवान् शंकर के निवास स्थान से निकली हुई पवित्र धाराएँ हैं। 'फल्लुस' शब्द की व्युत्पत्ति मिस्टर कर्नल टाड ने बड़ी अद्भुत प्रकार से की है। इनका कहना है कि यह शब्द संस्कृत के शब्द 'फलेश' से निकला है क्योंकि भगवान् शंकर भजन का शीघ्र फल देते हैं। इन्हें वसन्तारम्भ में ऋतुफल अर्पित किये हैं। मिस्टर प्लुतार्क के लेखों से भी स्पष्ट पता चलता है कि उस

समय मिस्र में प्रचलित लिङ्ग-पूजा पश्चिमी सभी देशों में प्रचलित थी। चीन और जापान के प्राचीन साहित्य में लिङ्ग पूजा के रूप में प्रार्थना प्रचलित होने की साक्षी मिलती है और पुरानी मूर्तियों से यह भी पता चलता है कि अमेरिका के महाद्वीपों के प्राचीन निवासी भी लिङ्ग को पूजा करते थे।

ईसाइयों के वेंद के दो विभाग हैं। एक भाग का नाम 'पुराने सुसमाचार' है। इस भाग में राजाओं की पुस्तक के पन्द्रहवें अध्याय में कथा है कि रैहोगोमय के पुत्र आशा ने अपनी माता मामाका को लिङ्ग के सामने बलि देने से रोका था।

यहूदियों के देवता 'बेलफेगो' की पूजा लिङ्ग मूर्ति की होती थी। उनका एक गुप्त मंत्र था, जिसकी वे दीक्षा लिया करते थे। मोयावी और मरिनावासी यहूदियों के उपास्य लिङ्ग की स्थापना भी फेगो शैल पर हुई थी। इनकी उपासना विधि मिस्र वासियों से मिलती हुई थी। ये लोग बालेश्वर-शिव-लिङ्ग पत्थर का बनाते थे और स्थापित कर 'बाल' नाम से पूजते थे। बालेश्वर की वेदी के सामने धूप जलाते थे और लिङ्ग के सामने स्थापित वृषभ (नन्दी) को हर एक अमावस्या को पूजते थे। मिस्र के 'ओसिरस' के लिङ्ग के सामने भी बैल की मूर्ति होती थीं। कर्नल टाड ने यह भी लिखा है कि मुहम्मद साहब के पहले 'लात' नामक अरब के देवता की उपासना 'लिङ्ग' के ही रूप में हुआ करती थी और सोमनाथ के शिव-लिङ्ग को भी पश्चिमी लोग 'लात' ही कहते थे। 'लात' की मूर्तियाँ दोनों जगह वहुत विशाल और रत्नों से सुसज्जित थीं। यह एक ही पत्थर का शिव-लिङ्ग था जो पचास पोरस ऊँचा था। जिस मन्दिर में यह स्थापित था उसमें इस लिंग को सम्हालने के लिये ठोस सोने के छप्पन खम्भे थे। महमूद गज़नवी इसे ध्वंस करके सोना ढोकर ले गया। दोनों देशों में नाम इसका एक ही याने 'लात' या 'लाट' था। यह विचित्रता थी। आकार व लम्बाई के हिसाब से 'लाट' कहना तो ठीक भी हो सकता था; परन्तु कोषकार मिस्टर

रिचर्डसन लिखते हैं कि 'लात' अल्लाह की सब से बड़ी पुत्री का नाम था और उसका चिह्न या मूर्ति लिंग की तरह ही थी। खैर उस समय जो कुछ भी था उस 'लात' का ध्वंसावशेष भी मुसलमानों ने न रखा।

मक्केश्वर शिव-लिंग काले पत्थर का ही है। इसे मुसलमान लोग अब 'असवद' कहते हैं। पहले इजरायली और यहूदी भी इसकी पूजा किया करते थे। यह मक्केश्वर शिव-लिंग अब मक्का में नहीं है। अब यह काबा में पधरा दिया गया है। इस मक्केश्वर शिव-लिंग की चर्चा 'भविष्य पुराण' के ब्रह्मपर्व में भी हुई है। काबा में अब इस मक्केश्वर को पूजा नहीं होती, परन्तु जो मुसलमान हज (तीर्थ) करने वहाँ जाते हैं, वे इस मूर्ति का चरणचुम्बन करके आते हैं। यह प्रथा अब तक भी चली आ रही है। यद्यपि अब पहले की तरह सभी विदेशों में शिव-लिंग पूजा होना नहीं पाया जाता तथापि विदेशों में अब भी अनेक प्रसिद्ध स्थानों में शिव-स्थान, शिव मन्दिर मौजूद हैं और उनकी किसी भी नाम व प्रकार से पूजा की जाने को मान्यता है। जिन देशों में ऐसे शिवालय, शिवस्थान, मन्दिर, देवालय अन्य धर्मों की मान्यता होने पर भ्रष्ट या नष्ट हो गये है, वहाँ भी प्राचीन सभ्यता व संस्कृति को रक्षा या याद बनी रहने के रूप में शिव-लिंग मूर्तियाँ स्मारक रूप में कितने ही गिरजाघरों, मन्दिरों, अजायबघरों में रखी हुई देखने को मिलती हैं। लिंग पूजा का पाश्चात्य देशों में इतना प्रचार था कि 'लिङ्गार्चा' अथवा (Phallicism) एक सम्प्रदाय ही समझा जाता था, जिसका अस्तित्व सभी देशों में पाया जाता है। इसी प्रकार का 'लिंगायत' सम्प्रदाय भारत में भी है। दक्षिण भारत में इस सम्प्रदाय के शैव अब भी मौजूद हैं जो 'जंगम' कहलाते हैं और सोने या चांदी के सम्पुट में शिव-लिङ्ग रखते हैं। काशी में तो इस सम्प्रदाय वालों का एक मोहल्ला ही बसा हुआ है, जो पुराने समय से जंगमवाड़ी के नाम से प्रसिद्ध है। इनसाईक्लोपीडिया, ब्रिटानिका में (Phallicism) शब्द में इस सम्प्रदाय का वर्णन सविस्तार मिलता है।

पणि जाति के लोगों का वर्णन भी वैदिक साहित्य में मिलता है। यह पाश्चात्य वणिक (व्यापारी) समाज था, जिसका आना जाना भारत से लेकर भूमध्यसागर तक था। पछाँह में ये लोग 'फणिश' कहलाते थे और इबरानी जाति इन्हीं के विकास का फल है। इनके यहाँ भारतीय बालेश्वर-लिङ्ग को उपासना विधिपूर्वक होती थी। जैसा कि उनके ध्वंसावशेषों से पता चलता है, मन्दिरों को निर्माण कला भी भारतीय थी। बालेश्वर-लिङ्ग को बाईबिल में 'शिउन' कहा है।

अमेरिका महाद्वीप में पेरुविया नामक स्थान में वहाँ के प्राचीन निवासी रहते हैं। उनका पुराना राजवंश सूर्यवंशी कहा जाता है और वह 'रामसीतोया' नाम का एक महोत्सव भी करते हैं। वहाँ की मध्यवर्ती कुछ जातियों में ईश्वर को 'सिव्र' कहते हैं। फीजिया देश में जो आसुरिया देश या एशिया का ही एक भूखण्ड है, वहाँ के निवासी 'सेवा' या 'सेवाजिव' नाम के देवता को उपासना करते हैं। :जिस समय मंत्र लेते हैं, कुछ अनुष्ठान भी करते हैं जिसमें सर्पों का भी कुछ कार्य होता है। मिस्र में भी 'सेवा' देवता के साथ सर्प का सम्बन्ध है।

हमारे देश भारतवर्ष का तो कहना ही क्या, हिमालय मानसरोवर और कैलाश से लेकर कन्याकुमारी व रामेश्वर तक और अटक से कटक तक के शिवलिंगों व शिवालयों की गणना ही क्या की जा सकती है? असंख्य ही हैं और समय की उथल पुथल के कारण अगणित शिव-लिंग कूपों व भूगर्भों में दबे पड़े हैं, जो समय-समय पर खुदाई होने पर पाये जाते हैं। मोहञ्जोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में तहों में ऐसे शिव-लिङ्ग मिलते हैं जो समय को नजदीक से नजदीक खींचकर देखने वाली दृष्टि से, कट्टर अनुमानों और भूगर्भ व पुरातन पाषाणवेत्ताओं की दृष्टि से वर्तमान समय से कम से कम छह हजार वर्ष पूर्व के बतलाये गये हैं। सर जान मार्शल ने इस प्रकार अनेक शिव-

लिङ्ग अनेक देश-विदेशों में इतने पुराने होने के अनुमान के आधार पर यही कह दिया–यह शैव धर्म कलकालिथिक युग (Chalcolithicage) या इससे भी पहले का है। एक पाश्चात्य विद्वान् सर विलियम जोंन्स का कहना है कि इजिप्ट के पिरेमिड्स व आयरलैण्ड के प्रसिद्ध गुम्वज शिव के स्मारक-लिंग हैं। मेरी समझ में तो मोहन्जोदड़ो के सबसे नीचे के स्तर महाभारत की लड़ाई के कई हजार वर्ष पहले के होंगे। इससे स्पष्टतया महाभारतकालीन समय से हजार वर्ष पूर्व होने का तो पक्का ही प्रमाण विदेशी इतिहासकारों द्वारा सिद्ध होता है।

हमारे धर्म ग्रन्थों को भी देखा जाता है तो रुद्राध्याय भगवान् शिव के नामों से ओत–प्रोत है। रुद्र की स्तुतियाँ चारों संहिताओं में आई हैं। 'शिव' नाम पर अनेक मन्त्र हैं। कपर्दिन, पशुपति, सहस्राक्ष, सद्योजातादि अनेक नाम अनेक स्थलों पर आते हैं। ऋग्वेद में लिंगोपासना की चर्चा है ही। बाल्मीकीय रामायण में भी है। वैदिक साहित्य, इतिहास, पुराण, तन्त्र संहिताओं में, ब्राह्मणों में, आरण्यकों में और श्वेताश्वतरादि कितने ही उपनिषदों में रुद्रादि अनेक नामों के साथ ही उमा, विद्या आदि नामों के साथ उमामहेश्वर के प्रसंग कथा में हैं। महाभारत में भी अनुशासन पर्व, सौप्तिक पर्व में भगवान् महेश्वर, शिव व शंकर के नामों से कई प्रसंग आये हैं। पद्मपुराण, विष्णुपुराण, ब्रह्मवैवर्तपुराण में भी शिव-लिंग-पूजा का प्रसंग है और शिवपुराण, लिंगपुराण, स्कन्द-पुराण, मत्स्यपुराण, कूर्मपुराण और ब्रह्माण्डपुराण तो शिव के ही पुराण हैं। हिन्दुओं के सभी धार्मिक व साहित्यिक ग्रंथों में भगवान् शिव की अर्चना, वन्दना व माहात्म्य लिखे हैं। इसी प्रकार तन्त्रों, स्मृतियों आदि सभी में शिव का किसी न किसी प्रसंग में पूजनादि का उल्लेख है।

वेदों की संहितायें बृहद आकार में हैं। उनमें से कुछ स्थलों का संक्षेप में उदाहरणार्थ परिचय इस प्रकार से है––

ऋग्वेद १०/९२/९; १/१४४/१–४; १०/१३६ सम्पूर्ण २/३४/१ तथा २/११/२ सूक्तों में तो रुद्र की स्तुति मात्र है परन्तु शतपथ ब्राह्मण में (६/१/३/७–१९) और शांखायन ब्राह्मण में (६/१/१-९) भगवान् रुद्र की उत्पत्ति का वर्णन है। समग्र ही शैव साहित्य में भगवान् महेश्वर के साथ भगवती उमा का भी वर्णन आया है। वाजसनेयी संहिता में 'अम्बिका' (३/५७) और 'शिवा' (१६/१); तल्वकार उपनिषद् (३/११–१२ तथा ४/१–२) में 'ब्रह्म विद्या-स्वरूपिणी उमा हैमवती' और तैत्तिरीय आरण्यक के दसवें प्रपाठक में 'कन्याकुमारी', 'कात्यायनी', 'दुर्गा' इत्यादि का वर्णन हैं।

जैन तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी के समय पाँचवी शताब्दी ई०पू० में शिव उपासना व उसकी पूजन सामग्री, पुष्प, बिल्वपत्र, गुग्गुल होने का उल्लेख जैन ग्रन्थों में भी मिलता है।

इसी प्रकार से सुप्रसिद्ध व्याकरण रचयिता पाणिनि के समय पाँचवीं शताब्दी ई.पू. में इन के लिखित ग्रन्थ अष्टाध्यायी में भव, शर्व, रुद्र, मृडाणी आदि शिव नामों का वर्णन आया है। गृह सूत्रों में भी शिव, पशुपति, शिवशंकर, हर, भव आदि नाम लिखे हुए हैं।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में अन्य देवताओं के नामों के साथ शिव देवता का भी नाम आया है। पाणिनीय सूत्रों के विशिष्ट महाभाष्यकार पतंजलि ने भी भगवान् शिव का उल्लेख किया है।

कुछ सातवाहन राजा शिव भक्त हुए। उनके द्वारा पर्वतीय गुफाओं में खुदाई किये हुए शिलालेखों में महादेव, शिव, रुद्र इत्यादि नाम खुदे हुए हैं। सातवाहन के पश्चात सुखातीला कुशान राजा हुए। वे शिव भक्त थे। इनमें से कितने ही राजाओं की मुद्राओं पर शिव-मूर्तियों के चिह्न मिले हैं, और कई मुद्राओं पर बैल का भी चित्र अंकित है। दक्षिण भारत के ईस्वी सन् (२) तथा (३) में रचे गये कितने ही ग्रन्थ हैं जिनमें शिव को सर्वश्रेष्ठ देवता माना गया है।

संगमु वाङ्मय में शिव को सर्वोच्च देवता माना गया है। और शिव की ही पूजा होती थी। इसमें भगवान् शिव के कर्पूर-गौरवर्ण; जटाभार के लाल रंग, तीन नेत्र व बाघाम्बर वस्त्रादि का उल्लेख है।

दूसरी शताब्दी ईस्वी में नाटककार भा। ने अपने नाटकों में शिव पूजा का उल्लेख किया है।

कुशान राजवंश के इतिहास से भी उस समय शिव पूजा की मान्यता स्पष्ट होती है। इस प्रकार अनेकानेक पुस्तकाधार व शिलालेखों, शिवमूर्तियों, शिवलिङ्गों और और शिवदेवस्थानों से यह पूर्णतया स्पष्ट व प्रमाणित होता है कि इस पृथ्वी के पूरे क्षेत्र पर शिवलिङ्ग पूजा प्रचलित थी और सर्व प्रथम मूर्तिपूजा भारत में ही शिव लिङ्ग रूप में प्रारम्भ हुई थी। इस विषय में कितनी-ही संख्या में ऐसे प्रमाण प्राप्त होते हैं जिनसे कितनी ही बड़ी २ अनेक पुस्तकें लिखी जा सकती हैं।

भारत से बाहर के देशों में अब भी कितने ही नामों से जो शिव-लिंग व शिवस्थान हैं उनमें विभिन्न प्रकार से कितने ही स्थानों पर पूजा होती है।

जो विवरण प्राप्त किये जा सके उनकी तालिका दी जाती है। जिन नामों से इन देवताओं के नाम अब कहे जाते हैं, वे नाम भी अधिकतर संस्कृत भाषा के शब्दों में शिव के नाम पाये जाते हैं। कुछ उच्चारण दूसरे प्रकार से होने से उनके शब्द अपभ्रंश हुए प्रतीत होते हैं। ईशिः=ईश्वर। होरसः=हर। सेव=शिव। शिवलिन=शिवलिंग।

भारत के अतिरिक्त अन्य देशों में स्थित शिवलिङ्गों की तालिका—

१ अब्बास नगर (ईरान)—मन्दिर है उसमें शिवलिंग मूर्ति है। इसके पास ही दूसरे मण्डप में भगवान् श्री कृष्ण, हनुमान व

योगमाया की मूर्ति हैं। यहाँ बस्ती अधिक मुसलमानों की है; किन्तु स्थानीय सभी जनता मान्यता रखती है।

२ इन्द्रपुर (त्रा-क्यू)—भद्रेश्वर नाम की शिव-लिंग मूर्ति है।

३ अनाम के शिव मन्दिर—विन्ध्येश्वर शिव मन्दिर है और षण्मुख कार्तिकेय की मूर्तियाँ हैं।

४ ट्राक्य (अनाम)—शिवजी की मनुष्यं के परिमाण की मूर्ति स्थापित है।

५ डाँगफुक (अनाम)—अर्द्ध नारीश्वर शिवजी की मूर्ति है।

६ पोनगर (अनाम)—यहाँ कुछ गणपति मूर्तियों पर शिवलिंग मूर्तियाँ धारण की हुई दिखाई गई हैं।

७ चम्पा (कम्बोडिया)—शिव मन्दिर है।

८ कम्बोज (कम्बोडिया)—शिव मन्दिर है। मूर्तियाँ विशाल हैं।

९ स्दाक काक थाम (कम्बोडिया)—वहाँ पर बहुत बड़ा मंदिर बना हुआ था। ऐरावत हाथी पर इन्द्र की मूर्ति पूरे रूप में बनी हुई है। बाकी मन्दिर के सभी भवन मण्डप व मूर्तियों के भग्नावशेष बहुत बड़ी भूमि में पड़े हैं। एक शिलालेख स्थित है। जिससे उस मन्दिर का पूर्ण ब्यौरा और शिवभक्ति का परिचय मिलता है।

१० अङ्कोल (कम्बोडिया)—'वे न' नाम का मन्दिर है। इस मन्दिर में अनेक देवी देवता व शिव-लिंग स्थापित हैं।

११ ग्राम प्रावनान (यवद्वीप-जावा)—ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि के मन्दिर हैं। मध्य में ऊँचा व बड़ा शिवमन्दिर है। इसके पास और अनेक देवस्थान स्थापित हैं। चहार दीवारी के चारों ओर सैकड़ों शिवमन्दिर निर्मित हैं और भित्तियों पर अनेक श्रीकृष्णचरित्र की लीलाओं की मूर्तियाँ खुदी हुई हैं।

१२ बोरोबुदर (यवद्वीप-मध्यजावा)—यह चैत्यमन्दिर है जो भारतीय शिल्प कला का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

१३ बाली द्वीप---यहाँ शिवमन्दिर है और प्रधान आराध्य देवता शिव हैं। ब्राह्मणों का विशेष सम्मान है।

१४ मारिशस (अफ्रीका)--यहाँ पर एक तीर्थस्थान है जिसका नाम 'परितालाब' है। इसी सरोवर के किनारे भगवान् शिव का मन्दिर है। शिवरात्रि व मकर संक्रान्ति पर मेला लगता है। लगभग ४०, ५० हजार यात्री उस समय यहाँ पहुँचते हैं।

१५ मेफिस (मिस्र)--नन्दी पर विराजमान त्रिशूलहस्त, व्याघ्रचर्माम्बरधारी शिव की अनेक मूर्तियाँ है। दुग्ध से स्नान कराके पुष्प व बिल्वपत्र चढ़ाते हैं।

१६ 'असिरस' मिस्र—नन्दी पर विराजमान त्रिशूल हस्त व्याघ्रचर्माम्बरधारी शिव की अनेक मूर्तियाँ हैं। दुग्ध से स्नान कराते हैं पुष्प व बिल्वपत्र चढ़ाये जाते हैं।

१७ वाविलिन (तुर्किस्तान)—इस स्थान में एक हजार दो सौ फुट का एक शिवलिंग है। संसार में यह सबसे बड़ा महाशिवलिंग है

१८ हड्रापोलिस नगर (तुर्किस्तान)—एक विशाल शिव मन्दिर है, जिसमें तीन सौ फुट ऊँचा शिवलिंग हैं।

१९ मक्का (अरब)—मक्का में मक्केश्वर शिवलिंग था जो मक्का से ले जाकर 'काबा' में स्थापित कर दिया गया। यह अब काबा में है। हिन्दू जिस प्रकार काशी को पुण्य प्रद पवित्र समझते हैं, उसी प्रकार मुसलमान लोग काबा की मान्यता समझते हैं।

२० काबा (अरब)--इस स्थान में 'जमजम' नाम का कुआँ है। इसमें एक शिव लिंग की पूजा खजूर की पत्तियों से की जाती है।

२१ ब्राजील प्रदेश—इस प्रदेश में बहुत से स्थानों पर बहुत से प्राचीन शिव-लिंग स्थापित हैं।

२२ कारिया--इस स्थान में एक पार्वती मन्दिर है।

२३ इटली—इस स्थान में अनेक पादरी शिवलिंग की पूजा करते हैं।

२४ ग्लास्को (स्काटलैंड)--इस स्थान पर एक स्वर्णाच्छादित शिवलिङ्ग है जिसकी पूजा वहाँ बड़ी भक्ति से की जाती है।

२५ एरिस (फिजीद्वीप)-इस स्थान पर 'एषीर' नामक शिवलिग है।

२६ निनवा (फीजीयम)—इस स्थान में 'एषीर' नामक शिवलिग है।

२७ अफरीदिस्तान—इस स्थान में पंचसेर या'पञ्चवीर' नाम से शिवलिग की पूजा होती है।

२८ चित्राल--इस स्थान पर 'पंचसेर' या 'पञ्चवीर' नाम से शिवलिग की पूजा होती है।

२९ काबुल---इस स्थान पर 'पंचसेर' या 'पंचवीर' नाम से शिवलिग की पूजा होती है।

३० पलख-बुखारा---इस स्थान पर 'पंचसेर' या 'पञ्चवीर' नाम से शिवलिग की पूजा होती है।

३१ मेक्सिको--बहुत से स्थानों पर शिवलिग स्थापित है।

३२ कम्बोडिया---राजा राजेन्द्र वर्मा द्वारा स्थापित किया हुआ एक शिवलिग है।

३३ जावा द्वीप—इस द्वीप में अनेक स्थानों पर अनेक शिवलिग है।

३४ सुमात्रा द्वीप---इस द्वीप में अनेक स्थानों पर अनेक शिवलिग हैं।

३५ इण्डोचायना व वियटनाम—इन देशों में विशाल शिव-मन्दिर हैं और प्राचीन शिलालेख पाये गये हैं; जिनमें अधिकतर शिव से सम्बन्धित वाक्य खुदे हुए पाये गये हैं तथा जिनके आरंभ में ॐ नमः शिवाय लिखा हुआ है।

३६ मिस्र—यहाँ के मशहूर पिरेमिड्स (गुम्बज) पाश्चात्य के विद्वान सर विलियम्स जोन्स के कथनानुसार शिव के ही स्मारक लिंग हैं।

३७ आयरलैंड--यहाँ के प्रसिद्ध गुम्बज पाश्चात्य के विद्वान सर विलियम्स जोन्स के कथनानुसार शिव के ही स्मारक लिग हैं।

इस उपर्युक्त वर्णन में निम्नलिखित पुस्तकों, लेखों व रिपार्टों द्वारा सहायता ली गई है--

१ गायधनी, राहूर, प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ १८, १९, १९२।

2 "Life in ancient India as depicted in Jaina Canons" Page--218, by Shri J. C. Jain.

3 "India as known to panini" Page 356-358.

4 "Religious life in Griha Sutras" by Shri V. M. Apte Page-235.

5 "Age of Imperial unity" Page--453, 456, 460, 461. and 467.

6 "Gatha -- SaptaSati" by S. A. Joglekar, Page 188-189 and 448.

7 "Early History of Andhra Country" by K. Gopalachari Page--123.

8 "India under the kushanas" B.N. Puri--Page-139,156,203.

9 "Tamil Eighteen Hundred years ago" by V. Kanakasathai Page--231.

10 "BHASA-A Study" A. D. Pusalkar--Page--426.

11 'History to prehistory at Nevasa" by Sankalia and others--Page--493-205, 405-406

12 "प्रसाद" महाराष्ट्रीयन मासिक-शिवाङ्क विशेषाङ्क अगस्त 1970

13 "कल्याण" मासिक-तीर्थाङ्क जनवरी 1971

14 "कल्याण" मासिक-शिवपुराणाङ्क जनवरी 1962

15 "TODS RAJASTHAN"--Vol I, Page 603.

16 Richardson Dictionary--8129.

17 शिव-निर्माल्य-रत्नाकर, लेखक-श्री बेचू सिंह शाम्भव, काशी

18 हूएत्सांग, चीन निवासी की रिपोर्ट

सोपान
(१२)

अष्टोत्तरशत दिव्य शिव-क्षेत्र

पृथ्वी पर स्थित अष्टोत्तरशत दिव्य शिव-क्षेत्र हैं। इन सभी के स्थानों में जाकर पूजा-दर्शन करने और सब के नामोच्चारण करने सुनने का बड़ा माहात्म्य है। इसलिये इनका परिचय दिया जाना आवश्यक है; किन्तु इनके स्थान व नाम जब ऋषि महर्षियों ने लिखे थे, वह बहुत प्राचीन समय की बात है। अब उन नगरों, स्थानों का इस वर्तमान समयानुसार परिचय संभव नहीं क्योंकि स्थानों, प्रदेशों के नाम उस समय कुछ और थे, और अब कुछ और हो गये हैं। संभव है, उनमें से कुछ स्थान, नगर अब रहे ही न हों। कुछ नगर व स्थान सुरक्षित भी हैं। अतएव उनके नाम, नगर व स्थान प्राचीन लिखे हुए आधार पर ही दिये जा रहे हैं जिसके द्वारा यथासंभव दर्शन, पूजन, नामोच्चारण, स्मरण कर शिवभक्तगण लाभ ले सकेंगे।

कैलास पर भगवान् शिव श्रीकण्ठ नाम से विराजमान हैं। वे हिमालय पर्वत पर केदार नाम से तथा काशी पुरी में विश्वनाथ के नाम से प्रसिद्ध हैं। श्रीशैल पर्वत पर मल्लिकार्जुन, प्रयाग में नीलकण्ठेश, गया में रुद्र, कालञ्जर में नीलकण्ठेश्वर, द्राक्षाराम में भीमेश्वर तथा मायूरम् (मायावरम्) में वे अम्बिकेश्वर कहलाते हैं। वे ब्रह्मावर्त में देवलिङ्ग के रूप में, प्रभास में शशिभूषण, श्वेतहस्तिपुर में वृषध्वज, गोकर्ण में गोकर्णेश्वर, सोमनाथ में सोमेश्वर, श्रीरूप में त्यागराज तथा वेद में वेदपुरीश्वर के नाम से

विख्यात हैं। भगवान् शिव भीमाराम में भीमेश्वर, मन्थन में कालिकेश्वर, मधुरा में चोक्कानाथ, मानस में माधवेश्वर, श्रीवाञ्छक में चम्पकेश्वर, पञ्चवटी में वटेश्वर, गजारण्य में बैद्यनाथ तथा तीर्थाचल में तीर्थकेश्वर नाम से प्रसिद्ध हैं। वे कुम्भकोणम् में कुम्भेश, लेपाक्षी में पापनाशन, कण्वपुरी में कण्वेश तथा मध्य में मध्यार्जुनेश्वर नाम से प्रतिष्ठित हैं। हरिहरपुर में शंकर-नारायणेश्वर, विरञ्चिपुरी में मार्गेश, पञ्चनद में गिरीश्वर, पम्पापुरी में विरूपाक्ष, सोमगिरि पर मल्लिकार्जुन, त्रिमकूट में अगस्त्येश्वर तथा सुब्रह्मण्य में अहिपेश्वर नाम से समादृत होते हैं। महाबल पर्वत पर महाबलेश्वर नाम से, दक्षिणावर्त में साक्षात् सूर्य के द्वारा पूजित अर्केश्वर, वेदारण्यम् में वेदारण्येश्वर, सोमपुरी में सोमेश्वर, उज्जैन में रामलिंगेश्वर, कश्मीर में विजयेश्वर, महानन्दिपुर में महानन्दिपुरेश्वर, कोटितीर्थ में कोटीश्वर, वृद्ध क्षेत्र में वृद्धाचलेश्वर तथा अति पवित्र ककुद् पर्वत पर वे गंगाधरेश्वर नाम से प्रसिद्ध हैं। भगवान् शिव चामराजनगर में चामराजेश्वर, नन्दि पर्वत पर नन्दीश्वर, बभ्रिराचल में चण्डेश्वर, गरपुर में अभ्रिपेश्वर, घनानन्द पर्वत पर सोमेश्वर, नल्लूर में निर्मलेश्वर, नीडानाथपुर में नीडानाथेश्वर एकान्त में रामलिङ्गेश्वर तथा श्रीनाग में कुण्डलीश्वर रूप में विराजते हैं। वे श्रीकन्या में त्रिभङ्गीश्वर उत्सङ्ग में राघवेश्वर, मत्स्य-तीर्थ में तीर्थेश्वर, त्रिकूट पर्वत पर ताण्डवेश्वर, प्रसन्नपुरी में मार्गसहायेश्वर, गंडकी में शिवनाभ, श्रीपति में श्रीपतीश्वर, धर्मपुरी में धर्मलिङ्ग, कान्यकुब्ज में कलाधर, वाणिग्राम में विरञ्चीश्वर तथा नेपाल में नकुलेश्वर कहे जाते हैं। जगन्नाथपुरी में मार्कण्डेश्वर, नर्मदा तट पर स्वयम्भू, धर्मस्थल में मञ्जुनाथ, त्रिरूपक में व्यासेश्वर, स्वर्णावती में कलिङ्गेश्वर, निर्मल में पन्नगेश्वर, पुण्डरीक में जैमिनीश्वर, अयोध्या में मधुरेश्वर सिद्धवटी में सिद्धेश्वर, श्रीकूर्माचल पर त्रिपुरान्तक, मणिकुण्डल तीर्थ में मणिमुक्तानन्दीश्वर, वटाटवी में कृत्तिवासेश्वर, त्रिवेणी तट

पर संगमेश्वर, स्तनिता-तीर्थ में मल्लेश्वर तथा इन्द्रकील पर्वत पर अर्जुनेश्वर रूप में विराजमान हैं। वे शेषाचल पर कपिलेश्वर, पुण्यगिरि पर पुण्यगिरीश्वर, चित्रकूट में भुवनेश्वर, उज्जैन में कालिकेश्वर (महाकाल), ज्वालामुखी में शूलटङ्क, मङ्गली में संगमेश्वर, तज्जापुरी (तंजौर) में बृहती(दी)श्वर, पुष्कर में रामेश्वर, लंका में मत्स्येश्वर, गन्धमादन पर कूर्मेश्वर, विन्ध्य पर्वत परवराहेश्वर और अहोविल में नृसिंह रूपसे प्रकट हैं। प्रभु विश्वनाथ कुरुक्षेत्र में वामनेश्वर रूप में कपिला तीर्थ में परशुरामेश्वर, सेतुबन्ध में रामेश्वर, साकेत में बलरामेश्वर, वारणावत में बौद्धेश्वर, तत्त्वक्षेत्र में कल्कीश्वर, तथा महेन्द्राचल-पर कृष्णेश्वर-रूप में व्यक्त हैं।

(ललितागम, ज्ञानपाद शिव-लिङ्गप्रादुर्भाव-पटल)

* * *

सोपान

(१३)

पारद (पारा) द्वारा निर्मित शिव-लिङ्ग

श्री देवाधिदेव -उमा महेश्वर की माया व चरित्रों को जान लेने की साधारण मनुष्यों की क्या बुद्धि हो सकती है जबकि बड़े-बड़े देवता, सरस्वती, ऋषि-मुनि महात्मादि भी अल्परूप में जानने में समर्थ नहीं हो सकते। उनकी माया व चरित्रों को तो वे ही जाने। उमा महेश्वर की असीम कृपा से उनके चरित्रों, शिव-लिङ्गों की निर्माण-विधि, पूजन-विधि, प्रकार-विधि, स्थापन- विधि, व्रत

उत्सवादि-विधि ग्रन्थों में पढ़ने देखने का अवसर प्राप्त हुआ इसके लिये मैं तो उनकी ही कृपा मानता हूं ।

इन विषयों के कितने ही ग्रन्थों के अवलोकन से ज्ञात हुआ कि भगवान् उमा–महेश्वर के अनन्त रूप, आश्चर्यान्वित अनन्त चरित्र और अनेक ही प्रकार के शिव-लिङ्ग निर्माण, स्थापन, पूजन आदि के प्रकार हैं और इसी प्रकार अनन्त ही माहात्म्य व फल हैं किंतु जो कुछ अव तक पढ़ने व देखने में आया है, उनमें पारद—(जिसे साधारण बोलने की भाषा में पारा कहा जाता है, अंग्रेजी भाषा में जिसको मरकरी कहते हैं) का शिवलिंग निर्माण कर यदि पूजा-आराधना की जावे तो उसके समान किसी भी शिव-लिङ्ग की पूजा का माहात्म्य नहीं । इसकी पूजा का माहात्म्य बहुत ही पाप नाशक, अनेकों सिद्धि, शुभमांगलिक, धन-धान्यवृद्धि, शुभमनोवाञ्छित फलदायक कहा गया है । यहाँ तक कहा गया है कि जिसने इसकी पूजा कर ली उसको त्रिलोकी में जितने शिव-लिङ्ग हैं उन सभी की पूजा का फल प्राप्त हो जाता है ।

पारद की उत्पत्ति की कथा भी वड़ी विचित्र है । इसी प्रकार से इसका शिव-लिंग निर्माण भी बहुत कष्टसाध्य, आश्चर्यकारी तथा अद्भुत् है । इसी प्रकार से पूजन, दर्शन, माहात्म्य फल भी अद्भुन् ही लिखे हैं ।

भगवान् शिव के विषयों का जो पुस्तकों में अवलोकन अब तक कर पाया उससे ज्ञात होता है कि भगवान् की आज्ञा से विश्वकर्मा ने अनेक प्रकार के शिव–लिङ्ग निर्मित किये और अनेक २ देवताओं को पूजा के लिए दिये । उसी संदर्भ में विश्वकर्मा ने पारद का भी शिव-लिङ्ग निर्माण किया था और वह पूजन के लिए बाणासुर को प्रदान किया था । बाणासुर इसकी पूजा करता था । यह कथा शिव पुराण रुद्र संहिता अध्याय बारह (१२) में आई है ।

बाणासुर ने भगवान् शिव की पूजा आराधना करके भगवान् शिव को स्वल्प काल में ही प्रसन्न कर लिया और अनेकों वर प्राप्त किये । (शिवपुराण रुद्रसंहि० अध्याय ५१)

एक बार प्राप्त कर उसने भगवान् शङ्कर को अपना रक्षक बना लिया और दूसरी बार में भगवान् शंकर से स्वयं तथा गणों सहित सर्वथा प्रीति का निर्वाह करते हुए नगर रक्षा हेतु अपने पास ही सर्वदा निवास करने का वर प्राप्त किया।

फिर इसी प्रकार बारी बारी से यम को योद्धा, अग्नि को महान् कार्यकर्त्ता, वरुण को गौओं का पालनकर्ता गोपाल, कुबेर को गजाध्यक्ष बनाया व निऋति, सैरन्ध्री और इन्द्र को जीतकर सदा के लिये करद बना लिया था।

एक बार बाणासुर ने नर्मदा के तट पर पहुँचकर बड़े भक्ति-भाव से भगवान् शिव शंकर की पूजा आराधना की और अनेक प्रकार की पूजाओं के द्वारा भगवान् शिव को प्रसन्न किया। भगवान् शंकर प्रसन्न हुए और वर मांगने को कहा तो बाणासुर ने प्रार्थना की—यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं और वर देना चाहते हैं तो आप इसी नर्मदा के तट पर हमेशा निवास करें और यह नर्मदा नदी भागीरथी गङ्गा के ही समान पापनाशक और पुण्यप्रद हो और इसके तट पर किया हुआ पुण्य, दान जप, तप, योग, यज्ञ, श्राद्ध ये सभी गङ्गा तट पर किये हुए के समान ही पुण्यफल प्रद हों। किसी भी प्रकार से न्यून फल देने वाले न हों और जिस प्रकार पुण्यप्रदा भागीरथी गङ्गा के तट पर जहाँ तहाँ अनेकों तीर्थों व ऋषि मुनियों का निवास है। इसी प्रकार इसके तट पर भी अनेक तीर्थों का निवास हो, अनेक ऋषि-मुनियों के आश्रम हों और इस नर्मदा नदी में जो भी कंकर-पत्थर हों वे आपके समान शंकर रूप हो जायें। जो उस पत्थर की शंकर (शिव) मानकर पूजा आराधना करे, उसको आपकी साक्षात् पूजन किये के समान फल प्राप्त हो। भगवान् शंकर ने तथास्तु कहा। बाणासुर ने अनेक प्रकार से गीत, नृत्य, वाद्यों द्वारा भगवान् शिव शंकर की स्तुति व आरती की और प्रदक्षिणा की। भगवान् शिवशंकर वहीं अनेक शिवलिंग रूपों में स्थित होकर अन्तर्धान हो गये, तब से ही पुण्य

सलिला नर्मदा गङ्गा के समान फलदायिनी हो गई और अनेक तीर्थ यहाँ आकर इसके तट पर वास करने लगे। अनेक ऋषि-मुनियों ने अपनी तपोभूमि बनाई, आश्रम बनाये, तपस्या की, उत्तम फल प्राप्त किये और इस वरदान के प्रभाव से नर्मदा में से पाषाणरूप शिव निकालकर लेजाने व पूजा करने का क्रम चला। सर्वप्रथम बाणासुर की पूजा तपस्या के प्रभाव से भगवान् शिवशंकर ने ऐसा होने का वरदान प्रदान किया इसीलिए यहाँ से लिये हुए नर्मदेश्वर शिवलिंग को बाणलिंग भी कहा जाता है।

पारद (पारा) द्वारा निर्मित शिव-लिंग की पूजा, उसकी फल सिद्धियाँ, माहात्म्य पारे (पारद) के नाम तथा उसकी उत्पत्ति के वर्णन अनेक ग्रन्थों में मिलते हैं। उनका संग्रह किया गया है। ग्रन्थों के नाम सहित कुछ मन्त्र, श्लोक कई विद्वानों, महात्माओं द्वारा भी प्राप्त हुए हैं। वह जिस प्रकार मिले हैं, शिवभक्तों के लाभार्थ यहाँ लिखे जाते हैं—

(१) योगशिखोपनिषद्

रसलिङ्गं महालिङ्गं शिवशक्तिनिकेतनम्।
लिङ्गं शिवालयं प्रोक्तं सिद्धिदं सर्वदेहिनाम्॥

रसलिङ्ग ही महालिङ्ग है और शिवशक्ति का घर है, इस लिङ्ग को ही शिवालय भी कहते हैं। सभी प्राणियों को इसमें सिद्धि मिलती है।

रसलिंगं परं ध्यानं विश्वात्महृदि संस्थितम्।

पारद निर्मित शिवलिंग का ध्यान ही विश्वात्म तेजस-स्वरूप-शिव का परम ध्यान है।

(योग १/४-५ श्लोक १६७-१६८)

(२) तैत्तिरीय उपनिषद्

यह पारद ही 'रस' कहा जाता है और रस 'ईश्वर' है।

'रसो वै सः। रसँ् ह्येवायं लब्ध्वाऽऽनन्दी भवति'।

(२//७१)

(३) सर्वदर्शनसंग्रह

भगवान् शंकर ने स्वयं भगवती पार्वती से कहा है—

(रसेश्वर दर्शनाध्याय पृ० २०४)

अभ्रकं तव बीजं तु मम बीजं तु पारदः।
बद्धो पारद लिङ्गोऽयं मृत्यु दारिद्र्य नाशनम् ॥

प्रक्रियायोग व सिद्धयोगों से इस पारद की तीन अवस्थाएँ होती हैं-मूर्च्छित, मृत, बद्ध।

कर्मयोगेन देवर्षि प्राप्यते पिण्डधारणम्।
रसश्च पवनश्चेति कर्मयोगो द्विधा स्मृतः॥
मूर्च्छितो हरते व्याधिं मृतो जीवयति स्वयम्।
बद्धः खेचरतां कुर्याद् रसो वायुश्च भैरवि॥

(१/१८, १९)

पारद को घनता और चाञ्चल्य रहित कर देने पर मूर्च्छित कहलाता है। आर्द्रता और गुरुता (भारीपन) रहित कर देने पर पारद मृत हो जाता है अर्थात् उसका मारण हो जाता है जिसमें रंग पारद (पारे) का होता है वैसा ही श्वेत रहता है, गुरुता (भारीपन) भी वैसी ही रहती है। चाञ्चल्यरहित होकर ठोस चाँदी धातु सदृश हो जाता है। आर्द्रतानहीं रहती। यह बद्ध-पारद कहा जाता है।

मूर्च्छित पारद व्याधियों का शमन करता है, मारण किया हुआ जीवन प्रदान करता है, बद्ध पारद (बँधा हुआ) सांसारिक

कार्यों से ऊँचा उठने की शक्ति (आकाशगमन) तथा ऐसी ही अन्य दिव्य शक्तियाँ प्राप्त करने की सामर्थ्य प्रदान करता है।

यहाँ इस श्लोक में 'वायुश्च भैरवि' शब्द जो आया हैं, यह वायु सम्बन्धित प्रयोग के लिए है जो इस श्लोक से आगे के श्लोकों में विवेचन है। उसका इस पारद पूजा माहात्म्य सम्बन्धित:प्रयोग से भिन्न विषय है।

(४) रसरत्नसमुच्चय

सर्वदर्शन संग्रह के श्लोक (१९) की तरह इसमें भी लिखा है--

मूर्च्छित्वा हरति रुजं बन्धनमनुभूय मुक्तिदो भवति।
अमरीकरोति हि मृतः कोऽन्यः करुणाकरः सूतात् ॥ ८ ॥
(रसरत्न समुच्चय १/३३)

रसरत्न समुच्चय में और भी लिखा है--

विधाय रसलिङ्गयो भक्तियुक्तः समर्चयेत्।
जगत्त्रितयलिङ्गानां पूजाफलमवाप्नुयात् ॥२३॥
भक्षणम् स्पर्शनं दानं ध्यानं च परिपूजनं।
पञ्चधा रसपूजोक्ता महापातकनाशिनी ॥२४॥

यदि कोई पारद का लिङ्ग निर्माण कर भक्तिपूर्वक अर्चना करता है, तो उसको तीनों लोकों में स्थित शिव-लिङ्ग पूजन का फल प्राप्त होता है। जो इसकी अर्चना, भक्षण, स्पर्श, दान, ध्यान और पूजन के रूप में करता है, उसके समस्त महापाप नष्ट होते हैं। यहाँ भक्षण का अर्थ किसी औषधि विशेष के रूप में खाना होता है या इस पर चढ़ाया हुआ प्रसाद ग्रहण करने का अर्थ है। रसोत्पत्ति (पारद की उत्पत्ति) पुराणादि में शिव की दाम्पत्य-लीलाओं के प्रसंग में कही गई है।

पारद के नामभेद इस प्रकार कहे गये हैं—

रसों रसेन्द्रः सूतश्च पारदो मिश्रदस्तथा ।
इति पञ्चविधों जातः क्षेत्रभेदेन शंभुजः ।।६७।।

शंभृज के क्षेत्र भेद के कारण रस, रसेन्द्र, सूत, पारद, मिश्रद, ये पांच भेद (प्रकार) हुये ।

(५) रसकामधेनु

रसकामधेनु ग्रन्थ में इस प्रकार कहा गया है—

त्वं माता सर्वभूतानां पिता चाहं सनातनः ।
द्वयोश्चैव रसों देवि महा मैथुनसंभवः ।।
स्वेरतः शाम्भवं देवि पारदः कीर्तितो मया ।

श्री शिवजी पार्वती जी से कहते हैं कि तू तो सर्व प्राणियों की माता है, और मैं हमेशा से पिता हूँ । अपन दोनों से यह प्राप्त हुआ है । इसको पारद कहते हैं ।

पारद के नाम इस प्रकार कहे गये हैं ।

पारदः पारतः सूतो रसेन्द्रश्च महारसः ।
शिववीर्यञ्च शिवजस्त्रिनेत्रः स्वर्णकारकम् ।।
रसलोहं च चपलो रसराजो रसोत्तमः ।
मुकन्दः स्याद्वीर्यनिधिः सर्वधातुपतिः स्मृतः ।।

पारद, पारत, सूत, रसेन्द्र, महारस, शिववीर्य, शिवज, त्रिनेत्र, स्वर्णकारक, रसलोह, चपल, रसराज, रसोत्तम, मुकन्दः, वीर्यनिधि और सर्वधातुपति नाम पारद के कहे गये हैं ।

(६) रससंकेतकलिका

स्कन्दा तारक हिंसार्थं कैलासे विधृतं सुरैः ।
रेतः शम्भोः स्रुतः तच्च गृहीत्वा वह्निना मुखे ।।
क्षिप्तं तेन चतुर्दिक्षु क्षीराब्धौ तत्पृथक् पृथक् ।

सौम्यादि दिक् त्रयस्थं यद्गौरी शापान्न कार्यकृत ।।
पश्चिमायां विमुक्तं यत् सुतोऽभूत्सर्व कार्यकृत ।

तारकासुर को मारने के लिये देवताओं ने शम्भु के पराक्रम का आश्रय लिया। उसी को अग्नि ने मुख में धारण किया, फिर चारों दिशाओं में समुद्र में फेंका। तीन दिशाओं में फेंका हुआ, श्री पार्वती जी के शाप से काम करने वाला नहीं रहा पश्चिम में छोड़ा हुआ सर्वकार्यकर्त्ता है।

(७) रसतरङ्गिणी

पारद के नाम इस प्रकार कहे गये हैं।

रसो रसेन्द्रः सूतश्च रसेशश्च रसेश्वरः ।
चपलो रसराजश्च पारदश्च शिवाह्वयः ।।

रस, रसेन्द्र, सूत, रसेश, रसेश्वर, चपल, रसराज, पारद, शिवाह्वय नाम पारद के हैं।

(८) रसार्णव तंत्र

पारद की उत्पत्ति, नाम, गुण आदि इस प्रकार कहे गये हैं।

पारदो गदितो यश्च परार्थसाधकोत्तमैः ।
सूतोऽयं यत्समो देवि मम प्रत्यङ्गसंभवः ।।
ममदेहरसो यस्माद्रसस्तेनायमुच्यते ।

स्वयं महादेव जी का कथन है।

परार्थ सिद्धि देने वालों ने पारद बतलाया है, वह मेरे अङ्ग द्वारा उत्पन्न हुआ है। मेरे देह (शरीर) का सारभूत है। अतः इसे रस कहते हैं।

रसो रसेन्द्रः सूतश्च पारदश्चाथ मिश्रदः ।
एवं पञ्चविधो देवि रसेन्द्रस्तु निरूपितः ।।

रस, रसेन्द्र, सूत, पारद तथा मिश्रद यह पाँच नाम रसेन्द्र (पारद) के कहे गये हैं।

धर्मार्थकाममोक्षाख्या पुरुषार्थश्चतुर्विधाः।
सिध्यन्ति नात्र संदेहो रसराजप्रसादतः ॥

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूपी चारों प्रकार के पुरुषार्थों की सिद्धि रसराज (पारद) के प्रसाद से होती है। इसमें कोई संदेह नहीं है।

स्वयम्भू लिङ्ग-सहस्रैर्यत्फलं सम्यगर्चनात् ।
तत्फलं कोटिगुणितं रसलिङ्गार्चनाद्भवेत् ॥

हजारों स्वयम्भू लिङ्गों की पूजा से जो फल मिलता है, उससे करोड़ गुणा पारद द्वारा निर्मित शिव लिङ्ग की पूजा से फल प्राप्त होता है।

संसारस्य परं पारं दत्तेऽसौ पारदः स्मृतः।

इस संसार रूपी सागर को पार करा देने की सामर्थ्य पारद में ही है। अतएव यह पारद कहलाता है। पारद की उत्पत्ति, नाम, धर्म का पर्याप्त वर्णन हो चुका, स्थानाभाव से अधिक लिखना उचित न होगा। पारद (पारा) के शिवलिङ्ग के पूजन, दर्शन, स्पर्श, फल तथा माहात्म्य का वर्णन जिस प्रकार ग्रन्थों में और मिलता है वह भी लिखा जाता है।

(६) शिवभक्तिविलास

पापानलस्य दीप्तस्य मा कुर्वन्तु भयं नराः।
रसेश्वरनाममेघौघैर्नश्यते नीरबिन्दुभि ॥

तपते हुए पापानल को देख कर (याने चिन्ताओं से रात-दिन दुःख पाकर) भयभीत न होइये। हे मनुष्यों मेघ जल समूह से जिस प्रकार अग्नि शान्त हो जाती है, इसी प्रकार रसेश्वर (पारद लिङ्ग)

की पूजा व नाम जपादि से पाप (ताप) दुःख, चिन्ता नष्ट व शान्त हो जायेंगे।

(१०) शिवनिर्णयरत्नाकर

मृदः कोटिगुणं स्वर्णं, स्वर्णात्कोटि गुणं मणिः।
मणेः कोटिगुणं बाणो, बाणात्कोटिगुणं रसः॥
रसात्परतरं लिङ्गं न भूतं न भविष्यति।

मिट्टी पत्थरादि से करोड़ गुणा अधिक गुण स्वर्ण में और स्वर्ण से करोड़ गुणा अधिक मणि आदि रत्नों में और मणि आदि रत्नों से करोड़ गुणा अधिक बाण में (बाणलिङ्ग नर्मदेश्वर को ही कहा गया है) और बाण से करोड़ गुणा अधिक गुण पारद में है। पारद से अधिक गुण वाला पदार्थ (जिसका शिव-लिङ्ग निर्माण हो।) न संसार में हुआ न हो सकता है।

बद्धो पारदार्थदः अर्थात् बँधा हुआ पारद (शिव-लिङ्ग) धन का वाला देने है। (शिव-निर्माल्य-रत्नाकर)

(११) रसमार्तण्ड

लिङ्ग कोटि सहस्रस्य यत्फलं सम्यगर्चनात्।
तत्फलं कोटिगुणित रसलिंगार्चनाद् भवेत्॥
ब्रह्महत्यासहस्राणि गोहत्याशतानिच।
तत्क्षणाद्विलयं यान्ति रसलिङ्गस्य दर्शनात्॥
स्पर्शना प्राप्यते मुक्तिरिति सत्यं शिवोदितम्।

हजारों करोड़ शिव-लिङ्गों की सर्व प्रकार पूजा करने से जो फल प्राप्त होता है, उससे भी करोड़ गुणा फल रसलिङ्ग (पारदलिङ्ग) की पूजा से प्राप्त होता है। हजारों ब्रह्महत्याओं, सैंकड़ों गोहत्याओं का किया हुआ पाप भी रसलिङ्ग (पारद लिङ्ग) के दर्शन करते ही दूर हो जाता है। स्पर्श करने से मुक्ति प्राप्त होती है, यह स्वयं भगवान् शिव का कथन है।

(११) रसमञ्जरी

हरति सकल रोगान्मूर्च्छितो यो नराणां
विसरति किलबद्धः खेचरत्वं जवेन।
सकलसुरमुनीन्द्रैर्वन्दितं शंभुबीजं
स जयति भवसिन्धोः पारदः पारदोऽयम् ॥

मूर्च्छित क्रिया हुआ पारद (पारा) मनुष्यों के समस्त रोगों को दूर करता है। बँधा हुआ पारद (पार) आकाश में गमन करने की शक्ति प्रदान करता है। यह पारद (पारा) भगवान् शिव का वीर्य (बीज) है। इसकी सभी देवताओं, मुनियों तथा इन्द्र ने भी वन्दना (अर्चना) की है। यह पारद (पारा) संसार रूपी सागर से पार कर देता है, इसीलिए इसको पारद कहा गया है।

(१३) ब्रह्म-पुराण

धन्यास्ते पुरुषा लोके येऽर्चयन्ति रसेश्वरम्।
सर्वपापहरं देवं सर्वकामफलप्रदम् ॥१३॥
ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्या स्त्रियःशूद्रान्त्यजादयः।
सम्पूज्य तं सुरवरं प्राप्नुवन्ति परां गतिम् ॥१४॥

संसार में वे मनुष्य धन्य हैं, जो समस्त मनोवाञ्छित फलों के देने वाले सर्वपापहारी रसेश्वर (पारद निर्मित शिव-लिङ्ग) का सर्वदा (हमेशा) पूजन करते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, स्त्री और अन्त्यज आदि सभी सुर श्रेष्ठ इस भगवान् शिव का पूजन करके परम गति को प्राप्त होते हैं।

(१४) ब्रह्मवैवर्त पुराण

त्वत्परो नास्ति मे प्रेयास्त्वं मदीयात्मनः परः।
ये त्वां निन्दन्ति पापिष्ठाः ज्ञानहीना विचेतसः।

पच्यते कालसूत्रेण यावच्चन्द्रदिवाकरौ ।
कृत्वा लिङ्गं सकृत्पूज्य वसेत्कल्पशतं दिवि ॥
प्रजावान् भूमिवान् विद्वान् पुत्रबान्धववाँस्तथा ।
ज्ञानवान् मुक्तिमान् साधुः रसलिङ्गार्चनाद् भवेत् ॥
शिवेति शब्दमुच्चार्य प्राणाँस्त्यजति यो नरः ।
कोटिजन्मार्जितात् पापान्मुक्तो मुक्ति प्रयाति सः ॥

(ब्रह्मवैवर्त प्र० ६ श्लोक ३१/३२/४:/४७)

इसमें भगवान् श्री कृष्ण ने भगवान् शंकर से कहा है।

मुझे आपसे बढ़कर कोई प्यारा नहीं है। मुझे आप अपनी आत्मा से भी अधिक प्रिय हैं। जो पापी अज्ञानी एवं बुद्धिहीन पुरुष आपकी निन्दा करते हैं। वे जब तक चन्द्र और सूर्य का अस्तित्व रहेगा तब तक कालसूत्र में (नरक में) पचते रहेंगे। जो शिव के रस लिङ्ग (पारद लिङ्ग) निर्माण कर एक बार भी इसकी पूजा कर लेता है, वह दस हजार कल्प तक स्वर्ग में निवास करता है। रसलिङ्ग (पारद लिङ्ग) की अर्चना से मनुष्य प्रजा, भूमि, विद्या, पुत्र, बान्धव, श्रेष्ठता, ज्ञान एवं मुक्ति सब कुछ प्राप्त कर लेता है। जो मनुष्य 'शिव' शब्द का उच्चारण कर शरीर छोड़ता है, वह करोड़ों जन्मों के पापों से छूट कर मुक्ति को प्राप्त हो जाता है।

(१५) शिवपुराण

गोघ्नश्चैव कृतघ्नश्च वीरहा भ्रूणहापि वा ।
शरणागतघाती च मित्र विश्रम्भघातकः ॥
दुष्टपापसमाचारो मातृपितृहापि वा ।
अर्चनात् रसलिङ्गेन तत्तत्पापात् प्रमुच्यते ॥

(वायवीय संहिता श्लोक १८३, १८४)

गोहत्यारा, कृतघ्न, वीरघाती, गर्भस्थ शिशु की हत्या करने वाला, तथा माता-पिता का घातक, रसलिङ्ग (पारद निर्मित शिव-लिङ्ग) की पूजन करने वाला तत्काल पाप मुक्त हो जाता है।

दुःस्वप्नादि महानर्थसूचकेषु भवेषु च।
दर्शनात् पारदलिङ्गोऽयं ततोऽनर्थ भाग्भवेत्॥

(वायवीय संहिता श्लोक १८५)

दुःस्वप्न आदि महान् अनर्थ सूचक भ्रमों के उपस्थित होने पर, यदि मनुष्य पारद निर्मित शिवलिङ्गों का दर्शन करे, तो वह कभी भी अनर्थ का भागी नहीं हो सकता।

आयुरारोग्यमैश्वर्यं यच्चान्यदपि वाञ्छितम्।
रसलिङ्गस्यार्चनादिष्टं सर्वं लभते नरः॥

(वायवीय संहिता श्लोक १८६)

आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य तथा और जो भी मनोवांछित वस्तु हैं उन सबको रसलिंग (पारदलिङ्ग) की पूजा अर्चना में लगा रहने वाला पुरुष प्राप्त कर लेता है।

शिवपुराण विद्येश्वर संहिता में भी बहुत माहात्म्य लिखा है, पाठ बड़ा होने से श्लोक न देकर, सारांश ही दर्शाते हैं।

रसलिंग (पारदलिङ्ग) ब्राह्मणों को उनकी अभीष्ट वस्तु प्रदान करने में सर्वोत्तम है और चरलिंगों में (लेकर चलने वाले शिवलिंगों में) सर्वोच्चतम रसलिंग को मानकर सर्वप्रथम इसी का वर्णन किया गया है और इसके पूजा अर्चना का ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, अन्त्यज, स्त्री–पुरुष सभी को समान अधिकार है और सभी के लिए सर्वोत्तम फल प्रदान करने वाला कहा गया है।

(शिवपुराण, विद्येश्वर संहिता अध्याय १८ का सारांश)

(१६) स्फुट श्लोक

स्वयम्भूलिङ्गसाहस्रैर्यत्फलं सम्यगर्चनात्।
तत्फलं कोटिगुणितं रसलिङ्गार्चनाद्भवेत्॥

हजारों स्वयम्भू लिंगों के पूजन से करोड़ गुणा फल केवल रसलिंग (पारदलिंग) के पूजन से प्राप्त होता है ।

दोषहीनो भवेद्ब्रह्मा मूर्च्छितस्तु जनार्दनः ।
मारितो रुद्ररूपी स्याद्बद्धः साक्षात् सदाशिवः ॥

दोषरहित (शुद्ध) पारद ब्रह्मा के समान उत्पत्ति कर्त्ता, मूर्च्छित पारद विष्णु के समान पालनकर्त्ता, मारण किया हुआ पारद रुद्र के समान उग्र गुणों वाला तथा बन्धित किया हुआ पारद भगवान् शिव का रूप है ।

दर्शनात्स्पर्शनाच्चस्य भक्षणात्स्मरणादपि ।
पूजनाच्च प्रदानाच्च दृश्यते षड्विधं फलम् ॥

इसके दर्शस से, स्पर्श से, भक्षण से, स्मरण से, पूजन से, दान से, छहों प्रकार से फल देखने में आते हैं ।

(१७) कल्याण मासिकपत्र

पारद द्वारा निर्मित शिव-लिंग मात्र की पूजा में पार्वती-परमेश्वर दोनों की पूजा हो जाती है । लिंग के मूल में ब्रह्मा, मध्य देश में त्रिलोकीनाथ विष्णु, और ऊपर प्रणवाख्य (ॐ रूप) महादेव स्थित हैं । वेदी महादेवी है और लिंग महादेव हैं । अतः एक लिंग की पूजा में सबकी पूजा हो जाती है (—लिंगपुराण) । पारद के लिंग का सबसे अधिक माहात्म्य है । पारद-शब्द में प–विष्णु, आ-कालिका, र-शिव, द–ब्रह्मा, इस प्रकार सभी मौजूद हैं । पारद से निर्मित लिंग की पूजा से, जो जीवन में एक बार भी की जावे तो धन, ज्ञान, सिद्धि और ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं ।

(शिवपुराण विशेषांक पृष्ठ–६०७–८)

पारद द्वारा निर्मित शिवलिंग की पूजा से महान ऐश्वर्य प्राप्त होता है—

(शिवपुराण विशेषांक पृष्ठ ६२२)

(१८) शिवपूजनशिरोमणि

सोमनाथ, मल्लिकार्जुन, महाकाल, ओंकार-ममलेश्वर, केदारनाथ, भीमशंकर, काशी विश्वनाथ, त्र्यम्बकेश्वर, नागेश, सेतुबन्ध-रामेश्वर, घुश्मेश। भारत में ये द्वादश ज्योतिर्लिंग भगवान् शंकर के सिद्ध पीठ स्थान हैं। इन सबके दर्शन-पूजन से जो फल प्राप्त होता है वह सब प्रकार का फल बंधे हुए पारद (पारे) के निर्मित श्वेत चमत्कृत शिवलिंग का दर्शन-पूजन केवल एक बार करने से ही प्राप्त हो जाता है। पारद भगवान् आशुतोष (शंकर) का प्रत्यक्ष स्वरूप है।

पारद (पारे) का आर्द्रतारहित और निश्चल छिन्नपक्ष रहित होकर ठोस रौप्य (चाँदी) धातुवत् श्वेत लिंगाकार होना महान् दुर्लभ है। जिस किसी पर भगवान् शिव इस प्रकार की कृपा करें कि जो ऐसा करने की सामर्थ्य प्राप्त करले और उसके दर्शन-पूजन करले, तो उसके लिये यह लौकिक और पारलौकिक भगवत्पूजन, आराधना, दान, धर्म, पुण्य, यज्ञ करना कुछ भी अवशेष नहीं रहता है; किन्तु यह सब इस प्रकार भगवान् शंकर की असीम कृपा तथा पूर्वजन्म के पुण्यों द्वारा ही हो सकता है। जिसने यह ऐसा कर्म, मन, वचन, शरीर द्वारा सम्पन्न कर लिया, वह मनुष्य स्वयं शिवस्वरूप हो जाता है।

जो मनुष्य शरीरधारी पारद का बन्धन कर लेता है, उसके भगवान् शिव स्वयं ही वश में हो जाते हैं। ऐसा मनुष्य सब कुछ करने में समर्थ होता है। यह भगवान् शिव की पूर्ण कृपा का फल है।

(१९) सार संक्षेप प्रमाण

एक विद्वान् महात्मा द्वारा प्राप्त—

(१) तत्र गङ्गा च यमुना च तत्र प्राचो सरस्वती।
यत्र रसेश्वरो देवस्तत्र या मा मृतं कृधीन्द्रायेन्दो परि स्रव॥

(ऋक् परिशिष्ठ)

उसी स्थान में गङ्गा यमुना तथा पूर्वाभिमुख बहने वाली सरस्वती हैं, जहाँ रसेश्वर (पारद शिवलिंग) है, वहीं (उसी स्थान पर) मुझको आप अमृत (मुक्ति) प्रदान करें ।

(२) पूजां रसेश्वरस्यापि नित्यं भवति यद्ग्रहे ।
तद्गृहं तीर्थरूपं हि वसतां पापनाशनम् ।।

जिस घर में नित्य रसेश्वर (पारद निर्मित शिव) की पूजा होती है, वह घर भी तीर्थ रूप ही है तथा उसमें रहने वालों क सभी पाप नष्ट हो जाते हैं ।

(३) सर्वेषामेव यज्ञानां लक्षाणि च व्रतानि च ।
तीर्थस्नानानि सर्वाणि तपांस्यनशनानि च ।
वेदपाठसहस्राणि प्रादाक्षिण्यं भुवः शतम् ।
शिववीर्यार्चनाचस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ।।

समस्त यज्ञ, लाखों व्रत, सम्पूर्ण तीर्थों का स्नान, सब प्रकार का तप, अनशनादिव्रत, सहस्रों वेदपाठ, पृथ्वी की सौ परिक्रमाएँ, ये सब शिववीर्य (पारद निर्मित शिवलिङ्ग) की अर्चना करने की तुलना में सोलहवीं कला के बराबर भी नहीं हैं ।

(४) यौवनं धनमायुष्यं पद्मिनीजलबिन्दुवत् ।
अतीव चपलं ज्ञात्वा रसमेकं समाश्रयेत् ।।

यौवन, धन व आयु कमल पर पड़ी हुई जल की बून्द के समान अत्यन्त चञ्चल हैं। यह जान कर एक मात्र रस (पारद निर्मित शिव-लिंग) का ही भली भाँति आश्रय लेना चाहिये ।

(५) जन्मान्तरसहस्रेषु, तपोज्ञानसमाधिभिः ।
नराणां क्षीणपापानां, रसे पूजां प्रजायते ।।

हजारों जन्मों तक जिन्होंने तप ज्ञान समाधि द्वारा अपने पापों को क्षीणकर लिया है, उनको ही रस (पारद निर्मित शिव-लिंग) की पूजा का सौभाग्य प्राप्त होता है ।

(२०) कल्याण मासिक पत्र

शिवलिंग मूर्ति का अंडाकार होना और पारद निर्मित, श्वेत वर्ण होना, क्यों अत्युत्तम महत्वपूर्ण कहा गया ? इस विषय को इस मासिक पत्र में स्पष्ट, विस्तृत रूप से सिद्ध किया है, उसका सारांश निम्न प्रकार है—

ब्रह्माण्ड व ब्रह्माण्ड के सभी अंश लोक शिवलिंगाकार ही माने गये हैं। वेद, उपनिषद्, पुराणादि सभी धर्म शास्त्रों में सात लोक होना माना गया है। इन सातों लोकों में सर्वोपरि स्वयम्भू-मण्डल प्रकाश मय श्वेतवर्ण है। इसी को रुद्रमण्डल नाम से कहा गया है। यही मण्डल सर्वव्यापक होने से ईश्वर का रूप कहा गया है। यह प्रकाशमय श्वेतवर्ण होने से ही शिव-मूर्ति का श्वेत वर्ण युक्ति-युक्त व वास्तविक स्वरूप माना गया है। भगवान् शिव की प्रार्थना में आया है—

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पोज्ज्वलांगं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् ।
पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं
विश्वाद्यं विश्वबीजं निखिलभयहरं पंचवक्त्रं त्रिनेत्रम् ।।

इस शिव ध्यान प्रार्थना में जो पद रत्नाकल्पोज्ज्वलांगम् आया है इसका अभिप्रायः भी इस प्रकार है ! व्यापक ईश्वर चेतन अर्थात् ज्ञानरूप है और ज्ञान का नाम ही प्रकाश है। प्रकाश का अर्थ व स्वरूप श्वेत ही है। अतः इसका वास्तविक स्वरूप श्वेत है। और पारद (रस) श्वेत ही है अतः पारद निर्मित श्वेतलिंग अत्युत्तम और महत्त्वपूर्ण व वास्तविक शिव स्वरूप है।

(कल्याण मासिक पत्र, कृष्णांक परिशिष्टाङ्क पृष्ठ ५३६,५३७)

शिवलिंग का निर्माण व पूजन विधान जिस प्रकार ग्रन्थों में मिलता है, उसी प्रकार से उन पदार्थों द्वारा निर्माण व पूजन विधि

यथास्थान अलग से इसी पुस्तक में लिखी गई हैं। साधारणतः पारद (पारा) का शिवलिंग भी दाहिने हाथ के अंगूठे के ऊपर वाले पोरवे के बराबर होना चाहिये। यदि बड़ा बनाने की शक्ति सामर्थ्य हो तो दाहिने हाथ के अंगूठे के बराबर प्रमाण का निर्माण कर सकते हैं, इससे बड़ा गृहस्थी के लिए घर में रखकर पूजन योग्य नहीं कहा है। बड़े की पूजा विरक्त साधु उदासीनों के लिए कही गई है या मन्दिर, शिवालय में बड़ा स्थापित होने पर सभी पूजन कर सकते हैं। इस विषय में यह भी कहा गया है कि स्वर्ण रजत (चांदी), रत्न, मणि, रस (पारद) निर्मित शिवलिंग जैसा निर्माण करने की सामर्थ्य हो, इतना ही छोटा-बड़ा निर्माण कर पूजन, दर्शन, स्पर्श करना योग्य है, इससे किसी प्रकार की शंका न करें।

शिवलिङ्ग जितने प्रमाण का हो वेदी उससे दुगने प्रमाण की होनी चाहिये और योनिपीठ आधा भाग शिवलिङ्ग के बराबर होना चाहिये। योनिपीठ रहित या मस्तकादि गोलाई रहित लिंग-निर्माण करना या पूजनादि करना अशुभ माना है। लिंग सुलक्षण, गोलाईदार, अण्डाकार, सुन्दर होना चाहिये। अलक्षण, अमङ्गलकारी होता है। शिवलिंग की पूजा में ब्रह्मा, विष्णु, महादेव के रूप में तीनों का स्थित होना और वेदी के रूप में महादेवी (पार्वती जी) का स्थित होना माना गया है। इस प्रकार शिवलिंग जो वेदी पर स्थित हो, उसकी पूजा करने से इन सबकी पूजा हो जाती है। वेदी या तो पारद (पारा) की ही निर्मित होना चाहिये सोने, चाँदी, पीतल की निर्मित होना चाहिये। उस पर स्थापित करके पूजा करना चाहिये। पारद निर्मित शिवलिंग के लिये यदि सोने (स्वर्ण) की वेदी निर्माण करना हो तो यह ध्यान में रखने की बात है कि वेदी का जिसमें आधा भाग शिवलिंग स्थापित किया जाता है, उसके अन्दर का भाग चाँदी द्वारा निर्मित और रखेंगे नहीं तो पारद (पारा) निर्मित शिवलिङ्ग उस सोने (स्वर्ण) के स्थान को जहाँ पारा स्पर्श करता रहेगा, वह श्वेत चाँदी सदृश हो

जायेगा और धीरे-धीरे पारा सोने (स्वर्ण) को समाप्त कर देगा। सोना (स्वर्ण) को पारद खा जाता है। इसलिये यह चेतावनी के रूप में दर्शाया गया है।

सोपान
(१४)

भगवान् शिव की मनुष्याकार में मान्यता

भगवान् शिव का किसी पञ्चतत्त्वधारी शरीर द्वारा पञ्च तत्त्व शरीर रूप में जन्म लेने का वृतान्त कहीं किसी ग्रन्थों में दृष्टिगोचर नहीं होता, किन्तु कितने ही स्थानों में भगवान् शिव की मनुष्याकार मूर्ति (प्रतिमा) स्थापित हैं और उनकी मान्यता, पूजा शिव-लिङ्गाकार मूर्तियों (प्रतिमाओं) के समान ही की जाती है।

वेद, पुराणादि अनेक धर्मशास्त्रों में ईश्वर का दो भावों में वर्णन मिलता है, वैज्ञानिक रूप से और मनुष्याकार से। वे मनुष्याकार ईश्वर के सगुण रूप या अवतार कहे जाते हैं। वैज्ञानिक निरूपण में और इन मनुष्याकारधारी ईश्वर रूपों के चरित्रों में आश्चर्यजनक सादृश्य (समानता) देखी जाती है। अतः एव इन आर्य-शास्त्रों का विश्वास है कि उपासकों पर अनुग्रह (कृपा) करके ही ईश्वर मनुष्याकार रूप धारण करता है। जयपुर (राजस्थान) निवासी विश्व विख्यात् वेद-वेदान्त के महाविद्वान् स्वर्गीय गुरुवर्य्य श्री-मधुसूदन जी ओझा विद्यावाचस्पति के 'देवासुर ख्याति' 'अत्रि-ख्याति' तथा 'इन्द्र विजय' आदि ग्रन्थों में निरूपण किया गया है कि पृथ्वी में भी एक त्रिलोकी है।

करणावत-पर्वत-जिससे इरावती नदी निकलती है, के उत्तर का प्रदेश भू-स्वर्ग (त्रिविष्टप) कहलाता है। उसके 'इन्द्र विष्टप' 'विष्णु विष्टप' तथा 'ब्रह्म विष्टप' आदि अनेक विभाग हैं जिनका वर्णन पुराणादि अनेक ग्रन्थों में अनेक स्थलों में आता है।

प्राचीन आर्य-सभ्यता के प्राधान्य काल में इस प्रदेश में सब वैज्ञानिकता देवताओं के समान ही प्रचलित थी। अस्तु इस अप्रकृत विषय का यहाँ अधिक विस्तार न करके यही कहना पर्याप्त होगा कि इन ग्रन्थों के आधार पर भगवान् शंकर का एक रूप मनुष्याकार में भी है।

यह लक्ष्यालक्ष्य रूप है, कभी किसी कार्य काल में प्रकट होता है और कभी अलक्षित रहता है। इस प्रकार के वर्णन भी लगभग सभी पुराण-शास्त्रों में अनेक चरित्रों के रूप में लिखे मिलते हैं। इसे ही शिव-अवतार कहा जा सकता है।

समय समय पर इन शंकर भगवान् की तीन स्थानों पर स्थिति कही गई है। प्रथम भद्रवट स्थान में जो कि कैलास पर्वत से पूर्व की ओर लौहित्य गिरि पर्वत के ऊपर है, ब्रह्म पुत्रा नदी उसके नीचे होकर बहती है। दूसरा स्थान कैलास पर्वत पर होने का वर्णन मिलता है और तीसरा मूँजवान् पर्वत पर कहा गया है।

इन भगवान् शिव के गण, भूत, प्रेतादि का निवास हिमालय और हेमकूट पर्वत के दर्रों में बतलाया गया है।

ये भगवान् शिवशंकर पूर्ण वैराग्यरत, आत्मसंयमी हैं। काशी खण्ड में एक कथा आती है कि इन भगवान् शिवशंकर ने अपना समस्त राज्य मानसरोवर पर भगवान् विष्णु को प्रदान कर दिया और स्वयं विरक्त होकर एकान्त में रहने लग गये।

देवताओं के कार्यों के लिए जैसे स्वामी कार्तिकेय की उत्पत्ति के लिए, पार्वती से विवाह करने के लिए तथा त्रिपुरासुर का वध करने के लिये, इसी प्रकार से अन्यान्य कितने ही समयों पर देवताओं

की प्रार्थनाओं पर, भक्तों पर अनुग्रह करके प्रकट होते रहते हैं, जिनकी अनेक रोचक सुन्दर कथाएँ व दृष्टान्त मिलते हैं। जो आर्य सभ्यता के युग में पदार्थ विज्ञान का अद्भुत महत्त्व प्रकट करने वाले प्रमाण हैं।

भगवान् शिव की पूजा आराधना शिवलिंग रूप में की जाती है तो मनुष्याकार में मूर्ति का निर्माण कर पूजना क्यों आवश्यक हुआ इसके विषय में धर्मशास्त्रों में और लिखा है।

अक्षरावगमलब्धये यथा स्थूलवर्तुलदृषत्परिग्रहः।
शुद्धबुद्धपरिलब्धये तथा दारुमृण्मयशिलामयार्चनम् ॥

अक्षरों का परिचय कराने के लिए जिस प्रकार छोटे-छोटे कंकर रखकर लड़कों को अक्षरों का आकार दिखलाने की क्रिया आवश्यक है इसी प्रकार से नित्य-शुद्ध-बुद्ध परब्रह्म का ज्ञान कराने के लिए लकड़ी, मिट्टी, पत्थर की :मूर्ति को स्वीकार करने की क्रिया भी आवश्यक है।

भगवान् शंकराचार्य ने कहा है—

'मुक्ताऽपि लीलया विग्रहादिकं कृत्वा भजन्ते।'

जीवन्मुक्त पुरुष भी (उदाहरण बन जाने से) क्रीड़ा रूप में प्रतीकोपासना करते हैं।

दर्शनोपनिषद् में लिखा है—

शिवमात्मनि पश्यन्ति प्रतिमासु न योगिनः।
अज्ञानां भावनार्थाय प्रतिमाः परिकल्पिताः ॥

योगी परमतत्त्व को आत्मा में देखते हैं, मूर्तियों में नहीं। मूर्तियों की कल्पना तो इसलिए की गई है कि अज्ञानी उसकी सहायता से ध्यान (ईश्वर में विश्वास बढ़ाकर और मन तथा आचरण पवित्र बनाकर परम प्रभु में एकाग्रनिष्ठा) कर सकें।

अतएव वेदधर्मशास्त्रपुराणादि में जो भगवान् शिव के स्वरूपों का ध्यान करने की आज्ञाएँ दी गई हैं, उन्हीं के अनुसार

भगवान् शिव का स्वरूप निर्णय कर मनुष्याकार मूर्तियाँ निर्मित कर पूजनअर्चनाध्यानादि क्रिये जाते हैं।

सोपान

(१५),(१६)
(१७),(१८)

महामृत्युञ्जययन्त्र
त्र्यक्षरी-शिवयंत्र
पंचाक्षरी-शिवयन्त्र
पंचाक्षरी-शिवायै यन्त्र

महामृत्युञ्जययन्त्रम्

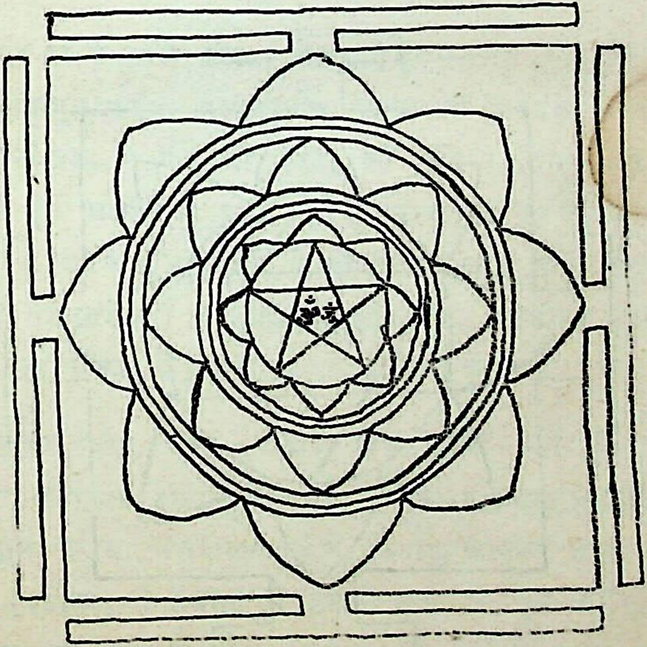

त्र्यक्षरीमृत्युञ्जययन्त्रम्

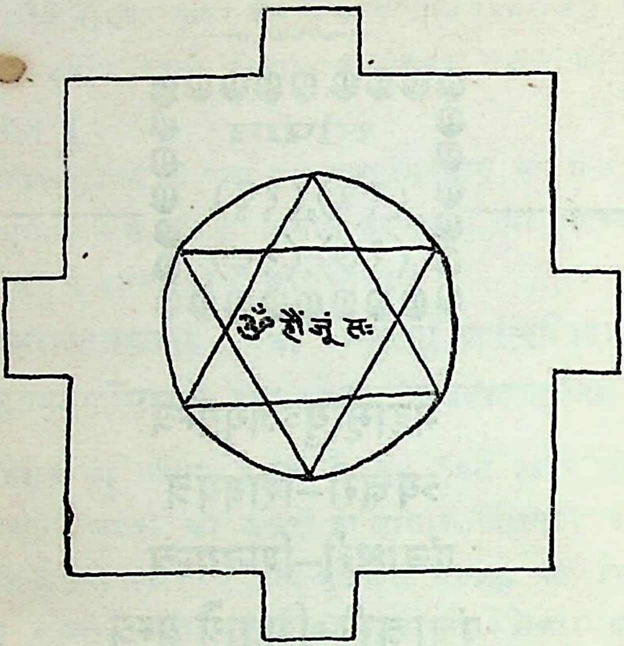

शिवपंचाक्षरीमंत्रप्रयोगावरणयन्त्रम्

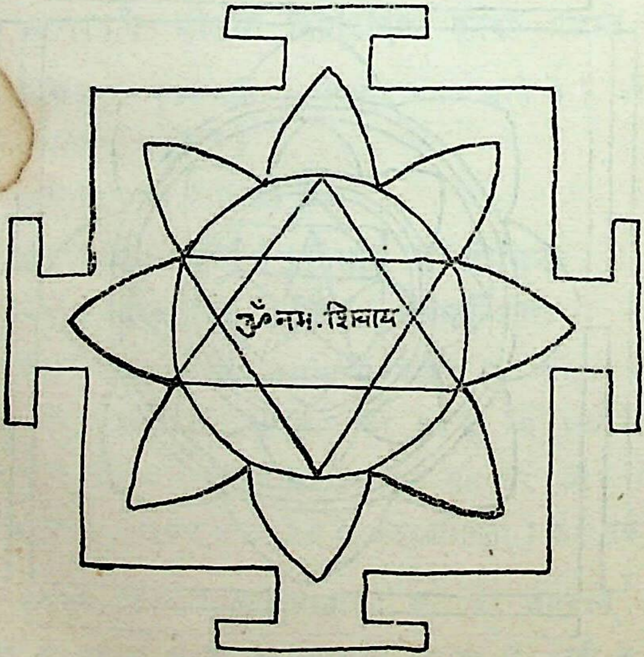

ॐनमःशिवायँ यन्त्रम्

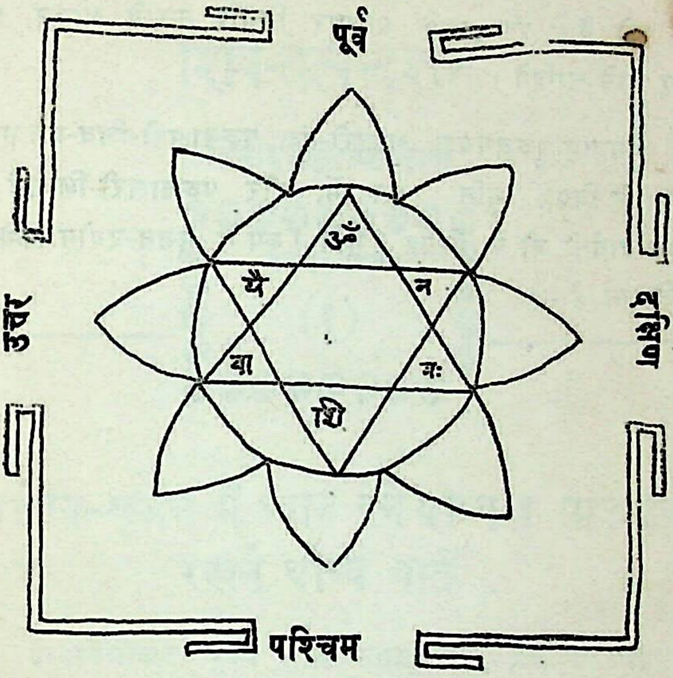

ऊपर १५ से १८ वें सोपान तक आये हुए—

महामृत्युञ्जययंत्र, त्र्यक्षरी-यंत्र, पञ्चाक्षरी-शिवयंत्र, पञ्चाक्षरी शिवायँ-यंत्र, ये यंत्र भी देवता की मूर्ति (प्रतिमा) समान ही कहे गये हैं। शास्त्रों में कहा गया है "यन्त्रात्मकं हि दैवतम्"। इन यंत्रों के विषय में बृहद्रूप से जो देखना चाहें उन्हें 'मन्त्र-महार्णव', 'शिवतरङ्ग,' 'यंत्रमहोदधि' ग्रन्थों का अवलोकन करना चाहिये। यहाँ संक्षिप्त में लिखने का प्रयास किया जाता है।

यह यंत्र स्वर्ण, रजत, (चाँदी) ताम्र, पीतल, आदि धातुओं के पत्रों पर कलाकार द्वारा शुभ मुहूर्त पुष्य नक्षत्र, अमृतसिद्धयोग, शुद्ध बलवान् चन्द्रमा, उत्तरायण सूर्य में निर्माण कराकर तत्पश्चात् देव मूर्ति (प्रतिमा) के समान ही इसकी प्रतिष्ठा शुभ मुहूर्त में 'प्रतिष्ठा-प्रकाश' ग्रन्थ के आधार पर कराकर इसकी पूजा करनी

चाहिए। इसकी पूजा की वे ही विधियाँ हैं, जो अन्य पूजा पद्धतियों में लिखी गई हैं। इन उपर्युक्त यंत्रों के चित्र भी प्रस्तुत पुस्तक में दिये गये हैं। यंत्र इनके अनुसार निर्माण कराये जाकर प्रयोग किए जाने चाहिये।

महामृत्युञ्जययंत्र. त्र्यक्षरी-यंत्र, पञ्चाक्षरी-शिव-यंत्र भगवान् शिव के विग्रह (मूर्ति , रूप में, और पञ्चाक्षरी-शिवायै यंत्र केवल पार्वती जी के विग्रह (मूर्ति) रूप में पूजन-प्रयोग किये जाने के विधान हैं।

।। ॐनमः शिवाय ।।

शिव-तत्व-दर्शन

द्वितीयनेत्रदृष्टिस्कन्ध

सोपान

(१)

श्री शिव–पूजन में ध्यान देने योग्य व सावधानी रखने योग्य बातें

ग्रन्थावलोकन, पूज्य सिद्ध महात्माओं, प्रकाण्ड विद्वानों के कथन व कुछ स्वानुभूत अनुभवों के आधार पर शिवपूजन में ध्यान देने व सावधानी रखने योग्य नियम पालने पर, शुभकामनायें शीघ्र फलदायक होती हैं। यह विषय भी बृहत् है किन्तु संक्षिप्त में कुछ परिचय करा देना उचित प्रतीत होता है।

सर्व प्रथम शरीर स्वस्थ व पवित्र हो। मन एकाग्र व शुद्ध भावनायुक्त हो। पूजार्थी के वस्त्र शुद्ध व पवित्र हों। पूजन-पात्र, आसन, माला, गोमुखी आदि भी शुद्ध साफ, पवित्र हों। फटे पुराने, टूटे फूटे, गन्दे नहीं होने चाहियें।

भगवान् शिव व माता पार्वती का उनके गणों सहित श्रद्धा, भक्ति भाव व शुद्ध एकाग्र मन से सभी का पूजन-नमन होना परमावश्यक है। श्रद्धा, भक्तिभाव व शुद्ध एकाग्र-बुद्धि व सबके प्रति नमन भाव के अभाव में सभी प्रकार के पूजा, दान, जप, पठन, यज्ञ, हवनादि निष्फल हो जाते हैं।

सभी प्रकार के देव-पूजन, आराधनादि में सर्व प्रथम श्री गणेश जी महाराज का पूजन परमावश्यक है।

देवताओं के अर्पण करने व चढ़ाये जाने वाले पदार्थ जहाँ तक हो सके नवीन, ताजा व समय के अनुसार ही होने चाहिये। स्वर्ण, रजत, रत्नादि के निर्मित आभूषण व अन्य धातु निर्मित सिंहासन छत्र पूजन पात्रादि जो मार्जन (मांजने) से शुद्ध, पवित्र व चमत्कृत हो सकते हैं उनको शुद्ध पवित्र चमत्कृत करके काम में प्रयुक्त किया जा सकता है। इन पदार्थों के अतिरिक्त कोई पदार्थ गला, सड़ा, पुराना, विकृत, टूटा फूटा या छोटा जो काम में ठीक जँचने वाला न हो, जिसका प्रचलन न हो, अच्छे भले मनुष्यों के उपयुक्त न हो, पूजार्थी (जो भगवान् के अर्पण करने वाला है) जिस वस्तु पदार्थ को स्वयं के अनुपयुक्त समझता हो, बेकार समझता हो, ऐसे कोई भी पदार्थ (द्रव्य) वस्त्र, आभूषण, बर्तन, नैवेद्य, पत्र, फल, इत्र, शृङ्गारप्रयुक्त सामग्री कभी काम में न लेवें, न भेंट करें।

जो वस्तुएँ अपवित्र स्थान में पैदा हुई हों, किसी अपवित्र वस्तु से स्पर्श की हुई हों, किसी अन्य के हिस्से (बाँटे) की हों, किसी से जबरन या छल छिद्र, चोरी आदि से प्राप्त की हुई हों ऐसी कोई भी वस्तु या पदार्थ देवार्पण में नहीं होना चाहिये।

देवताओं के चढ़ाये जाने वाले पदार्थ (वस्तु) शुद्ध, पवित्र, अपने परिश्रम की कमाई के द्रव्य (मूल्य) से खरीदे हुए व लाये हुए हों। अपने हक, बाँटे (हिस्से) के हों। अपने निकटस्थ परिजन माता, पिता, गुरु, पति, अफसर, मालिक, मित्र, भाई से या इनके समान ही अन्य किसी से प्रेम व प्यारपूर्वक प्राप्त किए हुए हों। पुत्र, बन्धु, शिष्य, स्त्री, (धर्मपत्नी) द्वारा भेंट में प्राप्त हुई वस्तु, द्रव्य हों, इस प्रकार के पदार्थ, द्रव्य देवताओं के अर्पण करने या ऐसे कार्यों में प्रयोग करने योग्य हैं।

नित्य प्रति पूजा करें तो श्रद्धा व जहाँ तक हो सके अपनी शक्ति के अनुसार भिन्न भिन्न समय सामर्थ्य के अनुसार द्रव्य, भेंट पदार्थ उस समय (मौसम) समयानुकूल पूजा में प्रयोग करने चाहिये और पूजन में समय भी जितना अधिक से अधिक सुलभ हो इतना लगाना चाहिये। अपनी सुलभता व सामर्थ्य अनुसार अधिकाधिक पूजा के दिन व समय नियत करना चाहिए। इसी प्रकार द्रव्य (धन) भी जहाँ तक हो सके सुलभतापूर्वक अधिक से अधिक खर्च करें किन्तु एक वर्ष में कम से कम चौबीस घण्टे का समय तो शुद्ध मन से एकाग्रतापूर्वक रहकर और उस समय की अपनी उस वर्ष की आमदनी (कमाई) का एक दिन का औसत द्रव्य कम से कम इस कार्य में भी खर्च करना ही चाहिये (यह तो कम से कम मनुष्य शरीर रूपधारी का कर रूप में चुकाना कर्त्तव्य ही है।) इसे ध्यान में रखकर अवश्य खर्च करें। यदि ऐसा नहीं करते हैं तो किसी न किसी रूप में दण्ड सहित अवश्य खर्च हो जाता है।

शास्त्रानुसार नित्य की होने वाली कमाई में दस प्रतिशत भाग देवताओं की पूजा व धर्मकार्य, परमार्थकार्य में लगाते रहना गृहस्थी के लिये बतलाया गया है। यदि मनुष्य अपनी पूरी कमाई गृहस्थ व अपने ही कार्यों में लगाता है और देव-पूजन व धर्मकार्य और परमार्थ में नहीं लगाता तो पापी की संज्ञा में गिना जाता है और इसी जन्म में या अगले जन्म में महान् दरिद्री भिक्षुक होकर दुःखी होता है। इससे भी अधिक और द्रव्य परमार्थ, देवपूजन, धर्म-कार्यों में मनुष्य खर्च करता है तो वह उसको दस गुना या इससे भी कई अधिक गुना होकर इस जन्म में या उसके पुनर्जन्म में उसे प्राप्त होता है।

उदाहरणार्थ—एक ही प्रकार का कार्य (पेशा) करने वाले, एक ही स्तर के शिक्षित वर्ग को ध्यान से देखें। उनकी नित्य होने वाली या मासिक, वार्षिक आमदनी समान नहीं है, हालांकि नियमानुसार या शिक्षा या बुद्धिबल के अनुसार आमदनी

उसी प्रकार से एकसी (समान स्तर) होनी चाहिये। कई एक तो ऐसे भी उदाहरण देखे जा सकते हैं कि उच्च शिक्षा प्राप्त अधिक परिश्रमी की आमदनी कम और कम शिक्षा प्राप्त और कम परिश्रम करने वाले की आमदनी अधिक है। यह अपने पूर्व जन्म के उपर्युक्त बतलाये हुए का परिणाम नहीं तो क्या है? आजकल के समयानुसार यह कहा जा सकता है कि अमुक की सिफारिश अच्छी थी, अमुक अधिक परिश्रमी है, अमुक चापलूस है, चालाक, वातूनी है तो क्या इन बातों का आश्रय प्रत्येक मनुष्य नहीं ले सकता? जब ये बातें ही मनुष्य की आमदनी बढ़ाने में सहायक हो सकती हैं और यह बात सबके मस्तिष्क में भी है, तो सभी मनुष्य इसी रास्ते का अनुसरण क्यों नहीं करते? ये बातें भी पूर्व जन्म के अच्छे कार्यों द्वारा या इस जन्म के पूर्व कर्त्तव्यों द्वारा ही बुद्धि रूपी धरोहर में जिसके पास संचित हैं, वही तो काम में ले सकता है, जिसके पास कुछ न होगा वह क्या काम में लेगा और जिसके पास इस प्रकार की पूर्व संचित, ऐसी उत्तम कर्त्तव्य रूपी कमाई का भाग नहीं है और वह इसी प्रकार के दूसरे मनुष्यों की नकल करता है, तो भी अपनी रखी हुई ही कमाई के अनुसार मनुष्य को सफलता प्राप्त होगी, उससे अधिक कुछ नहीं मिलेगा। उसके ऐसे प्रयत्न (प्रयास) सिवाय इसके कि इस प्रकार के प्रयासों में परिश्रम व खर्चा भी करलें किन्तु असफल ही होगा, कोई लाभ नहीं मिल सकेगा। ऐसे उदाहरण भी देखने में मिल सकेंगे।

जो मनुष्य भली प्रकार से रत्न, स्वर्ण, रजत (चाँदी) द्रव्य (रकम) वस्त्राभूषणों से भरा पूरा रहते हुए भी कृपणता (कंजूसी) करके भगवान् शिव की पूजा में बहुत कम खर्च करता है और अधिक समय खाली मिलने पर भी शिव पूजन में समय व मन नहीं लगाता याने खर्च करने व समय लगाने में :लापरवाही करता है, तो काम्यकर्म (अभीष्ट कार्य) सिद्ध नहीं होते हैं। उपर्युक्त कार्य सप्रेम व उदारतापूर्वक ही करने चाहिये, इसी से सफलता प्राप्त होती है।

भगवान् शिव (शङ्कर) ऐसे भोले व उदार हैं कि केवल जल, पुष्प, पत्रादि से ही पूजार्थी पर प्रसन्न होते देर नहीं करते। इस संसार में ऐसे क्या वस्तु, पदार्थ व पद है जो वे न दे सकें या प्रदान न करें; किन्तु वे भावना अवश्य देखते हैं। उनकी प्रसन्नता हेतु जैसा ऊपर लिखा गया है, कम से कम इतना तो अवश्य करना पूजक का कर्तव्य है। पूजा करने वाला अपना कर्त्तव्य पूर्ण किये बिना ही अपना अभीष्ट पूर्ण कराने की इच्छा करे, यह भगवान् शंकर (शिव) के सामने लापरवाही ही प्रतीत होगी। निष्काम भाव से भगवान् शिव की सेवा, पूजा, अर्चना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है। और की जावे तो भगवान् शिव उसे सभी पदार्थ आशा से अधिक प्रदान करते रहते हैं। हम अपने कर्त्तव्यों के प्रति स्वयं ही भूले हुए हैं। और इस संसार रूपी मायामय बुद्धि में ढके हुए कारणों से, अनेक प्रकार के पापों का संचय कर रहे हैं और अपने पूर्व जन्म के अनेकों पापों का बोझ भी साथ में लाये हैं। उसे भी भार रूप से ढो रहे हैं। इस समय के पाप रूपी रास्तों में व पूर्वजन्म संचित कर्म रूपी गठरी के बोझ सहित चलकर, अपनी शुभ आवश्यकताओं की पूर्ति की मंजिल पाना एक मृगतृष्णा मात्र है।

इन पाप रूपी कष्टों से मुक्त होकर अपनी अभीष्ट कामनाओं की सिद्धि लाभ चाहने के लिये ही पूजा-अर्चना मनुष्य इस संसार में करते हुए देखे जाते हैं। निष्काम भाव से भगवान् शिव से प्रेम करने वाला पूजार्थी कोई विरला मनुष्य तलाश करने पर भी मिलना इस समय में कठिन है।

शिव की अर्चना, पूजा द्वारा अभीष्ट मनोरथ कभी कभी पूर्ण नहीं भी होते हैं। इसका मुख्य कारण एक यह भी देखने में आता है कि पूजा अर्चनादि नाम मात्र की, अश्रद्धापूर्वक की जाती है और कामना बड़े रूप में निवेदन की जाती है। जैसे परीक्षा के दिनों में सवा रुपया का प्रसाद व एक पुष्प माला अर्पण करके ही कोई विद्यार्थी बिना परिश्रम के परीक्षा में उत्तीर्ण होना चाहें या इस

प्रकार समझें कि कोई पाँच-चार रुपये का प्रसाद व हाथ जोड़कर ही धनवान् बनने की कामना करे, तो अभीष्ट कामना-सिद्धि सन्देहास्पद ही होती है। वास्तव में कर्त्तव्य पूर्ण करने पर व पूर्ण परिश्रम करने पर और साथ साथ पूजा-अर्चना करने पर ही भगवान् शिव सिद्धियाँ प्रदान करते हैं, ऐसे नहीं। अपने कर्त्तव्य को पूर्ण करना भी शास्त्रों में शिव-सेवा ही कहा गया है। कर्त्तव्य करते हुए भी कई बार असफल होते पाये जाते हैं, ऐसा न हो जाये, उसके सहारे हेतु पूजा कार्य है। जैसे भगवान् श्री राम ने रावण को परास्त करने हेतु रामेश्वरम् शिव-लिङ्ग की स्थापना की। पूजा-अर्चना की, महर्षि अगस्त्य जी के आदेशानुसार सूर्य-स्तवन जो शिव का ही स्तवन माना गया है, आदित्यहृदयस्तोत्र द्वारा किया, फिर युद्ध भी किया। तब ही रावण सकुटम्ब मारा गया था और सीता को मुक्त कराया गया था।

पूजा अर्चना द्वारा अभीष्ट मनोरथ पूर्ण न होने में एक यह भी कारण मुख्य होता है कि लोग थोड़ी सी पूजा अर्चना अशुद्ध रूप में बिना मन लगाये लापरवाही से करते हैं जिससे शरीर को कोई परिश्रम नहीं होता है। द्रव्य (धन) भी नहीं के बराबर ही खर्च करके भगवान् शिव के अर्पण किया जाता है। यह ऐसी बात हो जाती है कि जैसे अपन कोई अभीष्ट वस्तु लाने जावें या कोई कार्य करने जावें और थोड़ा सा मूल्य (द्रव्य) देकर या थोड़ा काम करके, अधिक परिश्रम दिखा कर, दूकानदार या मालिक से अधिक मूल्य की अभीष्ट वस्तु प्राप्त करलें या मालिक से परिश्रम की अधिक रकम प्राप्त करलें। भगवान् शिव भोले भण्डारी नेत्र मूंदे ध्यानावस्थित रहते हैं, उन्हें कुछ भी अर्पण कर (देकर) अभीष्ट कामना कामना प्राप्त कर लेते हैं। यह भी उनसे धोखा करना ही है। इसका पापरूप में बोझा ही चढ़ता है। इसका किसी रूप में फल अवश्य भुगतना पड़ेगा और यदि उनकी दृष्टि पहले ही इस प्रकार की दुष्टबुद्धियुक्त भावना पर पड़ गई तो फलसिद्धि तो क्या प्रदान

करेंगे, अपने को वे इसका दण्ड नहीं देते यही बहुत है। इसीलिये उनका नाम शिव याने कल्याणकारी, मङ्गल करने वाला कहा गया है। अतः इस प्रकार की बातों पर पूर्ण ध्यान देकर ही पूजा अर्चना करना उचित होता है और वह ही शुद्ध निर्मल अभीष्ट-कामना शुभफलप्रद तथा आनन्ददायक हो सकती है।

अपनी अभीष्ट कामनाओं की प्राप्ति हेतु किसी अन्य महानुभाव सज्जन विद्वान् महात्मा द्वारा पूजा-अर्चना कराना भी ऐसा ही है, जैसे किसी मुनीम द्वारा, उसी के भरोसे पर उसके द्वारा व्यापार करना, दूकान चलाना और फिर बिना उसे सम्हाले देखे ही व्यापार का लाभ प्राप्त कर लेना।

यदि मुनीम बुद्धिमान् होते हुए स्वामिभक्त व अपनी कठिन परिश्रम की कमाई खाने वाला ईमानदार हुआ तो आपको लाभ मिल जावेगा, नहीं तो जो हालात ऐसे कार्यों में रात दिन आपकी दृष्टि में आ रहे हैं, वही हालात पूजा-अर्चना में भी सामने आ जाते हैं। दोष सब भगवान् शिव पर लगाया जाता है। इस प्रकार की बातों से ही नास्तिकता व देवी-देवताओं, विद्वानों पर अश्रद्धा भाव बढ़ रहा है।

विश्वासपात्र, योग्य, सज्जन विद्वान् अपना शारीरिक परिश्रम पूर्ण कर विधि-विधान द्वारा यजमान की अनुपस्थिति में भी पूर्ण रूप से पूजा-अर्चना कर कामना सिद्धि प्राप्त कराने वाले विरले ही मिल पाते हैं। कार्य सिद्धि चाहने वाले के मन में जैसी उग्र भावना उठती है, वैसी ही भावना जब तक प्रतिनिधित्व करने वाले पुरोहित, गुरु तथा पण्डित के मन में न उठे, तब तक लाभ प्रदान करने वाली फल सिद्धि कैसे प्राप्त हो सकती है? यदि किसी को कोई ऐसा करने वाला मिलता है तो लाभ शतशः प्राप्त होता है। जिस प्रकार की अभीष्ट सिद्धि-लाभ की उग्र भावना पूजा, अर्चना करने वाले के मन में उठेगी, उसी मनोमय भाव से पूजा,

अर्चना होगी। उसी भाव के अनुसार मनोकामना सिद्ध होगी। इस के शास्त्रीय प्रमाण भी बहुत मिलते हैं।

किसी भी अभीष्ट कामना हेतु पूजा अर्चना करना हो तो इस वर्तमान समय को देखते हुए स्वयं शारीरिक परिश्रम से ही करें, जहाँ तक हो सके सुलभ यथेष्ट अपनी अच्छी कमाई का द्रव्य खर्च करें। देवता के सामने पूर्णरूप से मनोभाव प्रेम व आर्तभाव से निवेदन करें। पूजा के विधि-विधान स्वयं अज्ञानवश पूर्ण न कर सकें तो ऐसे विद्वान् पंडित को सहारे हेतु साथ लेवें, तब अभीष्ट कार्य सिद्धि अवश्य हो सकेगी।

आजकल अनेक मनुष्य कह देते हैं—देवी देवताओं में क्या रखा है, पूजा आराधनाओं से क्या होता है? इस प्रकार के अनेकों दोषों ने इस समय में स्थान ले लिया है। ऐसे विचार-भावना रखने से फल सिद्धियाँ नहीं मिलती हैं। विश्वास व नमन पूजक में होना आवश्यक है।

भगवान् शिव की पूजा में जिन पुष्पों में गन्ध न होती हो, यः अधिक तेज गन्ध हो (उग्रगन्ध हो), दूषित हों, पहले के दिन के रखे हुए वासी हों, सड़े गले हों, या स्वयं अपने आप टूटकर गिरे हुए हों, मालती, कुन्द, रक्तजवा (लाल उड़हल) जिसे कई स्थानों पर गुड़हल या गुलम्होर भी कहते हैं, मल्लिका (मोतिया), केतकी (केवड़ा), पलास, सिरस, मेंहदी इस प्रकार के पुष्प नहीं चढ़ाने चाहिए।

शिव पूजन से पहले ही श्री गणेशजी का पूजन भी होता है तथा माता पार्वती का पूजन भी होता है। अतः यह भी ध्यान रखें कि श्री गणेशजी को तुलसी न चढ़ावें। पार्वती (दुर्गा भगवती) माता को दूर्वा व अगस्त्य का पुष्प नहीं चढ़ाया जाता है।

पत्र, पुष्प, फल ये सभी मुख नीचे करके नहीं चढ़ाने चाहिये। ये जिस प्रकार उत्पन्न होते हैं (वृक्ष पर लगते हैं) उसी प्रकार से

इनका मुख (नाका) करके मूर्ति (विग्रह) पर चढ़ाना चाहिये; किन्तु बिल्वपत्र डण्ठल तोड़कर ही उल्टे (मोधे) करके चढ़ाने चाहियें। बिल्वपत्र स्वयं अपने हाथ से टहनी पकड़कर तोड़कर लावें और फिर भगवान् शिव पर चढ़ावें। इसका अधिक माहात्म्य फल कहा है। बिल्वपत्र डण्ठल तोड़कर, मकड़ी, जाला, मिट्टी, गर्दा, या किसी पक्षी की विष्टादि अपवित्र गन्दापन लगा हुआ हो तो वह साफ शुद्ध करके ही चढ़ाने चाहियें। पुष्पों को जल में डालकर या रख कर नहीं चढ़ाना चाहिए। भगवान् शिव पर चढ़ाने वाले मुख्य पुष्प कमल, गुलाब, सभी प्रकार के कनीर (करबीर), सफेद आक या नीला आक जिसे मदार कहते हैं और कनक (धतूरा) हैं। इनके अतिरिक्त अनेक प्रकार के पुष्पों द्वारा पूजन करने की विधि इसी पुस्तक में अलग लिखी गई हैं, वहाँ इस विषय में देख सकते हैं।

बिल्व पत्र, खदिर, खेजड़ा, आमला, तमालपत्र, तुलसी इनके पत्र (पत्ते) फटे टूटे होने पर भी पूजा में ग्रहण करने योग्य कहे गये हैं, किन्तु जहाँ तक हो सके साबुत ही लेने चाहियें। ये टूटे फूटे होने पर दूषित नहीं होते हैं। तुलसी व बिल्वपत्र सर्वदा ही शुद्ध कहे गये हैं। बिल्वपत्र, कुन्द, तमाल एवं आमला और श्वेत कमल (कहार), तुलसी, कमल के पुष्प, अगस्त्य पुष्प और अन्य ऐसे पुष्प जिनमें कलिका युक्त पंखड़ियाँ होती हैं, ये सभी पहले दिन के लाकर रखे हुये भी पूजन में ग्रहण करने योग्य कहे गये हैं, इनका बासी होना दोष युक्त नहीं माना गया है, किन्तु हो सके जहाँ तक ताज़ा ही काम में लेने चाहियें।

भगवान् शिव की स्तुति गायन में या नृत्य आदि करने में खरताल या मिट्टी से बना हुआ झाल या मटका, घड़ा, सुराही आदि बर्तन नहीं बजाने चाहिये यह भी लिखा है।

इस प्रकार शिव पूजन के विषय में अन्य बहुत से नियम हैं। जिनको पूर्ण रूप से इस पुस्तक में दर्शा देना संभव नहीं है। भगवान शिव

शिव अनन्त हैं और उनके अनन्त ही सेवा भक्ति, पूजन प्रकार हैं; किन्तु सर्वप्रधान मुख्य मुख्य सावधानी रखने और ध्यान रखने योग्य बातें सभी संक्षेप में दर्शाने का प्रयास किया हैं–इनके आधार पर ध्यान व सावधानी रखें; किन्तु यह भी ध्यान रहे कि इन सावधानियों का ध्यान रखकर प्रयोग करते रहने से भगवान् शिव की सेवा पूजा में भक्ति, नमन, विश्वास और पूजा प्रकार विधि को झंझट समझ कर त्रुटि (कमी) न होने देवें। इन विशेष बतलाये हुये, नियमों का पालन करने से सेवा पूजा न हो सके तो जैसी भी हो सके या करते हों, उसी प्रकार से भगवान् शिव की सेवा-पूजा, भक्ति रखना, सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व पुण्यप्रद है।

सबसे छोटा पूजन प्रकार छोटे से पाषाण (पत्थर) का शिव तो चाहें किसी स्थान पर प्राप्त हो सकता है, जहाँ पाषाण (पत्थर) का शिव भी नहीं मिले, वहाँ मिट्टी का शिव बनाया जा सकता है, जैसा कि पार्थिव निर्माण व पूजन विषय में इसी पुस्तक में अलग से लिखा है। इस प्रकार के निर्मित शिव पर जल, प्रेम-भक्ति नमनपूर्वक चढ़ा देवें। बिल्वपत्र, तुलसी, पुष्प, दूर्वा, फल जो भी पदार्थ प्राप्त हों, वही उस समय अर्पण कर देवें। स्तोत्र प्रार्थना पाठ कर लेवें। ऐसी स्थिति में नियमों का कोई उल्लंघन नहीं होगा। फिर जहाँ जिस स्थान पर पर्याप्त सुविधायें हों। वहाँ नियमानुसार ध्यान व साधन द्वारा कर लेवें। इससे भी छोटा पूजन प्रकार इस तरह है--आप जहाँ कहीं जिस अवस्था में हों वहीं उसी स्थान पर पूजन-समय मन में खयाल करें और भगवान् शिव का ध्यान करें कि भगवान् शिव का इस प्रकार का स्वरूप है। शुद्ध सुन्दर बर्तन में जल लेकर भगवान् शिव पर चढ़ा रहा हूं और इसी प्रकार से फिर खयाल कर ध्यान करें कि अमुक वस्त्र, चन्दन, चावल, पुष्प विल्वपत्र, धूप, दीप, नैवेद्य हैं ये भी मैं भगवान् शिव आपको अर्पण कर रहा हूँ। भगवान् शिव यह सब मेरी मन से (मानसिक) संक्षिप्त ध्यान रूप से की हुई पूजा के रूप में

स्वीकार करें। फिर स्तोत्र पाठ आदि पुस्तक से या मुख से कंठ हो तो बोल कर, या उसको भी मन में ही बोलकर (मनन कर) कर लेवें, पुस्तकादि भी न हो और कुछ याद भी न हो तो ।।ॐ नमः-शिवायः ।। या ॐ शिवाय नमः ।। इस मंत्र को ही यथाशक्ति जितना हो सके इतनी ही संख्या में जप लेवें, बस पूजा हो गई यह समझलें। इससे सुलभ (आसान) और क्या हो सकता है ? किन्तु पूजा, पाठ, मन्त्र, जाप, भक्ति लापरवाही या नियम पालन की असुविधा होने से किसी प्रकार भी त्याग न करें, इससे ही भगवान् शिव प्रसन्न हो जायेंगे।

सोपान
(२)

शिव–पूजन अधिकार निर्णय

शास्त्रीय आधारों से अनभिज्ञ कुछ पंडों, पुजारियों, पंडितों द्वारा इस प्रकार की बातें प्रचलित कर दी गई हैं कि स्त्रियों, शूद्रों को शिव-पूजन का अधिकार नहीं है। इसके विषय में कुछ शास्त्रीय प्रमाण भी मिलते हैं, किन्तु उनका आशय (अर्थ) इन्होंने अपनी नासमझी के कारण गलत लगा लिया है और शास्त्रों की गहराई में न जाकर पुस्तकों को बिना पढ़े, बिना समझे ही सुनी सुनाई बातों को फैला दिया है, और कई स्थानों में प्रचलित प्रणाली ही बनादी है, इससे कुछ मनुष्य व स्त्रियां भगवान् शिव की पूजा अर्चना से वंचित रहते हैं। अतएव इसका निर्णय शास्त्रीय आधार पर सप्रमाण किया जाना उचित समझकर इस विषय को स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है।

आमतौर पर (साधारणतः) स्त्रियों, शूद्रों, अन्य विलोम जातियों व अन्त्यजों (अन्य निम्न कोटि के कार्य करने वालों) को सर्वथा (बिलकुल) अधिकार नहीं है, ऐसा प्रचार कर रखा है, किन्तु इसका आशय (मतलब) इस प्रकार पाया जाता है।

प्रायः स्त्रियाँ व उपर्युक्त अन्य जातियाँ यज्ञोपवीत धारण नहीं करती हैं, न वेद मंत्र पढ़ती हैं और न उनको वेद मंत्रों का ज्ञान ही होता है। अतएव वेद मंत्रों द्वारा पूजन नहीं कर सकते। किन्तु संस्कृत जानने वाले संस्कृत में बने हुये श्लोकों द्वारा, हिन्दी जानने वाले हिन्दी में वाक्य बोलकर और अहिन्दीभाषी अपनी भाषा उर्दू, पञ्जाबी, मराठी, गुजराती, बंगाली, मद्रासी, तामिल, कन्नड आदि आदि अपनी प्रान्तीय भाषा (बोली) में उच्चारण करके पूजन, अर्चना, वन्दना, स्नान, वस्त्र, गन्ध, पुष्प, अक्षत, नैवेद्य, फलादि पूजन में समर्पण योग्य पदार्थ भगवान् शिव की सेवा में भेंट कर सकते हैं, चढ़ा सकते हैं। भगवान् शिव कोई वेदवाणी या संस्कृत ही जानते हों या समझते हों ऐसी बात नहीं है वे तो सभी की भाषा जानते, समझते हैं। वे अन्तर्यामी हैं, बिना उच्चारण (बिना बोले) ही सब के मन की बात जानने में सक्षम हैं।

स्त्रियों, शूद्रों व अन्य छोटे कार्यों में लगी हुई जातियों को सभी को भगवान् शिव की पूजा का अधिकार है। इसमें शास्त्र प्रमाण हैं। स्त्रियों के लिए शिवपूजन के विषय में कहा गया है–

प्रसवो जायते यस्यास्तया तु शिवपूजनम्।
कर्त्तव्यं मानसं नित्यं दशाहान्तं प्रयत्नतः॥

दशाहे समतीते तु कृत्वा स्नानं यथाविधि।
शिवलिङ्गार्चनं कार्यं द्विजस्त्रीभिर्द्विजैरिव॥

जिन स्त्रियों को शिव पूजन का नियम हो और उनके बालक का जन्म हो जाये तो उनको दस दिन तक सूतिका गृह (जापे का घर) में ही भगवान् शिव की मानसिक याने मन से ही पूजा

करना चाहिये। दस दिन व्यतीत होने पर वा अपने कुल-जाति की मर्यादानुसार (प्रचलित प्रणाली-अनुसार) शरीर शुद्ध होने पर शुद्ध स्नान करके द्विजातियों की स्त्रियों को श्री शिव का पूजन करना चाहिये जिस प्रकार अन्य जाति वाले करते हैं। (द्रष्टव्य है कि द्विज भी आशौच (सूतक) होने पर शिव का पूजन नहीं करते हैं)।

नीचे उदाहरण के रूप में कुछ प्रमाण व दृष्टान्त दिये जाते हैं—

पुरा हि मृण्मयं लिङ्गमर्च्य लक्ष्मी प्रयत्नतः।
जाता सौभाग्यसम्पन्ना महादेवप्रसादतः॥

श्री लक्ष्मी जी पहले प्रयत्नपूर्वक श्रद्धा से पार्थिव लिङ्ग की पूजा करके ही महादेव जी (शिव) के प्रसाद से सर्वदा के लिये सौभाग्यवती हुई थी। इसी प्रकार श्री पार्वती जी ने शिवपूजन की कठिन तपस्या करके ही भगवान् शिव को स्वामी के रूप में प्राप्त किया था। (शिव पुराण)

श्री लक्ष्मी जी की अवतार राधा छोटी उमर में ही शिव की पूजा करके भगवान् श्री कृष्ण की सर्वाधिक प्रिय पात्र बनी थी। (राधाचरित्रप्रकाश)

माता अञ्जनी ने पुत्र न होने पर भगवान् शिव की पूजा अर्चना की थी, भगवान् शिव ने प्रसन्न होकर, स्वयं अपने अंश से उसके पुत्र रूप में महावीर श्री हनुमान के नाम से अवतीर्ण हुये थे जो कि शिव के ही अवतार माने जाते हैं।

दक्षिण देश में घुष्मा नाम की एक स्त्री थी। वह प्रति दिन भगवान् शंकर (शिव) की पूजा किया करती थी। उस पर भगवान् शिव प्रसन्न हुए, उसके मृत पुत्र को जीवित किया और उसे वर माँगने को कहा तो उसने यही वरदान मांगा कि मेरे नाम से इसी स्थान पर आप निवास करें, और भक्तों का कल्याण करें। भगवान् शिव ने प्रसन्न होकर स्वीकार किया, और घुष्मेश्वर नाम से उसी स्थान पर प्रतिष्ठित हुए। यह स्थान ज्योतिर्लिङ्ग घुष्मेश्वर,

घुसृणेश्वर, घृष्णेश्वर, इन नामों से प्रख्यात है। यह स्थान वेरूल गांव के पास है। यहाँ से इलोरा की भारत प्रसिद्ध गुफाएँ भी थोड़ी ही दूर पर हैं। यह द्वादश ज्योति-लिङ्गों की संख्या में माना जाता है। सिद्ध पीठ है। इसके माहात्म्य का एक श्लोक इस प्रकार है--

ईदृशं चैव लिङ्गं च दृष्ट्वा पापैः प्रमुच्यते।
सुखं संवर्धते पुंसां शुक्लपक्षे यथा शशी॥

(शिव पुरा० ज्ञान सं० अ० ५२ श्लोक ८२)

श्री घुष्मेश्वर महादेव के दर्शन से सब पाप दूर हो जाते हैं और सुख की वृद्धि उसी प्रकार होती है, जिस प्रकार शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा की वृद्धि होती है।

महामुनि महर्षि वशिष्ठ जी महाराज की धर्मपत्नी अरुन्धती पहले सन्ध्या नाम से कही जाती थी। उन्होंने भगवान् शिव की अर्चना व तपस्या कर शिवशंकर को प्रसन्न किया तो भगवान् शिव ने उनकी इच्छानुसार पति मिलने का वर दिया।

(शिवपुराण, रुद्र संहिता, अध्याय ३ से ७)

इसी प्रकार से अनसूया, सुमति, सीमन्तिनी, महानन्दा, सीता माता, भगवान् श्री कृष्ण की महारानी रुक्मिणी, जाम्बवंती, सत्यभामा तथा एक विधवा ब्राह्मणी आदि अनेकों स्त्रियों ने शिव-पूजन द्वारा अपनी अभीष्ट कामनाएँ प्राप्त की हैं, जिनकी अनेक कथाओं से पुराण शास्त्र भरे पड़े हैं।

अन्य प्रान्तों की तो मुझे अधिक जानकारी नहीं परन्तु राजस्थान, हरियाणा प्रान्तों में या इन प्रान्तों के निवासी जहाँ दूसरे प्रान्त व नगरों में रह रहे हैं वहाँ उन्हीं स्थानों में कुमारी कन्याएँ (अविवाहित) अच्छा घर व वर (पति) प्राप्ति हेतु विवाह से पूर्व बाल्यकाल से ही शिव–पार्वती (ईश्वर गणगौरी) की मिट्टी की मूर्तियाँ निर्माण कर प्रतिवर्ष चैत्रकृष्णा १ (होली पर्व के

दूसरे दिन) से आरम्भ कर चैत्र शुक्ल पक्ष की तृतीया तक पूजन, अर्चन वर्तमान समय में भी करती हैं। विवाह होने के पश्चात् भी चैत्र शुक्ला तृतीया को प्रत्येक सधवा सौभाग्यवती स्त्री अपने सौभाग्य रक्षार्थ ईश्वरगणगौरी याने शिव-पार्वती की पूजा करती हैं।

महर्षि सूतजी का निम्नलिखित वचन समादर करने योग्य है—

ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वा प्रतिलोमजः।
पूजयेत् सततं लिङ्गं तत्तन्मन्त्रेण सादरम् ॥
किं बहूक्तेन मुनयः स्त्रीणामपि तथान्यतः।
अधिकारोऽस्ति सर्वेषां शिवलिङ्गार्चने द्विजाः ॥

(शिवपुराण विद्येश्वर संहिता अध्या० २१ श्लोक ३९–४०)

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र अथवा विलोम संकर, कोई भी क्यों न हों, वे सभी अपने अधिकार के अनुसार वैदिक (वेदमंत्र) अथवा तांत्रिकमंत्र, श्लोकों से अथवा अपनी भाषा द्वारा, हमेशा आदरपूर्वक शिव-लिंग की पूजा करें। हे मुनियो, ब्राह्मणो अधिक कहने से क्या लाभ, शिवलिंग का पूजन करने में स्त्रियों का तथा सभी प्रकार के मनुष्यों, जातियों का अधिकार है। इतना अवश्य ध्यान रखें कि जिनको यज्ञोपवीत नहीं है, वे वेदमन्त्रों द्वारा या अपनी बोली द्वारा ही पूजा करें।

एक भील ने अपने कार्यरत हो जाने से अनजान में व्रत कर लिया और उसका जूठा जल उसके द्वारा शिवलिंग (महादेवजी) पर गिर गया और उसके द्वारा टहनी हिलने से बिल्वपत्र भी चढ़ गये। याने उसने कोई भी व्रत–पूजन, नियम या ध्यान से नहीं किया किन्तु भगवान् आशुतोष (शिव) ने उसी को अपना व्रत-पूजन, अर्चना मानकर उस भील को अद्भुत, पूर्ण फल प्रदान किया। किन्तु ऐसा तो तब ही संभव है जब भगवान् शिव की (अपने पूर्वजन्म के प्रताप से संचित पुण्य अवशेष रहे हों) कृपादृष्टि हो

जाये। नहीं तो श्रद्धा-भक्ति और नमन करके शुद्ध कमाई का द्रव्य भगवान् शिव को अर्पण कर पूजा करने से सभी पाप नाश होकर अभीष्ट फल प्राप्त करते हैं।

बाली व सुग्रीव भी शिव की पूजा किया करते थे। हनुमानजी ने भी हनुमदीश्वर शिव-लिङ्ग स्थापित किया था, जिसकी कथा रामेश्वरम् शिवलिंग की कथा के साथ द्वादश–ज्योतिर्लिङ्ग-वर्णन में आई है। यह स्थान सेतुबन्ध रामेश्वरम् से कुछ ही दूरी पर है।

निषादराज भी शिव की पूजा आराधना किया करते थे और अभीष्ट कामना में भगवान् राम के दर्शन व सेवा अर्पण करने का वरदान माँगते थे जो भगवान् शिव के वरदान व प्रसन्नता से सफल-मनोरथ हुआ था।

मय दानव की पुत्री मन्दोदरी ने भी भगवान् शिव की पूजा करके ही, रावण जैसा तपस्वी, विद्वान् और महान् ऐश्वर्यशाली महाराजा की धर्मपत्नी होने का सौभाग्य फल प्राप्त किया था।

कहाँ तक लिखा जावे स्वयं ब्रह्मा, विष्णु, भगवती तक ने शिव की पूजा आराधना की जिसके अनेकों कथा-दृष्टान्त मिलते हैं और महान् बलिष्ठ बाणासुर, रावण, कुम्भकर्ण, कंस, वृत्रासुर आदि प्रायः सभी राक्षसों ने शिव पूजन कर, भगवान् शिव को प्रसन्न कर अनेकों वरदान प्राप्त कर बल, ऐश्वर्य, शक्ति प्राप्त किये। स्त्री-पुरुषों के विषय में तो कहना ही क्या है।

अब यहाँ कथाओं के अतिरिक्त सिद्धान्त रूप से एक और प्रमाण प्रस्तुत करते हैं—

धन्यास्ते पुरुषा लोके येऽर्चयन्ति रसेश्वरम्।
सर्वपापहरं देवं सर्वकामफलप्रदम्॥
ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याः स्त्रियः शूद्रान्त्यजादयः।
सम्पूज्य तं "सुरवरं प्राप्नुवन्ति परां गतिम्॥
(ब्रह्मपुराण २२६/१३–१४)

संसार में वे मनुष्य धन्य हैं जो समस्त मनोवाञ्छित फलों के देने वाले सर्वपापहारी रसेश्वर (पारद के शिवलिंग) का सदा पूजन करते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, स्त्री, शूद्र और अन्त्यज आदि सभी सुरश्रेष्ठ भगवान् शिवशंकर का पूजन करके परमगति को प्राप्त होते हैं। यही नहीं शास्त्रों में यहाँ तक लिख दिया है—

यों न पूजयते लिङ्गं ब्रह्मादीनां प्रकाशकम् ।
शास्त्रवित्सर्ववेचापि चतुर्वेदः पशुस्तु सः ।।

(पद्मपुराणे)

ब्रह्मादि देवताओं के प्रकाशक अथवा ब्रह्मज्ञान आदि को प्रकाशित करने वाले भी यदि शिवलिङ्ग का पूजन नहीं करते तो वह चारों वेदों तथा अन्य शास्त्रों का ज्ञाता व सर्वज्ञ होते हुए भी पशु समान होता है।

अतः देवता हो, दानव हो, राक्षस हो, किसी भी जाति का मानव हो, किसी भी प्रकार का आचरण करने वाला हो, कैसी भी जीविका प्राप्त कर जीवन निर्वाह करने वाला हो, स्त्री हो या पुरुष हो, जिसके जीव और आत्मा है, बुद्धि व ज्ञान है, हाथ व पाँव हैं, ऐसा कोई भी प्राणी हो, सभी को भगवान् शिव याने शिवलिंग या शिवमूर्ति (किसी भी प्रकार की हो) के पूजन, अर्चन, प्रार्थना, निवेदन, पूजन योग्य पदार्थ अर्पण करने का अधिकार है। किन्तु एक बार फिर लिख देते हैं कि जनन, मरण आशौच, मासिक धर्म से हुई स्त्री और अन्य किसी भी प्रकार से शरीर, वस्त्र, मन, पूजन पात्र, सामग्री अशुद्ध न हों। इस प्रकार की अशुद्धता को दूर करके ही पूजन करें। वही शुभ फलप्रद है।

भगवान् शिव महान् पवित्र हैं। वे याने उनकी मूर्ति, विग्रह शिवलिंग व उनका स्थान, मन्दिर, शिवालय ये सभी पवित्र हैं, उनको पूजन करने वाले शुद्ध व पवित्र ही बनाये रखें, यह सभी का कर्त्तव्य है।

उक्त निर्णय केवल शिव पूजन के विषय में शास्त्राधार सम्मत है, किन्तु किसी विशिष्ट शिव स्थान पर निर्माणकर्त्ता या प्रबन्धकों ने अन्य नियम बना रखे हों तो यह निर्णय उन नियमों का उल्लंघन करने या किसी प्रकार के विवाद हेतु नहीं है। इस विषय में एक उदाहरण पर ध्यान देवें, नेपाल के पशुपतिनाथ महादेव के मन्दिर में पुजारी को छोड़कर और किसी की तो बात ही क्या स्वयं नैपाल-नरेश का भी प्रवेश नहीं हो सकता।

सोपान

(३)

रुद्राक्ष व भस्म त्रिपुण्ड्र धारण

रुद्राक्ष भगवान् शिव को बहुत प्रिय है। इसको परम पावन समझना चाहिये। रुद्राक्ष के दर्शन से, स्पर्श से, उस पर जप करने से यह समस्त पापों का अपहरण करने वाला माना गया है।

शिव पुराण के आधार पर इसकी उत्पत्ति इस प्रकार है— भगवान् शिव ने महेश्वरी शिवा को कहा है कि मैं तुम्हारे प्रेमवश भक्त के हित की कामना से रुद्राक्ष की महिमा का वर्णन करता हूँ, सुनो महेशानी! पूर्व काल की बात है, मैं मन को संयम करके हजारों दिव्य वर्षों तक घोर तपस्या में लगा रहा। एक दिन सहसा मेरा मन क्षुब्ध हो उठा। परमेश्वरी! मैं सम्पूर्ण लोकों का उपकार करने वाला स्वतन्त्र परमेश्वर हूँ। अतः उस समय मैंने लीलावश ही अपने दोनों नेत्र खोले तो मेरे मनोहर नेत्रों से कुछ

जल की बूंदे नीचे गिरीं। उन बूंदों से वहाँ रुद्राक्ष नामक वृक्ष पैदा हो गये। भक्तों पर अनुग्रह करने के लिए वे जल बिन्दु स्थावर भाव को प्राप्त हो गये। वे रुद्राक्ष मैंने विष्णु भक्तों तथा चारों वर्णों को बाँट दिये। इस भूतल पर अपने प्रिय रुद्राक्षों को मैंने गौड़ देश में उत्पन्न किया। मथुरा, अयोध्या, लङ्का, मलयाचल, सह्यगिरि काशी तथा अन्य देशों में भी उनके अंकुर लगवा दिये। ये उत्तम रुद्राक्ष असह्य पाप समूहों का भेदन करने वाले तथा श्रुतियों के भी प्रेरक हैं। मेरी आज्ञा से वे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र जाति के भेद से इस भूतल पर प्रकट हुए। रुद्राक्षों की जाति के शुभाक्ष भी हैं। उन ब्राह्मणादि वाले रुद्राक्षों के वर्ण श्वेत, रक्त, पीत, तथा कृष्ण जानने चाहियें। इसप्रकार क्रमशः वर्ण के अनुसार अपनी जाति का ही रुद्राक्ष धारण करने से अत्युत्तम फलप्रद होते हैं। भोग और मोक्ष की इच्छा रखने वाले चारों वर्णों के लोगों और विशेषतः शिव भक्तों को मेरी व तुम्हारी (शिव-पार्वती की) प्रसन्नता के लिये रुद्राक्ष के फलों को अवश्य धारण करना चाहिये।

जो रुद्राक्ष बेर के फल के बराबर होता है. वह उतना होने पर भी उत्तम फल देने वाला तथा सुख सौभाग्य वृद्धि करने वाला होता है। जो रुद्राक्ष आँवले के फल बराबर होता है, वह सम्पूर्ण मनोरथों और फलों की सिद्धि करने वाला है। रुद्राक्ष जैसे जैसे छोटा होता है, वैसे वैसे अधिक फल देने वाला है। पापों का नाश करने के लिये रुद्राक्ष धारण करना आवश्यक है। यह समस्त अभीष्ट मनोरथों को पूर्ण करने वाला है।

लोक में मङ्गल मय रुद्राक्ष जैसा फल प्रद है, वैसा फल देने वाली कोई माला नहीं है।

समान आकार प्रकार वाले, चिकने, मजबूत, स्थूल कण्टक युक्त (उभरे हुए छोटे दाने वाले) और सुन्दर रुद्राक्ष अभिलिषित पदार्थों के दाता तथा सदैव भोग और मोक्ष देने वाले कहे गये हैं।

जिसे कोड़ों ने खा लिया हो, दूषित हो, जो टूटा फूटा हो, जिसमें उभरे हुए दाने न हों जो व्रण युक्त हों, ठीक गोल व चिकना न हो, इस प्रकार इन पाँच प्रकार के दोषों से युक्त को ग्रहण नहीं करना चाहिये।

जिस रुद्राक्ष में अपने आप डोरा पिरोने योग्य छेद हो वह अत्युत्तम और जिसमें मनुष्य ने प्रयत्न से छेद किया हो वह मध्यम माना गया है।

जो मनुष्य ग्यारह सौ रुद्राक्ष धारण करता है, उसका फल अमित है। उसका वर्णन वर्षों में भी नहीं जा सकता है। भक्तिमान पुरुष साढ़े पाँच सौ रुद्राक्षों का मुकुट बनाकर सिर पर धारण करे। तीन सौ साठ दानों का हार बनाकर उसका यज्ञोपवीत तैयार कर धारण करे। यह शिव भक्तों के लिए महान् पुण्यतम पाप नाशक है। साधारणतः एक सौ आठ फलों की माला पर ही भगवान् शिव के मन्त्रों का जप करे और यह ही धारण करे।

रुद्राक्ष धारण करने वाले मनुष्य को खान पान में मदिरा, मांस, लहसुन, प्याज, सहजना, लिसोड़ा आदि त्याग देने चाहिये।

ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ, गृहस्थ और संन्यासी सबको नियमानुसार रुद्राक्ष धारण करना उचित है। इससे सौभाग्य व पुण्य वृद्धि होती है।

रुद्राक्ष भगवान् शिव का मङ्गलमय लिङ्गविग्रह ही माना गया है। जिसके ललाट में त्रिपुण्ड्र लगा हो, और सभी अङ्ग रुद्राक्ष से विभूषित हों, जो मृत्युञ्जय का जप कर रहा हो, ऐसे मनुष्य का दर्शन करने से साक्षात् रुद्र के दर्शन का ही फल प्राप्त होता है।

एक मुख वाला रुद्राक्ष भगवान् शिव का स्वरूप है। भोग व मोक्ष दोनों प्रकार के फल प्रदान करता है। जहाँ इसकी पूजा होती है। वहां से लक्ष्मी दूर नहीं जाती है। उस स्थान के सभी उपद्रव व अनिष्ट दूर होते हैं। वहाँ रहने वालों की सभी शुभ कामनाएँ फलदायक होती हैं। दो मुख वाले को देव देवेश्वर कहा

६२४७

गया है। वह सभी कामनाओं व फलों को देने वाला कहा गया है। तीन मुख वाला रुद्राक्ष साक्षात् साधन का फल देने वाला है। इसके प्रभाव से सभी विद्याएँ प्रतिष्ठित होती हैं। इसी प्रकार चार मुख-वाला ब्रह्मा का स्वरूप माना गया है। इसके दर्शन स्पर्श से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सभी प्राप्त होते हैं। पाँच मुख वाला कालाग्नि रुद्र रूप है। यह भी सर्वफलप्रद कहा गया है। छः मुख वाले को कीर्तिकेय का रूप कहा गया है। यह दाहिने हाथ में धारण करने से सर्व प्रकार के महान पापों का नाश करने वाला कहा गया है। सात मुख वाले को अनङ्गस्वरूप कहा है इसे धारण करने वाला ऋण मुक्त होता है, द्ररिद भी धनी होता है। आठ मुख वाले को अष्टमूर्ति भैरव रूप कहा गया है, इसके धारण करने से रोगमुक्त व दीर्घायु होता है। नो मूख वाले को कपिल मुनिका प्रतीक व नो रूप धारणी भगवती दुर्गा का स्वरूप कहा है। इसको बायें हाथ में धारण करने से सर्वेश्वर भगवान् शिव की भक्ति प्राप्त होती है और भक्ति साधना करने वाला स्वयं शिव स्वरूप हो जाता है। दस मुख वाले को विष्णु का स्वरूप कहा गया है, इसके धारण करने से सभी कामनाएँ सिद्ध होती हैं। ग्यारह मुखवाला रुदाक्ष रुद्र रूप है, इसके धारण करने से मनुष्य शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है। बारह मुखवाले रुद्राक्ष को द्वादश आदित्य माना गया है। इसको सिर में ही धारण करना चाहिये। इसके धारण करने से मनुष्य सूर्य समान चमत्कृत होता है व अपने प्रकाशों के द्वारा पूजनीय होता है। तेरह मूख वाला विश्व देवों का स्वरूप कहा गया है, इसके धारण करने से सम्पूर्ण अभीष्ट सौभाग्य व मङ्गल का लाभ होता है। चौदह मुख वाला भगवान् शिव का स्वरूप माना गया है, इसको भी सिर पर ही धारण करना चाहिये, इससे पापों का नाश होकर शिव स्वरूप होता है, भगवान् शिव की अनन्य भक्ति प्राप्त होती है, लोक में पूजने योग्य होता है और मोक्ष प्राप्ति का अधिकारी होता है।

रुद्राक्षधारी को देखकर भूत, प्रेत, पिशाच, डाकिनी, शाकिनी अन्य राक्षस व द्रोह करने वाले सभी दूर भागते हैं।

ये रुद्राक्ष सभी शुभ मनोकामनापूर्ण करने वाले और अनिष्ट व पापनाशक कहे गये हैं।

रुद्राक्ष के अभाव में तुलसी या चन्दन की माला जप करने के लिये प्रयोग में ली जा सकती है।

(शिवपुराण, विद्येश्वर संहिता, अध्याय ४३ के आधार पर)

जो मनुष्य नास्तिकता या साम्प्रदायिक आग्रहवश कुछ तर्क, अनर्गल निन्दा या धृष्टतावश कुछ कहना चाहें या निन्दा करना चाहें, उनके विषय में कुछ कहना नहीं है। देवाराधनापूजनादि जो भी धार्मिकाध्यात्मिक विषय हैं, वे सभी आस्तिकता विश्वास व नमन से पूर्ण व फलप्रद होते हैं। अतएव ऐसे आग्रही मनुष्य के लिए तर्कों का उत्तर देने या समझाने में पुस्तक का व्यर्थ कलेवर न बढ़ाकर जो व्यक्ति इन विषयों में जिज्ञासा रखते हैं, उन्हीं के लाभ हेतु यह लिखा जा रहा है। अधिक विस्तार में न जाकर इसी के साथ भस्म त्रिपुण्ड्रधारण के विषय में भी इस प्रकार लिखा है–

तेनाधीतं श्रुतं तेन तेन सर्वमनुष्ठितम् ।
येन विप्रेण शिरसि त्रिपुण्ड्रं भस्मना धृतम् ॥
त्यक्तवर्णाश्रमाचारो लुप्तसर्वक्रियोऽपि यः ।
सकृत्तिर्यक् त्रिपुण्ड्राङ्कधारणतात् सोऽपि पूज्यते ।
ये भस्मधारणं त्यक्त्वा कर्म कुर्वन्ति मानवाः ।
तेषां नास्ति विनिर्मोक्षः संसाराज्जन्मकोटिभिः ॥

(बृहज्जाबालोपनिषद्, पञ्चम ब्राह्मण, श्लोक ७, ८, ९)

जिस ब्राह्मण ने मस्तक में भस्म-त्रिपुण्ड्र धारण किया है, उसने समस्त शास्त्रों का अध्ययन तथा श्रवण किया है व समस्त कर्म और अनुष्ठान किये हैं। जिसने वर्णाश्रम के आचार का परित्याग कर

दिया हो, जिसकी समस्त क्रिया लुप्त हो गई हो–वह भी एक बार त्रिपुण्ड्र धारण कर लेता है, तो पूजने योग्य हो जाता है। जो मनुष्य भस्म धारण न करके कर्म करते हैं, उनकी कोटि जन्मों में भी संसार से कभी मुक्ति नहीं होती।

त्रिपुण्ड्र लगाने के लिए किसी यज्ञ के कुण्ड द्वारा निकाली हुई भस्म लेना योग्य है या नित्य जो अग्निहोत्र करते हों, उससे जो भस्मी होती है वह लेना चाहिये या गाय का शुद्ध गोबर (और गाय भी बिना ब्याई हो उसका) लेकर सुखा लिया जावे फिर उसको जलाकर शुद्धतापूर्वक उठा कर रख लेवें. इसको काम में लेना उत्तम कहा गया है।

बृहज्जाबालोपनिषद् में चारों वर्णों को भस्म धारण करने के लिए कहा गया है। रुद्राक्ष व भस्म धारण के विषय में जो विस्तार से देखना चाहें वे बृहज्जाबालोपनिषद्, कालाग्निरुद्र, शिवपुराण, स्कन्द पुराण आदि को देखें। जो भस्म न लगावें, उनको चन्दन का त्रिपुण्ड्र या तिलक अवश्य लगाना चाहिये।

आजकल ब्लड प्रेशर (रक्त चाप) रोग द्वारा बहुत से मनुष्य आक्रान्त पाये जाते हैं। रुद्राक्ष की माला पहनने व पानी रखने के बर्तन में माला डालकर, सम्पूर्ण रात्रि पड़ा रख कर वही जल पान करने व उसी जल से स्नान करने से धीरे-धीरे लो व हाई दोनों प्रकार के ब्लड प्रेशर से छुटकारा मिल जाता है। कई मनुष्यों ने इसके द्वारा लाभ प्राप्त किये हैं। जो इसकी माला सर्वदा पहने रहते हैं उनको यह रोग नहीं होता। जिनको हो गया हो, पहनने से तत्काल तो लाभ नहीं होता; किन्तु निरन्तर पहने रहने पर धीरे-धीरे लाभ हो जाता है। प्रयोग कर सकते हैं।

●

सोपान

(४)

ज्योति या दीपक

किसी भी प्रकार की देव पूजा जब की जाती है तो दीपक प्रज्वलित कर स्थापित किया जाता है। द्वादश (बारह) शिव-लिङ्ग जहाँ जहाँ स्थापित हैं; अष्ट मूर्ति शिव-लिङ्ग स्थापित हैं, वहाँ भी कई एक स्थानों में और इनके अतिरिक्त अन्य भी कई एक देव स्थानों में ज्योति प्रज्वलित रूप से देखने को मिलती है। यह क्यों प्रज्वलित की गई है या की जाती है, इसका भी कुछ संक्षिप्त में परिचय करा दिया जाना आवश्यक है।

यह ज्योति पूजा प्रकार की महान् सहायक शक्ति होती है। देवस्थान के भीतर वेदी के एक ओर शान्त निश्चल दीप शिखा रहती है, जो स्थाई पूजा स्थानों में रात दिन हर समय मन्द-मन्द जलती रहती है, जिसको कभी बुझने नहीं दिया जाता। इसी तरह की अन्य प्रकार की पूजाएँ जो भी की जाती हैं उनमें ज्योति प्रज्वलित की जाती है और जब तक पूजा अनुष्ठान पूर्ण रूप से समाप्त कर देव विसर्जन नहीं कर दिया जाता तब तक इसी प्रकार रखी जाती है, और उसे भी बुझने नहीं दी जाती। यह परम ज्योति का उपयुक्ततम प्रतीक है, जिसमें शिव और विष्णु परमतत्त्व के निरपेक्ष और सापेक्ष स्वरूप एक ही रूप में अभिव्यक्त होते हैं। जिसमें निर्गुण ब्रह्म और उसकी विश्वजननी और अनिर्वचनीय महाशक्ति एक परमानन्दमयी चेतनता के रूप में एकान्वित है। यही आत्मज्योतिः परम चेतनता है, जो प्रत्येक पूजक द्वारा अनुभूत होने वाला परम सत्य एवं परमादर्श आराधकों के सन्मुख अनिर्वाण

ज्योति या अखण्ड ज्योति के रूप में सदैव विद्यमान रहता है। यह दीपशिखा वायु के झोंकों या अन्य बुझा सकने वाले प्राकृतिक उपकरणों से प्रयत्नपूर्वक सुरक्षित रखी जाती है और इसे सतत (हमेशा) प्रदीप्त रखने के लिये दीपक को घी से सींचते रहते हैं। यह ज्योति पूजकों, साधकों को स्मरण दिलाती रहती है कि मन को क्रमशः दिव्य आध्यात्मिक और वह देवता जिनकी पूजा, अर्चना, साधना की जाती है, की ओर उन्मुख करने के लिए आवश्यक है कि पूजा के समय पूजक को सांसारिक कार्य-प्रपञ्चों तथा ऐन्द्रिय विषयों और पूजा कार्य ध्यान मनन के अतिरिक्त अन्य प्रकार की प्रवृत्तियों से सुरक्षित रखा जावे, क्योंकि यह उपर्युक्त विपरीत कारण ही ऐसे शुद्ध पवित्र पुण्यतम कार्यों को अशुद्ध और विघ्नबाधायुक्त कर देते हैं। इसको पूर्ण रूप से ध्यान व धारणा के द्वारा सुसंस्कृत और सशक्त रहना चाहिए। यह ज्योति शुभता, कल्याण विघ्ननाशक, आरोग्यता तथा पुष्टि की वृद्धि करने वाली पूजा में देव रूप साक्षी और आत्म तत्त्व का ज्ञान करने वाली कहीं गई है। जैसे ज्योति की प्रार्थना में आया है—

शुभं भवतु कल्याणमारोग्यं पुष्टिवर्धनम् ।
आत्मतत्त्वप्रबोधाय दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते ॥

इसी प्रकार से श्री गणेशजी, विष्णु, महेश (शिव), दुर्गा भगवती, लक्ष्मी तथा दीपावली पूजन के जो विधान हैं, उनमें भी प्रज्वलित दीपक जिन मंत्रों या श्लोकों का उच्चारण करके देवता को दिखाया जाता है या समर्पण किया जाता है उन सभी के भावार्थ इसी प्रकार के हैं।

कहने व समझने का तात्पर्य यह है कि दीपक किसी भी अन्धकार मय स्थान को प्रकाशमय बना देता है। इसी प्रकार से यह शरीर रूपी मकान जो अज्ञान के अन्धकार से भरा हुआ है पूज्य देवता

को समर्पण कर या दर्श कराया जाकर प्रार्थना की जाती है. कि पूजक के हृदय में जो अज्ञान रूपी अन्धकार भरा हुआ है, अपने प्रकाश द्वारा दूर करो और भक्ति ज्ञान का प्रकाश फैलाओ। विभिन्न देवताओं की पूजा में दीपक ज्योति से सम्बन्धित उक्त भावार्थ के कुछ मंत्र और श्लोक ये हैं--

(१) आज्यं च वर्तिसंयुक्तं, वह्निना योजितं मया ।
दीपं गृहाण देवेश, त्रैलोक्यतिमिरापह ।।
(दीपं दर्शयामि)

(२) ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत ।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत् ।।
(दीपं दर्शयामि)

(३) ॐनमः आशवे चाजिराय च नमः शीघ्राय च शीभ्याय च नमः
उर्म्याय चावस्वन्याय च नमो नादेयाय च द्वीप्याय च ।।
(दीपं दर्शयामि)

(४) घृतवर्तिसमायुक्तं, महोतेजो महोज्वलम् ।
दीपं दास्यामि देवेशि ! सुप्रीता भव सर्वदा ।।
(दीपं दर्शयामि)

(५) ॐ कार्पासवर्तिसयुक्तं घृतयुक्तं मनोहरम् ।
तमोनाशकरं दीपं, गृहाण परमेश्वरि ।।
(दीपं दर्शयामि)

(६) भो दीप त्वं ब्रह्मरूप अन्धकारनिवारक ।
इमां मया कृतां पूजां गृह्णस्तेजः प्रवर्धय ।।ॐदीपेभ्यो नमः।

(७) भो दीप देवरूपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत् ।
यावत्कर्मसमाप्तिः स्यात् तावत्त्वं सुस्थिरो भव ।।

दीपक स्थापन के विषय में यह भी ध्यान रखना चाहिये कि घृत का दीपक अपनी बाईं ओर तथा तैल का दाहिनी ओर, पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके चावल आदि पर स्थापित कर प्रज्वलित करें। तत्पश्चात् हाथ धोकर फिर दीपक की भी पूजा प्रार्थना कर।

* * *

सोपान

(५)

बिल्वपत्र का पूजन में प्रयोग तथा माहात्म्य

भगवान् शिव के पूजन में बिल्व पत्र अर्पण करते, चढ़ाते समय मंत्रोच्चारण किया जाता है। यह भगवान् शिव की प्रार्थना का मंत्र है।

ॐनमो बिल्मिने च कवचिने च नमो वर्म्मिणे च
वरूथिने च नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो
दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च नमो धृष्णवे ॥

(रुद्राष्टाध्यायी पंचमोऽध्याय मंत्र ३५)

भावार्थ--यह संसार बिल्व के तुल्य है, इसमें जल के तुल्य आपकी शीतल वेदवाणी है, आप कवच के समान माया से ऐसे ढके हैं, जिस प्रकार शरीर बख्तर से आच्छादित होता है। सद्गुण सत्य विज्ञान धनादि सेना रूप है, जिससे पापादि शत्रु भागते हैं। आपका यश वेदादि में बहुत प्रकार से सुना है, इसी से वेद को श्रुति कहते हैं। वह दोष रूपी शत्रु के निवारण करने की

सेना है, उसके शब्द दुन्दुभी हैं, जिस सेना से पापादि शत्रुओं का हनन होता है, ऐसे आपके निमित्त नमस्कार है।

इसके पश्चात् इस प्रकार उच्चारण करते हैं—

काशीवास निवासी च कालभैरवपूजनम् ।
प्रयागे माघमासे च बिल्वपत्रं शिवार्पणम् ।।
दर्शनं बिल्वपत्रस्य स्पर्शनं पापनाशनम् ।
अघोरं पापसंहारं बिल्वपत्रं शिवार्पणम् ।।
त्रिदलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रं च त्रिधायुधम् ।
त्रिजन्मपापसंहारं बिल्वपत्रं शिवार्पणम् ।।
अखण्डै बिल्वपत्रैश्च पूजये शिवशङ्करम् ।
कोटिकन्यामहादानं बिल्वपत्रं शिवार्पणम् ।।
गृहाण बिल्वपत्राणि सपुष्पाणि महेश्वर ।
सुगन्धीनि भवानीश शिव त्वं कुसुमप्रियः ।।

इन श्लोकों का भावार्थ भी बिल्वपत्र के दर्शन स्पर्श गुण आदि की महिमा का वर्णन कर भगवान् शिव तथा माता पार्वती की अनेक प्रकार से प्रार्थना करते हुए, विविध पापों का नाश कर पुण्य लाभ प्रदान करने के विषय में ही है।

बिल्वपत्र व बिल्वफल का माहात्म्य इस प्रकार कहा गया है—

भगवान् शिव तथा माता पार्वतीजी को जो नित्य प्रति बिल्वपत्र या बिल्व फल अर्पण करता है, वह अपने समस्त पापों का नाश कर पुण्य लाभ करता है। बिल्वपत्र व बिल्वफल नित्य प्रति अर्पण करने वाला कभी दरिद्र व ऋणी नहीं होता। यज्ञ में यदि बिल्व फल की आहुतियाँ देता है, तो धनवान्, विद्वान्, होकर यश प्राप्त करता है। बिल्वपत्र व बिल्व फल अर्पण करने से भगवान् शिव एवं माता पार्वती प्रसन्न होते हैं और पूजक की शुभ मनोकामना पूर्ण करते हैं। जहाँ तक संभव हो भगवान् शिव-पार्वती,

गणेशजी, लक्ष्मीजी की पूजा में बिल्वपत्र तथा बिल्वफल अवश्य अर्पण करना चाहिए।

बिल्ववृक्ष श्री भगवान् शिव का स्वरूप माना गया है। देवताओं ने भी इसकी पूजा व स्तुति की है। इसकी पूजा व महिमा वस्तुतः वर्णनीय है।

तीनों लोकों में जितने पुण्य-तीर्थ प्रसिद्ध हैं वे सब बिल्व के मूल भाग में निवास करते हैं, जो पुण्यात्मा मनुष्य बिल्वमूल में लिङ्ग स्वरूप अविनाशी श्री महादेवजी का पूजन करता है, वह निश्चय ही शिवपद को प्राप्त होता है। जो बिल्व की जड़ के पास के जल को अपने मस्तक पर लगाता है वह सम्पूर्ण तीर्थों में स्नान करने का फल प्राप्त कर लेता है और वह इस भूतल पर पावन (पवित्र) माना जाता है।

जो इस बिल्व की जड़ के पास उसके उत्तम थाले (गमले) का निर्माण करता है या जल से भरता है या जल से भरे हुए का दर्शन करता है, उसपर भगवान् शिव परम प्रसन्न तथा सन्तुष्ट होते हैं।

जो मनुष्य बिल्ववृक्ष की जल गन्ध पुष्प नैवेद्य दक्षिणा द्वारा उसकी जड़ के पास बैठकर पूजन-प्रार्थना करते हैं, उनको इस लोक में सुख-सन्तति व धन-धान्य की वृद्धि होती है और मरने पर शिव-लोक प्राप्त होता है।

जो बिल्ववृक्ष की जड़ के पास दीपावली प्रज्वलित कर निवेदन करता है, वह भगवान् शिव के रहस्य-तत्त्व ज्ञान को पाता है, और मृत्यु होने पर भगवान् महेश्वर से मिलता है।

बिल्ववृक्ष की शाखा जो स्वयं अपने हाथों से नीची झुकाता है और एक हाथ से नीचे करके दूसरे हाथ से नये-नये कोमल पल्लव (पत्ते) उतारता है और उनसे ही बिल्व वृक्ष की जड़ के पास भगवान् शिव की पूजा करता है या इस प्रकार उतारे हुए

बिल्वपत्रों द्वारा किसी भी स्थान पर शिव पूजन करता है, वह मनुष्य सभी पापों से मुक्त होकर, भगवान् शिव की भक्ति प्राप्त करता है।

बिल्ववृक्ष की जड़ के समीप भगवान् शिव के अनुरागी एक भक्त को भक्तिपूर्वक भोजन दक्षिणादि से सन्तुष्ट कर देता है, उसे कोटि गुणा पुण्य फल प्राप्त होता है। जो बिल्ववृक्ष के समीप उसी वृक्ष की छाया में किसी शिवभक्त ब्राह्मण साधु, विरक्त, संन्यासी को खीर व घृतयुक्त अन्नों द्वारा भोजन कराता है या यह भोजन सामग्री दक्षिणा सहित देता है या अन्य अन्न वस्त्रादि देता है, तो दरिद्रता दूर होती है. धन लाभ प्राप्त होता है, वह अगले जन्म में कभी दरिद्री नहीं होता।

इसी प्रसंग में भगवान् शिव के दो प्रकार के पूजा विधानों का भी उल्लेख मिलता है, जो इस प्रकार कहा गया है—

(१) प्रथम प्रकार गृहस्थ कार्यरत मनुष्यों के लिए है जो भगवान शिव की पीठिका पर स्थापित कर षोडशोपचार (सोलह प्रकार की पूजा सामग्री द्वारा) पूजन करे और पूजन करते समय वेद मन्त्रों द्वारा या 'ॐ नमः शिवाय' मंत्र द्वारा भगवान् शिव का अभिषेक भी करें, अभिषेक धारा में दुग्धजल इक्षुरस या चीनी मिश्रण करें और गङ्गाजल की धारा चढ़ावें, पूजा के पश्चात् अनेक प्रकार से स्तुति पाठ नृत्य वाद्य व 'ॐ नमः शिवाय' मंत्र जाप करें। पूजा में जो नैवेद्य अर्पण करें वह कई प्रकार के मिष्टान्नों का हो। मिष्टान्न में खीर का अधिक महत्त्व है। पूजा विसर्जन के पश्चात् भगवान् शिव को सम्पुट में रख देवें, मस्तक के ऊपर लगावें और फिर ब्राह्मण व शिवभक्तों को भोजन भेंट दक्षिणा से सन्तुष्ट करें, आशीर्वाद ग्रहण करें। इसी प्रकार अपने पूज्य गुरु, माता–पिता, सम्माननीय संबन्धी कुटुम्बी इष्ट मित्रों को भोजन भेंट द्वारा सम्मान करें, फिर स्वयं भोजन प्रसाद ग्रहण करें। इस प्रकार के पूजन से पूजक

इहलोक व पारलौकिक सभी प्रकार के अभीष्ट फल प्राप्ति का अधिकारी होता है।

(२) दूसरा प्रकार जो घर गृहस्थ से दूर रहने लगे हैं, गृहस्थी की जिम्मेदारियों से दूर हो गये हैं, वानप्रस्थी हैं, ब्रह्मचर्य धारण कर लिया या साधु संन्यासी हो चुके हैं, उनके लिए है। वह हाथ पर ही चाहे शिव बिना पीठ ही क्यों न हों, पूजन कर सकते हैं और उन्हें सुलभता (आसानी) से जो भी मिले, उसी सामग्री द्वारा शिवपूजन करना चाहिए और भिक्षा आदि द्वारा जो भी मिला हो, उसे ही भगवान् शिव को निवेदन करना कहा है। ऐसे लोगों के लिए सूक्ष्म लिंग को श्रेष्ठ बतलाया गया है और कुछ भी न हो तो भस्मी द्वारा ही पूजन कर लेना बतलाया है और विभूति को ही नैवेद्य रूप में निवेदन करदें ऐसा भी कहा है। पूजा करने के पश्चात् शिव-लिङ्ग मूर्ति को मस्तक पर धारण करें, फिर प्रार्थना स्तुति पाठ आदि द्वारा भगवान् शिव को प्रसन्न करें, इसी से उनको शिव-भक्ति व मुक्ति प्राप्ति हो जायेगी।

(शिव पुराण, विद्येश्वर संहिता, अध्याय २१–२२ का सार)

बिल्वपत्र, बिल्वफल कितने ही रोगों की महान् सिद्ध परमोषधि है। आँव, मरोड़, अतिसार, पेट की जलन, पाचन शक्ति कम हो जाना, अनेक प्रकार के प्रमेह रोग, कर्ण रोग के नाशक हैं। आयुर्वेद के अनेक ग्रन्थों में इसके अनेक प्रयोगों का वर्णन मिलता है।

* * *

सोपान

(६)

तुलसीपत्र तथा तुलसीमञ्जरी का प्रयोग

तुलसीवृक्ष (क्षुप) से तुलसीपत्र तथा मञ्चरी ग्रहण करने का श्लोक है—

तुलस्यमृतजन्मासि सदा त्वं केशवप्रिया ।
केशवार्थे चिनोमि त्वां वरदा भव शोभने ॥१॥
त्वदङ्ग सम्भवेन त्वां पूजयामि यथा हरिम् ।
तथा नाशय विघ्नं मे ततो यान्ति पराङ्गतिम् ॥२॥

इसी प्रकार से भगवान् विष्णु, श्री कृष्ण, श्री रामचन्द्र, शालिग्राम की पूजा में तुलसी तथा मञ्जरी प्रयोग करने (चढ़ाने) के मंत्र, श्लोक इस प्रकार हैं।

ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखङ्किमस्यासीत् किम्बाहू किमुरुपादावुच्येते ॥१॥
तुलसी हेमरूपां च रत्नरूपाञ्च मञ्जरीम् ।
भव मोक्षप्रदा तुभ्यमर्पयामि हरिप्रियाम् ॥

शिवजी की पूजा में तुलसी प्रयोग करने (चढ़ाने) का मंत्र है—

ॐ शिवो भव प्रजाभ्यो मानुषीभ्यस्त्वमङ्गिरः ।
मा द्यावा पृथिवी अभि शोचीर्मान्तरिक्षम्मा वनस्पतीन् ॥

इस प्रकार से मंत्र श्लोकों के अतिरिक्त 'बृहद्धर्मपुराण', 'वायुपुराण', 'धर्म पुराण', 'पद्म पुराण', 'देवी भागवत', ब्रह्मवैवर्तपुराण'

आदि में तुलसी वृक्ष लगाने उसको जल द्वारा सिञ्चित करने उसके पत्र (पत्ते) तथा मञ्जरी उतारने और उनके द्वारा पूजा करने की अनेक विधियाँ तथा माहात्म्य हैं। श्री गणेशजी की पूजा के अतिरिक्त प्रायः सभी देवी देवताओं की पूजा में इसका प्रयोग किये जाने के विषय में उल्लेख है।

तुलसी के विषय में ब्रह्मवैवर्तपुराण प्रकृतिखण्ड अध्याय २० में वर्णन मिलता है।

तीन लोकों में देवी देवताओं की पूजा के काम में आने वाले जितने भी पत्र पुष्प हैं, उन सब में तुलसी प्रधान मानी गई है। स्वर्ग लोक, मर्त्यलोक, पाताल लोक तथा वैकुण्ठ में भी सर्वत्र भगवान् के सन्निकट रहती हैं। तुलसी के वृक्ष (क्षुप) सब वृक्षों में पुण्यतम माने गये हैं। गोलोक, विरजानदी के तट, रासमण्डल, वृन्दावन भूलोक, भाण्डीरवन, चम्पकवन, मनोहर चन्दन वन एवं माधवी, केतकी, कुन्द और मल्लिका वन में तथा अन्य सभी पुण्य स्थानों में इसके वृक्ष उत्पन्न होते रहते हैं। तुलसी वृक्ष के नीचे का स्थान परम पवित्र एवं पुण्यजनक कहा जाता है, अतएव वहाँ सम्पूर्ण तीर्थों और समस्त देवताओं का अधिष्ठान होता है।

तुलसी पत्र के जल से जिसका अभिषेक होता है, उसको सम्पूर्ण तीर्थों में स्नान करने तथा समस्त यज्ञों में दीक्षित होने का फल प्राप्त होता है। हजारों घड़ों में अमृत भर स्नान कराने से भी भगवान् की तृप्ति नहीं होती, वहां तुलसी में मिला हुआ थोड़ा जल भगवान् पर चढ़ाने से तृप्ति हो जाती है। यदि कोई मनुष्य किसी को तुलसी पत्रों का दान कर देता है तो हजारों गोदान करने के समान पुण्य लाभ करता है।

मृत्यु-समय में तुलसीपत्र सहित जल मुख में रहता है तो वह प्राणी पापों से मुक्त होकर स्वर्ग प्राप्त करता है। जो मनुष्य नित्य प्रति भक्तिपूर्वक तुलसी-जल ग्रहण करता है वह जीवन-मुक्त हो

जाता है, और उसे गङ्गा स्नान का फल प्राप्त होता है। जो मनुष्य अगणित तुलसी पत्रों से तथा कच्ची कोमल मञ्जरी से नित्य भगवान् विष्णु, शालिग्राम, श्री कृष्ण, श्री राम, तथा भगवान् शिव की पूजा करता है, उसके पुण्य का क्या ठिकाना है, वह अत्यन्त पुण्य लाभ का भागी होता है। जो मनुष्य तुलसी को हाथ में लेकर और शरीर पर या मुख में रख कर किसी तीर्थ स्थान में प्राण त्याग करता है तो शिवभक्त शिव लोक को और विष्णुभक्त वैकुण्ठ को जाता है। तुलसी के काष्ठ की माला गले में धारण करने वाला, मनुष्य पद पद पर अश्वमेध यज्ञ के फल को प्राप्त करता है।

पूर्णिमा, अमावस्या, द्वादशी, सूर्य संक्रान्ति के दिन, मध्याह्न-काल, रात्रि, दोनों संध्याओं के समय, और आशौच के समय में शरीर में तेल लगाये हुए, बिना स्नान किये हुए या अन्य किसी प्रकार से अशुद्ध अवस्था में तुलसी पत्र या मञ्जरी नहीं तोड़ना चाहिये, न तुलसी वृक्ष को छूना चाहिये, यह सर्वदा ध्यान रख।

तुलसीपत्र तथा मञ्जरी तोड़ते समय तुलसी वृक्ष (क्षुप) से प्रार्थना करें कि हे भगवती लक्ष्मी की सहोदरा आपको निरर्थक नहीं तोड़ता हूं, आपको ले जाकर भगवान् विष्णु, रामचन्द्र, श्री कृष्ण, श्री शालिग्राम या भगवान् शिव की पूजा में प्रयोग करूंगा। आपको तोडता हूँ, इसका मुझे कोई दोष नहीं देवें। जिस देवता की पूजा में प्रयोग करूँगा उस देवता को मेरे प्रति कृपा करने में सहायता करें। वे दुर्बुद्धि, दुःख, दरिद्रता, अनिष्ट, त्रिविध ताप अरिष्टादि अशुभों का नाश करें। उत्तम बुद्धि, धन, धान्य, समृद्धि विद्या, गृहस्थ सम्बन्धित सर्व प्रकार के सुख, परम भक्ति, परम पुण्य, आरोग्य प्रदान कर अपनी सायुज्य मुक्ति प्रदान करने का अनुग्रह करें।

श्राद्ध, व्रत, दान, प्रतिष्ठा तथा देवार्चन के लिए तुलसी पत्र बासी (पहले दिन के लाये हुए) होने पर तीन दिन रात तक के रखे हुए पवित्र ही माने गये हैं। पृथ्वी पर गिरा हुआ तथा भगवान् विष्णु

या शिव को अर्पित किया हुआ, तुलसीपत्र जल द्वारा फिर धो लेने पर अन्य दूसरे कार्यों के लिये शुद्ध माना गया है। तुलसीपत्रों से अधिक महत्त्व तुलसी की कोमल मञ्जरी को पूजा कार्यों में प्रयोग करने का कहा गया है। दक्षिणावर्त शंख की पूजा में भी तुलसी का प्रयोग करना शास्त्रसम्मत है। अधिक देखने वालों को पद्मपुराण वायुपुराण, स्कन्दपुराण, देवीभागवत, गर्गसंहिता, हरिभक्तिविलास ग्रन्थों को देखना चाहिये।

तुलसी, सर्दी, जुकाम, खाँसी, बुखार, कफ सम्बन्धित रोगों की परमौषधि है।

तुलसी के गुणों पर वैज्ञानिक आधार पर भी लिखित कुछ पुस्तकें ये हैं।

(१) 'तुलसी के नाम तथा उपयोग' लेखक—डॉ० हरनारायण 'कोकचा'। इसमें केवल तुलसी द्वारा ही अनेक रोगों के इलाज, एवं तुलसी के विषय में अब तक जो अनुसंधान हुए हैं, प्रायः उन सभी का वर्णन है। तुलसी के सम्बन्ध में अनेक धार्मिक कथाएँ तथा वैज्ञानिक वर्णन हैं। मूल्य ३) तीन रुपये। मिलने का पता—देहाती पुस्तक भण्डार, चावड़ी बाजार, दिल्ली।

(२) 'तुलसी' लेखक—रामेश वेदी आयुर्वेदालंकार, पृष्ठ १७८ मूल्य २) मिलने का पता—श्री धन्वन्तरि कार्यालय, विजयगढ़ (अलीगढ़), उत्तर प्रदेश।

(३) 'तुलसीचिकित्साविज्ञान' लेखक—डाक्टर सुरेश प्रसाद, पृष्ठ-संख्या ३२ मूल्य ३७ पैसे, मिलने का पता—श्री धन्वतरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़), उत्तर प्रदेश।

* * *

सोपान

(७)

विभिन्न पुष्पों, अन्नों तथा जल, दुग्ध, इक्षुरसादि धाराओं द्वारा पूजन

भगवान् शिव की विभिन्न प्रकार के पुष्पों व अनेक पुष्प संख्याओं द्वारा तथा विविध प्रकार के अन्नों द्वारा, अनेक संख्याओं से व अनेक प्रकार के पत्रों (पत्तों) द्वारा पूजन विधान है। विविध जल, दुग्ध, इक्षुरसादि द्वारा धारा प्रवाह कर अभिषेक का वर्णन भी मिलता है।

जो मनुष्य लक्ष्मी प्राप्ति की इच्छा रखता हो, वह कमल, बिल्व-पत्र, शतपत्र (गुलाब) और शंख पुष्पों द्वारा भगवान् शिव का पूजन करे। एक लाख की संख्या से इस प्रकार विभिन्न पुष्पों द्वारा शिव की पूजा सम्पन्न करले तो समस्त पापों का नाश होता है और लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। बीस कमल पुष्पों का तोल एक प्रस्थ होता है। एक सहस्र (हजार) बिल्व पत्रों को भी एक प्रस्थ के बराबर कहा गया है। एक हजार शत पत्र (गुलाब) पुष्प आधे प्रस्थ होते हैं। सोलह पत्रों का एक प्रस्थ होता है और दस टङ्कों का एक पल। इस प्रकार मान-तोल से पत्र पुष्पादि को तोलना चाहिये। पत्र-पुष्पों की निश्चित संख्या पूजा में चढ़ाने से शिवजी की पूर्ण पूजा मानी गई है। इससे सकाम पूजक अपना सम्पूर्ण अभीष्ट प्राप्त करता है। यदि पूजार्थी के मन में कोई कामना न हो तो इस पूजन से शिव की महान् कृपा को प्राप्त होकर मनुष्य शिव-स्वरूप होता है।

एकाग्र मन से महामृत्युञ्जय मन्त्र के पाँच लाख जप यदि पूर्ण करलें तो उनका फल इस प्रकार होता है। एक लाख जप से शरीर शुद्धि होती है, दो लाख जप से पूर्व जन्म की बातों का स्मरण होने लगता है, तीन लाख पूर्ण होने पर सम्पूर्ण काम्य वस्तुएँ प्राप्त होती हैं, चार लाख पूर्ण होने पर भगवान् शिव के स्वप्न में दर्शन होते हैं, पाँच लाख पूर्ण होने पर भगवान् शिव अपनी पूजा व जप करने वाले को स्वयं दर्शन देते हैं। इसी प्रकार दश लाख जप पूर्ण हो जायें तो सम्पूर्ण फलों की सिद्धि प्राप्त होती है।

अनेक-अनेक अभीष्ट कामनाओं के लिए भिन्न-भिन्न पदार्थों द्वारा पूजा का फल इस प्रकार कहा गया है—

जो मनुष्य मोक्ष की इच्छा रखता हो एक लाख दर्भों (डाभ के तिनकों, यह एक प्रकार की घास होती है।) के द्वारा पूजन करे। इस प्रकरण में सभी पदार्थों की संख्या लाख की समझनी चाहिये। लम्बी उम्र प्राप्त करने का इच्छुक पुरुष एक लाख दुर्वाओं (दूब) द्वारा पूजन करे। सन्तान की इच्छा वाला कनक (धतूरे) के एक लाख पुष्प चढ़ावे। लाल डण्ठल के धतूरे का पुष्प पूजन में प्रयोग के लिए उत्तम कहा है। यश पाने का इच्छुक अगस्त्य के एक लाख पुष्प पूजा में प्रयोग करें। भोग व मोक्ष दोनों की इच्छा वाला तुलसीपत्रदल व तुलसी की कोमल कच्ची मञ्जरी या भोग-मोक्ष का इच्छुक सफेद आक (मदार) के पुष्प, अपामार्ग (ऊँगा) या सफेद कमल एक-एक लाख की संख्या में चढ़ावे। अपने शत्रुओं को मृत्यु दिलाने का इच्छुक जपा (अड़हुल) के वे पुष्प चढ़ावे। रोग निवारण और स्वास्थ्य लाभ व सुन्दर स्वरूप स्वस्थ शरीर होने के लिए या अपने हाथों के द्वारा किसी कला (कारीगरी) में सफलता प्राप्ति हेतु करवीर (कनीर) के पुष्प एक लाख संख्या में चढ़ावें। आभूषण, जेवर, गहने प्राप्त करने का इच्छुक हो तो एक लाख चमेली के पुष्प चढ़ावे। यदि भगवान् विष्णु की कृपा व भक्ति प्राप्त करने की इच्छा हो तो अलसी के एक लाख

पुष्प चढ़ावें। यदि मोक्ष की इच्छा हो तो शमीपत्र (खेंजड़ा या जिसे जाँट भी कहते हैं) के एक लाख पत्ते भगवान् शिव की पूजा में अवश्य प्रयोग करें। स्त्री प्राप्ति का इच्छुक बेला के एक लाख पुष्प भगवान् शिव की पूजा में प्रयोग करें, इससे प्रसन्न होकर भगवान् शिव सुन्दर व शुभ लक्षरा युक्त पत्नी प्रदान करते हैं। घर में यदि अन्न के लाले पड़े हों और घर को धन–धान्य से भरा पूरा करना हो तो जूही के एक लाख पुष्प भगवान् शिव की पूजा में प्रयोग करें। वस्त्रादि की कमी रहती हो तो एक लाख कनीर के विभिन्न रङ्ग के फूल पूजन में भगवान् शिव पर चढ़ावें। इससे अनेक प्रकार के वस्त्रालंकार प्राप्त होते हैं। मानसिक चिन्ता या दुःखों से मनुष्य घिर जाये तो एक लाख अशोकपत्रों द्वारा भगवान् शिव की पूजा करें। तो दुःखों से छुटकारा मिले और सुख शान्ति प्राप्त होवे। एक लाख बिल्वपत्र अपने हाथ से तोड़कर लावे, सभी पत्र तीन-तीन पत्तियों से युक्त हों, टूटे फूटे न हों, जाला-मकड़ी या श्वेत निशान युक्त न हों, वज्र डण्ठल तोड़े हुए हों, मिट्टी गर्दा लगे हुए न हों, किसी पक्षी की विष्टा आदि गन्दी वस्तु न लगी हुई हो इसी प्रकार से नम्र, पवित्र व सुन्दर ढंग से युक्त हो उनको उलटा (मोधा) करके भगवान् शिव की पूजा में प्रयोग द्वारा भगवान् शिव के ऊपर प्रसन्नतापूर्वक चढ़ावें तो सभी प्रकार की काम्य वस्तुएँ, शुभ इच्छाएँ प्राप्त कर लेता है। सभी प्रकार की शुभ सम्पत्ति सुख समृद्धियों का इच्छुक हार शृंगार के एक लाख पुष्पों से शिव का पूजन करें। इस प्रकार जिस-जिस ऋतु में जो पत्र पुष्पादि होते हैं उसी समय में इन-इन पुष्पादि के द्वारा पूजन करना चाहिए। इसी प्रकरण में यह भी कहा है कि केतकी (केवड़ा) के पुष्प भगवान् शिव पर न चढ़ावें।

विभिन्न अन्न द्वारा प्रयोग—

भगवान् शिव पर चावल टूटे फूटे न चढ़ावे एक लाख चावल (साबुत) ही चढ़ाने चाहिए, और यह चावल आखा ही होने

चाहिये, इससे लक्ष्मी की वृद्धि होती है। सुन्दर वस्त्र और उस पर चावल रखकर भगवान् शिव को पूजन प्रकार द्वारा अर्पण करने से अनेक प्रकार के उत्तम फल प्राप्त होना कहा है। भगवान् शिव को पूजा प्रयोग द्वारा गन्ध-पुष्पादि के साथ श्री फल (नारियल) दक्षिणा भेंट सहित अर्पण करें, फिर धूप दीप आदि भी अर्पण करें तो पूजन का पूर्ण फल प्राप्त हो। यह भी कहा है कि किसी पूजा प्रयोग के साथ एक लाख संख्या वाला द्रव्य (वस्तु), पुष्प, पत्र, तृण (घास) आदि अर्पण करने वाले पूजक को भगवान् शिव का नैवेद्य अर्पण कर उसी शिवस्थान पर बारह ब्राह्मण या शिव भक्तों को भोजन करावें। नैवेद्य में (भोजन) खीर होना आवश्यक कहा है। इसके पश्चात् अपने पूज्य माननीय हों, उनको भोजन करावे, प्रसाद आदि वितरण करे। पुनः स्वयं भोजन करे तो पूर्ण फल प्राप्त हो।

एक लाख काले तिलों द्वारा पूजन करने से बड़े-बड़े पातकों का नाश होता है। इसी प्रकार से एक लाख अच्छे मोटे दाने वाले स्वच्छ यव (जौ) चढ़ाने से इहलौकिक तथा पारलौकिक सुख की प्राप्ति होती है। एक लाख मूँग चढ़ाने पर भगवान् शिव सुख प्रदान करते हैं। प्रियंगु (कंगनी) एक लाख संख्या में शिव के अर्पण करने से पूजक को धर्म, अर्थ, काम, (भोग), सुखों की वृद्धि होती है तथा इससे समस्त प्रकार की सुख वृद्धि होती है।

एक लाख अरहर के पत्तों द्वारा भगवान् शिव का शृंगार करने से अनेकों प्रकार की सुख सम्पत्तियाँ प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार शरीर पुष्टि हेतु एक लाख उड़द पूजा द्वारा अर्पण करना कहा है।

सूक्ष्म मान जो ऊपर वर्णन में आया है इसका फिर स्मरण कराया है। एक प्रस्थ शंख पुष्प एक लाख होते हैं, ग्यारह प्रस्थ चमेली पुष्प एक लाख होते हैं, राई के एक लाख पुष्पों का मान साढ़े पाँच प्रस्थ होना कहा है।

शाण, प्रस्थ, टंक आदि नाम के तोल आयुर्वेद के प्राचीन ग्रन्थों में भी मिलते हैं, अधिक जानकारी प्राप्त करना चाहें वे उनमें देख सकते हैं।

बृहत्पूजाप्रकार तथा षोडशोपचार (सोलह उपचारों) द्वारा सभी प्रकार की पूजन करके उपर्युक्त उपचार समर्पण करें। इसी प्रकार से पूजा करके अनेक प्रकार की जलधारा (अभिषेक) करने का भी बड़ा फल माहात्म्य वर्णन ग्रन्थों में मिलता है।

भगवान् शिव पर अभिषेक (धारा प्रवाह) छोड़ते समय शतरुद्रिय मंत्र से, रुद्री के ग्यारह पाठों से, रुद्र मंत्र के जप से, पुरुष सूक्त से, छः ऋचा वाले रुद्र सूक्त से, महामृत्युञ्जय मंत्र से अथवा शिव के शास्त्रोक्त नामों के प्रारम्भ में ॐ और अन्त में नमः लगाकर इस प्रकार के मन्त्रों द्वारा अर्पित करना चाहिये।

उदाहरण में इस प्रकार समझें कि शास्त्रीय नामों से मन्त्र-उच्चारण के साथ जलधारा छोड़ें तो इस प्रकार करें कि शास्त्रीय नाम 'शिवाय' समझ लें। इनका मंत्र 'ॐ शिवाय नमः' बन जायगा। यह मंत्र सभी प्रकार के मनुष्यों द्वारा चाहे स्त्री हों या पुरुष यज्ञोपवीत लिया हो या नहीं लिया हो, प्रयोग किया जा सकता है। यज्ञोपवीतधारी मनुष्यों के लिए इसी शब्द 'शिवाय' का मंत्र ॐ नमो शिवाय बनाकर इसका उच्चारण प्रयोग करने को कहा गया है।

धारा प्रवाह के साथ ऐसे एक सहस्र (एक हजार) मन्त्रोच्चार होने ही चाहिये या दस हजार, इक्कीस हजार, इकावन हजार होना चाहिए। पूर्ण अभिषेक एक लाख मन्त्रों द्वारा श्रद्धापूर्वक करना लिखा है। धाराप्रवाह करने हेतु पदार्थ व अभीष्ट फल इस प्रकार कहा है—

सुख, सन्तान वृद्धि के लिये गङ्गाजल या गङ्गाजल मिला हुआ शुद्ध पवित्र जल, किसी स्थान पर गंगाजल नहीं मिले, तो किसी पवित्र नदी का जल, वह भी नहीं मिले तो शुद्ध पवित्र जल की धारा से ही अभिषेक प्रयोग करें। वंश वृद्धि व पुंसत्व प्रावल्य हेतु गाय

के शुद्ध घी की धारा से अभिषेक करना लिखा है, और कहा है कि समाप्ति पर शिव के सामने प्रसाद अर्पण कर ग्यारह ब्राह्मण, भोजन करावे। जड़ बुद्धि हो तो बुद्धि वृद्धि हेतु चीनी मिले हुये या ईख (गन्ना) का रस गाय के दुग्ध में मिला कर उसकी धारा अर्पण करे। तन, मन, धन में अकारण ही उच्चाटन हो जाये, प्रेम न रहे, दुःख बढ़ जायें और घर में हमेशा कलह होने लगे, तो इस प्रकार के उपद्रव शान्ति के लिए भी चीनी मिला कर गाय के दुग्ध की धारा से ही अभिषेक करे।। सुवासित तैल (सुगन्ध युक्त तंल) तथा इत्र द्वारा धाराप्रवाह भगवान् शिव पर करने से अनेक प्रकार के भोग्य पदार्थों की प्राप्ति होती है। इक्षुरस (गन्ने का रस) की धारा से सभी प्रकार के आनन्द की प्राप्ति होना कहा है। गङ्गाजल की धारा से भोग, मोक्ष दोनों प्रकार का फल लाभ होना वर्णन किया है। मधु (शहद) की धारा से राजयक्ष्मा (टी. बी.) बवासीर, वायु का दर्द आदि कष्टसाध्य रोगों से मुक्त होना बतलाया है। अधिक दिनों से आने वाले पुराने ज्वर (बुखार) से छुटकारा पाने हेतु चन्दन मिश्री मिश्रण कर (मिला कर) जलधारा चढ़ाना वर्णन किया है।

भगवान् शिव पर धारा प्रवाह करने वाला पात्र (बर्तन) सोने का हो या चाँदी का हो, यह दोनों ही नहीं हो सके तो शुद्ध नूतन मिट्टी का पात्र (घड़ा) भी लिया जा सकता है। केवल गङ्गा जल या शुद्ध पवित्र दुग्ध या जल से ही धारा प्रवाह करना हो तो पीतल का पात्र हो सकता है किन्तु गन्ना का रस या घृत पंचामृत आदि के धाराप्रवाह में पीतल का नहीं होना चाहिए। सभी प्रकार की विघ्न बाधा दूर करने को, रोग निर्युक्त करने को, सुख शान्ति समृद्धि वृद्धि हेतु पञ्चामृत की धारा प्रवाह सोने, चाँदी या नये मिट्टी के बर्तन द्वारा करना चाहिये। लोहा, स्टील, काच, चीनी, मिट्टी, प्लास्टिक का वर्तन इस कार्य में बिलकुल नहीं लेना चाहिए।

(स्कन्दपुराण, शिवपुराण, देवीभागवत, ब्रह्मपुराण आदि) ग्रन्थों से सारांश रूप में ग्रहण कर लिखा गया है।)

सोपान

(८)

प्रदक्षिणा (परिक्रमा)

पूजा विधान (पद्धति) की पुस्तकों में आता है--

यानि कानि च पापानि ज्ञाता ज्ञातकृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणं पदे पदे ।।

कई एक पुस्तकों में 'ज्ञाता ज्ञातकृतानि च' के स्थान पर 'जन्मान्तर कृतानिच' पाठ भी मिलता है । भाषार्थ में इस प्रकार समझें कि जैसे, तैसे या जहाँ कहाँ, जान अनजान में, इस जन्म में या पहले जन्म में, जो भी पाप हुए या किये हैं । प्रदक्षिणा (परिक्रमा) के द्वारा (लिए) जो पैर बार बार उठाये, रखे दाते हैं, उससे वे समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं ।

धर्म शास्त्रों में प्रदक्षिणा (परिक्रमा) विषय में बहुत लिखा मिलता है, जो संक्षेप में इस प्रकार है ।

प्रदक्षिणा (परिक्रमा) द्वारा स्वयं उपासक (परिक्रमा करने वाला) अपने पापों को नष्ट करता है, और सात्त्विक व पवित्र होता है । इसी प्रकार देवताओं पर चढ़ाया हुआ जल, पञ्चामृत, प्रसाद, पुष्प, पत्रादि, निर्माल्य ग्रहण व सेवन करने पापों का नाश होता है । पवित्रता, मेधा शक्ति, ज्ञान शक्ति आदि पवित्र भावनाएँ जागृत होती हैं ।

प्रदक्षिणा (परिक्रमा) क्यों ? और किस किस प्रकार करें, इस विषय में प्राचीन विज्ञान द्वारा पाया जाता है कि दिव्य शक्ति

और उसका विशिष्ट तेज स्वभावतः दक्षिणावर्त होते हैं। इस विषय के उदाहरण में सूर्य चन्द्रमा कहे गये हैं। ये जब दक्षिणावर्त होते हैं बड़े सुहावने व स्वास्थ्यलाभपद होते हैं, नेत्रों व शरीर को सुख लाभ प्रदान करते हैं। याने प्रत्येक प्रकार में दक्षिणावर्त भ्रमण उत्तम, सात्त्विक, श्रेष्ठ, पुण्यप्रद और दिव्य है। दक्षिण भाग दाहिना अङ्ग ही पवित्र शुद्ध और प्रभावोत्पादक होता है। इसी से दाहिना हाथ, दाहिना अङ्ग, दायां मार्ग ये सभी श्रेष्ठ, शुभ, धर्म कार्य करने में प्रयुक्त करने योग्य कहे गये हैं।

जिस स्थान पर देवता स्थापित हों या पूज्य पवित्र शरीरधारी आसनादि पर विराजमान हों, उस स्थान से निश्चित दूरी तक देवता या उत्तम परमाणु या भावनाएं रहती हैं व दक्षिणावर्त रूप में ही प्रभावयुक्त होती हैं। इसलिये अपने दाहिने हाथ से ही प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करना योग्य कहा है। इसका प्रभाव भी अलग-अलग रूपों, अंशों में होता है, देवता व पूज्यों के उत्तम फलप्रद प्रभाव, न्यूनाधिक प्रकाशमान, उनकी कला, पूजन, प्रभाव, स्थापित, पवित्रता पर ही अधिक निर्भर हैं। यह प्रभाव दक्षिणावर्त प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करने से ही होता है, इसी को ही प्रदक्षिणा (परिक्रमा) कहा गया है।

योग्य, दिव्य, सुसंगत, परिक्रमा जितनी अधिक संख्या में की जावेगी, उतने ही अधिक प्रभावशाली तेजपुंज, पवित्र, परमाणु प्रदक्षिणा करने वाले व्यक्ति के शरीर में प्रविष्ट होकर प्रभाव करेंगे। जैसे पवित्र गङ्गादि में अधिक बार स्नान करने से अधिक पुण्यफल व शरीरशुद्धि होती है, उसी प्रकार से अधिकाधिक प्रदक्षिणा करने से शरीर से अधिक आत्मिक शुद्धि होती है। इन सबके विपरीत कार्य से मानसिक, शारीरिक व आर्थिक नुकसान होता है। इसलिए बांई ओर से परिक्रमा (प्रदक्षिणा) करना त्याज्य व पाप होता है। इस प्रकार यह प्रदक्षिणा (परिक्रमा)

केवल परम्परागत अन्ध-विश्वास नहीं है किन्तु तथ्यपूर्ण विज्ञान पर आधारित है। आधुनिक विज्ञान इसकी सापेक्षितता व महत्व को इस प्रकार स्पष्ट करता है—

विश्व में कोई भी स्थान परमाणुरहित नहीं है. किसी न किसी प्रकार के परमाणु अवश्य सभी स्थानों में पाये जाते हैं। ये इतने सूक्ष्म कण हैं कि साधारणतः प्रत्येक की नेत्रदृष्टि से नहीं देखे जा सकते हैं। उनमें से कुछ एक का कार्य विशेष वस्तु, पदार्थ, प्राणी, जड़ चेतनादि को गुण शक्तिहीन करना, विकृत करना व नष्ट कर देना है। ये परमाणु प्रतिक्षण अपने में कार्यरत रहते हैं चाहे कोई कैसा ही कार्य करता रहे, किसी को इसका ज्ञान रहे या नहीं रहे।

प्राचीन वेद शास्त्रों में इनको ही दूसरे रूप तथा नाम से देवता व राक्षस कहा गया है। प्रत्येक कार्य में प्राणी, जड़ चेतनादि सभी पर अनुकूल परमाणुओं का प्रभाव मिलता है तो वह वस्तु, पदार्थ प्राणी आदि उन्नत, प्रभावशाली गुणयुक्त हो जाता है और यदि प्रतिकूल परमाणुओं का प्रभाव हो जाता है तो वह वस्तु पदार्थ प्राणी, जड़चेतनादि अस्वस्थ, हीनदशा, कमजोर गुणहीन, विकृत, विकलांग होते हैं और अन्त में नष्ट हो जाते हैं।

वेद शास्त्रों में अनुकूल परमाणु के प्रभाव से लाभ प्राप्त करने और प्रतिकूल परमाणु के प्रभाव से बचने के लिए अनेक नियम, विधान व प्रकार बतलाये गये हैं। उनके अनुसार यदि मनुष्य चलकर लाभ उठाना चाहे तो उसी प्रकार लाभ प्राप्त कर सकता है। यदि अज्ञानवश उपेक्षा करके या उन नियमों का अन्य किसी कारणवश पालन नहीं करता है तो प्रतिकूल प्रभाव से प्रभावित होकर स्वतः ही हीन दशा को प्राप्त होता है।

प्रदक्षिणा (परिक्रमा) के विषय में भी यही बात लागू होती है। उत्तम, पवित्र, प्रभावशाली किसी देवता की पूजा आराधना की

जाती है या कोई देवता प्रतिष्ठापित है या कोई पवित्र आत्मा किसी ऋषि साधू-सन्त या अपने पूजनीय गुरुजन, माता, पिता के पञ्चतत्त्वधारी शरीर रूप में स्थित है, जो कभी भी अपना अनिष्ट नहीं कर सकती। उनकी आप प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करते हैं तो उनमें जो पवित्रता, पुण्यता या अपने प्रति प्रेम स्वान्तना, सुख समृद्धि वृद्धि हेतु भावनाएँ हैं, आप में प्रविष्ट होकर लाभ पहुँचायेगी और ऐसा करने से आप पर उस समय जो प्रभाव होगा उसका लाभ तो आप ले ही लेंगे, किन्तु उनकी भावना आगे के लिये आपके और भी अनुकूल होकर सहायक होती रहेगी। इस प्रकार आधुनिक युग के विज्ञान के परमाणु (जिनको प्राचीन मत अनुसार देवता मानें) आपको हर प्रकार का लाभ प्रदान करेंगे और प्रतिकूल परमाणु या राक्षसादि परमाणु दूषित प्रभावों द्वारा होने वाले अनिष्टादि से भी छुटकारा प्राप्त हो जायेगा। इसके विपरीत प्रदक्षिणा यदि प्रतिकूल परमाणुओं यथा राक्षस भूत प्रेतादि या दूषित आत्माओं की की जाय तो परिणाम भी अधिकतर प्रतिकूल ही होता है। इन बातों को ध्यान में रखकर प्रदक्षिणा अवश्य शास्त्रोक्त विधि अनुसार ही करके उसका लाभ प्राप्त करना चाहिये।

प्रदक्षिणा (परिक्रमा) के विषय में एक वैज्ञानिक आधार और भी प्रभावित करता है उसे भी ध्यान से देखें। यदि चुम्बक को किसी मेज, चोकी, पट्टा आदि पर रख दिया जावे और उसकी चुम्बकत्व क्षमता की परिधियाँ चारों ओर निर्धारित कर दी जावे और तत्पश्चात् सूई को चुम्बकत्व क्षमता की परिधि के बाहर घुमाया जावे तो उस सूई पर चुम्बक का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा; किन्तु ज्यों ही सूई चुम्बकत्व की परिधि के भीतर आ जावेगी, वह तुरन्त चुम्बक के पास जाकर उससे चिपक जावेगी। इसी प्रकार देवता व शरीरधारी पवित्र पूज्य आत्मा का प्रभाव उसकी प्रदक्षिणा(परिक्रमा) करने वाले या पूजा करने वाले की आत्मा पर इस प्रकार पड़ता है कि वह उसे आत्मसात् कर लेती है।

सारांश यह है कि प्रदक्षिणा करना एक महान् पुण्यतम पवित्र संचय है और न करना पाप। बाँईं ओर से प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करना महापाप है। यहाँ यह प्रश्न होता है कि यदि परिक्रमा नहीं करें, तटस्थ ही रह जायें तो पाप कैसे ?

प्रदक्षिणा करने से साधक की जो ज्योतिपुञ्ज, दिव्य, पवित्र, पारमार्थिक, बुद्धि-वृद्धि, मेघाशक्ति संचित होती हैं और विघ्न, अरिष्ट, दरिद्रता, आलस्य तथा पापों का नाश आदि लाभ होते हैं। प्रदक्षिणा न करने पर इन लाभों से वंचित रह जाते हैं। प्रदक्षिणा योग्य की प्रदक्षिणा न करके तटस्थ रहने से यह एक अभावात्मक (निगेटिव) पाप होता है।

इसी प्रकार से उल्टी, बाईं ओर से प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करने से दूषित प्रभावशाली (पोजेटिव) पाप होता है। क्योंकि वामावर्ती (बाँईं ओर) प्रदक्षिणा (परिक्रम) में जो दूषित प्रभाव युक्त परमाणु या दुष्टप्रकृति आत्माएँ, राक्षसादि की प्रवृत्ति, भावनाएँ रहती हैं वे शरीर व आत्मा में प्रविष्ट हो जाती हैं। जो संघर्ष, उदासीनता, दुष्ट बुद्धि, अस्वस्थता, आलस्य आदि से प्रभावित करती हैं और समय समय पर अपना प्रभाव फैलाकर अनेक प्रकार से कष्ट, हानि तथा दुःख देती हैं। यह देवी प्रकृति विज्ञान (डिवाइन फीजिक्स) है।

इस विषय में महाकवि कालिदास रचित रघुवंश काव्य का दृष्टान्त देखें। इक्षाकुवंश के महाराजा दिलीप को स्वर्ग से पृथ्वी पर आते समय देवलोक में दिव्य कामधेनु दिखाई दी; किन्तु उस कामधेनु की उपेक्षा कर उसकी प्रदक्षिणा बिना किये हुए ही सीधे पृथ्वी पर आगये। अन्त में गुरु वशिष्ठ के आदेशानुसार कामधेनु की पुत्री नन्दिनी गो की कई वर्षों तक अनन्य सेवा की जिसके फलस्वरूप कामधेनु ने प्रसन्न होकर राजा को पुत्र प्राप्ति का वर दिया। इस पर विचार करें। छोटी सी गलती के कारण कितना कठिन प्रायश्चित्त राजा को करना पड़ा।

जब कोई लाभकारी इच्छित वस्तु, पदार्थ तथा समय साधारणतः अनायास ही प्राप्त होता हो, तो उसे ग्रहण करना (लेना) ही श्रेयस्कर है। यह नियम-लाभ व्यवहार स्वरूप ही न होकर देवी परमार्थिक व आस्तिक भावात्मक कार्यों में भी प्रयोग में आता है।

अपनी पूजनीय शक्तियों की उपेक्षा करना पाप व शापयुक्त माना गया है और पश्चात्ताप व उसका दण्ड पाने पर ही उससे मुक्ति मिलती है; किन्तु मुक्ति व दण्ड पाने में प्राणी (जीव) को कितना कष्ट होता है, यह फिर परिणाम प्राप्त होने पर ही अनुभव होता है।

इसलिए ऐसा समय ही नहीं आने देना चाहिये कि प्रायश्चित्त या दण्ड का भागी होना पड़े। पूजनीय दिव्य शक्तियों व पूजनीय माननीय महानुभावों का पूजन और प्रणाम, नमस्कार, सत्कार, प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करना अतीव आवश्यक, पुण्यतम, पवित्र और प्रत्यक्ष अनुभवों में फल प्रदान करने वाला है। सभी प्रकार की दक्षिणावर्ती गतियाँ लाभप्रद होती हैं।

आधुनिक विज्ञान में प्रकाश, उष्णता चुम्बक, आकर्षण, विद्युत् ध्वनि, शक्ति आदि होती हैं उसी प्रकार देवी-विज्ञान में भी ये सभी शक्तियाँ संगृहीत हैं जैसे--देवी प्रकाश में तेजस्विता, दैवी चुम्बक आकर्षण, दिव्यशक्ति में विद्युतशक्ति के रूप में मन्त्र-सामर्थ्य देवकला, दैवीध्वनि में योगिक दशनाद, अनाहतनाद। ये सभी विज्ञान हैं, ये तो सभी प्रकारों में देखने योग्य हैं--

प्रदक्षिणा की संख्या के विषय में लिखा है--

एकं चण्ड्या रवौ सप्त तिस्रो दद्यात् विनायके ।
चतस्रो केशवो देया शिवस्यार्धप्रदक्षिणा ।।

प्रदक्षिणा (परिक्रमा) प्रकारों में न्यून से न्यून संख्या उपर्युक्त बतलाई गई है। भगवान् शिव की परिक्रमा के अतिरिक्त सभी

देवी देवताओं तथा पूज्यवर्यों की प्रदक्षिणा (परिक्रमा) दक्षिणावर्त करने का विधान है इसलिए साधारणतः समझने हेतु स्वस्तिक चिह्न 卐 अच्छा उदाहरण है। प्रदक्षिणा इसी के अनुसार करनी चाहिये। इसके लिए एक रेखाङ्कित चित्र संख्या (१) भी दिया गया है, जिसमें और भी स्पष्ट ज्ञान हो सकेगा।

यहाँ मुख्य विषय भगवान् शिव की परिक्रमा (प्रदक्षिणा) का है। इसको स्पष्ट दर्शाया जाता है। इसे इस प्रकार से समझें कि उपर्युक्त विषय में दक्षिणावर्त प्रदक्षिणा का विधान भगवान् शिव की प्रदक्षिणा में नहीं, किन्तु अन्य सभी देवी देवताओं तथा अन्य पूज्यवरों के लिये है।

भगवान् शिव की प्रदक्षिणा उपर्युक्त प्रकार से न होकर एक विशेष प्रकार से करनी होती है। भगवान् शिव की पूजा करते समय पञ्चामृत द्वारा पूजन करने के पश्चात् और रुद्राभिषेक करने से पहले कई एक पूजा विधानों में आता है—

'उत्तरे निर्माल्य विसृज्य'! ऐसी एक विधि है। यह विधि उत्तरतः चण्डीश्वराय नमः' इस उच्चारण के साथ सम्पन्न की जाती है। यहाँ उत्तरे व उत्तरतः इन दोनों शब्दों का अर्थ एक उत्तर दिशा व दूसरा अनन्तर याने बाद में वापस होना है।

जब भगवान् शिव का पूजन अभिषेक किया जाता है उस समय शिवजी के क्षुद्रगण और भगवान् शिव श्मशानवासी होने से भूत, प्रेत, योगिनी, शाकिनी आदि दूषित आत्मागण तथा पूजक के कुलदेवता, पितृगण, अन्य गुप्त रूप में रहने वाले आराध्यदेव, वास्तुदेवता आदि आदि अनेक देवता शिवलिङ्ग के पास उत्तर दिशा में तीर्थ प्रसाद के लिए एकत्र होते हैं। उस समय परम शिव-भक्त श्रीचण्डीश्वर उनका नियन्त्रण करते हैं। भगवान् शिव की महान् कृपा से यह महत्त्व उन्हीं को प्राप्त है। पूजा में जो द्रव्य-पदार्थ पूजोपचार द्वारा चढ़ाये जाते हैं, वे भगवान् शिव के स्पर्श

से पुनीत, पुण्यप्रद, पापनाशक, धन-धान्य, सौभाग्य, स्वास्थ्य, समृद्धि अध्यात्मशक्ति वर्द्धक कही गई हैं।

यहाँ देवतागण भी दो प्रकार में विभक्त होकर रहते हैं। कुछ एक सोम्य-प्रकृति हैं, जो अनेक लाभ, पुण्यादि शुभ फल प्रदान करते हैं, दूसरे क्रूर प्रकृति हैं। वे अनिष्टादि अशुभ फल करते हैं। यह सभी भगवान् शिव की जलहरी। (जल जिस नाली द्वारा निःसृत होता है) उस स्थान पर रहते हैं। उस नाली व जल को तीर्थ समान कहा गया है। जो उसका उल्लंघन करता है, वह उस तीर्थ का अपमान करता है और फलतः वहाँ जो क्रूर प्रकृति गण रहते हैं। वे उस अपमान कर्त्ता (– उल्लंघन करने वाले). को अनेक प्रकार की भावनाओं द्वारा अनिष्टादि फलों से प्रभावित करते हैं। अतः उसका उल्लंघन करना सर्वथा त्याज्य(वर्जनीय) है।

अन्य सभी देवगणों की पूजा व पूजनीयों की पूजा सत्कार में भी भूतादि गणों को छोड़कर अन्य सभी देवगण उपस्थित हो जाते हैं। जो दक्षिणावर्त (दांई ओर) से प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करने वाले को लाभ प्रदान करते हैं, और वामावर्त (बाईं ओर) से प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करने वाले को अनेक प्रकार के अनिष्ट अशुभ फल देते हैं।

भगवान् शिव की प्रदक्षिणा में दोनों प्रकार से चलना होता है तो प्रश्न उत्पन्न होता है कि वहाँ दक्षिणावर्त प्रदक्षिणा में तो प्रदक्षिणा करने वाले को लाभ प्राप्त होगा, किन्तु जब वह उत्तरतः होकर वापस वामावर्त प्रदक्षिणा में चलेगा तब क्या क्रूर प्रकृतिवाले देवगण उसे अनिष्ट नहीं देंगे? इसका उत्तर इस प्रकार है कि जब परिक्रमा (प्रदक्षिणा) करने वाला दक्षिणावर्त चलेगा उसे सोम्य प्रकृति देवगण लाभ प्रदान करेंगे और वह उस जलहरी (जल, पञ्चामृतादि निसरण नाली) जिसको तीर्थ रूप में सम्मान प्राप्त है, उसका सम्मान कर उल्लंघन नहीं करेगा तो शिव के परम भक्त श्री चण्डीश्वर उस समय उन क्षुद्र क्रूर प्रकृति देवगणों को ऐसे

कुप्रभाव अनिष्टकारी कार्यों के करने से रोके रखते हैं, वहाँ उनका उस तीर्थ जल का सम्मान करने वालों के प्रति नियंत्रण करना कर्त्तव्य है। इस प्रकार शिव की परिक्रमा (प्रदक्षिणा) में प्रथम गति दक्षिण फिर उत्तर फिर दक्षिण फिर उत्तर। यह एक निश्चित गति है कि इसमें आरम्भ में दक्षिण व अन्त में दक्षिणवर्ती ही रहती है। मध्य सभी गौण रहती हैं। इसी कारण यह दोष रहित प्रदक्षिणा होती है।

श्री महादेवजी की परिक्रमा (प्रदक्षिणा) में आरम्भ व अन्त दक्षिण दिशा ही क्यों हुई इसका कारण भी स्पष्ट किया जाता है। शिवालय के द्वार आमतौर पर शास्त्रानुसार पूर्व या पश्चिम में ही होते हैं। अब मान लें कि शिवालय का द्वार पश्चिम में है तो साधक (पूजक) शिवजी के सामने पूर्व में मुख करके खड़ा होगा। इस स्थिति में दक्षिणावर्त (दाईं ओर) परिक्रमा (प्रदक्षिणा) करेगा तो पहला एक चौथाई दाईं तरफ व पुनः तीन चौथाई भाग बाईं तरफ जाकर वापस दाएँ आते हुए प्रदक्षिणा (परिक्रमा) पूर्ण करेगा।

इसके विपरीत यदि शिवालय का द्वार पूर्वाभिमुख हो तो साधक शिवजी के सामने पश्चिम में मुख करके खड़ा होगा। इस स्थिति में दक्षिणावर्त प्रदक्षिणा करेगा तब पहला भाग एक तिहाई दाहिनी तरफ फिर वापस व पुनः एक चौथाई भाग बाईं तरफ जाकर वापस दाएँ आते हुए प्रदक्षिणा पूर्ण करेगा।

इन सभी बातों में किसी प्रकार का सन्देह नहीं है। यह निर्देश पथप्रदर्शन हेतु कई प्रकार भिन्न-भिन्न करके बतलाने की चेष्टा की गई है। इस प्रकार को स्पष्ट समझाने हेतु दो चित्र भी बनाकर दिये गये हैं, उनको देखने से स्पष्ट और तत्काल ज्ञान हो सकेगा। चित्र संख्या (२) पश्चिम द्वार शिवालय का है और चित्र संख्या (३) पूर्व द्वार शिवालय का है।

उक्त वर्णन से देवाराधनों, पूजा अर्चनाओं में प्रदक्षिणा कितनी आवश्यक व प्रभावशाली है यह अब और कहने की आवश्यकता नहीं रह जाती। कार्यकर्त्ता स्वयं व्यावहारिक रूप में करके, प्रभावित होकर लाभ प्राप्त करें।

* * *

चित्र संख्या (१)

भगवान् शिव के अतिरिक्त सभी देवी देवताओं व पूज्यवरों की प्रदक्षिणा (परिक्रमा) क्रम-निर्देशन हेतु

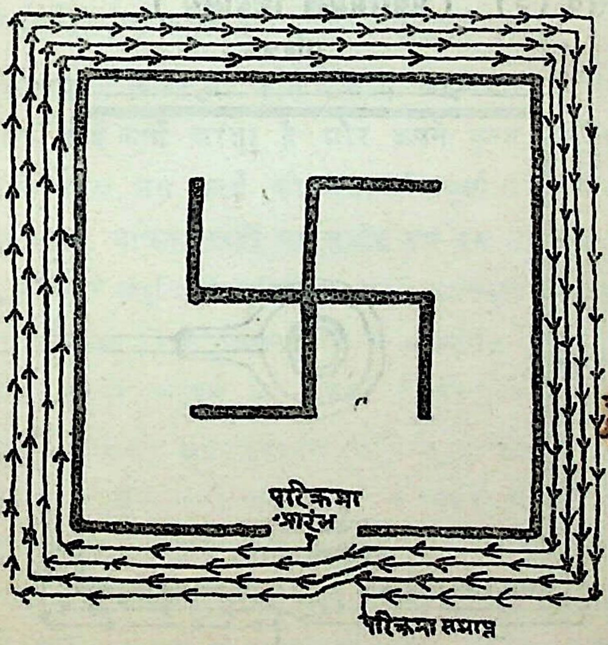

ओ३म् नमः शिवाय

चित्र सं० (२) (पश्चिमाभिमुख शिवालय)

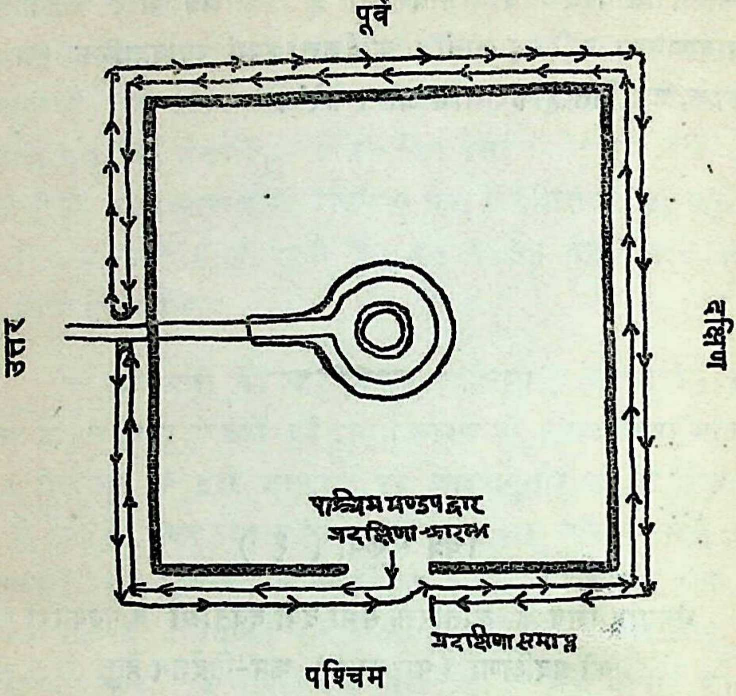
पूर्व
उत्तर
दक्षिण
पश्चिम मण्डप द्वार
प्रदक्षिणा-प्रारम्भ
प्रदक्षिणा समाप्त
पश्चिम

चित्र सं० (३) (पूर्वाभिमुख शिवालय)

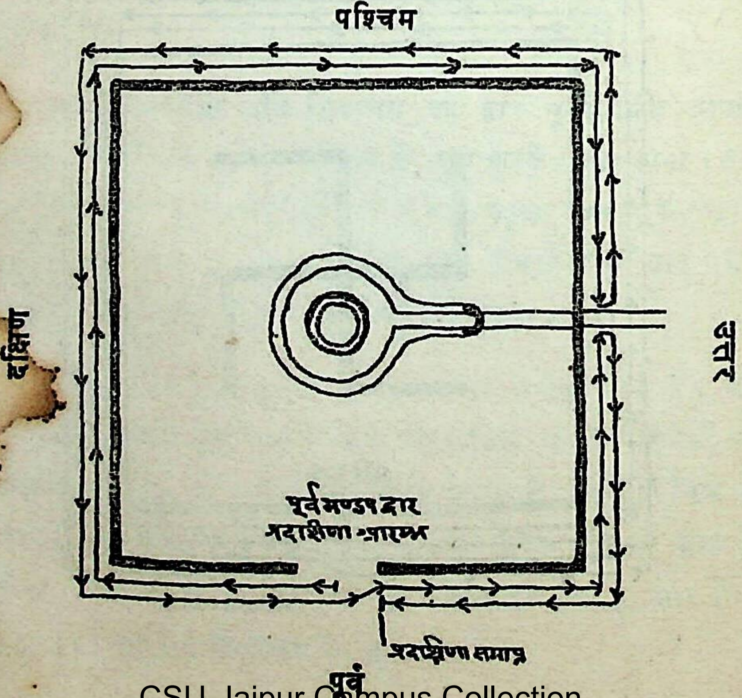
पश्चिम
दक्षिण
उत्तर
पूर्व मण्डप द्वार
प्रदक्षिणा-प्रारम्भ
प्रदक्षिणा समाप्त
पूर्व

सोपान

(६)

पूजा में क्षमा–याचना

क्षमा–याचना एक छोटा सा शब्द युग्म है, किन्तु बिगड़ी हुई बात को पूर्ण करने में सिद्ध औषधि (अमृत) रूप से कार्य करने वाला है। किसी भी त्रुटि को पूर्ण करने में इसका प्रयोग अत्युत्तम फलप्रद है।

देवार्चन को यथाविधि पूर्ण करने में कोई भी समर्थ होना संभव नहीं, अतः देवार्चन में सभी स्थानों में क्षमा याचना करने का विधान है। क्षमा याचना करते समय पूजक नमन भाव पूर्ण होने से ही फल सिद्धि प्राप्त करता है।

साधारणतः किसी भी कार्य में देखा जा सकता है कि यदि कोई व्यक्ति कोई कार्य करता है और अपने पूज्य, मालिक या अधिकारी के समक्ष, उस कार्य को यथाविधि पूर्ण कर देने पर भी नमनपूर्वक क्षमा याचना शब्दों का प्रयोग कर उस कार्य को प्रस्तुत करता है, तो कार्य संतुष्टि के अतिरिक्त उस कार्यकर्त्ता पर उस पूज्य मालिक या अधिकारी का कितना ध्यान आकर्षित होता है, यह स्वयं कर्त्ता प्रत्यक्ष अनुभव कर सकता है और कोई कार्यकर्त्ता किसी कार्य में किसी असमर्थतावश कोई त्रुटि रखकर भी यदि क्षमाप्रार्थनापूर्वक उस कार्य को प्रस्तुत करता है तो उन त्रुटियों पर ध्यान न देकर उस कार्य को पूर्ण हुआ मानकर पूज्य, मालिक, आफीसर ग्रहण कर लेते हैं। यह महत्त्व क्षमा याचना का है। अतः चाहे कार्य विधिवत् पूर्ण हो या असमर्थतावश त्रुटियुक्त हो, क्षमा

याचना आवश्यक है, इसी प्रकार से प्रत्येक पूजा विषय में समझना चाहिये, और पूजा की विधि पूर्ण करके क्षमा प्रार्थना अवश्य करना चाहिये । पूजापद्धतिविधानों में सभी जगह इसका वर्णन मिलता है—पूजा विधानों में आता है—

मंत्रहीनं क्रियाहीनं, भक्तिहीनं महेश्वर ।
यत्पूजितं मया देव ! परिपूर्णं तदस्तु मे ॥
यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर ॥

हे भगवान् ! महेश्वर ! मेरी यह पूजा मंत्रपूजनविधि (क्रिया) एवं भक्ति से हीन है, आप ही इसे पूर्ण करेंगे । पूजा में प्रयुक्त, जो अक्षरपदभ्रष्ट एवं मात्रा हीन हों उसके लिये भी हे देवाधिदेव ! आप क्षमा करें ।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥

आप ही मेरे माता और पिता हो, आप ही भाई व सखा हो, आप ही मेरी विद्या व धन हो । हे देवाधिदेव ! मेरे तो सब कुछ आप ही हो ।

मैं तो आपकी शरण शरण शरण में हूं ।

इसी प्रकार की अन्य स्तुति जो बृहत्पूजा प्रकार में लिखी हैं उसमें देखकर कर सकते हैं । अन्त में फिर कहें “अनेन पूजनेन श्री साम्बसदाशिव प्रीयताम्” ॥ ॐ नमः शिवाय ॥

* * *

सोपान

(१०)

आशीर्वाद की आवश्यकता

मनुष्य प्रायः बुद्धिजीवी, आकांक्षाओं से भरा हुआ प्राणी है। वह हमेशा अपनी इच्छाओं की पूर्ति में बुद्धि, बल तथा परिश्रम का उपयोग करता रहता है; किन्तु इन कर्त्तव्यों के साथ-माथ वरदान, अभयदान तथा आशीर्वाद प्राप्त करना भी परमावश्यक है।

देवताओं, ऋषियों, साधु-सन्त महात्माओं, गुरुजनों, माता-पिता अन्य पूजनीय, माननीय, अपने रोजी रोटी देने वाले मालिकों, जिन अधिकारियों के आधीन में रहकर कार्य करते हों, उनके उद्देश्य नियमों का पालन करना, उनके समक्ष नतमस्तक होना, उनकी इच्छित वस्तुओं पदार्थों, के द्वारा पूजन, भेंट करना, अपने समानता वाले इष्टमित्रों, साथियों का उनके योग्य आदर सत्कार करना, दीन दुखियों की सेवा सहायता करना, वेदों, उपनिषदों, श्रुति, स्मृति, पुराणोक्त अन्य सभी ग्रन्थों में लिखा है।

किन्तु ये उपदेश क्यों दिये गये हैं? इससे क्या होता है? मनुष्य ऐसा क्यों करे? इसका फल क्या है और वह फल किससे प्राप्त होता है। इसको कभी कोई विचार व मनन द्वारा जानने की चेष्टा नहीं करता और इन कर्त्तव्यों की आजकल प्रायः अवहेलना होने लग गई है। फलतः देवाराधना में भी फल सिद्धियों में कमी दृष्टिगोचर होने लगी है। अपने सम्पर्की पूजनीय माननीय व समान अवस्था वाले प्यारे प्राणियों के द्वारा भी सहयोग व फल-सिद्धियों में कमी आने लगी है।

हमारे धार्मिक ग्रन्थों के उपदेश बहुत तथ्यपूर्ण प्राकृतिक रहस्यमय तथा विज्ञान की कसौटी पर खरे उतरने वाले हैं और बहुत अन्वेषण (खोज) व परिणामों को दृष्टिगोचर करके ही लिखे व कहे गये हैं। उनका पालन करने पर सही रूप में परिणाम प्राप्त होते हैं। अतः हम सभी को उन उपदेशों का ज्ञान प्राप्त कर पालन करना चाहिए। अवहेलना कर छोड़ने से ही लाभ से वंचित होते हैं। आशीर्वाद विषय का एक वेदोक्त मन्त्र है।

अक्षतान् विप्रहस्तात्तु नित्यं गृह्णन्ति ये नराः।
चत्वारि तेषां वर्धन्ते आयुः कीर्तिर्यशोबलम्॥
श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमा विधात् पवमानं महीयते।
धनं धान्यं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः॥
मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णा सन्तु मनोरथाः।
शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तव॥

इसका भावार्थ इस प्रकार है कि पूज्यवरों ~~के~~ (ब्राह्मणों के) हाथ से जो मनुष्य नित्य अखण्ड चावल आशीर्वाद रूप में प्राप्त करते हैं, उसके प्रभाव से आयु, कीर्ति, यश, बल की वृद्धि होती है। श्री-लक्ष्मी, तेजस्विता, दीर्घायुक्त, आरोग्यत्व और पवित्र महत्त्व प्रकाशित होता है, पूर्ण जीवन, पूर्ण सुख सम्पन्न व्यतीत होता है। समस्त शुभकामनाएँ पूर्ण रूप से फलप्रद होती हैं। शत्रुओं की बुद्धि नष्ट होती है। अच्छी बुद्धि वाले, मित्रों, सहयोगियों की वृद्धि होती है।

इसी प्रकार की एक फारसी की कविता (नज्म) राजनीतिज्ञ व धर्म के महान् विद्वान् किसी कवि ने बहुत ही सुन्दर ढ़ंग से थोड़े शब्दों में अत्युत्तम कही है।

दर हजरत बादशाह ने
हिफ़्ज चश्म,
दर खिदमत दरवेशाने
निगाहे दरियायदिल,
दर चश्में इल्मा
पासबानी जबान !

अर्थ—तहजीब का तकाजा है कि बादशाहों (देवताओं, अफसरों, मालिकों, अपने गुरुओं, माता-पिता) के सामने जाओ तो आँखें नीची कर के जाओ। याने विनय भाव से जाओ। साधू-सन्तों और फकीरों (संन्यासियों) के सामने जाओ तो दिल पर पूरा काबू रखकर जाओ। याने मन को वश में रखकर जाओ (दूसरे शब्दों में यों समझो कि श्रद्धा-भक्तियुक्त भावना से जाओ, इसमें कमी न रखो)। विद्वानों, सज्जनों, बड़े आदमियों के सामने सभा सोसाइटियों में जाओ, तो जबान पर काबू रखो (याने नपी तुली नेक (उचित) बात ही बोलो। यदि इसकी पाबन्दी (पालन) करोगे तो इस उम्र (जीवन) में अपनी सभी मुरादों-(मनो-कामनाओं) को पूर्ण कर सकोगे।

उपदेश नियम इस प्रकार कहे हैं किन्तु अपने अनुभवों को भी सामने रखकर देखें कि अपने कर्त्तव्यों के साथ साथ इन उपर्युक्त उपदेशों का पालन भी करते हैं तो हमारी सभी शुभ कामनाओं की कार्य सिद्धियाँ पूर्णतः सफल होती हैं, कभी असफल नहीं होती।

यदि किसी कार्य विशेष का उद्देश्य न लेवें और कोई आकांक्षा भी न रखें, केवल जो नियम उद्देश्य थोड़े शब्दों में ऊपर कहे गये हैं, इनका पालन ध्यानपूर्वक करें तो बिना किसी इच्छा के प्रकट किये ही शुभ कामनाएँ स्वतः ही पूर्ण होती हुई और कार्य सफलता की सिद्धि आपको दिखाई देगी क्योंकि सही रूप में नियम पालन करने से इच्छाएँ अपने आप मनोभाव द्वारा ही पूर्ण हो जाती हैं। मुख से कहने की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि जैसे अपने लिये यह उद्देश्य नियम पालन करना आवश्यक है इसी प्रकार से फल सिद्धि देने वालों का उसकी पूर्ति करने का भी प्राकृतिक उद्देश्य व नियम है।

उदाहरण स्वरूप—पूजा, भेंट, प्रणाम, नमस्कार करते समय अपने पूज्यों के सामने ज्योंही मनुष्य नत मस्तक होते हैं, तत्क्षण

उनका हाथ सहसा ही ऊपर उठता है और वह पूज्य अपने वरदहस्त द्वारा उस प्रणाम नमस्कारादि करने वाले को आशीर्वाद प्रदान करता है। यह एक साधारण बात है कि आपके नम्रतापूर्वक ढंग से नमन होते ही उस पूज्य का हृदय द्रवित हो उठता है और कुछ शब्द जो आपकी सफलता व शुभ कामनाओं के प्रति भरे रहते हैं मुख से उच्चारण करता है। उन्हें सुनकर नमस्कार प्रणामादि करने वाले के मन में पूजनीय माननीय मनुष्यों के प्रति अधिक श्रद्धा भक्ति होती है तो वह अपने पूजनीयों के पैर (चरण) नीचे होकर छूता है। उन पूज्यवरों का तत्काल ही हृदय द्रवित होता है और वह अपना वरद हस्त आशीर्वाद भावनात्मक रूप में प्रणामादि कर्त्ता की पीठ थपथपाते हैं और अपने मुख से सुन्दर आशीर्वादात्मक वाक्य कहते हैं, उस पीठ थपथपाहट से और सुन्दर मृदु आशीर्वादात्मक वाक्य को सुनकर एकप्रकार की शान्ति व सुखप्रद अनुभूति प्रतीत होती है। इसी प्रकार मनोभावना से फल सिद्धियाँ भी कितनी ही वार होते हुये प्रत्यक्ष देखने में आती हैं। मनुष्य यदि ऐसी बार बार की हुई बातों का ध्यान देकर मनन द्वारा अनुभव करे तो अधिकतर ऐसे सच्चे शुभ फलप्रद कार्यों की कितनी ही झाँकियाँ, अपने जीवन में ही घटित हो चुकी हैं, देख सकेंगे तथा स्वयं ही विश्वास व प्रमाण अनुभव कर सकेंगे। और तब माता पिता गुरुजनादि मनुष्य रूप धारण करने वालों द्वारा यह फल प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होना मान लेंगे। इसी प्रकार से अपने इष्ट देवों की पूजा अर्चना द्वारा भी यह फल सिद्धि प्राप्त करने का मन में अवश्य विश्वास व सत्य होना मानना ही पड़ेगा और शास्त्रों के आधार व उपदेश सत्य व सफल प्रमाणित होने में कोई शंका न रहेगी।

यह तो शास्त्र और अनुभवों पर आधारित वर्णन किया गया। अब थोड़ा और देखिये आधुनिक विज्ञानवेत्ता पाश्चात्यदेशीय महान् विद्वान् जो ऐसी खोज (अनुसंधान) में रत हैं क्या कहते हैं।

दैनिक हिन्दुस्तान दिनाङ्क ८ सितम्बर सन् १६७१ पृष्ठ संख्या ५--"पीठ थपथपाना भी रोग निरोधक" लेख।

वाशिंगटन ६ सितम्बर (ए. प्रे.)

न्यूयार्क के एक मनोविज्ञानवेत्ता डाक्टर जे. वेइस (राकफेलर विश्वविद्यालय) ने अपनी रिपोर्ट (अमरीकी मनोविज्ञान संघ के वार्षिक सम्मेलन में) सुनाते हुये कहा कि माता, पिता, पत्नी या अन्य प्यारे या सहकर्मियों द्वारा बार-बार पीठ थपथपाकर बहुत से रोगियों को आन्तरिक फोड़ों (अलसर) के कष्ट साध्य रोग से बचाया जा सकता है। चूहों पर बार बार ऐसे परीक्षण करने के बाद में इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि पेट का फोड़ा पूर्णतः प्रेममयी भावना के संयोग और पीठ की बारबार थपथपाहट से व किसी भय की पीड़ा के रोगियों को इस क्रिया द्वारा पूर्ण स्वस्थ किया जा सकता है। किन्तु यह जब ही संभव है कि रोगी के मन में पीठ थपथपाने वाले के प्रति किसी प्रकार की दुर्भावना व प्रतिशोधक भावना न हो और रोगी की बार बार समय समय पर पीठ थपथपाई जावे और मृदु शब्दों से रोगी को (शाबास आदि) उसे प्रिय लगने वाले शब्दों द्वारा कुछ कहा जाता रहे। इससे शीघ्र और सन्तोषप्रद परिणाम प्राप्त हुये हैं।

रोगी को यह ज्ञात नहीं होना चाहिये कि उस पर यह प्रयोग इसलिये किया जा रहा है। यदि ऐसा ज्ञान क्रिया से पूर्व रोगी को हो तो लाभ में कमी रहती है और स्वस्थ होने में समय लगता है।

मैंने चूहों पर हण्टर द्वारा परीक्षण किये। जब हण्टर उठाता था और चूहों को इस चेतावनी का संकेत मिल जाता था कि अब मार लगने वाली है तो उन्हें लाभ बहुत अल्प मात्रा में होना पाया गया; किन्तु कुछ चूहों को अलग रखा गया और उन्हें यह ज्ञान नहीं होने दिया कि उनको कब हण्टर लगेगा तो उनको शीघ्र लाभ हुआ।

इस प्रकार से इष्ट देवों की पूजा आराधना करना और अपने पूज्यवरों के प्रति श्रद्धा पूजा सेवा व समान वालों के सत्कार कितने

आवश्यक शीघ्र फलप्रद हैं और आशीर्वाद प्राप्त करने का क्या महत्त्व है, अधिक कहने की आवश्यकता नहीं रह जाती सब कुछ समक्ष ही है।

सोपान

(११)

शिव का प्रसाद-भक्षण तथा निर्माल्य-ग्रहण

भारत में अनेकों प्रान्त, अनेकों बोली, भाषा व अनेक ही सम्प्रदाय हैं। प्रायः सभी सम्प्रदाय वाले भगवान् शिव का दर्शन पूजन तो करते हैं, किन्तु प्रसाद-भक्षण व निर्माल्य-ग्रहण में मतभेद रखते हैं, अतः इस विषय में शास्त्राचार दर्शाने का प्रयास किया गया है। आशा है इस प्रयास द्वारा उक्त मतभेद का समाधान समुचित रूप से हो सकेगा।

अनर्हं मम नैवेद्यं पत्रं पुष्पं फलं जलम् ।
मह्यं निवेद्य सकलं कूप एवं विनिःक्षिपेत् ।।

(पद्मे शिवोक्ति)

भगवान् शिव स्वयं कहते हैं कि चढ़ाये हुये नैवेद्य, पत्र, पुष्प, फल, जल सभी कूप (कुएं) में डाल देवें ग्रहण न करें।

इसी प्रकार--

विसर्जितस्य देवस्य गन्धपुष्पनिवेदनम् ।
निर्माल्यं तद्विजानीयाद् वर्ज्यं वस्त्रविभूषणम् ।।
अर्पयित्वा तु ते भूपश्चण्डेशाय निवेदयेत् ।

(स्कन्दे सूतोक्ति)

भगवान् शिव के अर्पण किये हुये गन्ध, पुष्प अन्य पदार्थ (वस्त्र व आभूषणों को छोड़ कर) चण्ड को निवेदन करदें।

यह भी कहा है —

धराहिरण्यगोरत्नं ताम्ररौप्यांशुकादिकान्।
विहाय शेषं निर्माल्यं चण्डेशाय निवेदयत्॥

(निर्णयसिन्धु)

भूमि, वस्त्र, भूषण, स्वर्ण, चाँदी, ताम्र, इन पदार्थों को छोड़ कर बाकी भगवान् शिव के चढ़ाये हुये सभी पदार्थ निर्माल्य चण्डेश्वर को चढ़ा देवें।

इसी प्रकार —

यत्किञ्चिदुपचारं हि लिङ्गोपरि निवेदयत्।
तन्निर्माल्यं महेशानि अग्राह्यं परमेश्वरि॥

(लिङ्गार्चनतंत्र, द्वादशपटल)

यहाँ चण्ड नाम पर शंका उत्पन्न हो सकती है कि भगवान् शिव के लिङ्ग पर चढ़ाये हुए निर्माल्य पदार्थों पर चण्ड के अतिरिक्त किसी को ग्रहण करने या भक्षण करने का अधिकार क्यों नहीं है? यह चण्ड नाम किसका है? भगवान् शिव का प्रसाद बहुत स्थानों पर ग्रहण व भक्षण किया जाता है। इसका कारण व शास्त्र-आधार क्या है? शास्त्रावलोकन से पाया जाता है कि चण्ड भगवान् शिव के गणों के अधिपति हैं और इनकी उत्पत्ति भगवान शिव के मुख से हुई है। यह सर्वदा भगवान् शिव व शिवा की सेवा में तत्पर रहते हैं। शिव भक्तों द्वारा चण्ड की प्रार्थना करने का एक प्रकरण भी मिलता है।

चण्डः सर्वगणेशानः शम्भोर्वदनसम्भवः।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां समे दिशतु काङ्क्षतम्॥

(शिवपुराण, वायवीय संहिता ३१/८०)

समस्त शिवगणों के स्वामी चण्ड, जो भगवान् शंकर के मुख से प्रकट हुये हैं, शिवा व शिव की आज्ञा का आदर करके मुझे अभीष्ट वस्तु प्रदान करें।

शिव निर्माल्य व प्रसाद भक्षण में परिहार भी इस प्रकार बतलाये हैं--

चण्डाधिकारो यत्रास्ति तद्भोक्तव्यं न मानवैः।

(शिवपुराण विद्येश्वर संहिता २२/१६)

जिसमें चण्ड का अधिकार है, मनुष्य उन उन निर्माल्यों या नैवेद्यों का भक्षण न करे।

इसी में यह भी कहा गया है--

चण्डाधिकारो नो यत्र भोक्तव्यं तच्च भक्तितः।

(शिव पु० विद्ये० सं० २२/१६)

जिसमें चण्ड का अधिकार नहीं है; वह भक्तिपूर्वक भक्षण करना चाहिये।

निम्न प्रकार के शिव-लिङ्गों में चण्ड का अधिकार नहीं है और शिव-लिङ्ग का निर्माल्य-ग्रहण व प्रसाद-भक्षण महान् पुण्यप्रद और पापनाशक है।--

बाणलिङ्गे न चाशौत्रं न च निर्माल्यकल्पना।
सर्वं बाणार्पितं ग्राह्यं भक्त्या भक्तेश्च नान्यथा॥
ग्राह्या ग्राह्यं विचारोऽयं बाणलिङ्गे न विद्यते।
तदर्पितं जलं पत्रं ग्राह्यं प्रसाद संज्ञया॥

(बाणलिङ्गार्चनचन्द्रिका तथा मेरुतंत्र, में चतुर्दश पटल)

बाण लिङ्ग के विषय में ग्राह्य तथा अग्राह्य का विचार नहीं करना चाहिये। बाण लिङ्ग पर चढ़ाया हुआ जल पत्र सभी कुछ भक्तिपूर्वक प्रसाद समझ कर ग्रहण तथा भक्षण करना चाहिये।

बाणलिङ्गे च लौहे च सिद्धलिङ्गे स्वयंभुवि ।
प्रतिमासु च सर्वासु न चण्डोऽधिकृतो भवेत् ।।

(शिवपुराण, विद्येश्वर संहिता २२/१७)

बाणलिङ्ग नर्मदेश्वर, लोहस्वर्ण आदि सभी धातुमय लिङ्ग, सिद्ध लिङ्ग (जिससे किसी ने सिद्धि प्राप्त करली हो) कोई सिद्ध महात्मा पुरुष हो उसने शिव-लिङ्ग स्थापित किया हो या ऐसे महापुरुष ने किसी शिव-लिङ्ग की प्रतिष्ठा कराई हो । स्वयम्भू लिंग केदारेश्वर प्रभृति (द्वादशलिंग) इन उपर्युक्त शिव-लिंगों तथा इन शिव की प्रतिमाओं में (मूर्तियों में) चण्ड का अधिकार नहीं है ।

लिङ्गे स्वायम्भुवे बाणे रत्नजे रसनिर्मिते ।
सिद्धप्रतिष्ठिते चैव न चण्डाधिकृतिर्भवेत् ।।

(निर्णयसिन्धु)

स्वयम्भूलिंग, बाणलिंग, रत्ननिर्मितलिंग व रस (पारद) निर्मित लिंग, सिद्ध महात्माओं द्वारा प्रतिष्ठित लिंग में चण्ड का अधिकार नहीं है । अतः ऐसे शिवलिङ्गों का निर्माल्य व प्रसाद भक्षण में कोई दोष नहीं है ।

लिङ्गोपरि च यद् द्रव्यं तद्ग्राह्यं मुनीश्वराः ।
सुपवित्रं च तज्ज्ञेयं यल्लिङ्गस्पर्शबाह्यतः ।।

(शि० पुरा०, विद्ये० संहि० २२/२०)

शिवलिङ्ग पर कोई द्रव्य (पदार्थ) न चढ़ाया गया हो याने शिवलिङ्ग मूर्ति से स्पर्श न कराया गया हो, शिवलिङ्गमूर्ति के सामने रखकर अर्पण किया गया हो तो वह निर्माल्य व प्रसाद पवित्र निर्दोष है । उसे ग्रहण करने व भक्षण करने में कोई दोष नहीं है ।

दृष्ट्वापि शिवनैवेद्यं यान्ति पापानि दूरतः ।
भुक्ते तु शिवनैवेद्ये पुण्यान्यायान्ति कोटिशः ।।

आगतं शिवनैवेद्यं गृहीत्वा शिरसा मुदा ।
भक्षणीयं प्रयत्नेन शिवस्मरणपूर्वकम् ॥
न यस्य शिवनैवेद्यग्रहणेच्छा प्रजायते ।
स पापिष्ठो गरिष्ठः स्यान्नरकं यात्यपि ध्रुवम् ॥
शिवदीक्षान्वितो भक्तो महाप्रसादसंज्ञकम् ।
सर्वेषामपि लिङ्गानां नैवेद्यं भक्षयेच्छुभम् ॥

(शिवपुराण विद्येश्वर संहि० २२/४, ७, ९, १०)

शिवनैवेद्य दर्शन मात्र से समस्त पाप दूर हो जाते हैं। उसके भक्षण से तो करोड़ों पुण्य अपने अन्दर संचित हो जाते हैं। आये हुए शिवनैवेद्य को मस्तक झुका कर प्रसन्न मन से लेना चाहिये और भली प्रकार भगवान् शिव का नाम श्रद्धापूर्वक लेकर भक्षण करना चाहिए जिसके मन में शिव का नैवेद्य लेने की इच्छा न हो, वह बड़ा पापी है, वह निश्चय ही नरकगामी होगा। जिसने शिव की दीक्षा ले रखी हो; ऐसे शिवभक्त को सभी शिवलिङ्गों का नैवेद्य (प्रसाद) शुभ व महाप्रसाद समझ कर अवश्य लेना चाहिये।

अन्यदीक्षायुतनृणां शिवभक्तिरताऽऽत्मनाम् ।
शृणुध्वं निर्णयं प्रीत्या शिवनैवेद्यभक्षणे ॥
शालग्रामोद्भवे लिंगे रसलिङ्गे तथा द्विजाः ।
पाषाणे राजते स्वर्णे सुरसिद्धप्रतिष्ठिते ॥
काश्मीरे स्फाटिके रत्ने ज्योतिर्लिङ्गेषु सर्वशः ।
चान्द्रायणसमं प्रोक्तं शम्भोर्नैवेद्य भक्षणम् ॥
ब्रह्महाऽपि शुचिर्भूत्वा निर्माल्यं यस्तु धारयेत् ।
भक्षयित्वा द्रुतं तस्य सर्वपापं प्रणश्यति ॥

(शिवपुराण विद्येश्वर संहिता २२/१२-१५)

जिन मनुष्यों ने अन्य देवताओं की दीक्षा ले रखी हो और भगवान् शंकर में भक्ति रखता हो, उनके लिए यह निर्णय इस प्रकार किया है।

जिस स्थान पर शालग्राम शिला की उत्पत्ति होती है, उस स्थान के उत्पन्न शिवलिङ्ग में, रस (पारद) द्वारा निर्मित शिवलिङ्ग में, पाषाण तथा स्वर्ण निर्मित शिवलिङ्ग में, देवताओं व सिद्ध महात्माओं द्वारा प्रतिष्ठित लिङ्ग में, केसरनिर्मित शिवलिङ्ग में, स्फटिक मणिमय शिवलिङ्ग में, रत्ननिर्मित शिवलिङ्ग में व समस्त ज्योतिर्लिङ्गों में श्री भगवान् शिव का नैवेद्य ग्रहण (भक्षण) चान्द्रायण व्रत के समान पुण्यप्रद है। ब्रह्महत्या करने वाला मनुष्य भी यदि पवित्र होकर शिवनिर्माल्य भक्षण कर उसे धारण करले तो उसके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं।

इसी प्रकार 'स्कन्धतिथितत्त्व' में भी मिलता है—

ब्रह्महापि शुचिर्भूत्वा निर्माल्यं यस्तु धारयेत् ।
तस्य पापं महच्छीघ्रं नाशयिष्ये महाव्रते ॥

ब्रह्महत्या करने वाला मनुष्य भी शुद्ध होकर शिव निर्माल्य धारण कर लेता है तो उसके पाप शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

जलस्य धारणं मूर्ध्नि विश्वेशस्नानजन्मनः ।
एष जालन्धरो बन्धः समस्तसुरदुर्लभः ॥

(स्कन्दपुराण–काशीखण्ड ४१/१८०)

श्री काशीविश्वनाथ को स्नान कराकर उस जल को मस्तक में धारण करता है वह योगशास्त्र में प्रतिपादित जालन्धरबन्ध के समान पुण्य प्राप्त करता है जो समस्त देवताओं को भी दुर्लभ है।

सभी प्रकार की शंकाओं का समाधान करने के लिए लिखा है—

अग्राह्यं शिवनैवेद्यं पत्रं पुष्पं फलं जलम् ।
शालग्रामशिलासङ्गात् (स्पर्शात्) सर्वं याति पवित्रताम् ॥

(शिवपुराण विद्ये० संहि० २२/१६)

भगवान् शिव को चढ़ाये हुए नैवेद्य, पत्र, पुष्प, फल, जल जो ग्रहण करने, भक्षण करने योग्य न हों वे भी शालग्राम शिला के

संग रखने या स्पर्श करा देने पर सर्व प्रकार से पवित्र होकर ग्रहण करने और भक्षण करने योग्य हो जाते हैं।

* * *

सोपान
(१२)

पूजा-विसर्जन

पूजा-विसर्जन (विदाई) पूजा-विधान (पद्धति) में पूजा की क्रिया का ही एक अङ्ग माना गया है और यह क्रिया क्षमा-याचना के साथ ही सम्पन्न की जाती है।

यह एक सामाजिक ज्ञान का भी अङ्ग है। जैसे किसी के यहाँ कोई माङ्गलिक शुभ कार्य होता है वह अपने पूज्य सम्मान करने वालों, सम्बन्धियों, इष्टमित्रों का सम्मान करता हुआ विनम्र शब्दों में निमन्त्रित करता है उसी प्रकार से देवपूजा में भी प्रधान देवता व अन्य देवता जो पूजा-कार्य में सहायक होते हैं, उन सभी को आमंत्रित किया जाता है। जिस प्रकार आमन्त्रित महानुभावों की खातिर तवज्जोह, आनन्द, आमोद, प्रमोद, सुख, साधनों से सन्तुष्ट किया जाता है, इसी प्रकार इन सभी देवताओं को किया जाने की क्रिया का नाम ही पूजा हैं जिस प्रकार वह शुभमाङ्गलिक कार्य सम्पन्न किया जाता है, इसके पश्चात् वह आमन्त्रित सज्जन विदा किये जाते हैं और क्षमा-प्रार्थना द्वारा अपनी असमर्थता विनम्र शब्दों से प्रकट करते हुये उनको ससम्मान सवारी या अन्य सुसाधनों का का प्रबन्ध कर विनम्र भाव, मन तथा अपने प्रसन्नमुद्रा मुख मण्डल द्वारा हाथ जोड़ते हुए या हाथ मिलाते हुये, धन्यवाद, कृतज्ञता प्रकाश

टाटा, वेलफेयर, शब्दोच्चार, जैसा जिसके लिए उपयुक्त हो, करते हैं। इस प्रकार की क्रिया द्वारा आये हुए पूज्य, सम्मान योग्य तथा सम्बन्धियों के हृदय में बहुत प्रीतिभाव उत्पन्न होते हैं और वे उस निमन्त्रण करने वाले के प्रति सद्भावना लेकर अपने- अपने स्थानों पर जाते हैं। आवश्यकता होने पर उस आमन्त्रण करने वाले के सभी कार्यों में सहायक होते हैं और अवसर आने पर निमंत्रण (बुलावे) पर तत्काल पहुंचते हैं।

इसी प्रकार से यह विसर्जन क्रिया देवपूजा आराधनाओं में करना उचित व परमावश्यक है। इस विषय में पूजा प्रकार शास्त्रों में आता है —

ओ३म् आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् ।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥

हे भगवान् ! न मुझे आवाहन आता है और न आपकी विसर्जन क्रिया ही आती है। अतः हे परमेश्वर ! आप मुझे क्षमा करें।

यजमानहितार्थाय पुनरागमनाय च ।
गच्छन्तु च सुरश्रेष्ठाः ! स्वस्थानं परमेश्वराः ॥

हे भगवान् ! श्रेष्ठ देवताओ ! आप अपने-अपने स्थान पर पधारें। हमारे हित के लिए जब हम आमंत्रित करें, तब फिर पधारें।

(यजमान इस उपर्युक्त प्रकार से निवेदन करे।)

इस विषय में यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जैसे किसी के घर में कोई देवता की प्रतिष्ठा करके हमेशा के लिए स्थापित किया हुआ है तो उस देवता का विसर्जन (विदाई) नहीं किया जाता क्योंकि वह तो उस स्थान पर स्थाई प्रतिष्ठापित है और इसके अतिरिक्त श्री गणेश जी जो सभी कार्यों के विघ्ननाशक और सभी शुभकार्यों के सिद्धिदाता हैं; इसी प्रकार से रिद्धि, सिद्धि, लक्ष्मीजी, धर्म तथा कर्म इन देवताओं का भी विसर्जन नहीं किया

जाता। अतः विसर्जन क्रिया में यह निवेदन कर देना उचित समझा जाता है कि स्थाई प्रतिष्ठापित कोई देवता हैं तो उनका नाम (अमुक देवता) जो यहाँ प्रतिष्ठापित हैं व श्री गणेशजी, रिद्धि-सिद्धि, लक्ष्मीजी, धर्म, कर्म ये देवता तो हमारे यहाँ विराजमान रहें, बाकी अन्य सभी देवता अपने-अपने सुस्थान पधारें, जब हम फिर बुलायें तब फिर आने की कृपा करें।

सोपान
(१३)

ॐ नमः शिवाय, ॐ नमः शिवायै, पञ्चाक्षर मंत्र जप, पूजन विधि, माहात्म्य फल वर्णन

ॐ नमः शिवाय मंत्र का बड़ा माहात्म्य है। यह देखने में तो बहुत छोटा सा मंत्र है; किन्तु इसके फल बहुत बृहद् गुण माहात्म्य से भरे हुये हैं। अनेक पूजा विधान व शास्त्रों में इसका बहुत विवेचन मिलता है, जो इस छोटी सी पुस्तक में दिया जाना संभव नहीं। अतः इसको संक्षिप्त में शिव पुराण, वायवीय संहिता, अध्याय तेरह के आधार पर शिव भक्तों के लाभार्थ कहने का प्रयास किया जाता है।

पार्वती देवी ने एक समय में भगवान् शिव से कहा कि हे महेश्वर! दुर्जेय, दुर्लङ्घ्य एवं कलुषित कलियुग में जब समस्त संसार धर्म से विमुख हो पापमय अन्धकार से ढक जायेगा, वर्णाश्रम नष्ट हो जायेंगे, धर्म संकट उपस्थित हो जायेगा, सबका अधिकार अनिश्चित हो जायेगा, सभी मनुष्य स्वेच्छाचारी हो जायेंगे, उस

समय उपदेश प्रणाली नष्ट हो जायेगी, ऐसी स्थिति में आपके भक्त किस उपाय द्वारा मुक्त हो सकेंगे ।

यह सुनकर श्री महादेव जी ने कहा—

देवी ! कलिकाल के मनुष्य मेरी परम मनोरम पञ्चाक्षरी विद्या का आश्रय ले भक्ति से भावित चित्त होकर संसार बन्धन से मुक्त हो जाते हैं। मानसिक, वाचिक और शारीरिक दोषों से दूषित, कृतघ्न, निर्दयी, छली, लोभी और कुटिल चरित्र हैं, वे मनुष्य भी यदि मेरे में मन लगाकर मेरी पञ्चाक्षरी विद्या का जप करेंगे तो उनके लिये वह विद्या ही संसार भय से तारने वाली होगी। देवी ! मैंने बारम्बार प्रतिज्ञापूर्वक यह बात कही है कि भूतल पर मेरा पतित हुआ भक्त भी इस पञ्चाक्षरी विद्या के द्वारा बन्धन से मुक्त हो जाता है।

देवी ने कहा—यदि मनुष्य पतित होकर सर्वथा कर्म करने योग्य न रह जाय तो उसके द्वारा किया गया कर्म नरक की ही प्राप्ति कराने वाला होता है, ऐसी दशा में मानव इस विद्या द्वारा कैसे मुक्त हो सकता है ?

यह सुनकर श्री महादेव ने कहा–देवी ! तुमने बहुत ही सुन्दर प्रश्न किया है। मैंने इस विषय को गोपनीय समझ कर अब तक प्रकट नहीं किया था। पतित मनुष्य मोहवश भ्रमित हो जाता है । अनेक प्रकार के सांसारिक दुःखों से घबराकर मेरी पूजाओं का आश्रय तो लेता है, किन्तु उस पर पापों का बोझा होने से वह मेरे उचित पूजा-प्रयोगों का आश्रय नहीं ले पाता। इससे उसे उचित फल प्राप्त नहीं होता और वह अपने ही किये कर्मों के फल स्वरूप यह कहता है कि मैंने ऐसे ऐसे पूजा जप, व्रत किये पर फल सिद्धि कुछ न प्राप्त हुई। ये लक्षण भ्रमित-बुद्धि व पापाक्रान्त हुये मनुष्यों के ही समझने चाहिये। जो मनुष्य मेरे कहे हुये इस पञ्चाक्षर मंत्र के द्वारा मेरी पूजा व जप करेगा वह इस घोर

कलियुग के प्रभाव में न आकर अपने किये हुये पापों से मुक्त हो जायेगा और संसार में रहता हुआ सुख, समृद्धि, आनन्द का उपभोग करेगा। मरने पर मेरे लोक में पहुँच कर मेरे सामुज्य की प्राप्त करेगा।

हे देवी! सुनो जो मनुष्य केवल जल पी पीकर और हवा खाकर तप करते हैं या अनेक प्रकार के व्रतों से शरीर को सुखा देते हैं, उन्हें मेरे लोक की प्राप्ति नहीं होती; किन्तु भक्तिपूर्वक मेरे इस पञ्चाक्षर मंत्र से जो मेरी पूजा व जप करता है वह इस मंत्र के प्रताप से मेरे धाम में सहज ही पहुंच कर मुझको प्राप्त होता है। तप, व्रत, यज्ञ व कठोर नियम सतयुग, त्रेता, द्वापर में मनुष्य करने में समर्थ होते हैं, और मन लगाते हैं, किन्तु कलियुग में मनुष्यों को इन कर्मों में न आस्था रहती है न अनेक तृष्णाओं में घिरे रहने के कारण कर ही पाते हैं। इस कलियुग में जन्मे हुए मनुष्यों के लिये तो यह पञ्चाक्षर मंत्र ही भगवत् प्राप्ति का सरल साधन है, इसका आश्रय लेने वाला मनुष्य संसार-पाश से छुटकारा पाने में समर्थ हो जाता है। इससे सुलभ अन्य कोई पूजन है भी नहीं।

हे देवी! ईशान आदि पांच ब्रह्म जिसके अंग हैं उस पञ्चाक्षर मंत्र, या इस मंत्र के आरम्भ में ॐ लगा लेने से षडाशर मंत्र द्वारा भक्ति, नमन रख कर मेरा पूजन जप करता है, वह सभी पापों, दुःखों व चिन्ताओं से मुक्त होता है। कोई पतित हो या अपतित हो, किसी भी जाति में जन्मा हो, स्त्री हो, सभी मेरे इस मंत्र द्वारा पूजन जप कर सकते हैं और सभी इस मंत्र द्वारा पूजा जप करके फल सिद्धियों को प्राप्त करते हैं, और मेरा अनुग्रह पाते हैं। मेरे इस पञ्चाक्षर मंत्र में सभी मेरे भक्तों का समान अधिकार हैं इसीलिए यह मंत्र सभी मंत्रों में श्रेष्ठ मंत्र है।

हे देवी! यह पञ्चाक्षर मंत्र ऐसा प्रभाव युक्त है कि समस्त-लोक, वेद, महर्षि, सनातन धर्म, तथा देवताओं सहित यह सम्पूर्ण जगत् इसी पर टिका हुआ है। जब प्रलय काल आने पर समस्त

चराचर जगत् नष्ट हो जाता है, तब मैं अकेला ही स्थित रहता हूँ। दूसरा कोई भी कहीं नहीं रहता। उस समय समस्त देवता और शास्त्र इस पञ्चाक्षर मंत्र में ही स्थित होते हैं। अतः मेरी शक्ति से चालित होने के कारण वे नष्ट नहीं होते हैं। तदनन्तर मुझ से प्रकृति और पुरुष के द्वारा यह सृष्टि फिर उत्पन्न होती है। इस मंत्र में सभी प्रकार की सामर्थ्य व शक्तियाँ हैं। वह सभी देवता ऋषि व चराचर जगत् का सार है। लोकलोकादि सभी इस मंत्र में स्थित हैं। अधिक क्या कहूँ यदि इसका पूर्ण रूप से गुण विवेचन किया जावे तो वर्षों का समय लगने पर भी पूर्ण न हो। इसको थोड़े में कहा हुआ इस प्रकार समझो कि मेरी सभी शक्तियाँ इसमें स्थित हैं। यह परम मङ्गलमय, कल्याणमय, सर्व-दुःखनाशक, सर्वसुखविधायक, सर्वसिद्धिदाता और भोगमोक्षदाता है। अतएव जो श्रद्धा, नमन पूर्वक इस पञ्चाक्षर मंत्र या ॐ आरम्भ में लगा कर षडाक्षर बना कर इस मंत्र द्वारा मेरी पूजा व जप करता है, वह सभी मनोवांछित शुभकामनाओं को प्राप्त करता है और सहज ही में मुझ आशुतोष की कृपा प्राप्त कर कृतार्थ होता है।

शिवभक्तों के लाभार्थ पञ्चाक्षर मंत्र नमः शिवाय व षडाक्षर मंत्र ॐ नमः शिवाय का फल मंत्र-माहात्म्य संक्षिप्त में श्री महादेव पार्वती सम्वाद के रूप में कह दिया गया है। अब पूजा विधान के विषय में भी संक्षेप में कह देना पर्याप्त होगा।

इसी पुस्तक में जो पूजा-विधान कई प्रकार के कहे गये हैं, उनमें से कोई विधान बृहत्पूजाप्रकार या षोडशोपचार, द्वादशोपचार, पञ्चोपचार, मानसिक जो उचित सुलभ समझें उसी का अनुसरण करके उसी प्रकार से भगवान् शिव का पूजन करें। पूजन करते समय अन्य मंत्र या हिन्दी भाषा द्वारा जो वाक्य मुख से उच्चारण करने को बतलाया गया है, उसके स्थान पर मुख से इस प्रकार उच्चारण करें ॐ नमः शिवाय अमुक पदार्थ, अमुक वस्तु समर्पयामि।

पूजा करने के पश्चात् फिर आसन पर बैठकर इस उपर्युक्त मंत्र का जप जैसा जिसको समय मिल पाये या आस्था रखें, उतनी ही माला द्वारा करना चाहिये। भगवान् आशुतोष को इस प्रकार अपनी की हुई पूजा, जप द्वारा प्रसन्न करें और शुभ मनोवांछित कामनाओं की फलसिद्धि प्राप्त करें ! जप समाप्ति पर दशांश हवन, ब्राह्मण-भोजन, शिवभक्त भोजन, प्रसाद वितीर्णादि भी करना चाहिए।

यहाँ बहुत संक्षिप्त विधान दर्शाये गये हैं, क्योंकि आजकल का मनुष्य-समुदाय बड़े विधान देखकर करना तो क्या उसे पढ़ना ही नहीं चाहते। विस्तृत रूप से देखने वाले शिवपुराण, लिङ्गपुराणादि सनेक बड़े ग्रन्थों में देखने का कष्ट करें।

इस पञ्चाक्षर मंत्र द्वारा पूजा व जप करने वालों को पञ्चाक्षर स्तोत्र का पाठ भी करना चाहिये।

श्री शिवपंचाक्षर स्तोत्रम्

नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय, भस्माङ्गरागाय महेश्वराय ।
नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय, तस्मै 'न'काराय नमः शिवाय।१।

मन्दाकिनीसलिलचन्दनचर्चिताय,
नन्दीश्वरप्रमथनाथमहेश्वराय ।
मन्दारपुष्पबहुपुष्पसुपूजिताय,
तस्मै 'म'काराय नमः शिवाय ।।२।।

शिवाय गौरी वदनाब्जवृन्द, सूर्याय दक्षाध्वरनाशकाय ।
श्री नीलकण्ठाय वृषध्वजाय, तस्मै 'शि' काराय नमः शिवाय।३।
वशिष्ठकुम्भोद्भवगौतमाय, मुनीन्द्रदेवार्चितशेखराय ।
चन्द्रार्कवैश्वानरलोचनाय, तस्मै 'व' काराय नमः शिवाय ।४।
यज्ञस्वरूपाय जटाधराय, पिनाकहस्ताय सनातनाय ।
दिव्याय देवाय दिगम्बराय, तस्मै 'य' काराय नमः शिवाय।५।

पञ्चाक्षरमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥६॥

जिनके कण्ठ में साँपों का हार है, जिनके तीन नेत्र हैं, भस्म ही जिनका अङ्गराग (अनुलेपन) है, दिशाएँ ही जिनका वस्त्र (अर्थात् जो नग्न हैं), उन शुद्ध अविनाशी महेश्वर 'न' कार स्वरूप शिव को नमस्कार है ॥१॥ गंगाजल और चन्दन से जिनकी अर्चा हुई है, मन्दार-पुष्प तथा अन्यान्य कुसुमों से जिनकी सुन्दर पूजा हुई है, उन नन्दी के अधिपति प्रमथगणों के स्वामी महेश्वर 'म' कार स्वरूप शिव को नमस्कार है ॥२॥ जो कल्याण स्वरूप हैं, पार्वती जी के मुख कमल को विकसित (प्रसन्न) करने के लिये जो सूर्य स्वरूप हैं, जो दक्ष के यज्ञ का नाश करने वाले हैं, जिनकी ध्वजा में बैल का चिह्न है, उन शोभाशाली नीलकण्ठ 'शि' कार रूप शिव को नमस्कार है ॥३॥ वसिष्ठ, अगस्त्य, और गौतम आदि श्रेष्ठ मुनियों ने तथा इन्द्र आदि देवताओं ने जिनके मस्तक की पूजा की है, चन्द्रमा, सूर्य और अग्नि जिनके नेत्र हैं, उन 'व' कार स्वरूप शिव को नमस्कार है ॥४॥ जिन्होंने यक्षरूप धारण किया है, जो जटाधारी हैं, जिनके हाथ में पिनाक है, जो दिव्य सनातन पुरुष हैं, उन दिगम्बर देव 'य'कार स्वरूप शिव को नमस्कार है ॥५॥ जो शिव के समीप इस पवित्र पञ्चाक्षर का पाठ करता है वह शिवलोक को प्राप्त करता है और वहाँ शिवजी के साथ आनन्दित होता है। ॥६॥

नमः शिवाय पञ्चाक्षर मंत्र के समान ही नमः शिवायै पञ्चाक्षर मंत्र का पूजा-जप-विधान भी है, संक्षेप में थोड़ा इस विषय में भी दर्शाने का प्रयास किया जाता है।

ॐ नमः शिवायै मंत्र, जप, पूजन व माहात्म्य

इस नमः शिवाय पूजन-जप-माहात्म्य में श्री महादेवी पार्वती के विषय में कहा गया है कि इस नमः शिवाय मंत्र को ही थोड़े से

भेद के साथ बदल देने पर यह महादेवी पूजा का मंत्र बन जाता है। उस मंत्र में भी यही सब शक्ति, फल, माहात्म्य संगृहीत है और उसी के फल देने की शक्ति सामर्थ्य है। अतः जो महादेवजी की पूजा न करके भगवती पार्वती जी की पूजा करना चाहें, वे भक्तगण इस पञ्चाक्षर मंत्र 'नमः शिवाय' के पाँचवें अक्षर (वर्ण) 'य' को बारहवें स्वर से विभूषित करें तो ऐसा करने से मंत्र 'नमः शिवाय' के स्थान पर 'नमः शिवायै' हो जायेगा। यह महादेवी महाशक्ति पार्वतीजी का मूल-मंत्र हो जायेगा। भगवान् आशुतोष ने कहा है--साधक या पूजक को चाहिये कि वह इस मंत्र से मन, वाणी और शरीर भेद से ही हम दोनों का पूजन जप हवन आदि करें।

इस प्रकार यहाँ भक्त सज्जनों को समझना चाहिये कि यह 'मंत्र नमः शिवाय' भगवान् शिव की पूजा के लिये हैं और इसी प्रकार से यदि केवल महादेवी पार्वतीजी की ही पूजा जपादि करने की इच्छा हो, तो 'नमः शिवायै' मंत्र द्वारा करनी चाहिये। पूजा, जप विधान दोनों देवताओं के लिए एक ही प्रकार से ग्रहण किये जा सकते हैं। केवल अनन्य वाक्य जो उच्चारण हेतु प्रकारों में कहे हैं वहाँ नमः शिवाय (अमुक) वस्तु, पदार्थ समर्पयामि कहना होगा। अन्य सभी क्रियायें 'नमः शिवाय' जप पूजन विधि अनुसार ही हैं।

दोनों पूजाओं में प्रयोग करने योग्य एक छोटी प्रार्थना।

जयति शिवा-शिव शंकर हर जय!
महादेव हे शम्भो, जय जय!!
जय गिरितनये, नीलकण्ठ जय!
जगदम्बे जय, आशुतोष जय!!

।। ॐ नमः शिवाय ।। ॐ नमः शिवायै ।।

सोपान

(१४)

प्रणवाक्षर जप, पूजन, माहात्म्य, माला प्रकार व जप गणना विधान

ॐ मंत्र सब से छोटा मंत्र है। इससे छोटा कोई भी मंत्र नहीं। मंत्र जितना छोटा होता है उतना ही अधिक महत्त्व वाला कहा गया है। यह सभी मंत्रों का सार है। इसके विषय में भगवान् शिव (शङ्कर) ने स्वयं शिवपुराण, विद्येश्वर संहिता अध्याय १७ में कहा है कि यह मंत्र ॐ जो ओंकार के रूप में प्रसिद्ध है महामङ्गलकारी मंत्र है। सबसे पहले मेरे मुख से ओंकार (ॐ) प्रकट हुआ, जो मेरे स्वरूप का बोध कराने वाला है। ओंकार वाचक है और मैं वाच्य हूँ। यह मंत्र मेरा ही स्वरूप है। प्रति दिन ओंकार का निरन्तर स्मरण करने से मेरा ही सदा स्मरण होता है।

मेरे उत्तरवर्ती मुख से अकार, पश्चिम मुख से उकार दक्षिण मुख से मकार पूर्ववर्ती मुख से बिन्दु तथा मध्यवर्ती मुख मे नाद प्रकट हुआ। इस प्रकार पाँच अवयवों से एकीभूत होकर वह प्रणव 'ॐ' एक अक्षर हो गया। यह नामरूपात्मक सारा जगत् तथा वेद से उत्पन्न स्त्री-पुरुषवर्ग रूप दोनों कुल इस प्रणव-मंत्र में व्याप्त हैं। यह मंत्र शिव-शक्ति दोनों का बोधक है। यह अकारादि क्रम से और मकारादि क्रम से क्रमशः प्रकाश में आया है।

'आर्द्रा' नक्षत्र से युक्त चतुर्दशी को इस प्रणव मंत्र का जप किया जावे तो यह अक्षय फल देने वाला है। सूर्य की संक्राति से युक्त महा आर्द्रा नक्षत्र में एक बार किया हुआ यह प्रणव जप कोटि

गुणे जप का फल प्रदान करता है। 'मृगशिरा' नक्षत्र का अन्तिम भाग तथा 'पुनर्वसु' का आदिम भाग, पूजा, होम और तर्पण आदि आर्द्रा के समान ही होता है। मेरा या मेरे लिङ्ग का दर्शन प्रभात काल में ही प्रातः और संगव (मध्याह्न के पूर्व) काल में करना चाहिये। मेरे पूजन दर्शन के लिये चतुर्दशी तिथि निशीथ-व्यापिनी अथवा प्रदोषव्यापिनी लेनी चाहिये, क्योंकि परिवर्तिनी तिथि से संयुक्त चतुर्दशी की ही प्रशंसा की जाती है। पूजा करने वालों के लिये मेरी मूर्ति तथा लिङ्ग दोनों समान ही हैं, फिर भी मूर्ति की अपेक्षा लिङ्ग का स्थान ऊँचा है।

प्रणव का अर्थ इस प्रकार है कि 'प्र' नाम है प्रकृति से उत्पन्न संसार रूपी महासागर का। प्रणव इससे पार करने के लिये दूसरी नव (नाव) है। इसलिये इस ओंकार को 'प्रणव' की संज्ञा देते हैं। ॐकार जप करने वाले से कहता है—'प्र–प्रपञ्च', न–नहीं है, व–तुम लोगों के लिये'। अतः इस भाव को लेकर भी ज्ञानी पुरुष 'ओ३म' को प्रणव नाम से जानते हैं। इसका दूसरा भाव इस प्रकार है—'प्र–प्रकर्षेण' 'न–नयेत्' 'वः–युष्मान् मोक्षम्' इति वा प्रणवः। अर्थात् यह तुम सब उपासकों को बलपूर्वक मोक्ष तक पहुंचा देगा। इसी अभिप्राय से इसे ऋषि–मुनि प्रणव कहते हैं। यह ॐ मंत्र जिसे प्रणव कहा जाता है, सभी प्रकार के रोग, दुःख, पाप ताप तथा कर्मों को नाश करके दिव्य नूतन ज्ञान कराने वाला है। साधक को सभी प्रकार से नवीन (शिव-स्वरूप) का देने वाला है। इसके दो भेद कहे हैं। प्रथम सूक्ष्म मंत्र रूप ॐ, जिसको प्रणव भी कहा गया है तथा दूसरा इसका स्थूल रूप तथा नाम पञ्चाक्षर नमः शिवाय कहा गया है जो अपने पापों का नाश करना चाहें उनके लिए यह मंत्र सर्वोपरि श्रेष्ठ ॐ नाम से कहा गया है। इस के द्वारा शिव पूजन तथा जप करके मनुष्य सभी अभीष्ट कार्यों की सिद्धि प्राप्त कर सकता है।

इसका जप फल इस प्रकार बतलाया है।

ॐ का नो करोड़ जप करने से मनुष्य सभी प्रकार के पापों से मुक्त होकर शुद्ध हो जाता है। फिर नो करोड़ जप करके पृथ्वी तत्त्व पर विजय पाता है। तत्पश्चात् नो करोड़ जप करके जल तत्त्व को जीत लेता है। फिर नो करोड़ जप करके वायु तत्त्व पर विजय पाता है। फिर नो करोड़ जप करके आकाश को अधिकार में ले लेता है। फिर इसी प्रकार नो नो करोड़ जप क्रम से करके गन्ध, रस, रूप, स्पर्श और शब्द पर विजय प्राप्त करता है। इसी प्रकार फिर आगे और नो करोड़ जप करके अहंकार को जीतता है। फिर इसी प्रकार एक सौ आठ करोड़ जप करने पर उत्कृष्ट बोध को प्राप्त हुआ पुरुष शुद्ध योग लाभ प्राप्त करता है। शुद्ध योग युक्त होने पर वह जीवन्मुक्त होता है, इसमें संशय नहीं है। इस प्रणव मंत्र का जप व ध्यान करते करते समाधि में स्थित हुआ महायोगी पुरुष साक्षात् शिव होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

श्री महादेव जी का कथन है कि मेरी पूजा तथा उक्त मंत्र का जप आज्ञाहीन, क्रियाहीन, श्रद्धाहीन तथा विधि के पालनार्थं आवश्यक दक्षिणा से हीन जो किसी से कराया जाता है या स्वयं करता है तो वह निष्फल होता है।

मंत्र किसी गुरु से ग्रहण कर जप करना चाहिये। यदि कोई गुरु द्वारा ग्रहण न कर सके तो मन्त्र को कागज पर लिखकर भगवान् शिव के समक्ष रखे और स्वयं स्नान-संध्या करके या संध्या करने वाला व्यक्ति न हो तो अपना नित्य कोई पूजा-पाठ करता हो तो वह करके, फिर भगवान शिवशङ्कर के पास जाकर उस मंत्र लिखे कागज को भगवान् शिव के चरणों में रखदे और विनम्र भाव से यह ध्यान करे कि भगवान् शिव ही मुझे गुरु के रूप में मंत्र दे रहे हैं। तदुपरान्त उस कागज को दोनों हाथों से उठाकर मस्तक के लगाकर हृदय के लगावे और उसे कागज पर लिखे मंत्र का

पूजन करके उसे पवित्र पूजनादि की वस्तुओं में रख देवे और फिर उस मंत्र का जाप आरम्भ करें।

स्नान कर, शुद्ध वस्त्र धारण कर, तिलक लगा, माला व गोमुखी ले, संध्या करके जो नित्य कोई पूजा–पाठ करता हो वह करके, फिर शिवजी का पूजन करके पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके ठीक ढंग से आसन पर बैठकर जप करे। नित्य संयम से रहे। केवल रात्रि में एक बार भोजन करे (याने दिन में भोजन न करे)। मंत्र के जितने अक्षर हैं, उतने ही लाख का चौगुना जप जो श्रद्धा, भक्ति और आदरपूर्वक पूरा कर लेता है वह 'पौरश्चरणिक' कहलाता है। जो पुरश्चरण करके प्रतिदिन जप करता है उसके समान इस लोक में दूसरा कोई नहीं है। वह सिद्धिदायक सिद्ध हो जाता है।

जप की गणना करने का फल इस प्रकार कहा है। अंगुली से जप की गणना करने का फल एक गुना बतलाया गया है। रेखाओं से गणना करना आठ गुना फल देता है। पुत्रजीव (जियापोत) के बीजों की माला से किया गया जप दस गुना फलदायक है। शङ्ख के मनकों से सौगुना, मूँगों के मनकों की माला से हजार गुना, स्फटिक मणि की माला से दस हजार गुना, सच्चे मोतियों की माला से लाख गुना, पद्माक्ष की माला से दस लाख गुना और स्वर्ण (सोने) के मणियों की माला से कोटि गुना अधिक फल होना कहा गया है। कुश गाँठ से तथा रुद्राक्ष से गणना करने पर अनन्त गुणा फल की प्राप्ति होना कहा गया है। तीस रुद्राक्ष के दानों से बनाई हुई माला जप करने में धन की देने वाली कही है। सत्ताइस दानों की माला पुष्टिदायिनी और पच्चीस दानों की माला मुक्तिदायिनी होती है। पन्द्रह रुद्राक्षों की बनी हुई माला अभिचार कर्म में फलदायक होती है। जप कर्म में अंगूठा मोक्षदायक और तर्जनी शत्रुनाशक, मध्यमा धनदायिनी और अनामिका शान्तिप्रदायिनी है। एक सौ आठ दानों की माला उत्तम और पचास दानों की

मध्यम। चौपन दानों की माला मनोहारिणी एवं श्रेष्ठ कही है। इस तरह जप करे। जप किसी को दिखाए नहीं और अंगुष्ठे के लगाये बिना माला से जप करना निष्फल कहा गया है।

बिना आसन पर बैठकर जप न करे। सोकर, चलते, फिरते अथवा खड़े होकर, गली या सड़क पर, अंधेरे में, अपवित्र स्थान में, दोनों पाँव फैलाकर, मुर्गे की तरह कुक्कुट आसन लगाकर, सवारी या खाट पर, व चिन्ता से व्याकुल समय में जप न करे। यदि शक्ति हो तो इन नियमों का पालन करते हुए ही जप करना चाहिये। यदि कोई मनुष्य अशक्त हो तो उससे जैसा बन सके उस प्रकार करे। सदाचारी मनुष्य शुद्ध भाव से एकाग्र मन हो और ध्यान करता हुआ जप करके कल्याण व फलसिद्धियों को प्राप्त करता है। प्रणव जप के ही नहीं सभी प्रकार के मन्त्रों के जप के नियम कहे गये हैं। मन्त्र ग्रहण जप, माला आदि की विधि शिव पुराण, वायवीय संहिता, अध्याय १४ के आधार पर कही गयी है।

प्रणव मंत्र की उपासना करने वाले को चाहिये कि स्नान करके, शुद्ध वस्त्र धारण करके, संध्या आदि नित्य नियम कर्म से निवृत्त हो, जो पूजा विधियाँ अनेक प्रकारों में कही गई हैं इनमें से कोई एक जो उसे सुविधाजनक मालूम हो, शिव पूजन ॐ द्वारा करता हुआ सम्पन्न कर, फिर जप करे। जप जितना करने का मन में संकल्प हो उसे उपर्युक्त नियमों का पालन कर पूर्ण करे। फिर दशांशहवन ब्राह्मण व भूखों को भोजन, प्रसाद-वितरण आदि करे तो मनुष्य सभी प्रकार के पापों, दुःखों तथा तापों (जी जलनादि) से छुटकारा पाकर शुद्ध होता है। सुख शान्ति और समृद्धि प्राप्त कर पुण्य का भागी होकर मोक्ष प्राप्त करता है और भगवान् शिव का सायुज्य प्राप्त कर मोक्ष को प्राप्त होता है।)

भगवद्गीता में भी कहा गया है—

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामानुस्मरन् ।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम् ।।

(अध्याय ८ श्लोक १३)

“जो पुरुष ‘ॐ’ इस एक अक्षर रूप ब्रह्म का उच्चारण करता हुआ, उसके अर्थ स्वरूप मुझ ब्रह्म का चिन्तन करता हुआ शरीर को त्याग कर जाता है, वह पुरुष परमगति को प्राप्त होता है”।

* * *

सोपान
(१५)

महामृत्युञ्जय मंत्र का जप, पूजन व माहात्म्य

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ।
उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ।।

(रुद्राष्टाध्यायी, षष्ठोऽध्याय: मन्त्र ५)

ॐ त्र्यम्बकमित्यस्य वशिष्ठ ऋषिः । वाड्ब्राह्मी त्रिष्टुप् छन्दः । रुद्रो देवता । परिक्रमणे विनियोगः ।

भाषार्थ—दिव्य गंध से युक्त, मर्त्य धर्म हीन उभय लोकों के फलदाता, धन धान्यादि से पुष्टि बढ़ाने वाले, पूर्वोक्त नेत्र त्रय संपन्न शिव शंकर का पूजन करते हैं, वह रुद्र हमको मृत्यु, अपमृत्यु वा संसार के मरण से मुक्त करे वा छुड़ावे। जिस प्रकार अपने बन्धन से पके हुये कर्कटी फल (खरबूजा) अर्थात् जैसे पक्वफल अपनी ग्रंथि से (नाका से) टूट कर भूपतित होता है इस प्रकार शिव की

कृपा से जन्म मरण बन्धन से चिरमुक्त हो जाऊँ और स्वर्ग रूप मुक्ति से न छूटूं ॥

श्री भगवान् शिव की पूजा व मंत्र जाप हेतु मुख्य मंत्र वेदोक्त महामृत्युञ्जय कहा गया है, जो ऊपर हिन्दी भाषार्थ सहित लिखा है। यह सभी शुभ कामनाओं की सिद्धि प्रदान करने वाला है, और जो फल माहात्म्य नमः शिवाय तथा प्रणव अक्षर ॐ मंत्र के लिखे हैं, उनका भी उसी प्रकार से फलदाता है, मुख्य रूप से किसी को शरीर में रोगादि द्वारा कष्ट हो रहा हो, किसी भी प्रकार से दवा औषधि काम न देती हो, रोग से मुक्ति न होती हो, तब इसके द्वारा पूजा जप करने से आशुफलप्रद परिणाम देखने में मिलते हैं, इस मंत्र द्वारा शिवपूजन व जाप करने वाले को मुक्ति अवश्य प्रदान करते हैं, ऐसा भी फल माहात्म्य लिखा है, इस मन्त्र का अर्थ भाव भी यही प्रकट करता है। अतएव इसका भी संक्षिप्त विधि वर्णन दर्शाया जाता है।

प्रातः काल स्नानादि से शुद्ध हो नित्य कर्म जो भी करते हों, उनको पूर्ण कर फिर इस मंत्र का उच्चारण करता हुआ, जो शिव-पूजन की विधियाँ लिखी हैं, उनमें से जो विधि उचित व सुलभ हो, उसी प्रकार से शिवपूजन करें। फिर आसन पर बैठकर माला गौमुखी में लगाकर निम्न प्रकार प्रयोग करें।

(१) जल, पुष्प अक्षतादि, हाथ या चमची में लेकर संकल्प करें।
(२) एक माला गायत्री जी की जप करें।
(३) महामृत्युञ्जय की पाँच माला जप करें।
(४) एक माला गायत्री जी की फिर से जप करें।

तत्पश्चात् पदन्यास इस प्रकार करें--

ॐ त्र्यम्बकं शिरसि। यजामहे भ्रुवोः। सुगन्धिम् दृशोः। पुष्टिवर्द्धनं मुखे। उर्वारुकं कण्ठे। इव हृदये। बन्धनात् उदरे।

मृत्योः गुह्ये। मुक्षीय उर्वोः। मां जान्वोः। अमृतात् पादयोः। इति पदन्यासः।

फिर मृत्युञ्जय का ध्यान इस प्रकार करें--

ॐ हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो,
द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परम्।
अङ्कन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलासकरन्तं शिवं,
स्वच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमुकुटाभातं त्रिनेत्रं भजे॥

मृत्युञ्जय महादेव, त्राहि मां शरणागतम्।
जन्ममृत्युजरारोगैः, पीड़ितं कर्मबन्धनैः॥

वृहन्मंत्र की पाँच माला जाप इस मन्त्र से करें---

ॐ हौं ॐजूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं
यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।
उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।
भूर्भुवः स्वरों जूं सः हौं ॐ।

दूसरा प्रकार एक और इससे भी लघु मंत्र का है--

इस प्रकार में भी क्रिया उपर्युक्त प्रकार से ही करना चाहिए। केवल मन्त्रजाप में जो मन्त्र प्रयोग करें, वह इस प्रकार है--

ॐ जूँ सः सः जूं ॐ।

आजकल मनुष्य इन कार्यों में आस्था न रखने से बृहत् प्रकारों को झंझट समझ कर करना नहीं चाहते। अतः छोटे-छोटे प्रकार खोजकर सरल विधियाँ दर्शाने की चेष्टा की गई है। बृहत् प्रकार अन्यत्र बड़े ग्रन्थों में बहुत लिखे हुए हैं, जो देखना चाहें उनमें देख सकते हैं।

* * *

सोपान
(१६)

वेदोक्त पूजन विधि

(बृहत्पूजा प्रकार)

पवित्र होकर, आचमन-प्राणायाम करके, संकल्प वाक्य के अन्त में 'श्री साम्ब सदाशिव प्रीत्यर्थं गणपत्यादि सकल देवता पूजन पूर्वकं श्री भवानीशंकरपूजनं करिष्ये' कहकर संकल्प छोड़ें। फिर नीचे लिखे आवाहन मंत्रों से मूर्तियों के समीप पुष्प छोड़ें। मूर्ति हो तो आवाहन करके पूजन करें।

श्री गणेश-पूजन

आवाहयामि पूजार्थं रक्षार्थं च मम क्रतौ।
इहागत्य गृहाण त्वं पूजां यागं च रक्ष मे॥

श्री गणेश पूजन करके यह प्रार्थना करे—

लम्बोदर नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा॥

पार्वती-पूजन

हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शङ्करप्रियाम्।
लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम्।

श्री पार्वती पूजन करके यह प्रार्थना करे—

ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मा नयति कश्चन।
ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्॥

श्री नन्दीश्वर-पूजन

आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातर पुरः ।
पितरं च प्रयन्त्स्वः ।।

श्री नन्दीश्वर-पूजन करके यह प्रार्थना करें—

प्रैतु वाजी कनिक्रदन्नानदद्रासभः पत्या ।
भरन्नग्निम्पुरीष्यं मा पाद्यायुषः पुरा ।।

श्री वीरभद्र-पूजन

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहित यदायुः ।।

श्री वीरभद्र का पूजन करके यह प्रार्थना करें—

भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः ।
भद्रा उत प्रशस्तया ।।

श्री स्वामी कार्तिकेय-पूजन

यदक्रन्दः प्रथमं जायमान उद्यन्त्समुद्रादुत वा पुरीषात् ।
श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहू उपस्तुत्यं महिजातं ते अर्वन् ।।

श्री स्वामी कार्तिकेय का पूजन करके यह प्रार्थना करें ।

यत्र बाणाः सं पतन्ति कुमारा विशिखा इव ।
तत्र इन्द्रो बृहस्पतिरदितिः शर्म यच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु ।।

श्री कुबेर-पूजन

कुविदङ्ग यवमन्तो यवं चिद् यथोदान्त्यनुपूर्वं वियूय ।
इहेहैषां कृणुहि भोजनानि ये बर्हिषा नम उक्तिं यजन्ति ।।

श्री कुबेर जी का पूजन करके यह प्रार्थना करें ।

वय ꣳ सोमव्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः प्रजावन्तः सचेमहि ।।

श्री कीर्तिमुख-पूजन

असवे स्वाहा वसवे स्वाहा विभुवे स्वाहा विवस्वते स्वाहा गणश्रिये स्वाहा गणपतये स्वाहा विभुवे स्वाहाधिपतये स्वाहा शूषाय स्वाहा सꣳसर्पाय स्वाहा चन्द्राय स्वाहा ज्योतिषे स्वाहा मलिम्लुचाय स्वाहा दिवापतये स्वाहा ।।

श्री कीर्तिमुख-पूजन् करके यह प्रार्थना करें ।

ओजश्च मे सहश्च म आत्मा च मे तनुश्च मे शर्म च मे वर्म च मेऽङ्गानि च मेऽस्थिनि च मे परूꣳषि च मे शरीराणि च म आयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ।।

जलेहरी में सर्प का आकार हो तो सर्प का पूजन करके पश्चात् शिव-पूजन करें ।

श्री भगवान् शिव का ध्यान करें--

अपने मन में ध्यान इस प्रकार करें ।

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं,
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् ।
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं ,
विश्वाद्यं विश्वबीजं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ।।

पाद्य

ॐ नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे
अथो ये अस्य सत्वानोऽहं तेभ्योऽकरं नमः ।।

(पाद्यं समर्पयामि)

अर्घ्यं

ॐ गायत्री त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्पङ्क्त्या सह बृहत्युष्णिहा ककुप्सूचीभिः शम्यन्तु त्वा ।।

(अर्घ्यं समर्पयामि)

आचमन

ॐ त्रयम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय-मामृतात् ।।
(आचमनीयं समर्पयामि)

स्नान

ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्ज्जनीस्थो वरुणस्य
ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमासीद् ।
(स्नानं समर्पयामि)

दुग्ध स्नान

गोक्षीरधामम् देवेश गोक्षीरेण मया कृतम् ।
स्नपनं देवदेवेश गृहाण शिवशङ्कर ।।
(दुग्ध स्नानं समर्पयामि, पुनः जलस्नानं समर्पयामि)

दधिस्नान

दध्ना चैव मया देव स्नपनं क्रियते तव ।
गृहाण भक्त्या दत्तं मे सुप्रसन्नो भवाव्यय ।।
दधिस्नानं समर्पयामि, पुनः जलस्नानं समर्पयामि)

घृतस्नानं

सर्पिषादेवदेवेश स्नपनं क्रियते मया ।
उमाकान्त गृहाणेदं श्रद्धया सुरसत्तम ।।
(घृतस्नानं समर्पयामि, पुनः जलस्नानं समर्पयामि)

मधुस्नान

इदं मधु मया दत्तं तव तुष्ट्यर्थमेव च ।
गृहाण शंभो त्वं भक्त्या मम शान्तिप्रदो भव ।।
(मधुस्नानं समर्पयामि, पुनः जलस्नानं समर्पयामि)

शर्करास्नान

सितया देवदेवेश स्नपनं क्रियते मया ।
गृहाण शंभो मे भक्त्या सुप्रसन्नो भव प्रभो ॥

(शर्करा स्नानं समर्पयामि, पुनः जलस्नानं समर्पयामि)

पञ्चामृत स्नान

पञ्चामृतं मयानीतं पयोदधिसमन्वितम् ।
घृतं मधु शर्करया स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

(पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि)

शुद्धोदक स्नान

ॐ शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्त आश्विनाः श्येतः श्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णा यामा अवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः ॥

(शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि)

अभिषेक (जलधारा छोड़ें)

ॐ नमस्ते रुद्र मन्यव उतो त इषवे नमः । बाहुभ्यामुत ते नमः ॥१॥ या ते रुद्र शिवा तनुरघोराऽपापकाशिनी । तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥२॥ यामिषुं गिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे । शिवां गिरित्र तां कुरु मा हिꣳसीः पुरुषं जगत् ॥३॥ शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छा वदामसि । यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मꣳ सुमना असत् ॥४॥ अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् । अहींश्च सर्वान् जम्भयन् सर्वाश्च यातुधान्योऽधराचीः परासुव ॥५॥ असौ यस्ताम्रो अरुण उत बभ्रुः सुमङ्गलः । ये चैन रुद्रा अभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रशोऽवैषाꣳ हेड इमहे ॥६॥ असौ योऽवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः । उतैनं गोपा अदृश्रन्नदृश्रन्नुदहार्यः सदृष्टो मृडयाति नः ॥७॥ नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय

मीढुषे । अथो ये अस्य सत्वानोऽहं तेभ्यो ऽ करन्नमः ॥८॥ प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोरात्न्योर्ज्याम् । याश्च ते हस्त इषवः परा ता भगवो वप ॥९॥ विज्यं धनुः कपर्दिनो विशल्यो बाणवाँ २ उत । अनेशन्नस्य या इषव आभुरस्य निषङ्गधिः ॥१०॥ या ते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः । तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परि भुज ॥११॥ परि ते धन्वनो हेतिरस्मान् वृणक्तु विश्वतः । अथो य इषुधिस्तवारे, अस्मिन्निधेहि तम् ॥१२॥ अवतत्य धनुष्ट्वᳩ सहस्राक्ष शतेषुधे । निशीर्य शल्यानां मुखा शिवो नः सुमना भव ॥१३॥ नमस्त आयुधायानातताय धृष्णवे । उमाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यां तव धन्वने ॥१४॥ मा नो महान्तमुत मा नो अर्भकं मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम् । मा नो वधीः पितरं मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः ॥१५॥ मा नस्तोके तनये मा न आयुषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः ॥ मा नो वीरान् रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित् त्वा हवामहे ॥१६॥

(अभिषेकं समर्पयामि)

वस्त्रमुपवस्त्र

ॐ प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयो रात्न्योर्ज्याम् ।
याश्चते हस्त इषवः परा ता भगवो वप ॥

(वस्त्रमुपवस्त्र समर्पयामि, आचमनीयं समर्पयामि)

आभरण

ॐ विज्यं धनु कपर्दिनो विशल्यो वाणवाँ २ उत ।
अनेशन्नस्य या इषव आभुरस्य निषङ्गधिः ॥

(आभरणं समर्पयामि)

यज्ञोपवीत

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः ।
स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः ॥

(यज्ञोपवीतं समर्पयामि)

गन्ध

ॐ नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्च वो नमो नमो भवाय च रुद्राय च नमः ।। शर्वाय च पशुपतये च नमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च ।।

(गन्धं समर्पयामि)

अक्षत

ॐ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च ।
मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ।।

(अक्षतान् समर्पयामि)

पुष्प

ॐ नमः पार्याय चावार्याय च नमः प्रतरणाय चोत्तरणाय च नमस्तीर्थ्याय च कुल्याय च नमः शुष्प्याय च फेन्याय च

(पुष्पाणि समर्पयामि)

पुष्पमाला

नानापङ्कजपुष्पैश्च ग्रथितां पल्लवैरपि ।
बिल्वपत्रयुतां मालां ग्रहाण सुमनोहराम् ।।

(पुष्पमालां समर्पयामि)

बिल्वपत्र

ॐ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो वर्मिणे च वरूथिने च नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनम्याय च ।।

दर्शनं बिल्वपत्रस्य स्पर्शनं पापनाशनम् ।
घोरपातकसंहारं बिल्वपत्रं शिवार्पणम् ।।२।।
त्रिदलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रं च त्रिधायुधम् ।
त्रिजन्म पापसंहारं बिल्वपत्रं शिवार्पणम् ।।३।।

अखण्डैर्बिल्वपत्रैश्च पूजये शिवशङ्करम् ।
कोटिकन्यामहादानं बिल्वपत्रं शिवार्पणम् ।।४।।

गृहाण बिल्वपत्राणि सपुष्पाणि महेश्वर ।
सुगन्धीनि भवानीश शिव त्वं कुसुमप्रिय ।।५।।

(विल्वपत्रं समर्पयामि)

तुलसीमञ्जरी

ॐ शिवो भव प्रजाभ्यो मानुषीभ्यस्त्वमङ्गिरः ।
मा द्यावापृथिवी अभि शोचीर्मान्तरिक्षम्मा वनस्पतीन् ।।

(तुलसीपत्राणि वा तुलसीमञ्जरीम् समर्पयामि)

दूर्वा

ॐ काण्डात् काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि ।
एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च ।।

(दूर्वांकुरान् समर्पयामि)

शमीपत्र

अमङ्गलानां शमनीं शमनीं दुष्कृतस्य च ।
दुःस्वप्ननाशिनीं धन्यां प्रपद्येऽहं शमीं शुभाम् ।।

(शमीपत्राणि समर्पयामि)

आभूषण

वज्रमाणिक्यवैदूर्य मुक्ताविद्रुम मण्डितम् ।
पुष्परागसमायुक्तं भूषणं प्रतिगृह्यताम् ।।

(आभूषणं समर्पयामि)

सुगन्ध-तैल-अतर फुलेल

अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमानः ।
हस्तघ्नो बिश्वा वयुनाति विद्वान् पुमान्पुमाꣳसं परिपातु विश्वतः ।।

(सुगन्धतैलं समर्पयामि)

धूप

ॐ नमः कपर्दिने च व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च नमो गिरिशयाय च शिपिविष्टाय च नमो मीढुष्टमाय चेषुमते च ।

(धूपमाघ्रापयामि)

दीप

ॐ नमः आशवे चाजिराय च नमः शीघ्र्याय च शीभ्याय च नम ऊर्म्याय चावस्वन्याय च नमो नादेयाय च द्वीप्याय च ॥

(दीपं दर्शयामि, हस्तप्रक्षालन्)

नैवेद्य

ॐ नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च नमो मध्यमाय चाप्रगल्भ्याय च नमो जघन्याय च बुध्न्याय च ॥

(नैवेद्यं निवेदयामि)

मध्ये पानीय

ॐ नमः सोम्याय च प्रतिसर्याय च नमो याम्याय च क्षेम्याय च नमः श्लोक्याय चावसान्याय च नम उर्वर्याय च खल्याय च ॥

(मध्ये पानीयं समर्पयामि)

ऋतुफल

फलानि यानि रम्याणि स्थापितानि तवाग्रतः ।
तेन मे सुफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥

(ऋतुफलानि समर्पयामि)

आचमन

त्रिपुरान्तक दीनार्तिनाश श्रीकण्ठ शाश्वत ।
गृहाणाचमनीयं च पवित्रोदककल्पितम् ॥

(आचमनीयं समर्पयामि (

अखण्ड ऋतुफल

कूष्माण्डं मातुलिङ्गं च नारिकेलफलानि च ।
रम्याणि पार्वतीकान्त सोमेश प्रतिगृह्यताम् ।।

(अखण्डऋतुफलं समर्पयामि)

ताम्बूल, पूगीफल

ॐ इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्रभरामहे पतीः ।
यथा शमशद् द्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन्ननातुरम् ।।

(ताम्बूलं, पूगीफलं समर्पयामि)

दक्षिणा

न्यूनातिरिक्तपूजायां सम्पूर्णफलहेतवे ।
दक्षिणां काञ्चनीं देव स्थापयामि तवाग्रतः ।।

(द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि)

नोट—आरती कितनी बार किस प्रकार करें, इसी पुस्तक में लिखा है, देख लेवें ।

- आरती -

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्र हारम् ।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानीसहितं नमामि ।।

जै शिव ओंकारा, हो शिव पार्वती प्यारा, हो शिव ऊपर जल धारा । ब्रह्मा विष्णु सदाशिव अर्द्धङ्गी धारा ।।१।। ॐ हर हर हर महादेव ।।टेक।। एकानन चतुरानन पञ्चानन राजै । हंसासन गरुड़ासन वृषवाहन साजै ।।२।। ॐ हर हर हर० ।। दोयभुज चार चतुर्भुज दशभुजते सोहै । तीनों रूप निरखता त्रिभुवन जन मोहै ।।३।। ॐ हर हर हर० ।। अक्षमाला वनमाला रुण्डमालाधारी । चन्दन मृगमद

चन्दा भाले शुभकारी ॥४॥ ॐ हर हर हर० ॥ श्वेताम्बर पीताम्बर बाघम्बर अंगे। सनकादिक प्रभृतादिक भूतादिक संगे ॥५॥ ॐ हर हर हर० ॥ करमध्ये कमण्डलु चक्र त्रिशूल धरता। जगकर्ता जगहर्त्ता जगपालन कर्त्ता ॥६॥ ॐ हर हर हर० ॥ ब्रह्मा विष्णु सदाशिव जानत अविवेका। प्रणव अक्षर ॐ मध्ये ये तीनों एका ॥७॥ ॐ हर हर हर०। त्रिगुण स्वामी की आरति जो कोई नर गावे, भणत शिवानन्द स्वामी मनवाञ्छित पावे ॥८॥ ॐ हर हर हर० ॥ जै शिव ओंकारा, हो मन भज शिव ओंकारा, हो मन रट शिव ओंकारा, हो शिव गल रुण्डन माला, हो शिव ओढत मृगछाला, हो शिव पीते भंग प्याला, हो शिव रहते मतवाला, हो शिव पार्वती प्यारा, हो शिव ऊपर जल धारा। ब्रह्मा-विष्णु सदाशिव अर्द्धङ्गी धारा ॥९॥ ॐ हर हर हर महादेव ॥

श्री अम्बेजी की आरती

जै अम्बे गौरी! मैया जै मङ्गल मूरती! मैया जै आनन्दी करणी। तुमको निशिदिन ध्यावत हरि ब्रह्मा शिव री! ॥जै अम्बे० ॥ मांग सिन्दूर विराजत टीको मृगमद को। उज्ज्वल से दोऊ नैना चन्द्र वदन नीको ।जै अम्बे० ॥ कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजै। रक्तपुष्प वनमाला कण्ठन पर साजै ॥जै अम्बे० ॥ के हरिवाहन राजत खड्ग खप्पर धारी। सुरनरमुनिजन सेवत तिनके दुःखहारी ॥जै अम्बे० ॥ काननकुण्डल शोभित नासाग्रे मोती। कोटिक चन्द्र दिवाकर राजत सम ज्योति ॥जै अम्बे० ॥ शुम्भनिशुम्भविड़ारे महिषासुरघाती। धूम्र-विलोचन नैना निशिदिनमदमाती। जै अम्बे०। चौंसठ योगिनी गावत नृत्य करत भैंरू। बाजत ताल मृदंगा और बाजत डमरू ॥जय अम्बे०। भुजा चार अति शोभित खड्ग खप्पर-धारी। मन वाञ्छित फल पावत सेवत नर नारी ॥जय अम्बे०॥ कञ्चन थाल विराजत अगर कपूर बाती। श्री मालकेतु में राजत कोटिरतन ज्योति ॥जय अम्बे० ॥ या अम्बेजी की आरती जो कोई नर गावै। भणत शिवानन्द स्वामी सुख सम्पत्ति पावै ॥अम्बे गौरी० ॥

आरती ज्वाला भगवती की

मङ्गल की सेवा सुन मेरी देवा, हाथ जोड़ तेरे द्वारा खड़े ।
पान–सुपारी, ध्वजा-नारियल, ले ज्वाला तेरी भेंट धरें ॥
सुन जगदम्बे ! कर न विलम्बे, संतन के भंडार भरे ।
सन्तन प्रतिपाली सदा खुशाली, काली कल्याण करे ॥१॥

बुद्धि-विधाता तू जग माता, मेरा कारज सिद्ध करे ।
चरण-कमल का लिया आसरा, शरण तुम्हारी आन परे ॥
जब-जब भीर पड़े सन्तन पर, तब तब आय सहाय करे ।
सन्तन पतिपाली० ॥ २॥

बार-बार ते सब जग मोह्यो तरुणी रूप अनूपधरे ।
माता होकर पुत्र खिलावै, कहीं भार्या भोग करे ॥
संतन सुखदाई, सदा सहाई संत खड़े जयकार करे ।
सन्तन प्रतिपाली० ॥३॥

ब्रह्मा-विष्णु-महेश फल लिए, भेंट देन तव द्वार खड़े ।
अटल-सिंहासन बैठी माता, सिर सोने का छत्र धरे ॥
वार शनिश्चर कुंकुम वरणी, जब लुकर पर हुकुम करे ।
सन्तन प्रतिपाली० ॥४॥

कुपित होय कर दानव मारे, चण्ड–मुण्ड सब चूर करे ।
जब तुम देखो दयारूप हो, पल में संकट दूर टरे ॥
सौम्य स्वभाव धरयो मेरी माता, जन की अरज कबूल करे ।
सन्तन प्रतिपाली० ॥५॥

सिंह पीठ पर चढ़ी भवानी, अटल भवन में राज्य करे ।
दर्शन पावें मङ्गल गावें, सिध-साधक तेरे भेंट करें ॥
सन्तन प्रतिपाली० ॥६॥

ब्रह्मा वेद पढ़ें तेरे द्वारे, शिव शंकर हरि ध्यान करें ।
इन्द्र कृष्ण तेरी करें आरती, चमर कुबेर डुलाय करें ॥
जय जननी जय मातु भवानी, अचल भवन में राज्य करे ।
सन्तन प्रतिपाली० ॥७॥

शिवस्तुति

असितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिंधुपात्रे,
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी ।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं,
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ।।१।।

वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरुं वन्दे जगत्कारणं
वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं वंदे पशूनाम्पतिम् ।
वंदे सूर्य्यशशांक-वह्निनयनं वंदे मुकुंदप्रियं,
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम् ।।२।।

शांतं पद्मासनस्थं शशधरमुकुटं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं ।
शूलं वज्रं च खड्गं परशुमभयदं दक्षिणाङ्गे वहन्तम् ।।
नागं पाशं च घंटां डमरुक सहितम् सांकुशं वामभागे,
नानालङ्कारयुक्तं स्फटिकमणिनिभं पार्वतीशं नमामि ।।३।।

श्मशानेष्वाक्रीड़ा स्मरहर पिशाचाः सहचरा-
श्चिताभस्मालेपः स्रगपिनृकरोटी परिकरः ।
अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं,
तथापि स्म नॄणां वरद परमं मङ्गलमसि ।।४।।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देवदेव ।।५।।

पापोऽहं पापकर्माहं पापात्मा पापसम्भवः ।
त्राहि मां पार्वतीनाथ सर्वपापहरो भव ।।६।।

- 'कालहर कण्टकहर दुःखहर दारिद्रयहर'।

नीचे लिखे मन्त्र से गाल बजाते हुए बम् बम् बोलकर जलहरी का जल नेत्रों में लगावें।

निरावलम्बस्य ममावलम्बं, विपाटिताशेष विपत्कदम्बम् ।
मदीय पापाचलपातशम्बंप्रवर्ततां वाचि सदैव बम् बम् ।।

पञ्चाङ्ग प्रणामः। मन में स्मरण; नेत्रों से दर्शन दोनों हाथ जोड़कर और वाणी से नामोच्चारण करते हुए, मस्तक झुकाकर प्रणाम करे।

मन्त्र पुष्पाञ्जलि

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्
तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।।१।।

ॐ राजाधिराय प्रसह्य साहिने ।। नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे ।
समे कामान् कामकामायमह्यम् ।। कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु ।।
कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः ।।२।।

ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं
महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात्सार्वभौमः सर्वायुष
आन्तादापरार्धात्पृथिव्यै समुद् पर्यन्ताया एकराडिति ।। तदप्येष
श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्यावसन् गृहे ।।
अविक्षितस्य काम प्रव्विश्वे देवाः सभासद इति ।।

(इति मंत्रै पुष्पाञ्जलिं समर्प्य)

प्रदक्षिणा

यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणं पदे पदे ।।

(प्रदक्षिणा प्रकार इसी पुस्तक में लिखा है उसी के अनुसार करें)

क्षमा–प्रार्थना

प्रपन्नं पाहि मामीश मतिं मृत्युग्रहार्णवात् ॥
ॐ आवाहनं व जानामि न जानामि विसर्जनम् ।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्यभावेन रक्ष मां परमेश्वर ॥
"अनेन पूजनेन श्री साम्बमदाशिवः प्रीयताम्"

ॐ नमः शिवाय

शिव गायत्री

हरि ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि
तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् !

●

सोपान
(१७)

सर्वदेवपूजा तथा शिवमानस पूजा

पुराणोक्त सर्वदेव पूजा

आत्मसंस्थमजं शुद्धं त्वामहं परमेश्वर ।
अरण्यामिव हव्यांशं मूर्त्तावावाहयाम्यहम् ॥१॥

(अमुक देवाय नमः आवाहनम)

तवेयं महिमामूर्तिस्तस्यां त्वां सर्वगं प्रभो ।
भक्तिस्नेहसमाकृष्ट दीपवत्स्थापयाम्यहम् ॥२॥
(इतिस्थापनम्)

देवदेव महाराज प्रियेश्वर प्रजापते ।
आसनं दिव्यमीशान दास्येऽहं परमेश्वर ॥३॥
(इत्यासनम्)

यद्भक्तिलेश सम्पर्कात्परमानन्दविग्रहम् ।
तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये ॥४॥
(इतिपाद्यम्)

तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणम् ।
तापत्रयविनिर्मुक्तं तवार्घ्यं कल्पयाम्यहम् ॥५॥
(इत्यर्घ्यम्)

वेदानामपि वेद्याय देवानां देवतात्मने ।
आचामं कल्पयामीश शुद्धानां शुद्धिहेतवे ॥६॥
(इत्याचमनीयम्)

गंगा सरस्वतीरेवा पयोष्णी नर्मदा जलैः ।
स्नापितोऽसि मया देव तथा शान्ति कुरुष्व मे ॥७॥
(इतिस्नानम्)

पयोदधि घृतं चैव मधुशर्करया युतम् ।
पञ्चामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥८॥
(इतिपञ्चामृत स्नानम्, पुनः शुद्धोदकस्नानं च । ततोऽभिषेकः)

सर्वभूषाधिके सौम्ये लोकलज्जानिवारणे ।
मयोपपादिते तुभ्यं वाससी प्रतिगृह्यताम् ॥९॥
(इति वस्त्रद्वयमाचमनं च)

नवभिस्तंतुभिर्युक्तं त्रिगुणदेवतामयम् ।
उपवीतं चोत्तरीयं गृहाण परमेश्वर ॥१०॥
(इतियज्ञोपवीतम्, आचमनं च)

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥११॥
(इतिगन्धम्)

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुंकुमाक्ताः सुशोभिताः ।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ॥१२॥
(इत्यक्षतान्)

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो ।
मयानीतानि पुष्पाणि गृहाण परमेश्वर ॥१३॥
(इति पुष्पाणि)

(विष्णवे तुलसीं, शिवाय बिल्वपत्राणि, सूर्याय अर्कं पुष्पाणि, गणपतये दूर्वांकुरान्, देव्यै रक्तकरवीर पुष्पादीनि चार्पयेत् ।

वनस्पतिरसोऽद्भुतो गंधाढ्यो गंध उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥१४॥
(इतिधूपम्)

सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः ।
सबाह्याभ्यंतरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥१५॥
(इतिघृतदीपम)

सत्पात्रसिद्धं सुहविर्विविधानेकभक्षणम् ।
निवेदयामि देवेश सानुगाय गृहाण तत् ॥१६॥
(इतिपायसादि नैवेद्यं)

नमस्ते देव देवेश सर्वतृप्तिकरं परम् ।
अखंडानन्दसम्पूर्णं गृहाण जलमुत्तमम् ।।१७।।
(इत्याचमनम्)

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्ली दलैर्युतम् ।
एलाचूर्णादिसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ।।१८।।
(इतिताम्बूलम्)

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव ।
तेन मे सफला वाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ।।१९।।
(इति ऋतुफलम्)

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं: विभावसोः ।
अनन्तपुण्यफलदमतः शांतिं प्रयच्छ मे ।।२०।।
(इतिहिरण्यादि दक्षिणाम्)

ततः कर्पूरेण आर्त्तिक्यम्

कदलीगर्भ संभूतं कर्पूरं च सुदीपितम् ।
आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव ।।२१।।
(इत्यार्तिक्यम्)

केवलशिवपूजन हेतु

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम् ।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि ।।२२।।
(इत्यार्तिक्यम्)

नोट—आरती गायन हेतु भगवान् शिव अम्बेजी, ज्वाला भगवती की इसी पुस्तक में वेदोक्त बृहत्पूजा प्रकार में दी गई वहाँ से देख लेवें ।

प्रदक्षिणा

यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणं पदे पदे ॥२३॥

(इति प्रदक्षिणा)

नाना सुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च ।
पुष्पांजलिं मयादत्तं गृहाण परमेश्वर ॥२४॥

(इति पुष्पाञ्जलिं च दत्त्वा साष्टांगं प्रणमेत्)

क्षमा प्रार्थना

ॐ आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् ।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥२५॥
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्यभावेन रक्ष मां परमेश्वर ॥२६॥

(इति पुष्पांजलिं च दत्त्वा साष्टांगं प्रणमेत् तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु)

श्री शिवमानसपूजा

रत्नः कल्पितमाननं हिमजलैः स्नानं च दिव्याम्बरं,
नाना रत्नविभूषितं मृगमदामोदाङ्कितं चन्दनम्
जातिचम्पकबिल्वपत्रसहितं पुष्पं च धूपं तथा
दीपं देव दयानिधे पशुपते हृत्कल्पितं गृह्यताम् ॥१॥

सौवर्णे नवरत्नखण्डरचिते पात्रे घृतं पायसं
भक्ष्यं पञ्चविधं पयोदधियुतं रम्भाफलं पानकम् ।
शाकानामयुतं जलं रुचिकरं कर्पूरखण्डोज्ज्वलं
ताम्बूलं मनसा मया विरचित्तं भक्त्या प्रभो स्वीकुरु ॥२॥

छत्रं चामरयोर्युगं व्यजनकं चादर्शकं निर्मलं
वीणाभेरिमृदङ्गकाहलकला गीतं च नित्यं तथा
साष्टाङ्गप्रणतिः स्तुतिर्बहुविधा ह्येतत्समस्तं मया
सङ्कल्पेन समर्पितं तव विभो पूजां गृहाण प्रभो ॥३॥

आत्मा त्वं गिरिजा मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं
पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः ।
सञ्चारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो
यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम् ॥४॥

करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा
श्रवण नयनजं वा मानसं वा पराधम्
विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व
जय जय करुणाब्धे श्री महादेव शम्भो ॥५॥

श्री शिवमानस पूजा सम्पूर्णम्

अथ षोडशोपचार पूजा-विधि

षोडशोपचार पूजा में निम्नलिखित सोलह उपचार ग्रहण किये जाते हैं--

१- आसन २- पाद्य ३- अर्घ्यं ४-आचमन ५- वस्त्र ६- गन्ध ७- चन्दन ८- अक्षत (चावल) ९- पुष्प, बिल्वपत्र, दूर्वा, तुलसी आदि अन्य पत्र पुष्पादि १०- धूप, ११- दीप १२- पुष्पमाला १३- नैवेद्य ऋतुफलं १४–जल आचमन १५- ताम्बूल-पूगीफल, दक्षिणा १६- शय्या ।

षोडशोपचार पूजा के मंत्रादि वही हैं, जो बृहत्पूजा प्रकार में लिखे हैं, उससे ग्रहण कर सकते हैं ।

अथ द्वादशोपचार पूजा विधि

द्वादशोपचार पूजा में निम्नलिखित बारह उपचार प्रयोग किये जाते हैं ।

१–आसन २–पाद्य ३–अर्घ्य ४–आचमन ५–वस्त्र ६–चन्दन ७–पुष्प, बिल्वपत्र, दूर्वा, तुलसी, शमी-पत्र, पुष्पमालादि, ८–धूप ९- दीप १०–नैवेद्य-ऋतुफल ११–जल-आचमन १२-भेंट, दक्षिणा।

द्वादशोपचार पूजा के मंत्रादि वे ही है, जो वृहत्पूजा प्रकार में लिखे हैं। वहाँ से ही देख सकते हैं।

अथ पञ्चोपचार पूजा विधि

पञ्चोपचार पूजा में निम्नलिखित पाँच उपचार प्रयोग किये जाते हैं।

१–पाद्य २–अर्घ्य ३–आचमन ४–पुष्प, बिल्वपत्र, तुलसी, दूर्वा, शमीपत्र, पुष्प मालादि ५-नैवेद्य, दक्षिणा।

पञ्चोपचार पूजा के मन्त्रादि वही हैं जो वृहत्पूजा प्रकार में लिखे हैं, वहाँ से ही देख लेवें।

अथ शिवसंकल्प

ॐ यज्जाग्रतोदूरमुदैति दैवन्तदुसुप्तस्य तथैवेति॥ दूरङ्गमञ्ज्योतिषाञ्ज्योतिरेकन्तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥१॥ येनकर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति व्विदथेषु धीराः॥ यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानान्तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२॥ यत्प्रज्ञानमुतचेतो-धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतम्प्रजासु। यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते-तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥३॥ येनेदम्भूतम्भुवनम्भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् ॥ येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मेमनः शिवसंकल्पमस्तु।४॥ यस्मिन्नृचः सामयजूꣳषि यस्मिन्नप्रतिष्ठितारथनाभाविवाराः ॥ यस्मिंश्चित्तꣳ सर्व्वमोतम्प्रजानातन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥५॥ सुषारथिरश्वनिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव। हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥६॥

अथ शिवनिराजनार्तिः

"ॐ जय गङ्गाधर हर जय गिरिजाधीशा॥ त्वं मां पालय नित्यं कृपया जगदीशा॥ हर हर महादेव ॥१॥ कैलासे गिरिशिखरे

कलद्रुमविपिने ॥ गुञ्जति मधुकरपुञ्जे कुञ्जवनेगहने ॥ कोकिलकूजित खेलतहंसा वनललिता ॥ रचयति कलाकलापं नृत्यति मुदसहिता । हर हर हर महादेव ॥२॥ तस्मिल्ललितसुदेशे शाला मणिरचिता ॥ तन्मध्ये हरनिकटे गौरी मुदसहिता ॥ क्रीड़ा रचयति भूषारञ्जितनिजमीशं ॥ इन्द्रादिकसुरसेवितनामयतेशीशम् ॥ हर हर० ३। त्रिबुधवधूबंहु नृत्यति हृदये मुदसहिता ॥ किन्नरगायन कुरुते सप्तस्वरसहिता ॥ धिनकत थैं थैं धिनकतमृदङ्ग वादयते । क्वरण-क्वण ललिता वेणुं मधुरं नादयते । हर हर० ॥४॥ रुण रुण चरणे रचयति नूपुरमुज्जवलिता ॥ चक्रावर्ते भ्रमयति कुरुते तां धिकतां ॥ तां तां लुप चुप तां तां डमरू वादयते । अगुष्ठांगुलिनादं लासिकतां कुरुते ॥ हर हर० ॥५॥ कर्पूरद्युतिगौरं पंचाननसहितम् ॥ त्रिनयनशशिधरमौलि विषधरकण्ठयुतम् ॥ सुन्दरजटाकलापं पावकयुतभालम् ॥ डमरूत्रिशूलपिनाकं करधृतनृकपालम् ॥ हर हर० ॥६॥ मुण्डै रचयति माला पन्नगमुपवीतम् ॥ वामविभागे गिरिजारूपं अतिललितम् ॥ सुन्दरसकलशरीरे कृतभस्माभरणम् ॥ इति वृषभध्वजरूपं तापत्रय हरणम् । हर हर०॥७॥ शंखनिनादं कृत्वा झल्लरिनादयतं॥ नीराजयते ब्रह्मा वेदऋचां पठते ॥ अति मृदुचरणसरोजं हृदिकमले धृत्वा॥ अवलोकयति महेशं ईशं अभिनत्वा । हर हर० ॥८॥ ध्यानं आरतिसमये हृदये अति कृत्वा ॥ रामस्त्रिजटानाथं ईशं अभिनत्वा ॥ संगीतमेवं प्रतिदिनपठनंयः कुरुते ॥ शिवसायुज्यं गच्छति भक्त्या यः शृणुते ॥ हर हर हर महादेव ॥९॥ इति शिवनीराजनं समाप्तम् ॥

आरती किस प्रकार से कितनी बार करें

सभी देवी देवताओं की आरती देवताओं के सामने खड़े होकर करना चाहिये। प्रथम श्रीभगवान् के चरणों का ध्यान करके चार बार आरती उतारे। फिर नाभिकमल का ध्यान करके दो बार, पश्चात् मुखारविन्द का स्मरण करके एक बार तथा सर्वाङ्ग की सात बार, इस प्रकार चौदह बार करे। तत्पश्चात् शुद्ध कपड़े में

रखी हुई तुलसी घुमाएँ, पुनः इसी प्रकार भगवान् विष्णु, राम, श्रीकृष्ण की आरती में शंख में जल रखकर घुमाते हुए छोड़ें, भगवान् शिव की पूजा में किसी पात्र में जल लेकर घुमाते हुए छोड़ें।

प्रत्येक पूजा में करणीय

अर्घ्य

रूपं देहि यशो देहि भोगं देहि च शंकर।
भुक्तिमुक्ति फलं देहि गृहीत्वार्घ्यं नमोऽस्तुते ॥

(अर्घ्यं समर्पयामि)

'प्रभो ! शंकर ! आपको नमस्कार है। आप इस अर्घ्य को स्वीकार करके मुझे रूप दीजिये, यश दीजिये, तथा भोग दीजिये और मोक्ष रूपी फल प्रदान कीजिये।

पुष्पाञ्जलि

अज्ञानाद्यदि वा ज्ञानाद्यद्यत्पूजादिकं मया।
कृतं तदस्तु सफलं कृपया तव शंकर ॥
तावकस्त्वद्गतप्राणस्त्वच्चित्तोऽहं सदा मृड।
इति विज्ञाय गौरीश भूतनाथ प्रसीद मे ॥
भूमौ स्खलितपादानां भूमिरेवावलम्बनम्।
त्वयि जातापराधानां त्वमेव शरणं प्रभो

(शि. पु. रुद्र. संहि. अ. १३)

'शंकर ! मैंने अज्ञान से या जान-बूझकर जो पूजन आदि किया है, वह आपकी कृपा से सफल हो। मृड ! मैं आपका हूँ, मेरे प्राण सदा आप में लगे हुए हैं, मेरा चित्त सदा आपका ही चिन्तन करता है–ऐसा जानकर हे गौरीनाथ ! भूतनाथ ! आप मुझ पर प्रसन्न होइए। प्रभो ! धरती पर जिनके पैर लड़खड़ा जाते हैं, उनके

लिये भूमि ही सहारा है; उसी प्रकार जिन्होंने आपके प्रति अपराध किये हैं, उनके लिये भी आप ही शरणदाता हैं।'

प्रार्थना (स्तुति)

न धर्मनिष्ठोऽस्मिन् चात्मवेदी न भक्तिमांस्त्वच्चरणारविन्दे ।
अकिंचनोऽनन्यगतिः शरण्य त्वत्पादमूलं शरणं प्रपद्ये ॥

'मैं न धर्मनिष्ठ हूँ, न आत्मज्ञानी हूँ और न आपके चरणों में भक्तिमान ही हूँ, मैं तो अकिंचन हूँ, अनन्यगति हूँ और आपके शरणागत रक्षक चरण कमलों की शरण में आया हूं।'

योऽपि कोऽपि वा गुणतोऽसानि यथातथा विधः ।
तदयं तव पादपद्मयोरहमद्यैव मया समर्पितः ॥

'हे नाथ ! शरीर, इन्द्रिय, मन, प्राण और बुद्धि आदि में जो कोई भी होऊँ, गुण के अनुसार (भला-बुरा) जैसा भी होऊँ, मैं तो आज ही अपने को आपके चरण कमलों में समर्पण कर चुका।"

पिता त्वं माता त्वं दयिततनयस्त्वं प्रिय सुहृत्
त्वमेव त्वं मित्रं गुरुरपि गतिश्चासि जगताम् ।

त्वदीयस्त्वद्भृत्यस्तव परिजनस्त्वद्गतिरहं
प्रपन्नश्चैवंसत्यहमपि तवैवास्मि हि भरः ॥

हे भगवान् ! आप ही विश्व के माता-पिता, प्रिय, पुत्र, प्यारे सुहृद, मित्र, गुरु और गति हैं; मैं आपका ही सम्बन्धी आपका ही दास, आपका ही परिचारक, आपको ही (एक मात्र) गति मानने वाला और आपके ही शरण हूँ। इस प्रकार अब आप पर ही मेरा सारा भार है।

श्री साम्ब सदाशिवः प्रीयताम् ॥ ॐसाम्बसदाशिवर्पणमस्तु ।
ॐ नमः शिवाय ॥ शुभमस्तु ॥ ॐ ॥

सोपान

(१८) क

हिन्दी भाषा द्वारा पूजन पद्धति

भगवान् शिव की पूजन विधि अनेक प्रकार से वेदों, तान्त्रिक ग्रन्थों व पौराणिक ग्रन्थों में कही गई हैं किन्तु केवल हिन्दी भाषा द्वारा ही कोई सरल पूजन विधि ऐसी दृष्टिगोचर नहीं होती कि वेद व संस्कृत से अनभिज्ञ पूजक भी किसी पण्डित की सहायता लिए बिना स्वयं ही हिन्दी भाषा द्वारा विधिवत् पूजा कर भगवान् शिव की पूजा का लाभ ले सकें। अतएव सरल रूप से कुछ पूजा विधियाँ केवल हिन्दी में लिखी जा रही हैं। इसमें यह भी ध्यान रखा गया है कि इन विधियों में वेदोक्त, तान्त्रिक व पुराणोक्त पूजा विधियों के भावों का समावेश करने में किसी प्रकार से कमी न रहे। भक्तजन इनके द्वारा पूजा कर भक्ति-लाभ प्राप्त करें।

कई एक मनुष्य श्री भगवान् शिव की प्रतिदिन भक्ति-भाव से अनेक प्रकार के उपचारों द्वारा बृहत विधान से पूजा करते हैं। कोई सोलह सुन्दर व पवित्र उपचार भगवान् शिव को अर्पित करते हैं। कोई बारह द्रव्यों का उपचार और कोई पाँच वस्तुओं का उपचार अर्पण करते हैं। जैसी जिसको शक्ति व भावना हो उसी के अनुसार पूजा की जा सकती है। पूजा की मुख्य जड़ (मूल) भगवान् शिव के प्रति भक्ति होना है।

आसन, वस्त्र, पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, पुष्प, चन्दन, धूप, दीप, उत्तम शुद्ध पवित्र नैवेद्य, गन्ध, माल्य, ललित एवं विलक्षण शय्या, जल, अन्न और ताम्बूल (पान) यह सामान्यतः अर्पित करने योग्य सोलह उपचार हैं।

जो बारह उपचारों से पूजन करते हैं, वे इन उपर्युक्त कहे हुए सोलह उपचारों में से गन्ध, अन्न, शय्य, ताम्बूल इन चार पदार्थों (उपचारों) को छोड़कर बाकी बारह उपचारों से पूजन करते हैं और जो पाँच उपचारों से ही पूजा करते हैं, वे पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, पुष्प और नैवेद्य ही समर्पण करते हैं।

पूजा में प्रयुक्त होने वाला मन्त्र किसी गुरु द्वारा लिया हो तो उसका उच्चारण करके ही उच्चारण उपचार भगवान् शिव की सेवा में अर्पण करना चाहिए। जप भी गुरु का दिया हुआ मंत्र हो तो उसी का करना चाहिये, नहीं तो ॐ नमः शिवाय का ही करना चाहिए।

शास्त्रों में विभिन्न प्रकार के अनेक पूजा प्रकार लिखे हैं, जो कई प्रकार से जटिल हैं। ये साधारण मनुष्यों की समझ से बाहर हैं। उनका सार रूप से ग्रहण कर संक्षिप्त प्रकार से सरल भाषा में वर्णन यहाँ लिखा जाता है जिसके द्वारा प्रत्येक हिन्दी भाषी शास्त्रोक्त विधिवत् पूजालाभ ले सके।

हिन्दी भाषा द्वारा बृहत् शिवपूजन विधि

पूजन करने वाला प्रातःकाल उठकर श्री गणेशजी महाराज का व भगवान् शिव तथा उमा देवी का स्मरण करे, फिर शौच, दन्तधावन, स्नानादि करके पवित्र हो, शुद्ध वस्त्र धारण कर आचमन, प्राणायाम करके सन्ध्या करने वाला हो, तो सन्ध्या करके शुद्ध आसन पर बैठे और पूजा पात्र (बर्तन) माँजकर शुद्ध किये हुए, शुद्ध पवित्र जलादि से पूर्ण करके तथा पूजन में अर्पण करने योग्य पदार्थ सामग्री द्रव्य सबको सम्हालकर पास में रख लेवे और सबको पवित्र जल द्वारा छींटा देकर पवित्र कर लेवे फिर संकल्प करे। दाहिने हाथ में या चम्मच में जल, पुष्प, अक्षत, द्रव्यादि रखकर फिर संकल्प उच्चारण करता हुआ संकल्प वाक्य के अन्त

में "श्री उमा महेश्वर" (शिव–पार्वती) की प्रसन्नता हेतु यह पूजा करता हूँ. यह उच्चारण कर जल संकल्प द्रव्यादि छोड़ देवे।

सर्वप्रथम श्री गणेशजी महाराज का पूजन करें। श्री गणेशजी महाराज का ध्यान करके इस प्रकार प्रार्थना करें कि हे विघ्नों का नाश करने वाले सफल सिद्धि प्रदान करने वाले महाप्रभो! श्री गणेशजी महाराज! आप पधारिये। मैं भगवान् शिव-पार्वती की पूजा करता हूं. इसमें कोई विघ्न न हो, इसमें आप मेरी सहायता व रक्षा करें। यह कहकर श्री गणेशजी के सामने चार बार जल छोडकर पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान के लिए निवेदन करे। फिर पञ्चामृत हो तो पञ्चामृत का छींटा देकर पञ्चामृत स्नान निवेदन करे। फिर शुद्ध स्नान हेतु निवेदन करे. फिर वस्त्र हो तो वस्त्र नहीं हो तो मोली (नाल) का तार वस्त्र रूप में अर्पण करे। फिर गन्ध (रोली या चन्दन) तिलक अनुलेपन हेतु चढ़ावे। फिर अक्षत (साबुन चावल) चढ़ावे। फिर पुष्प फिर दूर्वा (दूब) चढ़ावे। बिल्वपत्र चढ़ावे फिर यज्ञोपवीत (जनेऊ) चढ़ावे। जेवर (गहना) न हो तो चावल चढ़ावे। फिर सुगन्ध तेल, इतर चढ़ावे। धूप, अगरबत्ती जलाकर अर्पण करे। गाय के शुद्ध घृत में शुद्ध रूई की बत्ती जलाकर भिगो लेवे और प्रज्वलित कर (जलाकर) दीपक समर्पण करे। लड्डू, पेड़ा, गुड़ या बतासा आदि जो भी मिष्टान्न प्रसाद नैवेद्य हो वह समर्पण करे व आचमन का जल छोड़े। ऋतु के अनुसार जो फल हों वे फल निवेदन कर अर्पण करे। फिर आचमन कराये। कैथफल, जम्बूफल यदि मिल सके तो श्रीगणेशजी को पूजन में अवश्य समर्पण करना चाहिये। अखण्ड ऋतुफल, श्रीफल आदि चढ़ावे, न हो तो अक्षत समर्पण करदे। पूँगीफल (सुपारी) पान लवङ्ग इलायची अर्पण करे। फिर दक्षिणा भेंट द्रव्य अर्पण करे फिर कपूर द्वारा आरती करे या अन्य समस्त देवताओं की पूजा कर लेवे, तत्पश्चात् सबकी आरती भी एक साथ करली जावे, ऐसा भी किया जा सकता है। पुष्प, अक्षत हाथ

में लेकर पुष्पाञ्जलि अर्पण करे और फिर पूजा में कोई कमी (त्रुटि) रही हो, इसके लिये क्षमा प्रार्थना करे कि हे महाराज! विघ्नों का नाश करने वाले सभी कार्यों में सफलता व सिद्धि प्रदान करने वाले मेरे द्वारा इस पूजा में त्रुटि रही हो उसके लिए आप क्षमा करे और जैसो भी मुझसे यह पूजा बन सकी है इसे स्वीकार करें।

इसके पश्चात् श्री उमादेवी पार्वतीजी का पूजन करें। उमा देवी पार्वतीजी की पूजा में हो सके तो बिल्वफल या पत्र अवश्य अर्पण करे। अन्य सभी प्रकार के उपचार श्री गणेशजी की पूजा के अनुसार ही करें।

इसके पश्चात् नन्दीश्वर का पूजन करे, फिर श्री वीरभद्र का पूजन करे, तत्पश्चात् श्री स्वामी कार्तिकेय का पूजन करे। श्री कुबेर जी महाराज व फिर श्री कीर्तिमुख का पूजन करे। यदि भगवान् शिव की जलेहरी में सर्प हो या उसकी आकृति हो तो उसका पूजन करे। इन उपर्युक्त सभी देवताओं की पूजा करने के पश्चात् भगवान् शिव की पूजा करें। इन देवताओं की पूजा भी श्री गणेशजी की पूजा के अनुसार ही करना चाहिए।

भगवान् शिव की पूजा करते समय आरम्भ में भगवान् शिव का ध्यान इस प्रकार करें---

श्री भगवान् शिव उत्तम आसन पर योगासन लगाए हुये तीनों तत्त्वों से युक्त निर्मल पद्मासन से बैठे हैं। उनका स्वरूप सर्वमनोहारी है। समस्त शुभलक्षणों से भरे हुए हैं और सम्पूर्ण अवयवों से शोभायमान हैं। वे सबसे बढ़कर हैं और समस्त आभूषण उनकी शोभा बढ़ाते हैं। उनके हाथ पैर लाल हैं, उनका मुस्कराता हुआ मुख कुन्द व चन्द्रमा के समान शोभा पा रहा है। उनकी अङ्ग कान्ति शुद्ध स्फटिक के समान निर्मल है। तीनों नेत्र प्रफुल्ल कमल की भाँति सुन्दर हैं। चार भुजाएँ, उत्तम अङ्ग और मनोहर चन्द्र-

कला का मुकुट धारण कर रखा है भगवान् शंकर ने दो हाथों में वरद और अभय मुद्रा धारण कर रखी है और शेष दो हाथों में मृगमुद्रा एव टङ्क लिये हुए हैं। उन्होंने हाथों में कड़े पहनने के स्थान पर सर्पों की माला धारण कर रखी है। गले में नीला चिह्न शोभा पा रहा है। वे अपने अनुगामी व उनके आवश्यक उपकरणों के साथ विराजमान हैं। इस प्रकार के ध्यान के साथ हो ध्यान करे कि उनके वाम भाग में महेश्वरी शिवा विराजमान हैं। भगवती शिव की अङ्गकान्ति प्रफुल्ल कमल दल क समान परम सुन्दर है। उनके नेत्र बड़े-बड़े हैं। मुख पूर्ण चन्द्रमा के समान सुशोभित है। मस्तक पर काले काले घुंघराले केश शोभा पा रहे हैं। वे नील उत्पल दल के समान कान्तिमय हैं, मस्तक पर अर्द्धचन्द्र का मुकुट धारण कर रखा है। उनके पोन पयोधर अत्यन्त गोल घनीभूत ऊंचे और स्निग्ध है। शरीर का मध्य भाग कृश है। नितम्ब स्थूल हैं। वे रेशमी चिकने चमकते हुए पीले वस्त्र धारण किए हुए हैं। सम्पूर्ण आभूषणों से उनका शरीर सजा हुआ शोभा पा रहा है। ललाट पर सुन्दर लगे हुए तिलक से उनका सौन्दर्य और भी खिल रहा है। विचित्र प्रकार की गुंथी हुई, सुगन्धित पुष्पों की माला से गुम्फित केश पाश उनके शरीर की शोभा बढ़ा रहा है। उनकी आकृति सब प्रकार से सुन्दर व सुडौल है। मुख कुछ लज्जा से झुका हुआ है। वे दाहिने हाथ में स्वर्ण मय कमल धारण किए हुए हैं, और दूसरे हाथ में दण्ड की तरह सिंहासन पर रख कर उसका सहारा ले उस महान् सिंहासन पर विराज रही हैं। यह शिवा देवी समस्त पापों का छेदन करने वाली, साक्षात् सच्चिदानन्द स्वरूपिणी हैं। इस प्रकार महादेव व महादेवी का ध्यान करके शुभ एवं श्रेष्ठ आसन पर सम्पूर्ण उपचारों युक्त विनम्र ढंग से पूजा करें।

वेदोक्त मंत्र व पुराणोक्त श्लोकों का उच्चारण करके पूजा में पदार्थ उपचार देवताओं को समर्पण किए जाते है, उनका भावार्थ

संक्षेप में जिस प्रकार है, वह नीचे लिखा जाता है। इसी प्रकार के मनोभाव बनाकर इसी प्रकार उच्चारण करते हुए पूजा में उपचार निवेदन करना चाहिए।

(१) आसन समर्पण

हे उमा महेश्वर! अमूल्य रत्नों द्वारा निर्मित नाना प्रकार के रंग और चित्रों द्वारा शोभायमान जो अनेक प्रकार के गद्दे तकियों द्वारा सजाया गया है। बैठने में आराम, आनन्द तथा सुख पहुंचने वाला है, यह सिंहासन अर्पण करता हूँ। आप स्वीकार करें, और इस पर विराजमान हों। इस प्रकार उच्चारण कर उस सिंहासन पर शिव पार्वती (वेदी सहित शिव) को विराजमान करावें और उसके आगे पुष्प अर्पित करें।

(२) पाद्य समर्पण

हे उमा महेश्वर! बहुमूल्य रत्नमय पात्र में रखे हुए, निर्मल गङ्गाजल या गंगा समान शुद्ध पवित्र निर्मल जल आपको अर्पण करता हूँ। यह पैर धोने के लिए पाद्य रूप में ग्रहण करें।

(३) अर्घ्य

हे उमा महेश्वर! पवित्र सुन्दर पात्र में रखा हुआ स्वर्ग-गंगा का जल दूर्वा, पुष्प और अक्षत (चावल) से युक्त अर्घ्य के रूप में अर्पित करता हूँ। इसे आप स्वीकारें।

(४) आचमन

हे उमा महेश्वर! मैं भक्ति भाव से आह्वनीय के रूप में कपूर आदि से सुसंस्कृत एवं सुवासित शीतल जल आचमन हेतु अर्पित करता हूं। इसे आप ग्रहण करें।

(५) स्नान सामग्री

हे उमा महेश्वर! सुगन्धित आवलें और स्निग्ध द्रव्य और

परम दुर्लभ सुगन्ध स्नानीय तैल स्नानीय सामग्री के रूप में प्रस्तुत है। आप इसे स्वीकार करें।

(६) जल स्नान

हे उमा महेश्वर ! शुद्ध पवित्र कपड़े से छना हुआ ठण्डा गंगाजल या उत्तम प्रकार से लाया हुआ जल सुन्दर बड़े पात्र में रखा हुआ आपके स्नान हेतु अर्पण करता हूं। इसे आप स्वीकार करे।

(७) दुग्ध स्नान

हे उमा महेश्वर ! पवित्र गोमाता, जिसे शुद्ध पवित्र खाद्य खिलाए गए हैं और उसके बछड़े को अच्छी प्रकार उसके दुग्ध से तृप्त होने के पश्चात् अवशेष बच गया था, वह शुद्ध पवित्र वर्तन में दोहन करके पवित्रता पूर्वक छानकर रखा हुआ है। वह दुग्ध जो पुष्टि और तृप्ति करने वाला है, आपके स्नान हेतु स्वीकार करें।

(८) दधि स्नान

हे उमा महेश्वर ! अच्छी परम पवित्र पूजनीय गौमाता का यथाविध दोहन किया हुआ दुग्ध अग्नि तापन कर पवित्र बर्तन में यथाविधि जमाकर रखा हुआ दधि, जो शरीर को तृप्त व तुष्टि प्रदान करने वाला है आपके स्नान हेतु अर्पण करता हूं। आप स्वीकार करें।

(९) घृतस्नान

हे उमा महेश्वर ! उत्तम प्रकार से गाय के शुद्ध पवित्र दुग्ध को जमाकर और उसे उत्तम प्रकार से आलोडन विलोडन करके निकाला हुआ पवित्र घी उत्तम पात्र में रखा है जो शरीर को पुष्टि, तुष्टि, तृप्ति, स्निग्धता प्रदान करने वाला है आपको स्नान हेतु अर्पण है। आप स्वीकार करें।

(१०) मधुस्नान

हे उमामहेश्वर ! उत्तम-उत्तम सुन्दर पुष्पों के पराग से झरते हुए कणों को मधुमक्खियों द्वारा संचित किया हुआ और उत्तम

प्रकार से छत्तों से ग्रहण किया हुआ, पवित्र सुन्दर पात्र में रखा हुआ मधु (शहद) जो सब प्रकार से स्वादिष्ट व तृप्तिकारक है। यह मधु आपको स्नान हेतु अर्पित है । आप स्वीकार करें ।

(११) शर्करा स्नान

हे उमा महेश्वर ! भली प्रकार ईख रस को इकट्ठा करके उत्तम प्रकार से शर्करा निर्मित की हुई जो सब प्रकार से तृप्ति और आनन्द वृद्धि कर, शान्ति, सुख व बलवर्द्धक है । ऐसी शर्करा (चीनी) आपको स्नान हेतु समर्पण है । आप स्वीकार करें ।

(१२) पञ्चामृत स्नान

हे उमा महेश्वर ! गो माता के पवित्र दुग्ध, दधि, घृत, मधु शर्करा सब उत्तम प्रकार से मिलाकर कपड़े से छान कर शुद्ध पवित्र पात्र में रक्खा है, यह सर्व प्रकार की व्याधियों से छुटकारा दिलाने वाला है, सभी प्रकार से शरीर के अवयवों को तुष्टि, पुष्टि, स्निग्धता, प्रसन्नता प्रदान करने वाला है । यह पञ्चामृत स्नान हेतु आपको अर्पित करता हूँ । आप स्वीकार करें ।

(१३) शुद्धोदक स्नान

हे उमा महेश्वर ! समशीतोष्ण शुद्ध पवित्र गंगाजल या गंगाजल समान जल लाकर पवित्र सुन्दर बर्तन में रखा है, जो शरीर को शुद्ध पवित्र उत्तम करने वाला है । यह जल शुद्ध स्नान हेतु अर्पण करता हूँ । आप इसे स्नान हेतु स्वीकार करें ।

(१४) अभिषेक (जल धारा चढ़ाना)

हे उमा महेश्वर ! शुद्ध पवित्र बर्तन में उत्तम प्रकार से लाया हुआ जल है, यह जलधारा (अभिषेक) प्रसन्नता, तृप्ति हेतु आपको अर्पित करता हूं, आप इसे स्वीकार करें ।

यह उच्चारण करके बर्तन जिसमें अपनी शक्ति श्रद्धा हो, इतने ही छिद्र बनाकर जैसे एक या पांच, ग्यारह, बारह, इक्कीस

इकावन, एक सौ आठ, एक हजार यह इस प्रकार न हो सके तो जल भरा हुआ पात्र (बर्तन) लेकर अपने दोनों हाथों द्वारा पकड़ कर जलधारा द्वारा जल भगवान् शिव पर चढ़ावे और जल चढ़ाते समय मुख से ॐ नमः शिवाय मंत्र का जप करता रहे। अधिक नहीं तो कम से कम एक माला जप होवे तब तक तो जल धारा लगाना ही चाहिए। इसके पश्चात् शुद्ध वस्त्र (तौलिया) लेकर भगवान् शिव-पार्वती माता (जलहरी सहित शिव) को जल व अन्य पदार्थों से दूर कर पोंछ लेवे और शुद्धता व सावधानी से यथा स्थान सिंहासन पर विराजमान कर देवें। यदि शिव जलहरी स्थाई स्थापित हो तो भगवान् शिव से जल आदि पदार्थ दूर कर उसी स्थान पर स्थापित शिव को पोंछ देवे।

(१५) वस्त्र व उपवस्त्र समर्पण

हे उमा महेश्वर असंख्य उत्तम शुद्ध पवित्र सूत्रों द्वारा ईश्वर इच्छा से निर्मित प्रज्वलित अग्नि द्वारा शुद्ध किया हुआ चमचमाता मनमोहक दिव्य सुन्दर वस्त्र व उपवस्त्र (दो वस्त्र) आपको शरीर रक्षार्थ व सौन्दर्य वृद्धि हेतु अर्पण करता हूं। आप स्वीकार करें।

(१६) आभरण वस्त्र

हे उमा महेश्वर! उत्तम शुद्ध पदार्थों और चतुर निर्माताओं द्वारा मनमोहक कारीगरी द्वारा बनाये हुए, उत्तम व शरीर की कान्ति व शोभावृद्धि करने वाले आभरण आपकी सेवा में अर्पित करता हूं। आप इन्हें स्वीकार करें। वस्त्र न हों तो पुष्प माला, वह भी न हों तो अक्षत (चावल) चढ़ा देवें।

(१७) यज्ञोपवीत समर्पण

हे उमा महेश्वर! उत्तम प्रकार के नरम सूत्रों द्वारा शास्त्रोक्त विधि से तैयार किया हुआ यज्ञोपवीत जो बल, तेज, बुद्धि, ज्ञान वर्द्धक है, आपकी सेवा में अर्पण करता हूँ। आप इसे धारण करें।

(१८) गन्ध समर्पण

हे उमा महेश्वर ! विभिन्न वृक्षों के मूल का चूर्ण गन्ध द्रव्य से युक्त परम पवित्र एवं मङ्गलोपयोगी, गन्ध के रूप में आपको समर्पित करता हूं। आप स्वीकार करें।

(१९) अनुलेप अर्पण

हे उमा महेश्वर ! कस्तूरी अगरु चन्दन और कुंकुम से मिला हुआ व श्वेत चन्दन मिश्रित सुगन्ध कर्पूरादि से युक्त लेप अनुलेपन हेतु आपकी सेवा में अर्पित करता हूँ। इसे आप स्वीकार करें।

(२०) भस्म त्रिपुण्ड्र समर्पण

उत्तम भस्म त्रिपुण्ड्र हेतु इस प्रार्थना के साथ समर्पित करें—

हे भगवान् शिव ! तप, तेज, योग की वृद्धि करने वाला उत्तम प्रकार से ग्रहण किया हुआ, यह भस्म आपके त्रिपुण्ड्र लगाने हेतु समर्पित है। इसे आप स्वीकार करें।

(२१) अक्षत (चावल) समर्पण

हे उमा महेश्वर ! पृथ्वी माता के गर्भ के महा मर्म से उपजाए हुए देवान्न, जिसको घर में रखने से घर धन धान्य से परिपूर्ण समृद्धि युक्त होता है, जिसके द्वारा किये हुए पूजा के धर्मादि कार्य कभी क्षय नहीं होते, इसीलिए जिनको अक्षत नाम दिया गया है, ऐसे अक्षत (चावल) आपकी सेवा हेतु समर्पण करता है। आप स्वीकार करें।

(२२) पुष्प समर्पण

हे उमा महेश्वर ! पारिजात वृक्षों से उत्पन्न हुए अनेक प्रकार की सुन्दर गन्ध युक्त नाना प्रकार के मनमोहक रङ्ग वाले श्रेष्ठ कमल, शतपत्री (गुलाब), बेला, मालती आदि के पुष्प आपकी सेवा में अर्पित करता हूँ। आप स्वीकार करें। कनक (धतूरा) नीली या श्वेत डण्डी का मदार (आक) सफेद (श्वेत) या नीले

रङ्ग के, क़बीर (कनेर) श्वेत, पीला, लाल रङ्ग का, जैसे जैसे जहाँ प्राप्त हों, वह भी अन्य पुष्पों के साथ ही अवश्य समर्पण करें ।

(२३) पुष्पमाला समर्पण

हे उमा महेश्वर ! नाना प्रकार के पारिजात वृक्षों से उत्पन्न हुए पुष्प कमल, शतपत्री (गुलाब), बेला आदि अनेक रङ्ग-बिरङ्गे मनमोहक अच्छी गन्ध वाले पुष्पों को बीच-बीच में तुलसी, बिल्वपत्र, अशोक लगाकर सूत्र में पिरोकर माला गूँथी गई है। ऐसी शोभा बढ़ाने वाली माला आपको समर्पित करता हूँ । आप स्वीकार करें ।

(२४) बिल्वपत्र दल समर्पण

हे उमा महेश्वर ! अच्छे सुन्दर-सुन्दर तीन पत्रों वाले कोमल बिल्वपत्रों के अनेकों दल जिनकी डंडी की वज्र ग्रन्थि तोड़कर (जिसमें अनेकों दोष रहते हैं) अखण्डित बिल्वपत्रों का बहुत बड़ा समूह जितना हो सकता हो, इकट्ठा किया हुआ है। इसमें लक्ष्मी का वास है। इसके दर्शन व स्पर्श से पापों का नाश होता है। इसमें सुन्दर गन्ध आ रही है। यह कन्यादान के समान फलप्रद है। ऐसे बिल्वपत्रों को आपकी सेवा में समर्पण करता हूँ । आप स्वीकार करें । बिल्वपत्र उल्टे (मोधे) करके चढ़ावे। इसी प्रकार से अशोक पत्र भी समर्पण कर सकते हैं ।

(२५) तुलसीपत्र दल व मञ्जरी समर्पण

हे उमा महेश्वर ! सुगन्ध से युक्त, नाना रोग निरोधक, अनेक पापों, तापों का नाश करने वाली, स्वर्णरूपिणी, रत्नरूपिणी, पापों के पाशों से मुक्त कराने वाली और मोक्षप्रदायिनी तुलसी के अनेक पत्रों के दल व कोमल-कोमल मञ्जरी के दल आपको समर्पित करता हूँ। आप स्वीकार करें ।

(२६) दूर्वा समर्पण

हे उमा महेश्वर ! शत्रुओं पर वज्र समान प्रहार करने वाले, अपने वंश की वृद्धि करने वाले कोमल-कोमल दुर्वाकुंरों को

आपको अर्पित करता हूं। आप स्वीकार करें। यह उच्चारण करता हुआ, दुर्वांकुर समर्पित करे। कभी दुर्गा भगवती, पार्वती की अकेली की पूजा की जावे तो दूर्वा न चढ़ावें, यह ध्यान रहे।

(२७) शमीपत्र समर्पण

हे उमा महेश्वर! अमङ्गलों का नाश करने वाले दुष्कृत (खोटे), दूषित विचारों, पापों का शमन करने वाले, दुःस्वप्न (खोटे सपने) के दोष व भय को दूर करने वाले शमी वृक्ष के शुभफल प्रदायक पत्रों को आपके समर्पण करता हूँ। आप स्वीकार करें।

तुलसी, बिल्व पत्र, मीठा नीम (यदि मिल सके), जम्बीरा, आमला के पत्रों को मिला कर एक ही चढ़ावें। इस प्रकार से भी चढ़ाने का विधान है। इसको पञ्चबिल्वपत्र समर्पण कहा गया है।

(२८) आभूषण समर्पण

हे उमा महेश्वर! अत्यन्त मूल्यवान् रत्नों से जड़े हुए, तपाये हुए शुद्ध स्वर्ण से कलाकारों द्वारा सुन्दर मनमोहक प्रकार से निर्मित किए, ईश्वरेच्छा से निर्माण हुए तथा समस्त अङ्गों को शोभा सम्पन्न करने वाले आभूषण (अलङ्कार) आपकी सेवा में अर्पित करता हूँ। आप स्वीकार करें।

यदि श्रद्धा व शक्ति ऐसा करने चढ़ाने की न हो, तो केवल अक्षत (चावल) ही उमा महेश्वर पर चढ़ा देवें।

(२९) विजया समर्पण

हे उमा महेश्वर! भव सागर के दुःखों पर विजय प्राप्त करने वाली व योगसाधना करने में ध्यान को एकाग्र करने वाली विजया आपको समर्पित करता हूं। आप स्वीकार करें।

(३०) मधुपर्क समर्पण

हे उमा महेश्वर! रत्न पात्र में सुन्दर ढंग से बनाकर रखा हुआ परम पवित्र एवं परममंगलमय सात्विक मधुपर्क के रूप में प्रस्तुत करता हूं। आप इसे स्वीकार करें।

(३१) सुगन्ध तैल, अतर फुलेल समर्पण

हे उमा महेश्वर ! अनेक प्रकार के परम पवित्र पारिजात पुष्पों की केशर से उड़ने वाली सुमनोहर गन्धों को शुद्ध तिल तैल में मिश्रित करके यह अतर फुलेल तैयार किया हुआ है, और इसमें अनेक प्रकार की सुवासित सुन्दर औषधियों के मूल के द्वारा निकली हुई गन्ध भी मिश्रित है तथा चन्दनादि चूर्णों से सुवासित किया गया है। इसे आपकी सेवा में समर्पित करता हूं आप इसे स्वीकार करें।

(३२) धूप समर्पण

हे उमा महेश्वर ! अनेक प्रकार के शुदध पवित्र सुगन्धित गोंद गुगलादि तथा अनेक प्रकार के पार्थिव द्रव्य चन्दनादि अतर फुलेल संयुक्त यह धूप प्रज्वलित अग्निशिखा से निर्मित धूम (धूवाँ) के रूप में प्रस्तुत है। इसे आप स्वीकार करें। धूपवत्ती प्रज्वलित कर धूप को भगवान् शिव-पार्वती आदि के समक्ष आरती के प्रकार से घुमा कर किसी स्थान पर या धूपदानी में लगा देवें। जिसके द्वारा उस स्थान में सुन्दर गन्ध फैलती रहे, या बत्ती बनी हुई न हो तो किसी पात्र में अग्नि रख कर उस पर यह धूप द्रव्य डाले, उस पर जब धूम उठे तो उस पात्र को इसी प्रकार घुमा कर रख देवें।

(३३) दीप समर्पण

हे उमा महेश्वर ! अमूल्य रत्नों द्वारा बनाया हुआ यह दीपक परम उज्ज्वल शोभावाला और घने घोर अन्धकार को दूर करने वाला प्रदीप्त अनेक प्रकार से प्रकाश करने वाला है। यह आपको समर्पण करता हूँ। आप स्वीकार करें। दीपक पात्र में शुद्ध गोघृत व शुदध रूई निर्मित बत्ती बनाकर घृत में मिला कर प्रज्वलित कर भगवान् शिव-पार्वती को दिखाकर ठीक स्थान पर स्थापित कर देवें।

(३४) नैवेद्य-निवेदन

हे उमा महेश्वर ! अनेक प्रकार दिव्य सिद्धान्न, आमान्न हलवा

ृवा, खीर, लड्डू पेड़ा अनेक प्रकार के सुन्दर पवित्र बनाये हुए मिष्ठान्न व अनेक प्रकार के चोष्य, लेह्य, पेय, पदार्थ, खट्टे, मीठे, पूड़ी, सब्जी आदि आदि सभी छत्तीस प्रकार से उत्तम व्यंजन आपकी सेवा में अर्पित करता हूँ, आप स्वीकार करें। एक या दो थालों में या अधिक थालों में जितने भी पदार्थ बनाये गये हों, सभी को पवित्र ढंग से सजाकर उमामहेश्वर के सामने रखकर उपर्युक्त प्रकार से उच्चारण करें।

(३५) मध्ये पानीय समर्पण

हे उमा महेश्वर! अनेक प्रकार के उत्तम पदार्थ मिष्ठान्न, व्यञ्जन, चोष्य, लेह्य, पेय, पूड़ी, सब्जी विभिन्न प्रकार के प्रसाद नैवेद्य रूप में अर्पण किये हैं, उन्हें ठीक पचाने व तृप्ति करने हेतु, शुद्ध पवित्र सुन्दर चमत्कृत पात्र में ठण्डा जल भरकर आपकी सेवा में मध्यपानीय के रूप में अर्पित करता हूँ। आप इसे स्वीकार करें।

(३६) ऋतुफल समर्पण

हे उमा महेश्वर! देशकाल व ऋतु अनुसार जो फल उपलब्ध हो आम्र, केला, अमरूद, अंगूर, खजूर, अखरोट, बादाम, नारंगी, नीबू, मीठे नाशपाती, सेव, अनार आदि नाना भाँति के आपको समर्पण करता हूं जिससे अनेक जन्म जन्मान्तरों के शुभ कार्यों में सफलता प्राप्त होती है। आप इनको स्वीकार करें। फलों को शुद्ध जल से धोकर फल का मुख भगवान् शिव-पार्वती की ओर करके ही समर्पण करें।

(३७) आचमनीय जल समर्पण

हे उमा महेश्वर! शुद्ध पवित्र ठण्डा जल जो भली भाँति प्रसाद (भोजन) पचाने में समर्थ है। सभी प्रकार की तृप्ति करने योग्य है। इसके द्वारा मुख हस्त आदि भी शुद्ध पवित्र होते हैं। यह आपकी सेवा में समर्पण करता हूं, आप स्वीकार करें। शुद्ध पवित्र चमत्कृत पात्र में जल भरकर उमा महेश्वर के समक्ष रखें या चार बार जल पात्र में भर कर उनके समक्ष दूसरे बर्तन में छोड़ें।

8247

(३८) अखण्ड ऋतुफल समर्पण

हे उमा महेश्वर ! उत्तम प्रकार का सुन्दर नूतन नारिकेल (नारियल) अखण्ड फल रूप में आपको समर्पित करता हूँ। यह शुभकामनाओं की पूर्णरूप से फलसिद्धि प्राप्त कराने वाला है। यह आप स्वीकार करें। दोनो हाथों में नारियल को लेकर नाका लगने वाला ओर को भगवान् शिव-पार्वती की ओर करके चढ़ा देवें।

(३९) ताम्बूल पूगीफल समर्पण

हे उमा महेश्वर ! उत्तम प्रकार का पका हुआ शुद्ध सुन्दर नागरपान जिसमें पूगीफल (सुपारी) चूना, शुद्ध कत्था, कर्पूर इलायची, लवङ्ग, जावित्री, जायफल आदि अनेक स्वादिष्ट व सुगन्धित पदार्थ मिश्रित किये हुए रखे हैं। जो भोजन पचाने, उत्साह प्रदान करने, आलस्य दूर करने की क्षमता वाला है, मुख शुद्ध और स्वादिष्ट करता है आपकी सेवा में अर्पित करता हूं। आप स्वीकार करें।

उपर्युक्त प्रकार के सभी पदार्थ पान में रखकर बीड़ा बनाकर उपर्युक्त वर्णित वाक्यों को उच्चारण कर भगवान् शिव, भगवती पार्वती को अर्पण करें (चढ़ा देवें)।

(४०) दक्षिणा समर्पण

हे उमा महेश्वर ! जिस प्रकार जैसे पदार्थ पूजन द्रव्य मिल सके उनसे और जिस प्रकार हल्के भारी ढंग से जो पूजन द्रव्य निर्मित हो सके उनके द्वारा, आपको पूजा सम्पन्न की, हो सकता है कि उनमें कई प्रकार से त्रुटि रही हो, इसलिये उन त्रुटियों की पूर्ति हेतु और जो भूल या असमर्थता वश त्रुटि रही हों, उसको पूर्ण करने हेतु यह दक्षिणा समर्पण करता हूँ। आप इसे स्वीकार करें। यह उपर्युक्त वाक्य उच्चारण करते हुए, जैसी सामर्थ्य हो स्वर्ण मुद्रा (मोहर गिन्नी), चाँदी मुद्रा नहीं हो सके तो नोट आदि

आदि जिस प्रकार हो सके, इतनी ही संख्या में श्रद्धा, भक्ति, नमन-भाव से उमा महेश्वर के समक्ष दोनों हाथों से आगे करके उनको विराजे हुए स्थान पर उनके चरणों में समर्पित कर देवें।

(४१) शय्या समर्पण

हे उमा महेश्वर ! उत्तम दिव्य पर्यंङ्क रत्नों के सार भाग द्वारा निर्मित, चतुर कलाकारों द्वारा बनाया हुआ, जो उत्तम वस्त्र गद्दा तकिया आदि भली प्रकार से बिछाकर सजाया गया है, ऊपर सुन्दर चमकीले रेशमी चादरों से ढका हुआ है जिस पर नाना प्रकार के रंग बिरंगे कोमल ताज़ा सुगन्धित पुष्प बिछाये हुए हैं व अनेक प्रकार के सुगन्धित द्रव्यों द्वारा सुवासित किया हुआ है और ऊपर से ओढने का नूतन उत्तम चमत्कृत नर्म रोयेंदार, अनेक प्रकार के बेल बूंटो से सजाया हुआ वस्त्र रखा हुआ है। आपके शयन, आनन्द व विश्राम करने हेतु समर्पित करता हूँ। आप इसे स्वीकार करें। इस उपर्युक्त प्रकार से सुसज्जित शय्या को उपर्युक्त प्रकार के वाक्यों को उच्चारण करते हुये, उमा महेश्वर के सामने प्रस्तुत कर देवें।

नोट :–आरती कितनी बार कैसे करें, इसी पुस्तक में लिखा हुआ है वह देख लेवें।

(४२) आरती

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानीसहितं नमामि॥

उपर्युक्त प्रकार से उच्चारण करते हुये सर्वप्रथम चरणों की चार, नाभि की दो, मुख की एक या तीन बार आरती करे। पश्चात् शङ्ख का जल भक्तों के ऊपर छिड़के। कुछ एक पुस्तकों में ऐसा भी लिखा है कि यह शंख या जल का भरा हुआ पात्र भी आरती की प्रकार से ही भगवान् उमा महेश्वर के सामने घुमावे उस शंख या पात्र से भगवान् के दांये बांये दोनों ओर जल छोड़ें। इसके पश्चात् भक्तों पर जल के छींटे देवें। भगवान् शिव की पूजा में शंख नहीं

लिया जाता है, पात्र ही लेना उचित है। विष्णु आदि की पूजा में शंख लेना उचित है। आरती हो सके तो पात्र या आरती में चावल रखकर उस पर कर्पूर रखकर प्रज्वलित करके भगवान् के सामने घुमावे या शुद्ध रूई की बत्ती बनाकर शुद्ध गोघृत में भिगोकर आरती या पात्र में रखकर प्रज्वलित कर घुमावें।

गायन हेतु शिवजी की आरती

नोटः—भगवान् शिव, अम्बेजी तथा ज्वाला माता की आरती गायन हेतु इसी पुस्तक के वेदोक्त बृहत्पूजा प्रकार में दी गई हैं, वहां से देख सकते हैं।

(४३) प्रदक्षिणा (परिक्रमा)

हे उमा महेश्वर! जान में, अनजान में, जो भी पाप मुझ से कभी हुए हों, मैं आपकी प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करता हुआ निवेदन करता हूँ कि मुझ पर कृपा करके उन सभी पापों को आप नष्ट (दूर) कर दें। ऐसे उच्चारण करते हुए परिक्रमा करें और सामने होकर हाथ जोड़ें।

(४४) पुष्पाञ्जलि समर्पण

इस समय ऋतु के अनुसार होने वाले नाना प्रकार के पुष्प जिनमें अनेक प्रकार की सुगन्ध भरी हुई है और इनके साथ अक्षत (चावल) भी रखे हैं, इन पुष्पों व अक्षतों से भरी हुई अञ्जलि मैं आपको अर्पण करता हूं। आप कृपा करके इसको स्वीकार करें। ऐसा उच्चारण करके वह पुष्प व चावल भगवान् शिव पार्वती के चरणों में चढ़ा देवें और साष्टांग प्रणाम करें।

(४५) क्षमा-प्रार्थना

हे भगवान् शिव! हे मातेश्वरी शिवा! मुझ को किसी प्रकार से भी आपका आह्वान (बुलाना) करना नहीं आता, न किसी प्रकार का स्वागत करना आता है, न विसर्जन (विदा) करना

आता है, और न किसी प्रकार की पूजा ही करनी आती है। फिर मैं आपके लिए क्या कहूं, मेरी समझ में कुछ नहीं आता। इसलिए मैं तो केवल आपकी शरण में आता हूँ आप मुझ पर करुणा करके हे परम परमेश्वर ! मेरी रक्षा करें।

ऐसा उच्चारण करके हाथ जोड़ें और नत मस्तक होवें। अन्य प्रकार की जो प्रार्थना गायन करना हो, वह करके अन्त में उच्चारण करें--ॐ उमा हेश्वरार्पणमस्तु। ॐ नमो शिवाय।

जो बृहद् पूजा करना चाहे, वे इसी पद्धति के अनुसार करें। ऐसा न कर सकते हों वे षोडशोपचार, द्वादशोपचार, पञ्चोपचार पूजा श्रद्धा-शक्ति के अनुसार करें।

षोडशोपचार सोलह उपचारों द्वारा, द्वादशोपचार बारह उपचारों द्वारा पञ्चोपचार पाँच उपचारों द्वारा की जा सकेगी। उनकी विधि इस बृहद् पूजा प्रकार में से किस-किस क्रमसंख्या को ग्रहण करके उच्चारण करें और उसके द्वारा कौन-कौन से पूजोपचार अर्पण करें, ये सभी प्रकार नीचे दर्शाये जाते हैं। उनको देखकर अपनी इच्छानुसार पूजा करें।

इन सभी पूजा प्रकारों में शरीर शुद्धि और पवित्रता, पूजा पात्र, पदार्थ सामग्री व क्रम-नियमादि बृहद् पूजा प्रकार के अनुसार ही करने होंगे। पूजोपचार सामग्री तथा अर्पण करने के उच्चारण आदि क्रम संख्या में कम (न्यून) करने होंगे, अन्य किसी प्रकार का अन्तर नहीं है।

षोडशोपचार पूजा

इस पूजन में जो पूजोपचार प्रयोग करने होंगे उनको बृहत्पूजा प्रकार के क्रम में निम्न तालिका के अनुसार देख लें--

बृहत्पूजा के उपचारों की क्रम संख्या	पूजा में प्रयोग करने योग्य उपचारों के नाम	षोडशोपचार पूजा प्रकार की क्रम संख्या
१	आसन	१
२	पाद्य	२
३	अर्घ्य	३
४, ६	आचमन, स्नान	४
१५	वस्त्र	५
१८	गन्ध	६
१९	चन्दन	७
२१	अक्षत (चावल)	८
(२२, २४, २५, २६)	पुष्प, बिल्वपत्र, दूर्वा, तुलसी यह पदार्थ पुष्पों में ही ग्रहण किए जाते हैं।	९
३२	धूप	१०
३३	दीप	११
२३	पुष्पमाला	१२
३४, ३६	नैवेद्य, ऋतुफल	१३
३७	आचमनादि (जल)	१४
३९, ४०	ताम्बूल, पूगीफल, दक्षिणा	१५
४१	शय्या	१६

पूजोपचार के पश्चात् आरती करें प्रदक्षिणा (परिक्रमा) पुष्पाञ्जलि तथा क्षमा प्रार्थना निवेदन करें, साष्टांग प्रणाम करें, हाथ जोड़ें।

द्वादशोपचार पूजा में भी वे ही नियम पालन किये जाने योग्य हैं जो बृहत्पूजा प्रकार में वर्णित हैं। केवल पूजोपचार सामग्री तथा अर्पण करने के उच्चारणादि क्रमसंख्या में अन्तर है। इसमें पूजोपचार निम्न प्रयोग करने होगे।

बृहत्पूजा प्रकार के उपचारों की क्रम संख्या	पूजा में प्रयोग करने योग्य उपचारों के नाम	द्वादशोपचार पूजा प्रकार की क्रम संख्या
१	आसन	१
२	पाद्य	२
३	अर्घ्य	३
४, ६	आचमन, स्नान	४
१५	वस्त्र	५
१९, २१	चन्दन, अक्षत (चावल)	६
२२, २३, २४ २५, २६	पुष्प, बिल्वपत्र, दूर्वा, तुलसी, पुष्पमाला	७
३२	धूप	८
३३	दीप	९
३४, ३६	नैवेद्य (प्रसाद) ऋतुफल	१०
३७	जल (आचमनादि)	११
४०	दक्षिणा	१२

पूजोपचार प्रयोग कर बृहत्पूजा प्रकार में वर्णित अनुसार ही आरती, प्रदक्षिणा (परिक्रमा) पुष्पाञ्जलि, क्षमा-प्रार्थना करें, साष्टांग प्रणाम करें, हाथ जोड़ें ।

पञ्चोपचार पूजा में भी वे ही नियम पालनीय हैं । पूजोपचार सामग्री तथा अर्पण करने के उच्चारणादि क्रम संख्या में अन्तर है । पञ्चोपचार पूजा में पूजोपचार निम्न प्रकार से होंगे--

बृहत्पूजा प्रकार के उपचारों की क्रम संख्या	पूजा के उपचार द्रव्यों के नाम	पञ्चोपचार पूजा की क्रम संख्या
२	पाद्य	३

३	अर्घ्यं	२
४, ६	आचमनीय, स्नान	३
२२, २३, २४,	पुष्प, बिल्व पत्र,	
२५, २६,	तुलसी, दूर्वा, पुष्पमाला	४
३४	नैवेद्य (प्रसाद)	५

उपर्युक्त पूजोपचार प्रयोग कर आरती, प्रदक्षिणा, पुष्पाञ्जलि तथा क्षमा प्रार्थना करें। फिर साष्टांग प्रणाम कर हाथ जोड़ें।

भगवान् शिव की मानस पूजा (हिन्दी)

किसी समय में मनुष्य (पुरुष या स्त्री) जिसने शिवपूजन का नियम ले रखा हो और वह पैदल या किसी सवारी से यात्रा कर रहा हो, या जन्म-मरण आशौच में हो, या स्त्री प्रसूति अवस्था में हो, मासिक धर्म अवस्था में हो, या कोई रुग्ण (रोगादियुक्त) हो या शिवमूर्ति न मिले, ऐसे समय में भगवान् शिव की मानसिक पूजा करने का विधान कहा गया है। वह मन के द्वारा विचार कर कल्पना कर लेवें। असमर्थ अवस्था की यही पूजा है। पूजा का त्याग न होने देवें।

श्री भगवान् शिव उत्तम आसन पर योगासन लगाये हुये निर्मल पद्मासन से बैठे हैं। उनका समस्त शरीर सुन्दर व सुडौल है और समस्त आभूषणों से उनकी अङ्ग कान्ति शोभायमान है। उनके शरीर का वर्ण श्वेत चमत्कृत आभा वाला है, उनके हाथ पैर लाल कमल सदृश रंग वाले हैं। मुख सुन्दर मुस्कान युक्त मुद्रा में है। तीनों नेत्र खिले हुये कमल पुष्प समान सुन्दर हैं, चार भुजा हैं, दो हाथ अभय मुद्रा युक्त हैं। दो हाथों में मृग मुद्रा एवं टङ्क धारण किये हुये हैं। चारों हाथों में सर्पों के कङ्कन सुशोभित हैं। एक सर्प गले की शोभा बढ़ा रहा है, और कण्ठ में नील चिह्न अपनी छटा द्वारा और भी अलङ्कार का रूप प्रदर्शित कर रहा है और इनके

पास इसी आसन पर वाम भाग में महेश्वरी शिवा भी विराजमान हैं। भगवती शिवा की अङ्ग कान्ति प्रफुल्ल कमल दल के समान परम सुन्दर सुशोभित है। केश काले व घुँघराले हैं। मस्तक पर अर्द्धचन्द्र का मुकुट धारण किये हैं। वक्षस्थल सुडौल सुन्दर है, कटि प्रदेश अत्यन्त कृश है, समस्त अङ्ग अत्युत्तम सुन्दर हैं, जिनकी उपमा वर्णन करने में किसी प्रकार आ ही नहीं सकती है। समस्त अंग अनेक आभूषणालङ्कारों से सजा हुआ है। ललाट पर सुमधुर लाल रंग की बिन्दिया शोभा दे रही है। मुख लज्जा युक्त मुस्कान भरा हुआ नीची दृष्टि युक्त है। एक हाथ में स्वर्ण कमल लिए हैं, दूसरा हाथ सिंहासन पर सहारे के रूप में लगा रखा है और सिंहासन पर विराज रही हैं। यह भगवती शिवा समस्त पापों का नाश करने वाली, साक्षात् सच्चिदानन्द-रूपिणी हैं। इस प्रकार महादेव व महादेवी का ध्यान करें।

इसके बाद मन में कल्पना करें कि मैं जो उमा महेश्वर का ध्यान कर रहा हूँ, इनके समक्ष सुन्दर पात्र में निर्मल ठण्डा जल लिए खड़ा हूँ। हे भगवान् उमा महेश्वर ! यह सुन्दर पवित्र निर्मल ठण्डा जल जो गंगाजल के समान है, इसे आप स्नान हेतु स्वीकार करें। बहुत सुन्दर चमत्कृत विचित्र प्रकार के बेल बूंटों से सजाये हुए दिव्य वस्त्र हैं, यह आपकी सेवा में अर्पित करता हूँ। आप स्वीकार करें। अनेक प्रकार की सुगन्धियों से युक्त जिसमें केसर, कस्तूरी व कपूर मिश्रण किया है, ऐसा चन्दन सुन्दर पवित्र प्रकार से घिस कर सुन्दर पात्र में रखा है, यह अनुलेप, तिलक व गन्ध के रूप में प्रयुक्त करने हेतु अर्पण करता हूं। आप स्वीकार करें और परिजात वृक्षों के समान अनेक वृक्षों से कमल, गुलाब, बेला आदि के पुष्पों का समूह, बिल्वपत्र, तुलसी की कच्ची मञ्जरी आपकी सेवा में प्रस्तुत करता हूँ। आप स्वीकार करें। अनेक प्रकार के गोंद व कस्तूरी व अनेक प्रकार के वृक्षों की जड़ का चूर्ण कर धूप तैयार

की है, और सुन्दर रूई की बनाई हुई बत्ती अच्छे शुद्ध पवित्र गोघृत सहित पात्र में दीपक प्रज्वलित कर आपको अर्पित करता हूँ। आप मेरे पर दया करके इसको स्वीकार करें ॥१॥

स्वर्ण चाँदी के अनेक पात्रों में रखे हुए पवित्र गोघृत और सुमधुर सुगन्धित शर्करा (चीनी मिश्री) आदि से मिश्रण कर गोदुग्ध से और अनेक प्रकार के अन्नों के चूर्ण (आटे) से मिलाकर नाना भाँति के व्यञ्जन (पदार्थ) पकवान खाने के, चाटने के, चबाने के, पीने के सभी प्रकार के बनाये हुए तथा अनेक प्रकार के शाकादि व साथ ही अनेक प्रकार के फल केला, आम, अमरूद, अंगूर, छुहारे आदि भी और अनेक प्रकार से रुचिकर मुख को सुस्वादु सुगन्धित व शुद्ध करने वाले, अनेक प्रकार के पदार्थ पूगीफल (सुपारी), चूना, कत्था, इलायची, लवङ्गादि मिश्रित सुन्दर नागर पान, मेरे मन से बनाये हुए विचारों से युक्त ये सभी पदार्थ आपकी सेवा में अर्पित करता हूँ। हे प्रभो ! आप महान् अनुग्रह करके स्वीकार करें।।२।।

अनेक पुण्यजनक दर्शक आपके समक्ष खड़े हैं। वीणा, भेरी, मृदङ्गादि अनेक सुमधुर रसयुक्त बाजे बज रहे हैं और गन्धर्वों के समान मीठी आवाज वाले कोकिलकण्ठी स्वरों से गायक गान कर रहे हैं। आपका सुन्दर मन्दिर इन सबके कोलाहल से, नाच गान और बाजों की ध्वनि से शोभायमान हो रहा है और इस प्रकार के दृश्य को देखकर सुनकर जीवात्मा कहीं अन्यत्र नहीं जा सकता है। हे प्रभो यह सब मेरे मानसिक कल्पित विचार हैं। यही मेरी स्तुति है। यही मेरी ओर से आपकी पूजा है। यह आपकी सेवा में समर्पित करता हूँ। आप इसको मुझ पर कृपा करके स्वीकार करें।।३।।

मेरे मानसिक विचारों को आपकी सेवा के अतिरिक्त कहीं स्थान न मिले, आपकी ही ओर लगे रहें, भगवती पार्वती का मन

जिस प्रकार आपकी सेवा से अलग नहीं हो सकता, इसी प्रकार मेरा मन भी आपकी सेवा के अतिरिक्त कहीं न लगे और आपके सेवक आज्ञा में तत्पर रहने वाले, जिस प्रकार आपसे अलग नहीं होते, उसी प्रकार आपकी सेवा से मुझ को भी आप अलग न होने दें। मेरे इस शरीर से आपकी सेवा के अतिरिक्त कुछ भी न बने। न किसी प्रकार के भोग, विषय, रचना, स्वाद, सुखों की ओर मेरा मन जा सके। निद्रा व समाधि हालत में भी मैं आपके अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु, पदार्थ. भावना या किसी अन्य पर स्नेह न रख सकूं। केवल आपकी ही लीला मुझको दृष्टिगोचर हों।

मेरा मन व यह शरीर आपकी ही सेवा में लीन रहे, अन्य किसी प्रकार की सुध बुध ही मुझे न रहे. पद पद पर इसी प्रकार के विचार आपकी प्रदक्षिणा रूपी परिक्रमा में बार बार चक्कर लगाते रहें। मेरी जिह्वा पर भी आपकी ही महिमा, चरित्र व नाम बना रहे, अन्य कुछ न बने। हाथ पैर से भी जो कार्य हों, वह भी आपकी ही सेवा हेतु बन सकें, अन्य न बनें। मेरी पूजा आराधना आपकी सेवा में समर्पण करता हूँ। आप दया करके इसे स्वीकार करें।।४।।

हे भगवान् उमामहेश्वर! मेरी एक विनय और है। न मैं अभी तक आप में मन लगा सका, न मेरे पैर आपकी सेवा के हेतु चल सके। इन हाथों से न कोई सेवा आपकी बन पड़ी, न नेत्रों से आपकी सुन्दर मनोहर स्वरूप का दर्शन पाया। न कानों से आपके गुणगान का श्रवण कर सका तथा न मेरी कमाई का कुछ भी कमाया हुआ धन आपकी सेवा में अर्पित कर सका। न किसी प्रकार के भाग, प्रसाद व्यञ्जन फल पुष्प धूप दीप चन्दनादि सुगन्ध तैल इतर आपको अर्पण किये, न कभी प्रज्वलित कपूर या दीपावली सजा कर आपकी आरती कर ज्योति से चमचमाते आपके मुख कमल या चरण कमलों का दर्शन कर सका हूँ। यह सब मेरे इस शरीर से बने हुए अपराध ही हैं, इसके लिए बार बार प्रार्थना है

कि इन भूलों व गलतियों के लिए मुझे आप अवश्य क्षमा करें, हे प्रभो ! अब मैं आपकी ही सब प्रकार से शरण होता हूँ। अब आप कृपा करें और ये जो भूलें व गलतियाँ मुझसे हुई हैं, ये आगे अब न हो सकें। मुझ पर कृपा करके यही आशीर्वाद प्रदान करें कि मेरे इस शरीर व इन्द्रियों से व इस शरीर की ताकत व मन से तथा हाथ पाँव से धन द्रव्य कमाई से जो भी हो सके वह आप ही का हो सके। मैं आपकी हर प्रकार से, शरण हूँ, शरण हूँ, शरण हूँ। करुणा करें, करुणा करें, करुणा करें ॥ ५ ॥

यह सब मेरी ओर से भगवान् आपकी मानसिक पूजा है। इसमें मेरा न कुछ खर्च हुआ है, न शरीर व मन को कोई जोर लगा है। न किसी प्रकार की तकलीफ, परिश्रम करना पड़ा। ये मेरे दो शब्द मानसिक पूजा के रूप में निवेदन हैं। यह तो आप महान् महान् दया रूप होकर स्वीकार ही कीजिये ॥ ६ ॥

श्री साम्ब सदा शिव श्री महादेव शम्भो, श्री भोलेनाथ मैं आपकी शरण हूँ, शरण हूँ, शरण हूँ ॥७॥ ॐ उमामहेश्वरार्पणमस्तु ॥

* * *

सोपान

(१८) ख

शिव-पार्वती की सूक्ष्म पूजा विधिः

हिन्दी दोहों में

सब से पहले पूजादि करके पाठ करने से सद्यः सफलता प्राप्त होती है।

पूजा प्रयोग

पहले स्नान करके नित्यकर्म करके हाथ में जल लेकर संकल्प करें। संकल्प न आता हो तो सम्वत् मास पक्ष तिथि वार का उच्चारण करके इस प्रकार कहें कि आज मैं साम्ब सदाशिव जी की प्रसन्नतार्थं गणपति आदि देवतापूजनपूर्वक भवानी-शङ्कर की पूजा करूंगा। इसके पश्चात् आह्वान आदि मन्त्र रूप दोहे बोलें और पूजा करते जावें।

श्री गणपति पूजन

ऋद्धि सिद्धि के साथ में, राजमान गणराज।
करके अनुचर (दासो) पर, कृपा जावें आप विराज।।

"ॐ गणपतये नमः" बोलते जायें और पूजोपजार (पूजा-सामग्री) चढ़ाते जायें। श्री गणेशजी महाराज के दोबड़ी भी चढ़ाई जा सकती हैं।

षटमुख स्कंद पधारियो, वीरभद्र बलवान।
नंदी कीर्तिमुख प्रभो, मम पूजा लो मान।।

"स्कंदाय नमः वीरभद्राय नमः, नन्दिकेश्वराय नमः, कीर्तिमुखाय नमः" इन मन्त्रों से इन देवताओं की पूजा पहले करलें। इसके पश्चात् शिव-पार्वती जी की पूजा करें।

शिव-पार्वती की पूजन

हाथ जोड़ शिव-पार्वती जी का ध्यान करते हुए प्रार्थना करें।

हे सौभाग्य प्रदायिनी हे गिरिराज कुमारि।
शिवजी के वामांग में बैठो आप पधारि।।
श्रीशम्भो गिरिजापते आशुतोष भगवान्।
यहाँ पधारो प्रेम से विनय हमारी मान।।

सम्मिलित रूप

मैं गिरिजा माता भजूं मिले एक में एक।
शिवा और शिव रूप वे रखें हमारी टेक।।

तीन बार जल चढ़ावें–पाद्य, अर्घ्य फिर आचमन और मुख से उच्चारण करें।

पाद्य अर्घ्य फिर आचमन का जल यह तय्यार।
साम्ब सदाशिव प्रेम से करो उसे स्वीकार॥

फिर पंचामृत से स्नान कराते हुए उच्चारण करें। पंचामृत से स्नान कराके शुद्ध जल से स्नान करादें।

दूध दही घी मधु तथा शक्कर से कर स्नान।
निर्मल (गंगा) जल से कीजियो पीछे शुद्ध स्नान॥

वस्त्र चढ़ावें– साड़ी चोली रूप में ये दो वस्त्र भवानि।
भेंट करूं सो लीजियो, मुझको सेवक जानि॥
बाघंबर सुन्दर तथा यह सुन्दर कोपीन।
मोली के स्वीकारियो, मैं तव सेवक दीन॥

गंध तिलक चढ़ावें– टीको यह सिंदूर की, उसे आपके भाल।
करूं त्रिपुण्ड सुभस्म का तब शिव दीनदयाल॥
अक्षत (चावल) गंधाक्षत के बाद में, यह फूलों का हार।
पुष्प, विल्वपत्र. बिल्वपत्र भी भेंट हैं, करो इन्हें स्वीकार।
माला चढ़ावें–

धूप– धूप सुगन्धित वस्तु का, सूंघों साम्ब महेश।
दीप– अति विशुद्ध घृत दीप से, मिटें हमारे क्लेश॥
भोग– भोग लगाता भक्ति से जीमो रुचि से आप।
फल– करो चुलू ऋतुफल सुभग आरोगो प्रभु आप।
पान– एला पूग लवंग युत खा कर प्रभु ताम्बूल।
क्षमा करो मुझ से हुई जो पूजा में भूल।
दक्षिणा– क्या दे सकता दक्षिणा आती मुझ को लाज।
किन्तु जान पूजांग यह तुच्छ भेंट है आज।
आरती– है कपूर सुन्दर सुरभि जो कर घी की बाति।
करूं आरती आपकी जो सब भाँति सुहाति।

श्री शिव-पार्वती की सम्मिलित आरती

ॐ जय गिरिजा माता, प्रभु जय गिरजा माता।
जयति शिवा शिव स्वामी, जगत पिता माता।
जय भोले भण्डारी, जनता भयहारी
जय मातेश्वरि गिरिजे, जगति महतारी।
बाघम्बर शिव कटि में, गल में रुण्ड माला।
दिव्याम्बर मालाधर, जय मैना बाला।
सब को रोजी देते, शिवजी त्रिपुरारी।
सुख सुहाग को देती, गौरी शिव प्यारी।
आशुतोष हो शिवजी, शेखर शशिधारी।
उमा दयालु बडी हो, विद्युच्छविवारी
चाँद चाँदनी जैसे, पति से नहीं न्यारी।
नम शिवाय शिवायै, जपते नर नारी।
आशुतोष ईसरजी (शिवशंकर), मुझ पर कृपा करो।
जय गिरिराज किशोरी, मेरी विपद हरो।
उमा सहित शंकर का, यह नीराजन गावे।
'धरणी' पर सुख सम्पत्ति, वह नित ही पावे।

नोट—यह आरती ईसर गणगौर की भी है।

पुष्पांजलि

पुष्पांजलि प्रभु लीजियो, उमा सहित भगवान्।
परिक्रमा आधी करूँ, यह लो पूजा मान॥
हिन्दी दोहों में बनी, पूजाविधि से नाथ।
'धरणी' पर करिये कृपा, उमा शंभुजी साथ॥

मानसिक पूजा

आत्मा तो शिवरूप है, मम मति गिरिजा रूप।
सहचर मेरे प्राण हैं, मन्दिर देह अनूप॥
खाना पीना आदि जो, मै करता निरुपाधि।

पूजा वह हो आपकी, निद्रा सहज समाधि।
इधर उधर गमनागमन, परिक्रमा को जान।
वाणी के व्यापार को, स्तोत्र पाठ लो मान॥
स्वार्थ-भावना-हीन ही, करूँ कार्य जो सर्व।
तव आराधन हेतु हों, वर देना यह शर्व॥
प्रभो तुम्हीं माता पिता, सखा बन्धु मम नाथ।
विद्या धन मेरे तुम्हीं, मैं हूँ दीन अनाथ॥
मैं हूँ पापी दुष्ट अति, किन्तु आपका दास।
सेवक की विपदा हरो, मेटो यम की त्रास॥
उमे दयालु कृपा करो, हे शंकर भगवान्।
त्राहि-त्राहि इस दास को, सेवक अपना जान॥

(पं० धरणीधर शास्त्री कृत शिवउपासना से साभार)

शिवमहिम्नः स्तोत्रम्

श्री पुष्पदंत उवाच—

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः ॥१

श्री पुष्पदंत गंधर्व भगवान् शिव की स्तुति कर रहे हैं--

हे हर (दुःख दारिद्र्य आदि को हरण करने वाले) शिव शंकर ! ब्रह्मा आदि सर्वज्ञ देवों से की गई स्तुतियाँ भी जब आपके योग्य नहीं हैं, तब आपकी महिमा को पूर्णतया न जानने वाला व्यक्ति जो आपकी स्तुति करता है वह तो कैसे योग्य हो सकता है। क्योंकि आपका परिमाण नहीं है, अतः सर्वज्ञ होते हुए भी ब्रह्मादि देव आपके गुणों का पूर्णतया वर्णन नहीं कर सकते। तो भी जैसे चिड़ियाँ अनन्त आकाश में अपनी शक्ति के अनुसार उड़ा करती हैं,

उसी तरह भक्त अपनी बुद्धि के अनुसार आपकी स्तुति गा सकता है, इसमें उपहास या लज्जा की बात नहीं ॥ १ ॥

अतीतः पंथानं तव च महिमा वाङ्मनसयो-
रतद्व्यावृत्यायं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि ।
स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणाः कस्य विषयः
पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः ॥२

हे भगवान् आप सगुण भी हो और निर्गुण भी। इसलिए आपकी महिमा मन और वाणी का विषय नहीं है। श्रुति भी कहती है कि "यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह" याने जिसका वर्णन वेद भी चकित सा होकर करता है पर पूर्णतया नहीं कर सकता। तब उस आपकी महिमा का वर्णन अन्य कौन कर सकता है। क्योंकि सगुण आपमें कितने गुण हैं यह भी जब जानने में नहीं आते तो निर्गुण स्वरूप आपके गुणों का वर्णन तो नितान्त कठिन ही है। तो भी नई भव्य वस्तु के लिए किसका मन और वचन नहीं खिंच जाता। तदनुसार आपके इस महिम्न स्तोत्र को गाने में मैं भी उद्योग कर रहा हूं। २ ॥

मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्मितवत-
स्तव ब्रह्मन्किं वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम् ।
मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन् पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता ॥३

हे ब्रह्मन! सर्वव्यापक परमेश्वर! देवगुरु बृहस्पति आदि से की गई आपकी स्तुति भी विस्मयकारिणी नहीं हो सकती क्योंकि आपके निःश्वास द्वारा निकली हुई, सब अलंकारों से युक्त, मधु के समान मधुर तथा उत्तम वह वेदवाणी अत्यन्त स्वादु है। तात्पर्य यह है कि जब बृहस्पति आदि से की गई, स्तुति में भी कोई विशेष

नहीं है तो हम तो किस योग्य हैं जो आपकी स्तुति लिख सकें। तो भी हे त्रिपुरासुर के मारने वाले प्रभो! आपके गुणगान से जो पुण्य होगा उससे मेरी बुद्धि निर्मल होगी ऐसा समझकर आपकी स्तुति गाने में मेरी बुद्धि उद्यत हुई है ॥ ३ ॥

तवैश्वर्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्-
त्रयीवस्तुव्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु।
अभव्यानामस्मिन्वरद रमणीयामरमणीं
विहंतुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जडधियः। ४

हे वांछित वस्तुओं को देने वाले प्रभो! संसार की उत्पत्ति, रक्षा और प्रलय करने वाला आपका ऐश्वर्य है और जिसको ऋग्, यजु, साम इन नाम वाले वेदों ने भी गाया है तथा जो ब्रह्मा, विष्णु, शिव स्वरूप है, उसको नष्ट करने के लिए कुछ जड़ बुद्धि वाले निन्दा किया करते हैं, वह निन्दा शोभनीय नहीं होने पर भी भाग्यहीनों को अच्छी लगती है ॥ ४ ॥

किमीहः किंकायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवनं
किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च।
अतर्क्यैश्वर्यें त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः
कुतर्कोऽयं काश्चिन्मुखरयति मोहाय जगतः ॥५

मूर्ख मनुष्य आपके विषय में क्या-क्या शङ्काएं किया करते हैं, उनका उत्तर देते हुए पुष्पदन्त जी कहते हैं –

हे प्रभो! आप तर्क करने के योग्य नहीं हो तो भी आपके विषय में संसार को मोह में डालने वाला कुतर्क बुद्धिहीन मनुष्यों को वाचाल बना रहा है। मूर्ख लोग ऐसा तर्क किया करते हैं कि यदि धाता (परमेश्वर) त्रिभुवन की सृष्टि करता है तो उसकी चेष्टा क्या है, उसका कैसा शरीर है, क्या-क्या उसके पास साधन

हैं, किस आधार पर वह सृष्टि बनाता है और उसका उपादान कारण क्या है ? जैसे कुम्हार घड़ा बनाता है तो मिट्टी लाता है, चाक चलाता है इत्यादि कई कार्य उसे करने पड़ते हैं यदि उस परमेश्वर में ये सभी व्यापार हैं तो मनुष्य तुल्य हैं ईश्वर कैसे ? तथा सभी व्यापार नहीं है तो जगत् को कैसे बना सकता है। यह सब कुतर्क हैं। जैसे आँखों से दूसरी चीज देखी जा सकती है पर वह अपने रूप को नहीं देख सकती इसी प्रकार आप भी किसी तर्क से प्रत्यक्ष नहीं किये जा सकते। पर अज्ञानी लोग तर्क करके लोगों को मोह में डाल देते हैं ॥ ५ ॥

अजन्मानो लोकाः किमवयववंतोऽपि जगता-
मधिष्ठातारं किं भव विधिरनादृत्य भवति ।
अनीशो वा कुर्याद्भुवनजनने कः परिकरो
यतो मंदास्त्वां प्रत्यमरवर संशेरत इमे ॥ ६

हे अमरवर (सब देवों में श्रेष्ठ) क्या ये भू (पृथ्वी) आदि लोक खण्ड वाले होते हुए भी जन्मरहित हैं ? अर्थात् नहीं। क्या पृथ्वी आदि की सृष्टि बिना किसी कर्त्ता के हो सकती है ? अर्थात् कदापि नहीं। ईश्वर से भिन्न यदि कोई इतने बड़े संसार का बनाने वाला है तो उसके पास रचना की सामग्री क्या है? अल्पज्ञ जीव तो अपने शरीर की रचनाओं को ही नहीं जानता, तब सब भुवनों की रचना को क्या जानेगा। इसलिए वे मन्दमति हैं जो आपके विषय में कुतर्क करते हैं ॥ ६ ॥

त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति
प्रभिन्ने प्रस्थाने परिमिदमदः पथ्यमिति च ।
रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषां
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव ॥ ७

हे प्रभो ! तीनों वेद, सांख्य शास्त्र, योग, शैवमत, वैष्णवमत आदि अनेक मत भिन्न भिन्न मार्ग बतलाते हैं। कोई कहता है यह

मार्ग पथ्य (सरल) है, कोई इसको सरल बतलाता है। इस प्रकार आपको प्राप्त करने के अनेक मार्ग हैं। अपनी अपनी रुचि या भक्ति के अनुसार कोई सरल मार्ग से, कोई कठिन मार्ग से, आपको प्राप्त करते हैं। जैसे समुद्र में गङ्गा सीधी जाती है और कई नदियाँ महानदियों में मिल कर समुद्र में प्रवेश करती हैं। वैसे ही सबका ध्येय आपके चरणों की प्राप्ति ही है ॥ ७ ॥

महोक्षः खट्वांगं परशुरजिनं भस्म फणिनः
कपालं चेतीयत्तव वरद तंत्रोपकरणम् ।
सुरास्तां तामृद्धिं विदधति तु भवद्भ्रु प्रणिहितां
नहि स्वात्मारामं विषय मृगतृष्णा भ्रमयति ॥८

हे भक्तों के वर देने वाले ! यद्यपि आप परिपूर्ण परमेश्वर हैं तथापि बूढा बैल, खट्वांग (खाटका पाया जैसे अस्त्र विशेष), परसा बाघ का चर्म, भस्म, सर्प तथा कपाल (खप्पर) ये आपके कुटुम्ब के भरण पोषण के साधन हैं। तब सबको आश्चर्य होता है कि जो देव ऐसा दरिद्री है वह दूसरों को क्या दे सकता है। सो ऐसी बात नहीं है क्योंकि आपकी भृकुटी विक्षेप मात्र से दी हुई ऋद्धि-सिद्धियों को देवता लोग धारण करते हैं क्योंकि वे विषय वासना से मोहित हैं, परन्तु आप स्वात्माराम (स्वयंप्रकाश, आनन्द स्वरूप ब्रह्म) हैं, आपको विषय मृगतृष्णा कैसे भ्रम जाल में डाल सकती है अर्थात् आप माया से परे हैं, आपको किसी वस्तु की आवश्यकता ही नहीं है ॥ ८ ॥

ध्रुवं कश्चित् सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदं
परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये ।
समस्तेऽप्येतस्मिन् पुरमथन तैर्विस्मित इव
स्तुवञ्जिह्रेमि त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता ॥९

हे त्रिपुरासुर के नाशक ! कोई सांख्यशास्त्र के विद्वान् जगत् को नित्य मानते हैं तो कोई बौद्धमत वाले अनित्य, एवं तार्किक नित्य और अनित्य दोनों मानते हैं ऐसी दशा में जो कि भिन्न-भिन्न प्रकार से भिन्न-भिन्न रूप जगत् को मानते हुए भिन्न-भिन्न प्रकार से आपकी स्तुति करते हैं, इससे विस्मित होकर मैं आपकी स्तुति करने में लज्जित सा हो रहा हूँ। तो भी मैं इतना वाचाल हूँ कि आपकी स्तुति करने में उद्यत हो रहा हूँ ।। ९ ।।

तवैश्वर्यं यत्नाद्यदुपरि विरिंचो हरिरधः
परिच्छेत्तुं यातावनलमनलस्कंधवपुषः।
ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्यां गिरिश यत्
स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति ।।१०

हे गिरिश शम्भो ! आपकी सेवा क्या नहीं दे सकती ? हे भगवान् ! सृष्टि के आदि में आपकी तेजपुञ्जमयी मूर्ति का माप करने के लिये यत्नपूर्वक ऊपर ब्रह्मा और नीचे विष्णु गये परन्तु उस ज्योतिर्लिङ्ग का थाह नहीं मिला। अनन्त, जब श्रद्धा-भक्ति से उन्होंने आपकी स्तुति की तब आप स्वयं स्थिर हो गये और आपका थाह लग गया। इससे यह सिद्ध होता है कि आपकी स्तुति अवश्य फलदायक होती है ।। १० ।।

अयत्नादापाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं
दशास्यो यद्बाहूनभृत रणकंडु परवशान्।
शिरः पद्मश्रेणीरचित चरणांभोरुहबलेः
स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम् ।।११

हे त्रिपुरासर के नाशक शंभो ! रावण ने जो आपके चरण कमलों में अपने नो मस्तक रूप कमल पुष्प की श्रेणी को बलिरूप में चढ़ा दिया था, उसकी उसी निश्चल भक्ति के प्रभाव से तीनों

लोकों में उसके वैर का कारण भी कोई नहीं रह सका। याने उसने इन्द्रादि सब देवों को भी जीत लिया था। तब उसकी बीस भुजाओं में रणकण्डू बनी ही रहती थी। तात्पर्य यह है कि कोई लड़ने वाला नही रहने से भुजाओं में खुजली चलती रहती थी। इतनी बड़ी शक्ति प्राप्त करना आपकी भक्ति का ही फल था ॥ ११ ॥

अमुष्य त्वत्सेवासमधिगतमारं भुजवनं
बलात्कैलासेऽपि त्वदधिवमतौ विक्रमयतः।
अलभ्या पातालेऽप्यलमचलितागुंष्ठ शिरसि
प्रतिष्टा त्वय्यासीद् ध्रुवमुपचितो मुह्यति खलः ॥१२

हे प्रभो ! आपकी सेवा से ही भुजाओं में बल प्राप्त करके आपके ही कैलाश पर्वत को (लंका में) उठाकर ले जाने की नीयत से उठाने में पराक्रम दिखलाने वाले रावण को पाताल में भी शरण नहीं मिल सकी। क्योंकि आपने धीरे से अपने अंगूठे से उसको दबा दिया, तब वह इतना नीचे जाने लगा कि पाताल पहुँच गया। यह सच है कि दुष्ट मनुष्य जब बढ़ जाता है तो वह किसी को भी, यहाँ तक अपने वृद्धि के कारण देव को भी कुछ नहीं समझता ॥१२॥

यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि सती-
मधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयत्रिभुवनः।
न तच्चित्रं तस्मिन्वरिवसितरि त्वच्चरणयो-
र्न कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः ॥१३

हे वरद ! पहले बाणासुर ने इन्द्र की सम्पत्ति को भी नीचा कर दिया और समस्त त्रिभुवन निवासियों को अपने सेवकों के समान बना लिया था। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि वह आपका प्रधान भक्त था। वास्तव में आपके चरणों में किया

हुआ नमस्कार किसकी उन्नति नहीं कर देता? अर्थात् भक्तों की सर्वदा उन्नति ही होती रहती है।।१३।।

अकांडब्रह्मांडक्षयचकितदेवासुरकृपा-
विधेयस्याऽसीद्यस्त्रिनयन विषं संहृतवतः।
स कल्माषः कंठे तव न कुरुते न श्रियमहो
विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभयभंगव्यसनिनः ॥१४

हे भगवन् त्र्यम्बकेश्वर! समुद्र मन्थन से जब कालकूट नामक महाविष निकला, तब ब्रह्मा, विष्णु आदि सब भयभीत हो गये; परन्तु सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के नाश की आशंका से चकित सुरासुरों पर तथा समस्त ब्रह्माण्ड पर कृपा करके आपने उस महाविष का पान कर लिया। इस कारण आपके गले (कंठ) का रंग काला हो गया। तो भी क्या वह कालापन आपकी शोभा को नहीं बढ़ा रहा है? इससे आपकी शोभा ही बढ़ी है। हे भगवन्! संसार के भय को दूर करने का जिनका व्यसन ही है, उसके यहाँ विकार भी शोभाजनक हो जाता है ॥ १४ ॥

असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे
निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः।
स पश्यन्नीश त्वामितरसुरसाधारणमभूत्
स्मरः स्मर्तव्यात्मा न हि वशिषु पथ्यः परिभवः।१५।

हे ईश! जिस कामदेव के बाणों ने सुर असुर तथा मनुष्य आदि समस्त प्राणियों को जीत लिया याने कहीं पर असफल नहीं रहा, ऐसे अस्त्र वाला कामदेव घमण्ड के मारे आपको भी अन्य देवताओं के समान समझकर मोहित करने आया; पर फल यह हुआ कि स्मरण करने योग्य हो गया याने आपकी क्रोधाग्नि से भस्म हो गया। सच है—जितेन्द्रियों का अनादर कभी भी कल्याणकारी नहीं होता ॥ १५ ॥

महीपादाघाताद्व्रजति सहसा संशयपदं
पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहणम् ।
मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृत जटाताडिततटा
जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामेव विभुता ।।१६

हे ईश ! आप यद्यपि जगत् की रक्षा के लिए नृत्य करते हैं, तो भी आपके नाचते समय पृथ्वी सङ्कट में पड़ जाती है कि कहीं नीचे न चली जाऊं। आपकी भुजाएं तब मुग्दर के समान हिलती हैं तो तारागण पीड़ित हो जाते हैं तथा बिखरे हुए जटाकेशों से बराबर ताड़ित स्वर्गलोक का तट प्रदेश भी दुखी सा हो जाता है क्योंकि आपकी प्रभुता भी उल्टी ही है। इसका कारण यह बतलाया जाता है कि एक राक्षस ने भोले शंकर जी से यह वरदान पा लिया था कि सायंकाल में मुझ में अपार शक्ति आ जावे। उस वरदान से घमण्ड में आकर वह संसार के नाश के लिए उतारू हो जाता है। तब शिव जी अपने ताण्डव नृत्य में उसे फँसा लेते हैं ।।१६।।

वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गम रुचिः
प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते ।
जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमि-
त्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिम दिव्यं तव वपुः ।।१७

हे ईश ! आकाश में व्याप्त तथा तारों की चमक से चमकते हुए फेन वाला वह गङ्गा का प्रवाह आपके मस्तक में छोटी सी बूंद जैसा दिखाई देता है, जिस गङ्गा के प्रवाह ने इस संसार के सागरों को भर रखा है और जिससे यह पृथ्वी समुद्र की परिखा वाली दिखाई देती है। इसी से यह सिद्ध हो रहा है कि आपकी दिव्यमूर्ति की महिमा भी वर्णनातीत है । तात्पर्य यह है कि भगीरथ की प्रार्थना पर ब्रह्माजी ने जब अपने कमण्डल से गंगा

का प्रवाह पृथ्वी पर गिराया तब वह साभिमान चक्कर काटती हुई बृहदाकार में नीचे उतरी पर आपके रूप से मुग्ध होकर आपकी जटा में समा गई थी ॥ १७ ॥

रथः क्षौणी यंता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो
रथांगे चन्द्रार्कौ रथचरणपाणिः शर इति ।
दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडंबरविधि-
र्विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः ॥१८

हे शिव ! त्रिपुरासुर बड़ा भयानक होने पर भी आपके सामने तिनके के समान था; परन्तु उसको जलाने के लिए आपने इतना आडम्बर किया कि पृथ्वी को रथ बनाया, ब्रह्माजी को सारथि, मेरु पर्वत को धनुष, सूर्य चन्द्रमा को चक्र तथा श्री विष्णु भगवान् को बाण बनाया। यथार्थ में बात यह है कि पूर्ण शक्तिशाली लोग अपने वशवर्तियों के साथ मनुष्य लीला करते हुए भी परतंत्र नहीं कहे जाते ॥ १८ ॥

हरिस्ते साहस्रं कमलबलिमाधाय पदयो-
र्यदेकोने तस्मिन्निज मुदहरन्नेत्र कमलम् ।
गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषः
त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर जागर्ति जगताम् ॥१९

हे त्रिपुरहर ! श्री विष्णु भगवान् ने आपके चरणों में एक सहस्र कमल पुष्पों की भेंट चढ़ाई थी। उसमें से आपने एक कमल उनकी परीक्षार्थ छुपा लिया। तब भगवान् ने नियम भंग के भय से अपने नेत्र रूपी कमल को उखाड़कर चढ़ा दिया। इसी अतिशय भक्ति का फल सुदर्शन चक्र है जो सारे संसार की रक्षा के लिए सदा जागृत रहता है।

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां
क्व कर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते ।
अतस्त्वां संप्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानप्रतिभुवं
श्रुतौ श्रद्धां बद्ध्वा दृढपरिकरः कर्मसु जनः ॥२०

हे भगवन् ! यज्ञ करनेवाले यजमान आपको यज्ञों के फल देने में साक्षी समझकर तथा वेद वाक्यों में श्रद्धा रखकर यज्ञकर्म करने में तत्पर होते हैं क्योंकि उनका विश्वास है कि यज्ञ कर्म के समाप्त हो जाने पर भी आप फलदाता तो जागते ही रहते हैं। यदि ऐसा मान भी लें कि कर्म का फल तो मिलता ही है तो भी हे प्रभो ! नष्ट हुआ कर्म परम पुरुष की आराधना के बिना कहाँ फल दे सकता है अथवा यों भी माने कि किसी ने पूर्वजन्म में शुभ-कर्म नहीं किये हों तो भी आपकी भक्ति से उसके अशुभ कर्म मिट जाते हैं और उसे सांसारिक सुख मिल जाता है याने आप विधाता के लेख को भी मिटा सकते हैं ॥ २० ॥

क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृता-
मृषीणामार्त्विज्यं शरणद सदस्याः सुरगणाः ।
क्रतुभ्रंशस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो
ध्रुवं कर्तुः श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः ॥२१

हे भक्तों को शरण देने वाले महेश्वर ! दक्ष ने पहले यज्ञ किया था, वह स्वयं प्रजापति था, सम्पूर्ण देहधारियों का स्वामी था, कर्मकाण्ड में निपुण था, त्रिकालदर्शी भृगु आदि महर्षि उसके ऋत्विज थे, सम्पूर्ण देवगण सदस्य थे तो भी आपकी अवज्ञा के कारण उसका यज्ञ नष्ट हो गया। आप स्वयं यज्ञों के स्वर्गादि फलदाता हैं परन्तु आपके अपमान से वह अपने यज्ञ के नाश का कारण स्वयं

बना। सच यह है कि यज्ञ के फल देने वाले के प्रति अश्रद्धा होने से यज्ञ शुभ फलदायक नहीं होकर नाश के कारण बन जाते हैं। जैसा कहा है "नास्ति यज्ञसमो रिपुः" ॥ २१ ॥

प्रज्ञानाथं नाथ प्रसभमभिकं स्वां दुहितरं
गत रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृश्यस्य वपुषा।
धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृततममुं
त्रसतं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः ॥२२

हे नाथ! सृष्टि के आदिकाल में ब्रह्माजी ने अपनी पुत्री (मानसिक सृष्टि की पुत्री) सरस्वती के साथ कुकर्म की इच्छा की तब वह भयभीत होकर मृगी बन गई। ब्रह्मा भी मृगरूप बनकर रमण की इच्छा से उसके पीछे दौड़े तब न्यायकर्त्ता आपने उन पर बाण छोड़ा। आज भी आपका व्याध रूपी बाण उनके डर जाने पर आकाश में भी उनका पीछा नहीं छोड़ता अर्थात् मृगशिरा नक्षत्र के रूप में ब्रह्मा और आर्द्रा नक्षत्र के रूप आपका बाण आज दिखाई दे रहा है।

यह एक अलंकारिक वर्णन है और सृष्टि की आदि का प्रसंग है। वास्तविक अर्थ यह है कि प्रजापति (ब्रह्मा या वेद) अपनी पुत्री वाणी के पीछे पीछे दौड़ता है और मृगशिर के ३ तारे हैं। उनका रूप हिरणियों जैसा है उसके पीछे आर्द्रा नक्षत्र बाण के आकार का है। इसी की उत्प्रेक्षा कवि द्वारा कल्पित है। वाणी (सरस्वती) ब्रह्मा जी की बोली है। संसार में भी मुख उत्पन्न बोली (उच्चारण) को कोई पुत्री नहीं मानते हैं। (इसी प्रकार एक स्थान पर और ऐसा ही वर्णन आता है कि प्रजापति (सूर्य) अपनी पुत्री उषा (पूर्व दिशा की पीली कान्ति) के पीछे-पीछे दौड़ता है। वहाँ भी यह कल्पना ही है। उषा सूर्य की पुत्री मान ली गयी हैं। पहले उषा आती है इसके पश्चात् ही सूर्य उदय होता है॥ २२ ॥

स्वलावण्याशंसाधृतधनुषमह्नाय तृणवत्-
पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि ।
यदि स्त्रैणं देवी यमनिरतदेहार्धघटना-
दवैतित्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः ॥२३

हे यम नियमादि अष्टांग योग परायण ! पार्वती ने अपने शरीर की सुन्दरता से जब आपकी ओर देखा उसी समय कामदेव ने परमयोगी आपको वश में करने के लिए धनुष उठाया था तब उस धनुषधारी को तिनके के समान जलते हुए देख कर भी पार्वती आधे देह में धारण करने के कारण आप महायोगी को स्त्रैण (स्त्री में आसक्त) मानती है तो यह उसकी भूल है। सच है, युवतियाँ स्वभाव से ही भोली हुआ करती हैं क्योंकि भोलापन उनका भूषण है। वास्तव में आप तो परम योगी हैं ॥ २३ ॥

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचरा-
श्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटी परिकरः ।
अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं
तथाऽपि स्मर्तृणां वरद परमं मंगलमसि ॥२४

हे कामदेव के नाशक ! आप चाहे श्मशानों में क्रीड़ा करते हैं, भूत-प्रेतों को साथ रखते हैं; मानव शरीरों की सहस्रों अस्थियों की माला पहनते हैं। इस प्रकार आपका स्वभाव चाहे अमङ्गल रूप ही क्यों न हो किन्तु हे वरद ! आप अपने स्मरण करने वाले भक्तों के लिये मङ्गल-स्वरूप हो। याने भक्तों का मङ्गल करना ही आपका कार्य है ॥ २४ ॥

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः
प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्संगितदृशः ।

यदालोक्याह्लादं हृद इव निमज्ज्यामृतमये
दधत्यंतस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत्किल भवान् ॥२५

हे प्रभो ! मन को बाहरी व्यापारों से रोककर, विधिपूर्वक वायु को ग्रहण करने वाले याने प्राणायाम के अभ्यासी तथा आपके ध्यान से जिनकी रोमावली पुलकित है और हर्ष के कारण जिनके आनन्दाश्रु आ रहे हैं ऐसे योगी अमृत सरोवर में डुबकी लगाने के समान आनन्द का अनुभव करते हुए, सच्चिदानन्द स्वरूप जिस परम तत्त्व का अपने हृदय मन्दिर में ध्यान करते हैं, वे आप ही हैं ॥ २५ ॥

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवह-
स्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च ।
परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणता विभ्रति गिरं
न विद्मस्तत्तत्त्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि ॥२६

हे प्रभो ! आपही सूर्य, चन्द्र, वायु, अग्नि, जल, आकाश तथा पृथ्वी रूप हो और आप ही क्षेत्रज्ञ आत्मा हो। इस प्रकार परिणत बुद्धि वाले माप करके आपको मानते हैं; परन्तु हे भगवन् ! मैं नहीं समझता कि संसार में ऐसा कौनसा पदार्थ है जो आप नहीं हैं अर्थात् आप सर्व स्वरूप हैं और सर्वत्र व्यापक हैं ॥ २६ ॥

त्रयीं तिस्रो वृत्तिस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरा-
नकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत्तीर्ण — विकृति ।
तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः
समस्तव्यस्तं त्वां शरणद गृणात्योमिति पदम् ॥२७

हे भक्तों को अभय देने वाले ! ॐ यह पद तीनों वेदों, जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओं में एवं तीनों देवताओं को

अपने स्वरूप में धारण कराता हुआ, अ– उ– म– का कर्मधारय समास के रूप में अथवा अलग अलग प्रकार अकार उकार मकार के रूप में प्रतिभासित हो रहा है, वही ॐ इन तीनों से परे, विकारहीन चौथा अखण्ड चैतन्य आपका जो रूप है उसको अणुस्वरूप हृदयस्पंदन ध्वनियों से सदा गाता रहता है ॥ २७ ॥

भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सह महां-
स्तथा भीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम् ।
अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देव श्रुतिरपि
प्रियायास्मै धाम्ने प्रणिहितनमस्योऽस्मि भवते ॥२८

हे भगवन् देव ! भव, शर्व, रुद्र, पशुपति, उग्र, सहमहान् याने महादेव और भीम तथा ईशान यह जो आपके आठ नाम हैं, इन प्रत्येक नामों के गुणगान में वेद एवं पुराणादि भी पूर्ण रूप से लगे रहते हैं। हे प्रभो ! इस प्रकार के आपके पूजन में मैं अपने को असमर्थ समझकर केवल उस तेज को मन वाणी एवं शरीर से केवल नमस्कार कर रहा हूँ ॥ २८ ॥

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमो
नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः ।
नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो
नमः सर्वस्मै ते तदिदमति सर्वाय च नमः ॥२९

हे वनवीथियों में विहार करने वाले ! आप हमारे निकटवर्ती तथा दूरवर्ती भी हैं, आपको नमस्कार है। हे कामदेव के नाशक, आप छोटे से छोटे तथा बड़े से बड़े हैं (अणोरणीयान् महतो महीयान्) । इसका प्रमाण है। ऐसे आपको नमस्कार है। हे त्रिनयन! आप अति वृद्ध एवं अति युवा भी है ऐसे आपको नमस्कार है। हे भगवान् ! आप सर्व संसार रूप हो और शर्व नाम से विख्यात हो । ऐसे आपके लिये नमस्कार है ॥ २९ ॥

बहलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः
प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः ।
जनसुखकृते सत्त्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः
प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः ॥३०

हे भगवान् ! संसार रचना के समय विपुल रजोगुणधारी ब्रह्मा भी आप हो । जीव मात्र को सुख देने के लिये सत्व गुण प्रधान भगवान् विष्णु भी आप हो और प्रलय काल में अत्यन्त तमोगुण धारण कर सब के संहारक हर भी आप हो एवं माया से परे तथा तीनों गुणों से रहित शिवरूप भी आप हो । इस प्रकार अनेक रूपधारी आपको बारम्बार नमस्कार है सतत नमस्कार है ।। ३० ।।

कृशपरिणति चेतः क्लेशवश्यं क्व चेदं
क्व च तव गुणसीमोल्लंघिनी शश्वदृद्धिः ।
इति चकितममंदीकृत्य मां भक्तिराधा-
द्वरद चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम् ॥३१

हे वरदाता भगवान् शंकर ! दुर्बल परिणाम वाला एवं निरन्तर क्लेश युक्त हमारा क्षुद्र चित्त तो कहाँ और आपकी बढ़ी चढ़ी प्रत्येक गुणों की सीमा का उल्लंघन करने वाली ऋद्धि कहाँ ? तब आपको कैसे स्तुति करूं ? इस प्रकार चकित हुए मुझ मतिमंद को आपके चरणों की भक्ति ही आपके गुणगान में लगा रही है और इसी लिए यह बचन रूपी पुष्पों की माला (हार) याने उपहार के रूप में आपके चरणों में चढ़ा रहा है ।। ३१ ।।

असितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिंधुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी ।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ॥३२

हे ईश ! आपके गुण इतने अपार हैं कि यदि काले पर्वत के समान परिणाम वाली स्याही को समुद्र के समान बड़ी दवात में घोलकर कल्प वृक्ष के शाखाओं की कलम से सारी पृथ्वी रूपी कागज पर साक्षात् सरस्वती भी आपके गुणगान लिखने बैठे और निरन्तर लिखती रहे तो भी आपके गुणों का पार नहीं पा सकती। तो मेरे जैसे क्षुद्र मनुष्यों की तो बात ही क्या है ॥ ३२ ॥

असुरसुरमुनीन्द्रैरर्चितस्येन्दुमौलै-
ग्रथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य ।
सकलगुणवरिष्ठः पुष्पदंताभिधानो
रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार ॥३३

सुर, असुर तथा मुनीन्द्रों से पूजित, तथा ललाट में चन्द्रमा को धारण करने वाले तथा जिनके गुणों की महिमा यहाँ एक माला (पुष्पोपहार) के रूप में ग्रथित की गई है, ऐसे निर्गुण ईश्वर के इस सुन्दर स्तोत्र को सकल गुणों में श्रेष्ठ श्री पुष्पदन्तजी ने इस छन्द शिखरिणी में बनाया है ॥ ३३ ॥

अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत्
पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान्यः ।
स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथाऽत्र
प्रचुरतरधनायुःपुत्रवान् कीर्तिमांश्च ॥३४

जो शुद्ध चित्तवाला मनुष्य परमभक्ति से श्री महादेव जी के इस पवित्र स्तोत्र का प्रतिदिन पाठ करता है, वह अन्त में शिवलोक में जाकर रुद्रों के समान हो जाता है और इस लोक में अतीव, धन, आयु, पुत्र एवं यश को प्राप्त करता है, याने उसका इस लोक और परलोक में कल्याण हो जाता है ॥ ३४ ॥

महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः ।
अघोरान्नापरो मन्त्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम् ॥३५॥

दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः ।
महिम्नस्तवपाठस्य कलां नार्हति षोडशीम् ॥३६

श्री महादेव जी से बढ़ कर कोई देवता नहीं है। महिम्न स्तोत्र से बढ़कर कोई स्तोत्र नहीं है। अघोर मंत्र से बढ़कर कोई मन्त्र नहीं है और गुरु से बढ़ कर दूसरा कोई तत्त्व नहीं है ॥ ३५ ॥

दीक्षा (ज्ञान प्राप्ति के लिए गुरु से मंत्र लेना) एवं दान तप, तीर्थयात्रा, ज्ञान एवं यज्ञ आदि जितने भी कर्म हैं वे सब मिल कर के इस महिम्न स्तोत्र के पाठ की सोलहवीं कला के समान भी नहीं है ॥ ३६ ॥

कुसुमदशननामा सर्वगन्धर्वराजः
शशिधरवरमौलेर्देवदेवस्य दासः ।
सगुरुनिजमहिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषात्
स्तवनमिदमकार्षीद्दिव्यदिव्यं महिम्नः ॥३७

कुसुमदशन याने पुष्पदंत नाम वाले सब गंधर्वों के राजा चन्द्रशेखर भगवान् महादेव जी के भक्त थे। वे शिवजी के अपराधजन्य रोष के कारण अपने महत्त्व से गिर गये तब उन्होंने अपने उद्धार के लिए शिव जी की महिमा का यह दिव्य स्तोत्र बनाया ॥ ३७ ॥

सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुं
पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्यचेताः ।
व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः
स्तवनमिदममोघं पुष्पदन्तप्रणीतम् ॥३८

श्री पुष्पदन्त जी का बनाया हुआ यह अमोघ (कभी भी व्यर्थ न जाने वाला) स्तोत्र देव और मुनियों से आदरणीय, स्वर्ग

और मोक्ष का देने वाला है। यदि मनुष्य एकाग्रचित होकर एवं हाथ जोड़कर इसको पढ़े तो किन्नर गणों से प्रशंसा पाता हुआ वह शिवजी के पास कैलास में पहुंच जाता है ॥ ३८ ॥

श्रीपुष्पदन्त — मुखपंकजनिर्गतेन
स्तोत्रेण किल्बिषहरेण हरप्रियेण ।
कंठस्थितेन पठितेन समाहितेन
सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः ॥३९

इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छंकरपादयोः ।
अर्पिता तेन मे देवः प्रीयतां च सदाशिवः ॥४०

इति श्री पुष्पदन्त विरचितं शिवमहिम्नः स्तोत्रं संपूर्णम्

श्री पुष्पदन्त जी मुखारविंद से निकले हुए सब पापों के नाशक शिवजी के इस प्यारे स्तोत्र को कण्ठस्थ करके एकाग्र मन से पाठ करने से भूतनाथ भगवान् शिव जी बहुत प्रसन्न होते हैं ॥ ३९ ॥

यह स्तोत्र वाङ्मयी पूजा है जो श्री शंकर भगवान् के चरणों में सादर समर्पित की गई है इससे सदाशिव । (कल्याणकर्ता) भगवान मुझ पर प्रसन्न होवें ॥ ४० ॥

इति श्री गंधर्वराज पुष्पदन्त विरचित शिवमहिम्नः स्तोत्र सम्पूर्ण हुआ

॥ ॐ नमः शिवाय ॥

शिव-तत्व-दर्शन

तृतीयनेत्रदृष्टिस्कन्ध

सोपान

(१)

शिव के व्रतों का वर्णन व विधानः

शिवरात्रि व्रत का विधान एवं फल

भगवान् शिव के अनेक व्रत हैं, जो भोग और मोक्ष प्रदान करने वाले हैं। जिनमें से मुख्य मुख्य का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है। इस प्रकार के व्रतों में मुख्य दस व्रत हैं जिनको जाबाल श्रुति के विद्वान 'दश शैवव्रत' कहते हैं। द्विजों को तो सर्वदा ही यत्नपूर्वक इन व्रतों का पालन अवश्य करना चाहिये। प्रत्येक अष्टमी को शिव पूजन करे और रात में एक बार भोजन करे। विशेषतः कृष्ण पक्ष (बुदी पक्ष) की अष्टमी को हो सके तो सर्वथा (बिल्कुल) ही भोजन न करे। शुक्ल पक्ष की एकादशी को भी शिवपूजन करे, और सर्वथा (बिल्कुल) ही भोजन न करे किन्तु कृष्ण पक्ष की एकादशी को रात्रि में शिवपूजन दूसरी बार करके पूरे दिन व्रत न कर सके तो एक बार भोजन करे। शुक्लपक्ष की त्रयोदशी को प्रातः शिव पूजन करे, रात्रि को फिर पूजन कर रात्रि में एक बार भोजन करे कृष्ण पक्ष चतुर्दशी को शिव व्रतधारी को पूजन अवश्य

ही करना चाहिये किन्तु इस दिन भोजन बिल्कुल ही नहीं करना चाहिये। दोनों पक्षों में प्रत्येक सोमवार को व्रत कर पूजन करें। शिव के पूर्ण व्रतधारियों को यह अनिवार्य नियम रखना चाहिये। इन सभी व्रतों में व्रत की पूर्ति हेतु अपनी शक्ति के अनुसार शिवभक्तों, ब्राह्मणों तथा भोजन के इच्छुक मनुष्यों को भोजन कराना चाहिये।

मुक्ति मार्ग पर चलने वाले प्रवीण पुरुषों को मोक्ष की प्राप्ति कराने वाले चार व्रत और कहे हैं। उनका पालन करना चाहिये।

(१) भगवान् शिव का नियमपूर्वक नित्य पूजन करना।
(२) रुद्र मंत्रों का नित्य जाप करना।
(३) शिव मन्दिर में रहकर उपवास करना।
(४) काशी में मृत्यु के समय में वास करना।

शिव भक्तों के लिये ये मोक्ष के सनातन मार्ग हैं। सोमवार की अष्टमी और कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी प्रत्येक महीने की इन दो तिथियों में भी शिव का व्रत करने से भगवान् संतुष्ट होते हैं। इन चारों में भी शिवरात्रि का व्रत सबसे अधिक फलवान् कहा गया है। इसलिये भोग मोक्ष रूपी फलों की इच्छा रखने वाले लोगों को मुख्यतः इसी का पालन करना चाहिये। इसके अतिरिक्त कोई दूसरा व्रत इससे अधिक फलदायक नहीं है। इस व्रत का पालन करना उत्तम धर्म का साधन कहा गया है। निष्काम अथवा सकाम भाव रखने वाले सभी मनुष्यों, वर्णों, स्त्रियों, बालकों, सभी प्रकार ऊँचे, नीचे, छोटे, बड़े कार्य करने वाले देवताओं आदि के लिये यह व्रत सर्वश्रेष्ठ लाभदायक कहा गया है।

माघ मास के कृष्ण-पक्ष में शिवरात्रि तिथि का विशेष माहात्म्य है। जिस दिन आधी रात के समय वह तिथि विद्यमान हो, उसी दिन उसे व्रत करने के लिये ग्रहण करना चाहिये। शिव रात्रि व्रत करोड़ों हत्याओं के पापों का नाश करने वाला है। इस दिन बुद्धिमान स्त्री या पुरुष प्रातः उठकर बड़े आनन्द के साथ

शौचादि से निवृत्त होकर स्नानादि करके नित्यकर्म करें। उस दिन आलस्य बिल्कुल न आने दें। फिर शिवालय में जायें और शिवलिङ्ग का विधिवत् पूजन करें और फिर नमनपूर्वक इस उत्तम प्रकार से संकल्प करें--

'हे देवाधिदेव महादेव! नीलकण्ठ आपको बारम्बार नमस्कार है। हे देव, मैं शिवरात्रि व्रत का अनुष्ठान करना चाहता हूँ। हे देवेश्वर! आपकी कृपा व प्रभाव से यह मेरा व्रत बिना किसी विघ्न बाधा के पूर्ण होवे। दुष्ट प्रकृति के काम क्रोधादि शत्रुओं द्वारा विघ्न या पीड़ा मुझे नहीं होने पावे।'

ऐसा संकल्प व प्रार्थना करके समस्त पूजन सामग्री संग्रह करें। उत्तम स्थान में जो शास्त्र प्रमाणित रूप से शिव लिङ्ग प्रतिष्ठित हो, वहाँ जाकर रात्रि में स्वयं उत्तम विधि विधान से पूजन सम्पादन करें। पूजन के समय में शिव के दक्षिण या पश्चिम भाग में सुन्दर स्थान पर, इनके निकट सामग्री रखनी चाहिये। स्नान करने के बाद उत्तम नवीन शुद्ध सुन्दर वस्त्र-उपवस्त्र धारण कर पूजन में बैठें। बैठने पर तीन बार आचमन करें फिर पूजन आरम्भ करें।

जिस मन्त्र के लिए जो पदार्थ नियत है, उसी मन्त्र को पढ़कर उसी पदार्थ द्वारा पूजन करना चाहिए। जिनको वेद, मंत्र या श्लोकादि नहीं आते हैं उनको हिन्दी या अपनी भाषा में बोलकर वह पदार्थ भगवान् शिव की सेवा में चढ़ाना चाहिए। गीत, वाद्य, नृत्य आदि के साथ भक्तिभाव युक्त पूजा में ही मन लगाकर रात के प्रथम पहर याने तारे दिखाई देनें लगें, उससे तीन घण्टे के अन्दर पूजा करके मंत्र जप करें। यदि मंत्र जानने वाला पुरुष उस समय श्रेष्ठ पार्थिव लिङ्ग का निर्माण करे तो नित्य कर्म के पश्चात् पार्थिव लिङ्ग का ही पूजन करे। पहले पार्थिव लिङ्ग बनाकर फिर पूजन के पश्चात् नाना प्रकार के स्तोत्रां का पाठ करें। शिवव्रत

की कथा कही जावे या सुनी जावे। भक्तों को चाहिए कि श्रद्धाभक्तिपूर्वक कथा-माहात्म्य कहें या सुनें। रात के चारों पहर में याने लगभग तीन घण्टे के प्रमाण से चार बार पार्थिव शिवलिङ्ग बनावें और आह्वान से लेकर विसर्जन तक क्रमशः उनकी पूजा करें और बड़े उत्साहपूर्वक प्रसन्न होते हुए जागरण आदि की व्यवस्था भी चलाते रहें। प्रातःकाल फिर वहाँ ही पार्थिव लिंग निर्माण कर स्थापन और विसर्जन तक क्रिया कर पूर्ण पूजा सम्पन्न करें। इस प्रकार व्रत को पूर्ण करके हाथ जोड़, मस्तक झुकाकर प्रसन्न चित्त से बारम्बार नमस्कार करें और भगवान् शिव की इस प्रकार प्रार्थना करें--

'हे देवाधिदेव महादेव ! आपकी आज्ञा से जो व्रत ग्रहण किया था, वह परम उत्तम व्रत पूर्ण हो गया। अतः अब इस व्रत का विसर्जन करता हूँ। हे देवेश्वर शर्व ! यथाशक्ति किये गये इस व्रत से आप आज मुझ पर कृपा करके सन्तुष्ट हों।'

इसके पश्चात् भगवान् शिव को पुष्पांजलि समर्पित करें। फिर विधिपूर्वक यथाशक्ति दान देवें। फिर शिव को नमस्कार करें। व्रत सम्बन्धी नियम का विसर्जन करें और अपनी शक्ति अनुसार ब्राह्मण, पण्डित, शिव-भक्तों, साधु-सन्यासियों, अपने पूज्य कुटुम्बियों, इष्टमित्रों को भोजन भेंट, नमस्कारादि द्वारा पूर्णतया सन्तुष्ट करें। फिर स्वयं भोजन करें।

शिवरात्रि के व्रत में प्रथम प्रहर में पार्थिव शिवलिङ्ग निर्माण कर स्थापन करके अनेक सुन्दर सामग्री उपचारों द्वारा उत्तम भक्ति नमन भाव से पूजा करें। पहले जल, वस्त्र, गन्ध, पुष्पादि द्रव्य पदार्थों द्वारा सदाशिव का पूजन करें। पृथक्-पृथक् पदार्थों द्वारा सदा शिव की पूजा करे, पृथक् पृथक् पदार्थों से उसके मंत्र या अपनी भाषा में बोलकर यथाक्रम पदार्थ भगवान् शिव को समर्पित करें। फिर भगवान् शिव को जल

धारा समर्पित करें। समझदार विद्वान् पुरुष चढ़े हुए द्रव्यों को जलधारा द्वारा ही उतारें। जलधारा के साथ एक सौ आठ मंत्र जाप करते रहें। जैसी भावना पूजक की हो वैसे सगुण या निर्गुण शिव की पूजा करें। किसी गुरु द्वारा कोई शिवमंत्र लिया हो तो उस मन्त्र से भी पूजा कर सकते हैं। विभिन्न चन्दन, अखण्ड अखा चावल और काले तिलों से भी भगवान् शिव का पूजन करना चाहिए। कनीर, कमल, पुष्प चढ़ाना चाहिये। आठ मंत्रों द्वारा भगवान् शंकर को पुष्प समर्पित करें। भव, शर्व, रुद्र, पशुपति, उग्र, महान्, भीम और ईशान इन सबके आरम्भ में श्री और अन्त में चतुर्थी विभक्ति जोड़कर नाम मंत्रों द्वारा शिव का पूजन करना चाहिए। उदाहरणार्थ जैसे भव नाम है इसको 'श्री भवाय नमः' इस प्रकार सभी नाम मंत्रों का बनाकर बोले। समर्पण के पश्चात् धूप, दीप और नैवेद्य निवेदन करें। प्रथम प्रहर में पूजक नैवेद्य के लिए पकवान बनवालें। फिर श्री फलयुक्त विशेषार्घ्य देकर ताम्बूल (पान) समर्पित करें। इसके बाद नमस्कार और ध्यान करके गुरु के दिये हुए मन्त्र का या ॐ नमः शिवाय मंत्र का जप करें और भगवान् शिव को नमन प्रार्थना द्वारा सन्तुष्ट करें। धेनु मुद्रा दिखाकर उत्तम जल से तर्पण करें। पंच ब्राह्मण भोजन का मन में संकल्प करलें, फिर शिव के गीत गायन वाद्य नृत्य प्रार्थनादि उत्सव करते रहें।

धेनु मुद्रा का प्रकार इस तरह कहा गया है। बायें हाथ की अंगुलियों के बीच में दाहिने हाथ की अंगुलियों को मिलाकर तर्जनी को मध्यमा में लगायें। दाहिने हाथ की मध्यमा में बायें हाथ की तर्जनी को मिलावें फिर बायें हाथ की अनामिका से दायें हाथ की अनामिका के साथ, बायें हाथ की कनिष्ठिका को मिलावें फिर इन सबका मुख नीचे को ओर करें, इस प्रकार को धेनु मुद्रा कहा गया है।

दूसरे प्रहर के आरंभ होने पर पुनः पूजन का संकल्प करें अथवा एक ही समय प्रथम पूजा के पूर्व ही चारों प्रहर के लिए

पूजा संकल्प कर लें। दूसरे प्रहर की पूजा में भी प्रथम प्रहर की पूजा के अनुसार ही पदार्थों से पूजा करके फिर जलधारा समर्पित करें। प्रथम प्रहर की अपेक्षा दुगने मन्त्रों का जप करके शिव की पूजा करें। जौ, तिल तथा कमल पुष्प से शिव की अर्चना करें। विशेषत: इस दूसरे प्रहर की पूजा में बिल्वपत्रों से परमेश्वर शिव का पूजन अवश्य करें। दूसरे प्रहर की पूजा में बिजोरा नीम्बू के साथ अर्घ्य देकर खीर का नैवेद्य निवेदन करें। पहले प्रहर की अपेक्षा मंत्रों की संख्या दुगनी होनी ही चाहिये यह पूर्ण ध्यान रखें। फिर ब्राह्मण भोजन का संकल्प करें, शेष सभी पूजा प्रकार गीत, नृत्य, स्तोत्र प्रार्थनादि उसी प्रकार चलाता रहे।

तीसरा प्रहर आने पर तो पहले की तरह ही करें, किन्तु जो की जगह गेहूं अन्न का प्रयोग करें और पूजा पुष्पों में मदार (आक) के पुष्प अवश्य चढ़ावें। यदि मिल सके तो सफेद आक के पुष्प चढ़ावें, इसके बाद नाना प्रकार की धूप अगरबत्ती एवं दीपक आदि प्रज्वलित करें। भोग में पूवा का नैवेद्य चढ़ावें और उसके साथ भाँति भाँति के साग (शाक) भी अर्पित करें। फिर कपूर से आरती उतारें। अनार के फल के साथ अर्घ्य समर्पित करें। फिर दूसरे प्रहर की अपेक्षा दुगना मंत्र जाप करें। इसके बाद दक्षिणा सहित ब्राह्मण भोजन का संकल्प फिर करें और तीसरे प्रहर की समाप्ति तक स्तोत्र पाठ, गीत, नृत्य, वाद्य आदि करते रहें। चौथा प्रहर आरम्भ होते ही तीसरे प्रहर की पूजा विसर्जन कर देवें।

चौथा प्रहर आरम्भ होते ही पुन: आह्वानादि करके विधिवत् पहले के प्रकार से ही चौथे प्रहर की पूजा आरम्भ करें। उड़द, कंगनी, मूँग, सप्त धान्य (सात प्रकार के अन्न) शङ्खी-पुष्प तथा बिल्वपत्रों से परमेश्वर शिव का पूजन करें। इस चौथे प्रहर की पूजा में भाँति भाँति की अनेक प्रकार की मिठाइयों का नैवेद्य चढ़ावें और साथ में उड़द के बने हुए बड़े आदि बनवा कर भगवान् शिव की प्रसन्नता व सन्तुष्टि हेतु अर्पण करें। केले के फल

अथवा अन्य प्रकार के विविध फलों के साथ भगवान् शिव को अर्घ्य समर्पित करें। तीसरे प्रहर की पूजा की अपेक्षा मंत्रजप संख्या दुगनी अवश्य सम्पन्न करें। यथा शक्ति ब्राह्मण भोजन संकल्प करें। स्तोत्र--गीत–नृत्य-वाद्यादि प्रार्थनाओं द्वारा यह चौथा प्रहर भी व्यतीत करना चाहिये। जब तक सूर्योदय न हो, यह क्रम बराबर चलता रहे। अरुणोदय होने पर पुनः स्नान करके भाँति-भाँति के पूजनोपचारों तथा उपहार, वस्त्र, आभूषण, शृंगार प्रयुक्त सामग्री, फल, ताम्बूल, पुष्पमाला अन्य प्रकार के हार द्रव्यादि भेंटों द्वारा अनेक प्रकार के पदार्थों से भगवान् शिव की अर्चना करना चाहिये।

इसके पश्चात्, ब्राह्मणों, पंडितों गुरुजनों आदि के द्वारा अपना अभिषेक करवा के दान देवें और पिछले पूजा प्रहरों में किये गये संकल्पों के अनुसार या हो सके तो उससे भी अधिक ब्राह्मणों, पंडितों, गुरुजनादि, पूज्य माता-पिता, कुटुंबियों, इष्टमित्रों को उत्तम मिष्ठानों द्वारा और अनेक प्रकार के स्वादयुक्त भोज्य पदार्थों द्वारा तृप्त करें, भेंट पूजनादि तथा आदर सत्कार से सबको सन्तुष्ट करें। फिर भगवान् शंकर को नमस्कार करें पुष्पाञ्जलि अर्पित करें और अनेक प्रकार से उत्तम सुन्दर ढंग से नमन विनम्र भाव पूर्वक इस प्रकार प्रार्थना करें—

'हे सुखदायक, कृपा निधान, भगवन् शिव ! मैं आपका हूँ। मेरे प्राण आप में ही लगे हैं और मेरा चित्त सदा आपका ही चिन्तन करता है। यह जानकर आप जैसा उचित समझें वैसा करें। हे भूतनाथ ! मैंने जानकर या अनजान में जो जप और पूजन व्रत आदि किया है, उसे उचित समझकर दया सागर होने के नाते आप मुझ पर प्रसन्न हों। इस उपवास (व्रत) से जो फल हुआ हो, उससे सुखदायक भगवान् शंकर आप मुझ पर प्रसन्न हों। हे महादेव मेरे कुल में सदा आपका भजन पूजन होता रहे। जहाँ आप इष्टदेव न हों उस कुल में व ऐसे स्थान में मेरा कभी जन्म न होवे।'

इस प्रकार से प्रार्थना करने के पश्चात् भगवान् शिव को फिर

पुष्पाञ्जलि समर्पित करें और ब्राह्मणों, गुरुओं से तिलक और आशीर्वाद ग्रहण करें। इसके बाद भगवान् भोले शम्भू का विसर्जन करें। जिस किसी ने इस प्रकार का व्रत पूजन कर लिया, उनसे भगवान् शिव दूर नहीं होते। भगवान् शंकर ने कहा है कि मेरे पास ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जो व्रत करने वाले को मैं न दे डालूँ। जिसके द्वारा अनायास ही इस व्रत का पालन हो गया, उसके लिये भी अवश्य ही मुक्ति का बीज बो दिया गया। मनुष्यों को प्रतिमास भक्तिपूर्वक शिवरात्रि व्रत करना चाहिए। तत्पश्चात् इसका उद्यापन करके मनुष्य सम्पूर्णफल लाभ करता है इस व्रत का पालन करने से भगवान् शिव निश्चय ही उपासक के समस्त दुःखों का नाश करते हैं और उसको मनोवाञ्छित फल प्रदान करते हैं।

(शिव पुराण कोटिरुद्र संहिता अध्याय (३७, ३८) का सारांश)

* * *

सोपान

(२)

षोडश सोमवार व्रत, कथा तथा शिवपूजन विधि

शिवपूजन का ठीक दिन--

शिवजी के प्रिय देवता चन्द्रमा हैं। चन्द्रमा इसी कारण से शिवजी के शीश को शोभित करते हैं। सोमवार या मौलिवार चन्द्रमा का दिन है। इसी कारण धर्म-शास्त्रों में लिखा है कि मौलिवार अथवा चन्द्रवार ही शिव पूजन व्रत के लिए अत्युत्तम दिन कहा है। शिवपूजन उत्तर की ओर मुख करके करना चाहिए।

शिवपूजन विधि

पूजा के एक दिन पहले नाखून साफ कर लेना चाहिये। गङ्गाजी या नर्मदाजी की निकाली हुई मिट्टी यदि यह न मिल सके तो तुलसीजी की या बिल्पपत्र वृक्ष की जड़ के पास की मिट्टी का शरीर पर लेप करके शुद्ध जल से स्नान करें। तेल साबुन आदि न लगावें। व्रत के दिन विलास द्रव्यादि अपने शरीर पर प्रयोग नहीं करें। सहवास न करें। दिन में नहीं सोयें। शतरंज, ताश, चोपड़ न खेलें। किसी प्रकार शर्त (होड़), सोदा सट्टादि न लगायें। व्यर्थ की बकवास न करें। किसी से हँसी मजाक न करें। झूट न बोलें। प्रातः स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारण करें। सभी पूजन द्रव्य सम्भाल कर रखें। भगवान् शिव के सामने प्रार्थना करें। पूजन के लिये पुस्तक में विधियाँ लिखी हैं देख लेवें। जिस छोटी बड़ी विधि से करना उचित समझें, उसी के अनुसार पूजन करें।

सोलह सोमवार व्रत कथा

एक समय महादेव जी पार्वती जी मृत्युलोक में अमरावती नगरी में आये। वहाँ के राजा का नाम अमर था, वह सब प्रकार के सुखों से सम्पन्न था। उस राजा अमर ने एक बहुत सुन्दर शिवजी का मन्दिर निर्माण कराया। शिव जी पार्वती जी की मूर्ति स्थापना की। उस मन्दिर का पुजारी नित्य गाँजा, चरस, शराब पीता। मन्दिर में जो यात्री आते उन्हें धोखा देकर अनेक प्रकार से लूटता अपवाद करता। वह खोटे रास्ते का चलने वाला था। उसके बुरे कार्यों को देखकर श्री पार्वती जी ने उसे शाप दे दिया। जा तू कोढ़ी हो जा। पार्वती जी के शाप से वह कोढ़ी हो गया। कुछ दिनों के बाद उस मन्दिर में पूजन के लिये स्वर्ग लोक से अप्सरायें आई। वहाँ उन्होंने पूजा अर्चना की। पुजारी को कोढ़ी हुआ देखा तो उन्होंने पुजारी से इसका कारण पूछा। पुजारी ने अपने सब कार्य जो दोष युक्त थे और उसको देखकर जिस प्रकार श्री पार्वती जी

ने शाप दिया था, वह सभी वृत्तान्त कह सुनाया। तब वे अप्सरायें कहने लगीं—इस कोढ़ रोग से मुक्त (छुटकारा) होने के लिये आप सोलह सोमवार का व्रत व पूजन करें। भगवान् शिव-पार्वती ही इस व्रत पूजन से प्रसन्न होकर तुम्हें इस दुःख से मुक्त करेंगे। इस के अतिरिक्त इससे छुटकारे का कोई अन्य उपाय नहीं है।

यह सुनकर उस पुजारी ने हाथ जोड़ कर उन अप्सराओं से षोडश (सोलह) सोमवार के व्रत पूजन की विधि पूछी।

अप्सराओं ने कहा 'जिस दिन सोमवार हो उस दिन श्रद्धा व भक्ति के साथ व्रत नियम लेकर स्नान करें। साफ शुद्ध वस्त्र पहनें। साफ बिने हुए गेहूँ का आटा आधा किलो लें और शुद्ध घी, चीनी, मिश्रित (मिला हुआ) चूरमा (मिष्ठान) बना लेवें। फिर उसके तीन भाग कर लेवें और रख देवें। शुद्ध पात्र में भरकर रखें। वस्त्र या नाल, चन्दन, अक्षत (चावल) पुष्प, दूर्वा, धूप, दीप, घी तीन भाग कर रखा हुआ मिष्ठान्न नैवेद्य के रूप में पान, सुपारी बिल्वपत्र, जनेऊ का जोड़ा भी रख लेवें। इसके बाद शुद्ध आसन पर बैठ कर इन पूजन सामग्रियों से भगवान् शिवजी-पार्वती जी का पूजन करें। पूजन करते समय प्रथम श्री गणेश जी फिर पार्वती जी, नन्दीश्वर, वीरभद्र, स्वामी कार्तिकेय, कुबेर जी, कीर्तिमुख फिर जलेहरि में या वहां किसी स्थान पर सर्प की मूर्ति आकार हो उसकी फिर इन सबके बाद महादेव जी का पूजन करके, जो मिष्टान्न (प्रसाद) है वह अर्पण कर, उसमें से एक भाग वहीं शिव-स्थान पर छोड़ देवें, दो भाग बचे हुए हों, उनमें से कुछ वहीं दर्शनार्थी, पूजार्थी जो भी उपस्थित हों उनको थोड़ा थोड़ा सा प्रसाद रूप में बाँट देवें, बाकी बचा हुआ आप प्रसाद रूप में ग्रहण करें, इस प्रकार से यह व्रत पूजन सोलह सोमवार तक करें। इसके उपरान्त सतरहवें सोमवार के दिन भी व्रत रखे हुए ढंग से ही रहें और प्रथम पूजन में कहे हुए द्रव्यों से अधिक पूजन पदार्थ द्रव्यादि पूजन द्वारा अर्पण करें, अधिक प्रार्थना नृत्य,

वाद्य, गायन आदि से भगवान् शिव को प्रसन्न करें। किन्तु प्रसाद इस दिन एक पाव आटे का ही शुद्ध घी, चीनी मिश्रित चूरमा मिष्टान्न बनाकर भोग लगावें और उसी का तीन भाग कर पहले कहे हुए अनुसार एक भाग शिवजी के स्थान पर छोड़ देवें, फिर जो वहाँ पर अन्य कोई उपस्थित हों उन व्यक्तियों को प्रसाद बाँटें, बाकी बचा हुआ स्वयं प्रसाद रूप में ग्रहण करें। जिस दिन व्रत करें उस दिन इस प्रसाद के रूप में जो भी प्रसाद बचा हुआ रहे वही खायें, अन्य कुछ भी प्रसाद न खायें। मंगलवार को प्रातः स्नानादि कर शिवपूजन करें और व्रत खोलें इस प्रकार यह व्रत पूर्ण करें। इस प्रकार के व्रत पूजन से भगवान् शिव प्रसन्न होते हैं। पूजन करने वाले की सभी मनोकामनाएँ पूर्ण करते हैं।' यह कह कर वे अप्सरायें स्वर्ग को चली गईं। अप्सराओं के कहे अनुसार उस ब्राह्मण पुजारी ने व्रतपूजन यथाविधि किया। भगवान् शंकर जी की दया से वह ब्राह्मण रोगमुक्त हुआ। शरीर स्वस्थ व सुन्दर हो गया और आनन्द से अपना जीवन व्यतीत करने लगा। कुछ समय बीतने पर भगवान् शिव पार्वती जी वहाँ मन्दिर में आये। ब्राह्मण को रोग मुक्त देखकर पार्वतीजी बहुत आश्चर्यचकित हुई और उस ब्राह्मण से रोग मुक्त होने का वृत्तान्त पूछा।

ब्राह्मण ने अप्सराओं की बताई हुई षोडश सोमवार की व्रत पूजा आदि की सभी कथा कही। यह वृतान्त सुनकर पार्वती जी बहुत प्रसन्न हुईं। पार्वती जी ने भी इसी विधिपूर्वक भगवान् शिव की मूर्ति स्थापित कर सोलह सोमवार व्रत पूजन किया, जिससे पार्वती जी के पुत्र स्वामी कार्तिकेय जी जो रुष्ट हो रहे थे, स्वयं प्रसन्न हो गये और माता पार्वती जी की आज्ञा में रहने लग गये। पर जब अपने रुष्ट विचार के स्थान पर माता पार्वती में भक्ति होने के विचार को स्वयं स्वामी कार्तिकेय भी नहीं जान पाये तब इस कारण को उन्होंने स्वयं माता पार्वती जी से ही पूछा कि हे माता!

आपने ऐसा कौनसा साधन अपनाया जिससे मेरी रुष्टता आपकी भक्ति में बदल गई और मैं आपकी ओर द्रवित हुआ।

श्री पार्वती जी ने षोडश सोमवार की व्रत पूजन करने की सभी बातें स्वामी कार्तिकेय जी को बतलाई। यह सब वृत्तान्त सुनकर स्वामी कार्तिकेय जी कहने लगे कि यह व्रत पूजन मैं भी करूँगा क्योंकि मेरा एक ब्राह्मण मित्र है वह विदेश गया था बहुत दिन हो गये, अभी तक नहीं लौटा है। मैं उससे मिलना चाहता हूँ। यह कहकर स्वामी कार्तिकेय ने भी इसी विधि से षोडश सोमवार व्रत पूजन किया तो अचानक ही वह उनका मित्र विदेश से लौटकर आ गया। इस प्रकार अचानक ही देश लौटने का विचार मन में आया और आकर स्वामी कार्तिकेय जी को अपने विचार व आने का वृत्तान्त कहा और कहने लगा कि न जाने मित्र मेरे विचारों में इस प्रकार इन्हीं दिनों में कैसे परिवर्तन हो गया। इस रहस्य को मैं तो कुछ जानने में समर्थ नहीं हूँ। तुम्हारे प्रेम मिलन के कारण ही आना पड़ा है। मित्र की इस बात को सुनकर स्वामि कार्तिकेय जी ने षोडश सोमवार व्रतपूजन की बात कही यह सुनकर ब्राह्मण कहने लगा कि मित्र तुमने बड़ी उत्तम व्रत पूजन की बात कही। इस व्रत को तो मैं भी करूँगा। क्योंकि मेरी इच्छा विवाह करने की है। मेरा विवाह अभी तक नहीं हुआ है। विवाह की कामना को मन में रखकर उस ब्राह्मण ने भी सोलह सोमवार व्रतपूजन यथाविधि किये और फिर परदेश में चला गया। एक दिन वह एक नगर में पहुँचा। उसी दिन उस नगर के राजा की लड़की का स्वयंवर था। वह ब्राह्मण भी स्वयंवर देखने की इच्छा से वहाँ जा बैठा। राजा ने प्रतिज्ञा की थी कि जिस पुरुष के गले में मेरी हथिनी माला डालेगी उसी के साथ मैं अपनी पुत्री का विवाह करूँगा।

भगवान् शंकर जी की कृपा से हथिनी ने वह वरमाला उस ब्राह्मण के गले में पहना दी। अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार अपनी पुत्री का विवाह राजा ने उसी ब्राह्मण से सम्पन्न करा दिया और उसको बहुत प्रकार के सामान, धन आदि दिये। वह ब्राह्मण

राजकुमारी के साथ विवाह होने मे और अनेक प्रकार का सामान व धन मिलने से प्रसन्न होकर सुखपूर्वक रहने लगा।

एक दिन ब्राह्मण व राजकुमारी आनन्दवार्ताओं से मनोरंजन कर रहे थे। बातों ही बातों में राजकुमारी ने कहा कि तुमने ब्राह्मण के घर में जन्म लिया था, धन वैभव भी तुम्हारे पास कुछ नहीं था, तुम्हारे पास राज्य तो क्या साधारण सुख भी नहीं था, फिर तुम्हारा भाग्य एकदम ही इस प्रकार कैसे बदल गया कि एक ही दिन में मेरे जैसी सुन्दर राजकुमारी, धन, सम्मान सभी तुमको प्राप्त हो गये और आनन्द से रहने लगे।

तब ब्राह्मण ने अपनी षोडश सोमवार व्रत-पूजन की बात कही। यह सुनकर वह राजकुमारी कहने लगी कि इस व्रत पूजन के वृत्तान्त से मैं बहुत प्रभावित हुई हूँ। मैं भी यह व्रत पूजन अवश्य करूँगी। क्योंकि अपने कोई सन्तान नहीं है। पुत्र कामना से षोडश सोमवार व्रत पूजन राजकुमारी ने भी करना शुरु कर दिया। राजकुमारी गर्भवती हुई और दशमास पश्चात् एक बहुत ही धर्मात्मा और विद्वान देवपुत्र का जन्म हुआ। पुत्र को पाकर दम्पती बहुत ही प्रसन्न हुए, और उस पुत्र का आनन्द से पालन-पोषण करने लगे।

जब वह ब्राह्मण पुत्र बड़ा हो गया तो एक दिन अपनी माता से पूछा कि हे माता तुमने ऐसा कौनसा पुण्यप्रद कार्य किया था, जिससे मुझ जैसे पुत्र को जन्म दिया। पुत्र की उत्कृष्ट इच्छा को जानकर उसकी माता राजकन्या ने षोडश सोमवार व्रत पूजन की बात पुत्र को बतलाई। उसको सुनकर वह ब्राह्मण पुत्र भी इस व्रत को करने लग गया। उसी समय उस देश के मंत्री वहाँ आये जो अपने महाराजा की राजकुमारी के लिये वर की तलाश करने के ही लिए देशाटन कर रहे थे। उन्होंने इस ब्राह्मण पुत्र को देखकर अपने महाराज की राजकन्या के उपयुक्त वर समझ कर टीका

मुहूर्त कर दिया, और अपने महाराज के पास जाकर वर और घर में राजकन्या के योग्य होने की प्रशंसा की। टीका मुहूर्त कर देने का समाचार कह सुनाया। मंत्री की बात सुनकर महाराज बहुत प्रसन्न हुए और इस ब्राह्मण पुत्र के साथ अपनी राजकन्या का विवाह सम्पन्न कर दिया। ये महाराजा वृद्ध थे और केवल यह एक राजकुमारी ही इनकी सन्तान थी, अन्य कोई पुत्र या पुत्री सन्तान नहीं थी। ब्राह्मण पुत्र व राजकन्या दोनों आमोद-प्रमोद से रहने लगे। जब महाराजा स्वर्गलोक को सिधार गये तो वही ब्राह्मणपुत्र उस राज्यगद्दी का उत्तराधिकारी हुआ और वहाँ भी वह सोलह सोमवार व्रत पूजन करता रहा। जिस दिन सतरहवाँ सोमवार आया तो वह ब्राह्मण पुत्र ने, जो अपने श्वसुर के राज्य की गद्दी पर बैठकर राज्य चलाता था, अपनी धर्मपत्नी को जो पहले राज्यपुत्री थी और वर्तमान समय में राजरानी भी थी, उससे कहा कि समस्त पूजन सामग्री लेकर शिवमन्दिर में चलो, किन्तु उस रानी ने उस ब्राह्मण पुत्र राजा की आज्ञा नहीं मानी और स्वयं न जाकर दासियों द्वारा पूजन सामग्री शिवमन्दिर में पहुँचवा दी।

जिस समय उस ब्राह्मण पुत्र राजा ने भगवान् शिव की यथाविधि पूजन करके प्रदक्षिणा कर क्षमायाचना की, उसी समय आकाशवाणी हुई कि हे राजन्! तुम अपनी राजरानी को राजमहल से निकलवा दो, नहीं तो यह तुम्हारा सर्वस्व नष्ट कर देगी। यह सुनकर मंत्री आदि बहुत दुःखित हुए लेकिन उस ब्राह्मणपुत्र राजा ने उस राजरानी को महल से निकाल ही दिया। दुखी मन से वह राजरानी शहर से बाहर निकली। फटे पुराने वस्त्र पहने भूख से पीड़ित हुई वह रानी शनैः शनैः एक दूसरे शहर में पहुँची। वहाँ की एक बुढ़िया स्त्री सूत कातकर बेचने जा रही थी। रानी को इस प्रकार दुखी देखकर बोली—तू मेरे साथ चल। अच्छे ठीक भाव से मेरा सूत बिकवा दे। यह सुनकर उस रानी ने बुढ़िया की सूत की पोटली उठा ली और अपने सिर पर रखकर चलने लगी।

इतनी ही देर में बड़ी जोर से आँधी तूफान आया । उसमें वह सूत की पोटली रानी के सिर पर से उड़ गई । बुढ़िया देखती ही रह गई और उस बुढ़िया ने राजरानी को वहीं छोड़ दिया । अब रानी फिर अत्यन्त दुःखी होती हुई एक तेली के घर पहुंची उस तेली ने रानी को दुःखी देखकर अपने घर में आश्रय दिया किन्तु रानी पर हो रहे कुप्रभाव के कारण उस तेली के भी जिन मिट्टी के घड़ों में तेल भरा हुआ था वे सभी फूट गये । यह देखकर उस तेली ने भी रानी को घर से निकाल दिया ।

तब वह रानी सब प्रकार से निराश होकर शहर के बाहर नदी के किनारे पहुंची और ज्योंही पानी पीने के लिए जल में हाथ दिया तो उसमें जल रहा ही नहीं । नदी में कीचड़ ही कीचड़ हो गया । समस्त जल तत्काल ही भाप बन कर उड़ गया । रानी महान् दुःखी होती हुई एक जंगल में पहुँची । वहाँ एक सरोवर था । उस सरोवर में से ज्यों ही रानी ने अंजलि में जल भरना चाहा तो पानी बहुत गन्दा दुर्गन्धयुक्त हो गया; किन्तु रानी अधिक प्यासी हो चुकी थी । अतः उस रानी ने वह दूषित गन्दा गदला पानी ही पी लिया । फिर विश्राम करने के लिए वह किसो वृक्ष की छाया में जाती, उसी वृक्ष के सभी पत्ते वृक्ष से गिर पड़ते थे । इस प्रकार से जंगल, जलाशय तथा वृक्षों के पत्ते सूखते एक साथ ही गिर पड़ते । यह सब वृत्तान्त गायों व पशुओं को चराने वाले, पानी पिलाने वाले, किसानों व ग्वालों ने देखा और अपने गाँव के एक महात्माजी जो अपना आश्रम बनाकर रह रहे थे, उनसे जा कहा । वे महात्माजी रानी के पास पहुँचे और उन्होंने यह सब हाल देखकर समझ लिया कि यह अवश्य हो किसी विपत्ति की मारी हुई है । उनको बड़ी दया आई । उन्होंने उस रानी से कहा कि तुम मेरी पुत्री के समान हो, मेरी पुत्री बनकर तुम मेरे आश्रम में निवास करो, तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट नहीं होने दिया जायेगा । महात्मा जी की बात सुनकर रानी को धैर्य बँधा और इस प्रकार

से वह उस आश्रम में निवास करने लगी। अब रानी आश्रम में जिस वस्तु सामग्री द्रव्य पदार्थ को हाथ लगावे, भोजन आदि बनावे, पानी भरकर लावे, सभी में कीड़े लग जावें, वस्तुओं में दुर्गन्ध हो जावे। फिर क्या था महात्मा जी भी दुःखी हो गये और उन्होंने उस रानी से पूछा कि पुत्री यह क्या बात है, तुम्हारे ऊपर किस देवता का प्रकोप हो रहा है। महात्मा जी की यह बात सुनकर उस रानी ने श्री शंकर जी महाराज के पूजन आदि की सभी बातें सुना दी। यह सब सुनकर महात्मा जी ने भी भगवान् शंकर की पूजा की, फिर स्तुति प्रार्थना की और फिर उस रानी से कहा कि पुत्री तुम अब षोडश (सोलह) सोमवार व्रत पूजन करो।

यह सुनकर रानी ने षोडश सोमवार पूजन व्रत करना आरंभ किया। सतरहवें सोमवार की पूजा के दिन इसका प्रभाव राजा को भी हुआ। राजा के मन में विचार उत्पन्न हुआ कि रानी को महल से निकाले हुए बहुत दिन हो गये। न जाने वह कितनी दुःखी व भूखी प्यासी कितने कष्टों को झेल रही होगी। उसका पता लगाना चाहिये। राजा ने सभी दिशाओं में रानी की तलाश के लिये अपने नौकरों को भिजवाया। नौकर लोग इस महात्मा के आश्रम में भी पहुँचे और उन्होंने सभी वृत्तान्त महात्मा जी को कह सुनाया और उनको निश्चय हो गया कि यह आश्रम में रहने वाली वही रानी है, तो उन्होंने महात्मा जी को कहा कि यह हमारे महाराज की रानी हैं। आप इन्हें हमारे साथ राजा के पास भेज देवें। महात्माजी ने उनके साथ भेजने से इन्कार कर दिया। उन राजा के नौकरों ने जाकर सभी वृत्तान्त राजा को कह सुनाया। तब वह ब्राह्मणपुत्र राजा उसी आश्रम में महात्माजी के पास पहुंचा और समस्त वृत्तान्त महात्माजी को कह सुनाया कि रानी को शिवशंकरजी की पूजा व्रत की अवहेलना करने से यह फल मिला है और अब भगवान् शंकर जी का कोप शान्त हो गया है। अतः अब आप इस रानी को मेरे साथ भेज देवें और जाने की आज्ञा दें।

यह सब सुनकर महात्मा जी ने उस रानी को राजा के हाथों में सौंप दिया। महात्मा जी की आज्ञा पाकर राजा और रानी राज-महलों में पहुँचे। वहाँ पहुंचने पर बड़ा उत्साह मनाया गया। अनेक प्रकार की शिव पूजनादि हुये, जलसे हुये, सभाएँ हुईं, गीत वाद्य नृत्य हुये, मङ्गल गान हुए वेद मंत्रों द्वारा पंडितों ने राजा रानी का अभिषेक किया; आह्वान स्वागत कराया। इस प्रकार उत्सवों से रानी ने वापस अपने राज्य महलों में प्रवेश सम्बन्धी सुख प्राप्त किये। राजा ने भी ब्राह्मणों, पण्डितों, दीन दरिद्रों को अनेक प्रकार के धन, धान्य, वस्त्र, द्रव्य, स्वर्ण, रजत अनेकों पदार्थों के दान धर्म भेंट आदि दिये। नगर में अनेक स्थानों पर सदाव्रत भोजनादि की भी व्यवस्था करादी। इस प्रकार से राजा रानी शङ्कर जी की कृपा के पात्र बने, और राजधानी में नित्य नये-नये उत्सवों द्वारा व सुख समृद्धियों से भोग आनन्द प्राप्त करते हुए, अपना सुखी जीवन बिताने लगे, और राजा रानी दोनों ने मिलकर हमेशा षोडश (सोलह) सोमवार व्रत पूजनादि करने का क्रम ही बना लिया।

इस प्रकार षोडश सोमवार व्रत पूजन करते हुये अनेक प्रकार के सुखों का उपभोग कर अन्त में शिवलोक धाम शंकरपुरी पधारे।

इस प्रकार जो मनुष्य मन, वचन, कर्म व श्रद्धा से भक्ति द्वारा यह षोडश सोमवार व्रत पूजन करता है और नियम व विधि का पालन करता है, कोई त्रुटि नहीं होने देता, नियम से सम्पन्न करता है, वह इस लोक में सभी प्रकार के सुख उपभोग कर अन्त में नित्य शिवलोक (शिवपुरी) पहुँचकर शिव का सायुज्य प्राप्त करता है यह षोडश सोमवार व्रत-पूजन करने वालों की मनोकामनाओं की पूर्ति करता है और सत्य फलदायक है। शुभ कर्मों को धन-धान्य, समृद्धियों, आयु, आरोग्य को देनेवाला व वृद्धि करने वाला है। भगवान् सदाशिव और माता पार्वती इस व्रत के करने पर परम प्रसन्न होते हैं।

सोपान

(३)

अथ सोमवार व्रत कथा

एक बहुत धनवान सेठ था। उसको किसी भी प्रकार के सुख साधनों की कमी नहीं थी, किन्तु सन्तान नहीं होने के कारण वह बड़ा दुःखी था। पुत्रकामना के लिये भगवान् शिव के मन्दिर में नित्य प्रतिज्ञा कर सायंकाल भक्तिभाव से दीपक प्रज्वलित करके शिव की पूजन करता और सोमवार का व्रत करता था। इसके इस प्रकार कई दिन पूजा करने पर एक दिन पार्वती जी शिवजी से कहने लगी कि हे भगवन् ! यह सेठ बहुत दिनों से अपनी बहुत भक्ति भाव से पूजन व्रत करता है, इसकी मनोकामना आप सिद्ध करो। यह सुन कर शिवजी ने कहा--पार्वती जी जो जब जैसे कर्म करते हैं, उसी के अनुसार उनको फल प्राप्त होता है और उसका दुःख या सुख भोगते हैं। किस किस पर दया करके उनके कर्मों को बदला जावे। तो फिर पार्वती जी ने कहा--महाराज, यह सेठ बहुत भक्ति भाव से पूजा व्रत करता है। बहुत दिन हो चुके हैं, अगर आप इसकी मनोकामना पूरी नहीं करेंगे तो अपनी इस प्रकार पूजन व्रत व भक्ति कौन करेगा। प्राणियों का भक्तिभाव कम हो जायेगा और अपना आदर सत्कार प्रचार भक्ति भावना सभी नष्ट हो जायेगी। यह सुनकर भगवान् शंकर कहने लगे तुम्हारा ऐसा ही विचार है तो मैं इसको वरदान देता हूं। इसके सुन्दर, धनवान्, बुद्धिमान् बालक पैदा होगा। किन्तु इसके भाग्य में सन्तान है ही नहीं। यह आपके कहने से ही वर देता हूँ, परन्तु इस सन्तान की उमर केवल बारह वर्ष की ही होगी। इसकी उमर बारह

वर्ष पूर्ण होने पर यह सन्तान (लड़का) मर जावेगा। शिव-पार्वती के इस वार्तालाप को सेठ वहीं शिव मन्दिर में पूजा करता हुआ सुन रहा था, किन्तु किसी प्रकार का दुःख या सुख नहीं माना। जिस प्रकार से नित्य पूजन व सोमवार का व्रत किया करता था, उसी प्रकार से करता रहा। कुछ समय बीतने पर, उस सेठ की स्त्री गर्भवती हुई, दस महीने पूर्ण होते ही बहुत सुन्दर लडके का जन्म हुआ। सेठ के घर में अनेक प्रकार की खुशियाँ मनाई गईं किन्तु सेठ को तो सब बातें ज्ञात थी, उसको किसी प्रकार की खुशी न हुई और न उसने किसी से कोई बात ही कही। जब वह लड़का ग्यारह वर्ष का हो गया तो लड़के की माता ने लड़के के पिता से जो बहुत धनवान था, कहा कि महाराज ! लड़का बड़ा हो गया इसका किसी अच्छे सेठ की लड़की से विवाह करदें, अपने यह एक ही लड़का है। यह भी बहुत उमर बीतने पर हुआ है इसका विवाह आनन्द, धूमधाम से करें। यह सुनकर सेठ ने कहा कि मैं अभी इसका विवाह नहीं करूँगा। मैं तो इसे काशीजी पढ़ने को भेजूँगा। उसने लड़के के मामा को बुलाकर कहा कि इस लड़के को आप अपने साथ काशी (बनारस) ले जाओ और यज्ञ करते व कराते रहना, शिवपूजन करते रहना, ब्राह्मण भोजन कराते रहना और इसको अच्छी विद्या पढ़वा कर ले आना और जितनी आवश्यकता हो धन अपने साथ लेते जाओ, आपको व लड़के को कोई कष्ट न हो यह ध्यान रखना।

सेठ की यह आज्ञा पाकर वह लड़का व उसका मामा आवश्यकता अनुसार धन लेकर काशी को रवाना हो गये। ये जहाँ जहाँ ठहरते जाते थे यज्ञ कराते थे। ब्राह्मण भोजन कराते थे। शिवपूजन करते थे। शिवभक्तों को भोजन कराते थे। इस प्रकार चलते-चलते एक स्थान पर पहुंचे। वहाँ उसी नगर के राजा की पुत्री का विवाह हो रहा था। जो राजकुमार इस राजकन्या से विवाह करने आया था वह एक आँख से हीन था याने काणा था।

राजकुमार के पिता को बडी चिन्ता थी कि यदि विवाह के समय इस बात का पता लग जायेगा तो विवाह में गड़बड़ हो जायेगी। इसलिए उसने अपने कई राजकीय नौकरों (राजकर्मचारियों) को इस बात की तलाश पर नियुक्त कर रखा था कि यदि कोई सुन्दर देखने योग्य लड़का किसी शर्त पर भी केवल विवाह समय के लिए वर के स्थान पर कार्य कर ले तो उसे ले आओ। उन राज्य कर्मचारियों में से एक की नजर में यह सेठ का लड़का जँच गया। उसने सेठ के लड़के के मामा से बात-चीत की तो उस लड़के का मामा किसी शर्त पर इस कार्य को लड़के से कराने को तैयार हो गया। वह राज्य कर्मचारी उस सेठ के पुत्र व उसके मामा को लेकर तत्काल ही उस विवाह के लिए आये हुए राजकुमार के पिता राजा के पास ले गये। राजा ने भी उस सेठ के पुत्र व उसके मामा से बातचीत की और यह कार्य करना निश्चित कर लिया और शीघ्र ही सेठ के लड़के को स्नान करा. सुन्दर वस्त्र आभूषण से सुसज्जित कर, वर सदृश बना कर हाथी घोड़ों के रथों पर चढ़ाकर सवारी नगर में फिराई। सभी ने राजकुमार के स्थान पर उस सेठ के पुत्र को देखकर उसकी सुन्दरता की प्रशंसा की। विवाह मण्डप में पहुँचकर राजकुमारी के साथ सेठ का पुत्र बहुत जोड़ी योग्य जँच गया। राजकुमारी के पिता ने बहुत ही उत्साह के साथ कन्यादान किया। धन, द्रव्य दिया। उसी समय सेठ के पुत्र ने वहाँ मण्डप में बैठे हुए राजा रानियों व राज्यमन्त्रियों से निगाह बचाकर उसे राजकुमारी की सौभाग्य चून्दड़ी, जो वह उस समय ओढ़े हुए थी, एक पल्ले पर लिख दिया कि आपका विवाह मेरे साथ हुआ है। मेरा नाम यह है, मेरे पिता का नाम यह है मेरा निवास स्थान अमुक नगर है। आपको विवाह करने के लिए जो राजकुमार आया है वह एक आँख से काणा है। आपको उसी के साथ आपके पिता इस धन-धान्य सहित भेजेंगे। फिर उस विवाहमण्डप से वह सेठ का पुत्र उठकर जनवासे में गया, वहाँ

उसने राजसी वस्त्राभूषण उतार दिये और अपनी शर्त के अनुसार धन द्रव्य उसके मामा ने राजा से ले लिया और काशी नगरी को प्रस्थान किया।

राजपुत्री ने अपनी ओढ़ी हुई चुनरी उतारी तो उसकी नजर उस पल्ले पर गई जिस पर उस सेठ के पुत्र ने कुछ वाक्य लिखे थे। जो वाक्य लिखे थे उन्हें पढ़ते ही समाचार समस्त विवाह स्थान में प्रकट हो गया और हाहाकार मच गया। इसके फलस्वरूप राजकुमारी को उसके पिता ने उस राजकुमार के साथ जो विवाह के लिये आया था विदा नहीं किया और विवाह में जो धन, द्रव्य दिया था वह भी वहीं रख लिया। एक नेत्र वाला काणा राजकुमार अपनी बरात को लेकर बिना वधू लिए ही वापस चला गया।

काशी (बनारस) पहुँच कर सेठ का पुत्र पढ़ने लगा। उसके मामा नित्य यज्ञ, धर्म, शिव-पूजन तथा पुण्य कार्य ब्राह्मण भोजनादि कराते व नित्य काशी विश्वनाथ का पूजन भी करते। सेठ पुत्र को भी साथ ले जाकर विश्वनाथ का दर्शन नित्य कराकर लाते थे। एक दिन सेठ का पुत्र कहने लगा—मामाजी मेरी तबियत बहुत खराब है। मामा ने कहा बेटा घर में आराम से पलंग पर लेटा रह, भगवान् शिव जी तुम्हारी तबियत ठीक करेंगे, उन्हीं का ध्यान करो। लड़का जाकर पलंग पर लेट गया। कुछ समय पश्चात् सेठ के पुत्र को मामा ने जाकर लड़के को देखा तो लड़का मरा पड़ा था। उस समय उसकी आयु पूरी हो चुकी थी। बारह वर्ष की अवधि समाप्त हो गई थी।

सेठ के पुत्र की तबियत खराब हो गई थी, उस समय उसका मामा स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर शिव पूजन व यज्ञादि का कार्य आरम्भ कर चुका था, बीच में ही उठकर लड़के को देखने को गया था। जब उसने लड़के को मरा पाया तो उसने विचार किया कि अब क्या किया जावे। अब यह समाचार फैल जायेगा तो शिव पूजन व यज्ञ अधूरा रह जायेगा। यह सोच विचार कर कि यह खबर

पीछे किसी को कहेंगे, पहले पूजन यज्ञादि करलूँ। फिर पूजन-यज्ञ समाप्त कर चुका, तब यह प्रार्थना की कि हे भगवान् शिव-पार्वती जी, हमने तो आपकी ही शरण ग्रहण कर रखी है। यह क्या हुआ? मेरे बहन व बहनोई यह समाचार सुनेंगे तो सहन नहीं कर सकेंगे और अपने प्राण त्याग कर देंगे। कृपा कर इसको आप ही जीवनदान प्रदान करें। इस प्रकार से प्रार्थना करके सेठ के पुत्र का मामा रोने लगा।

शिव पार्वती जी प्रकट हुए। पार्वती शिव जी से कहने लगीं— हे भगवान् भोलेनाथ! यह वही सेठ का पुत्र है, जिसकी अवधि आपने बारह वर्ष की निश्चित की थी। अब इसके माता पिता का क्या हाल होगा? आप कृपा करो। इसकी आयु बढ़ाओ। यह सुनकर भगवान् शिव कहने लगे कि पार्वती जी आप जहाँ भी मेरे साथ जाती हो, ऐसे ही आग्रह कर देती हो। मनुष्यों को आवश्यकताओं और भोग इच्छाओं का कोई छोर नहीं। पार्वती फिर कहने लगी—इस सेठ ने आपकी कृपा से यह पुत्र पाया था। इसका विवाह भी हो गया। परन्तु इसका या पुत्र वधू का घर-गृहस्थ का सुख, जिसके लिये संसारी मनुष्य पुत्र प्राप्ति की इच्छा करते हैं इसके माता पिता ने क्या देखा? इसे आप अवश्य जीवनदान दें। यह सुनकर भगवान् शिव ने उस लड़के के सिर पर हाथ रखा और कहा—क्यों सो रहा है; उठ खड़ा हो। उसी समय वह लड़का उठ खड़ा हुआ। फिर भगवान् शिव ने कहा—अपने देश चले जाओ। तुम्हारी विद्या पूर्ण हो गई। अपने माता-पिता के पास जाओ, उनकी सेवा करो और सुख समृद्धियों का सुख उपभोग करो। शिव-पार्वती जी अन्तर्ध्यान हो गये। यह सुनकर सेठ का पुत्र व उसका मामा दोनों स्वदेश को वापस रवाना हो गये।

जब यह सेठ का पुत्र उस राजकुमारी से विवाह करके काशी रवाना हो गया था तब उस राजकुमारी के पिता ने यही विचार किया था कि मेरी पुत्री का विवाह जिसके साथ हुआ था, वह मिल

जाये उसी के साथ इस राजकुमारी को भेजूंगा। तब से वे राजदूत इस सेठ के पुत्र की तलाश में लगे हुए थे और राजकुमारी भी अपने इस पति को पा लेने की इच्छा से भगवान् शिव की पूजा अर्चना में ही समय बिताने लगी थी।

वह सेठ का पुत्र व उसका मामा उसी रास्ते से वापस लौटे और उसी नगर में पहुंचे जहाँ उसका विवाह हुआ था। वहाँ राजा के कर्मचारियों ने जो विवाह समय उपस्थित थे, सेठ के पुत्र को पहचान लिया और राजपुत्री व राजा को समाचार सुनाया। राजा, राजपुत्री व सभी राजकर्मचारी प्रसन्न हुये। बड़ी धूम-धाम आव-भगत से राजकीय महलों में उनको ठहराया गया और कई दिनों तक उत्सव व खुशियाँ मनाई गईं और फिर अपनी राजकुमारी और अन्य सभी प्रकार के सुख-साधन सामग्री देकर राजा ने उनको विदा दी। वे चलते-चलते अपने नगर के पास पहुँचे। सेठ के पुत्र, राजकुमारी, धन-द्रव्य और बहुत से नौकर व सवारियाँ जो राजपुत्री के पिता ने साथ भेजे थे, आदि सबको नगर के बाहर ही ठहरा कर सेठ के पुत्र का मामा अकेला ही नगर में गया। सेठ के घर पहुंचा तो सेठ व सेठानी दोनों ही अपने घर पर नहीं मिले। सेठ के मकान पर नौकरों ने बतलाया कि आप गये तब से ही सेठ व सेठानी अपने बगीचे में ही रहते हैं, उसी स्थान पर शिवजी का पूजन, व्रत, यज्ञ, तप करते हैं और प्रण कर रखा है कि जब तक हमारा पुत्र वापस नहीं आवेगा, इसी नियम से यहाँ ही ही रहेंगे। यदि हमारा पुत्र वापस नहीं आवेगा तो इसी प्रकार से रहते हुए अन्न जल त्याग कर शरीर को सुखा देंगे और त्याग कर देंगे। यह बात सेठ के कर्मचारी नौकरों से सुनकर वह सेठ के पुत्र का मामा उस बगीचे में पहुंचा और वहाँ जाकर अपनी बहिन व जीजा (सेठ-सेठानी) को जो शिवपूजन, तप, यज्ञ में लीन हो रहे थे, पुत्र के आने के सभी समाचार कहे। सेठ व सेठानी को विश्वास नहीं हुआ। फिर बार

बार कहने पर सेठ सेठानी ने भगवान् शिव की पूजा की और अपने पुत्र के आगमन को भगवान् शिव की कृपा का प्रसाद माना, और फिर शीघ्र पुत्र व पुत्रवधू को देखने व लिवा लाने के लिए बहुत से कार्यकर्त्ता, नौकर व इष्ट मित्रों को साथ लेकर सेठ व सेठानी नगर के बाहर पहुँचे। पुत्र, पुत्रवधू, धन द्रव्य, वाहनादि सभी को देखकर प्रसन्न हुए। भगवान् शिव की प्रार्थना व आशीर्वाद का फल मानते हुए खुशी मे अपने नगर व अपने महलों में पुत्र व पुत्रवधू को लिवा लाये और आनन्द मनाते हुए प्रसन्नता से रहने लगे।

जो इस कथा को कहेगा या सुनेगा, भगवान् शिव की पूजा व सोमवार का व्रत करेगा, उसको भगवान् शंकर इसी प्रकार से सुख, समृद्धि, सन्तान व आयु प्रदान करेंगे।

* * *

सोपान

(४)

अथ सोम–प्रदोष व्रतकथा

बहुत पूर्वकाल में एक विधवा ब्राह्मणी और उसका एक पुत्र निराश्रय हो जाने से भूखे प्यासे भटकते-भटकते जङ्गल में एक ऋषियों के आश्रम के पास पहुँच गये। उन्होने अपनी दुःख भरी गाथा ऋषियों से कह सुनाई। ऋषियों ने सान्त्वना देते हुए उनके रहने के लिए एक कुटिया उसी आश्रम के पास बना दी और उसे भगवान् शिव के पूजन व सोमप्रदोष व्रत की विधि कह दी। माता व पुत्र उन ऋषियों की बतलाई हुई विधि के अनुसार शिवपूजन

करते और नजदीक किसी बस्ती से भिक्षाटन करके ले आते और समय व्यतीत करते । वह ब्राह्मणपुत्र इसी व्रत के प्रभाव से ऋषियों के पास एकाग्रचित्त से विद्याध्ययन करते-करते समस्त शास्त्रों का ज्ञाता हो गया । एक दिन विदर्भ देश का राजकुमार भी इसी प्रकार दुःख व मुसीबतों का मारा इधर आ निकला । वे दोनों मित्र बन गये । वह इस ब्राह्मणपुत्र व विधवा ब्राह्मणी के पास समय काटने लगा । इस राजपुत्र के पिता को अन्य शत्रुओं ने मार डाला और उसके राज्य को अपने अधिकार में कर लिया । इसे भी भय हुआ कि मुझको भी मार देंगे और यहाँ पहुँच गया । यहाँ ब्राह्मणपुत्र व उसकी विधवा माता नित्यपूजन व सोमप्रदोषव्रत करते थे । वह भी इसी प्रकार शिवपूजन व सोमप्रदोषव्रत करने लगा ।

एक दिन राजकुमार व ब्राह्मण पुत्र दोनों ही जंगल में प्राकृतिक दृश्य देखने चले गये । वहाँ वे मनोहर प्राकृतिक दृश्य युक्त स्थान पर बैठे वार्ता कर रहे थे कि वहाँ सैर करने गन्धव कन्याएँ आईं और उन्होंने राजपुत्र को देख कर उससे बातें की ।

एक गन्धर्व कन्या जिसका नाम अंशुमती था, वह उस राजकुमार पर मोहित हो गई और उस विदर्भ राजकुमार को अपने साथ ले गई । इस राजकुमार का नाम धर्मगुप्त था । वह ब्राह्मण पुत्र अकेला ही अपने आश्रम को लौट आया ।

गन्धर्व कन्या अंशुमती ने उस राजपुत्र धर्मगुप्त को ले जाकर अपने माता पिता को दिखाया । धर्मगुप्त राजकुमार से उसके माता-पिता ने बातें कीं । सभी बातें राजकुमार ने उनको कह सुनाई । उसके माता-पिता ने उसकी बुद्धिमानी व सुन्दरता को देखकर उसका विवाह विदर्भ के राजकुमार धर्मगुप्त से कर दिया, और अपनी समस्त सेना के साथ जिन शत्रुओं ने धर्मगुप्त के पिता को मार दिया था और उसके राज्य पर अधिकार कर लिया था उन पर चढ़ाई कर दी । उन्हें मार भगाया और राज्य पर स्थापित करा सभी प्रकार के उचित प्रबन्ध जंचा दिये । अंशुमती को बहुत धन द्रव्यों सहित

वहाँ पहुंचा दिया। धर्मगुप्त अपना राज्य स्वयं चलाने लगा। उसे उस ब्राह्मणपुत्र विद्वान की जो जंगल में मित्र हुआ था और उसी के साथ रहने लगा था, जिसके संसर्ग से राजकुमार शिवपूजन व्रत सौम्य प्रदोष आदि करने लगा था, याद रही। उसने एक दिन पत्र लिखकर उस ब्राह्मण पुत्र के पास राजदूत के साथ भेज दिया कि मित्र तुम व तुम्हारी माताजी यहाँ मेरे पास आ जाओ, अब मेरा राज्य मुझे मिल गया है। ब्राह्मणपुत्र अपनी माता सहित उस धर्मगुप्त विदर्भ राजा के पास पहुंच गया। वहाँ.धर्मगुप्त ने उनके सुख-साधनों की बहुत उत्तम व्यवस्था करा दी और उस ब्राह्मणपुत्र को जो बहुत ही चतुर नीतिज्ञ था अपना प्रधानमंत्री नियुक्त किया। दोनों ने मिलकर अपने राज्य का उत्तम प्रबन्ध किया और सुखपूर्वक रहने लगे। दोनों ने ही अपने शिवपूजन व सोमप्रदोष व्रत का फल माना।

* * *

सोपान
(५)

षोडश सोमवार, केवल सोमवार तथा सोम–प्रदोष व्रत कर, शिव पूजन करने वालों के लिए

* आरती गायन *

शीशगङ्ग अर्द्धङ्ग पार्वती, सदा विराजत कैलासी।
नन्दी भृङ्गी नृत्य करत हैं, गुण भक्तन शिव के दासी॥
शीतल मन्द सुगन्ध पवन जहँ, बैठे हैं शिव अविनाशी।
करत गान गंधर्व सप्तसुर, राग रागनी अति गासी॥

यक्ष रक्ष भैंरव जहँ डोलत, बोलत हैं वन के वासी ।
कोयल शब्द सुनावत सुन्दर, भँवर करत हैं गुंजासी ।।
कल्पद्रुम अरु पारिजात तरु, लाग रहे हैं लक्षासी ।
कामधेनु कोटिक जहँ डोलत, करत फिरत हैं भिक्षासी ।।
सूर्यकान्त सम पर्वत शोभित, चन्द्रकान्त भवमी वासी ।।
छहों ऋतु नित फलत रहत हैं पुष्प चढ़त हैं वर्षा सी ।
देव मुनिजन की भीड़ परत है. निगम रगत जो नितगासी ।।
ब्रह्माविष्णु जाको ध्यान धरत हैं. कछु शिव हमको फरमासी ।
रिद्धि-सिद्धि के दाता शंकर, सदा अनंदित सुखरासी ।।
जिनको सुमिरण सेवा करता, टूट जात यम की फाँसी ।
त्रिशूलधरजी को ध्यान निरन्तर, मन लगाय कर जो गासी ।।
दुःख हरो विपदा शिव तनु की, जन्म जन्म शिवपद पासी ।
कैलासी काशी के वासी अविनाशी, मेरी सुधि लीज्यो ।।
सेवक जान सदा चरनन को, अपनो जान दरश दीज्यो ।
तुम तो प्रभुजी सदा सयाने, अवगुण मेरे सब ढकियो ।।
सब अपराध क्षमा कर शङ्कर, किङ्कर की विनती सुनियो ।
अभयदान दीजै प्रभु हमको, सकल सृष्टि के हितकारी ।।
भोलेनाथ बाबा भक्त निरञ्जन, भव भंजन भवसुखकारी ।
गज चर्माम्बर बाघम्बर सोहे, गलबिचमाल मुण्डेश्वरम् ।।
पंच वदन पर पार्वती शोभित, डम डम बाजत धुन मधुरम् ।
काल हरो हर कष्ट हरो हर, दुःख हरो दारिद्र्य हरो ।।
नमामि शङ्कर भवानि शङ्कर, डमडम बाजत हम शरणम् ।

सोपान

(६)

ॐ रुद्राष्टकम्

[षोडश सोमवार स्तोत्रम्]

नमामीशमीशाननिर्वाणरूपं
विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं ।
अजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं
चिदाकाशमाकाश वासं भजेऽहं ॥१

हे मोक्ष स्वरूप, विभु, व्यापक, ब्रह्म और वेद स्वरूप, ईशान दिशा के ईश्वर तथा सबके स्वामी श्री शिवजी ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। निज स्वरूप में स्थित अर्थात (मायादि) गुणों से रहित, भेद रहित, इच्छा रहित, चेतन, आकाश रूप एव आकाश को ही वस्त्र रूप में धारण करने वाले दिगम्बर (अथवा आकाश को भी आच्छादित करने वाले) आपको मैं भजता हूँ ॥१

निराकारमोंकारमूलं तुरीयं गिराज्ञानगोतीतमीश गिरीशं ।
करालं महाकालकालं कृपालं, गुणागार संसारपारं नतोऽहं ॥२

निराकार, ओंकार के मूल, तुरीय (तीनों गुणों में अतीत) वाणी, ज्ञान और इन्द्रियों से परे, कैलाशपति, विकराल, महाकाल के भी काल, कृपालु, गुणों के धाम, संसार से परे आप-परमेश्वर को मैं नमस्कार करता हूँ ॥२

तुषाराद्रिसंकाशगौरं गम्भीरं,
मनोभूत – कोटिप्रभाश्रीशरीरं।
स्फुरन्मौलिकल्लोलिनी चारुगङ्गा,
लसद्भालबालेन्दु कंठे भुजंगा ॥३

जो हिमाचल के समान गौरवर्ण तथा गम्भीर हैं, जिनके शरीर में करोड़ों कामदेवों की ज्योति एवं शोभा है। जिनके सिर पर सुन्दर नदी गङ्गाजी विराजमान हैं, जिनके ललाट पर द्वितीया का चन्द्रमा और गले में सर्प सुशोभित हैं ॥३

चलत्कुंडलं शुभ्रनेत्रं विशालं, प्रसन्नाननं नीलकंठं दयालं।
मृगाधीशचर्माम्बरं मुंडमालं, प्रियं शङ्करं सर्वनाथं भजामि ॥४

जिनके कानों में कुण्डल हिल रहे हैं, सुन्दर भ्रकुटि और विशाल नेत्र हैं, जो प्रसन्नमुख नीलकण्ठ और दयालु हैं। सिंह चर्म का वस्त्र धारण किये और मुण्डमाला पहने हैं, उन सबके प्यारे सब के नाथ (कल्याण करने वाले) श्री शंकरजी को भजता हूँ ॥४

प्रचंडं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं, अखंडं अजं भानुकोटिप्रकाशं।
त्रयःशूल निर्मूलनं शूलपाणिं, भजेऽहं भवानी पतिं भावगम्यं ॥५

प्रचण्ड (रुद्ररूप) श्रेष्ठ, तेजस्वी, परमेश्वर, अखण्ड, अजन्मा, करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाश वाले, तीनों प्रकार के शूलों (दुःखों) को निर्मूल करने वाले, हाथ में त्रिशूल धारण किये, भाव (प्रेम) के द्वारा प्राप्त होने वाले भवानी के पति शङ्करजी को मैं भजता हूँ ॥५

कलातीतकल्याणकल्पान्तकारी,
सदा सज्जनानन्ददाता पुरारिः।
चिदानन्दसंदोहमोहापहारी,
प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारिः ॥६

कलाओं से परे, कल्याण स्वरूप, कल्प का अन्त (प्रलय) करने वाले, सज्जनों को सदा आनन्द देने वाले, त्रिपुर के शत्रु, सच्चिदानन्दघन, मोह को हरने वाले मनको मथ डालने वाले, काम देव के शत्रु, हे प्रभो ! प्रसन्न हूजिये, हूजिये ॥६

न यावद् उमानाथ पादारविन्दं, भंजतीह लोके परे वा नराणां ।
न तावत्सुखं शान्ति सन्तापनाशं प्रसीद प्रभो सर्व भूताधिवासं ॥७

जब तक पार्वती के पति आपके चरण कमलों को मनुष्य नहीं भजते, तब तक उन्हें न तो इहलोक और परलोक में सुख-शान्ति मिलती है और न उनके पापों का ही नाश होता है। अतः हे समस्त जीवों के हृदय में निवास करने वाले प्रभो ! प्रसन्न हूजिए ॥७

न जानामि योगं जपं नैव पूजां,
नतोऽहं सदा सर्वदा शंभु तुभ्यं ।
जराजन्मदुःखौघता तप्यमानं ।
प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो ॥८

मैं न तो योग जानता हूँ, न जप और न पूजा ही। हे शम्भो ! मैं तो सदा सर्वदा आपको ही नमस्कार करता हूं। प्रभो ! बुढ़ापा तथा जन्म (मृत्यु) के दुःख समूहों से जलते हुए मुझ दुःखी की दुःख से रक्षा कीजिए। हे ईश्वर ! हे शम्भो ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ ॥८

रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये ।
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति ॥९

भगवान् रुद्र की स्तुति का यह अष्टक उन शंकरजी की तुष्टि (प्रसन्नता) के लिए ब्राह्मण द्वारा कहा गया। जो मनुष्य इसे भक्तिपूर्वक पढ़ते हैं, उन पर भगवान् शम्भु प्रसन्न होते हैं ॥९

सोपान

(७)

शिव तीर्थ यात्रा महात्म्य फल वर्णन

यह भारत वर्ष धन्य है। इसमें जन्म लेने वाले मनुष्यों की महिमा देवता भी अपने श्रीमुख से कहते हैं। जिन जीवों ने भारत में भगवान् के सेवा पूजा योग्य मनुष्य जन्म प्राप्त किया है, उन पर स्वयं श्री भगवान् शिव प्रसन्न हो जाते हैं। इस प्रकार के परम सौभाग्य के लिये तो देवता भी निरन्तर तरसते रहते हैं। स्वर्गलोग की तो बात ही क्या, कल्पभर की आयु वाले ब्रह्मलोकादिकों की अपेक्षा भी भारत में अल्पायु होकर जन्म लेना अच्छा है क्योंकि यहाँ धीर पुरुष क्षण भर में ही अपने मर्त्य शरीर से किये कर्मों को भगवदर्पण करके स्वयं श्री भगवान् शिव के अर्पण होकर के अभयपद को प्राप्त कर लेते हैं। वस्तुत: जिन जीवों ने भारत में ज्ञान, पूजा, साधना, योग, तदनुकूल कर्म तथा इस प्रकार के कर्मोपयोगी द्रव्यादि से सम्पन्न मनुष्य जन्म पाया है वे फिर भी भगवान् शिव की भक्ति व पूजा के लिए प्रयत्न नहीं करते तो वे व्याध की फाँसी से छूट कर भी फलादि के लोभ से उसी वृक्ष पर विहार करने वाले वनवासी पक्षियों के समान, फिर बन्धन में पड़ जाते हैं। अतः अब तक स्वर्ग सुख भोग लेने के बाद हमारे पूर्वकृत यज्ञ, प्रवचन, और शुभ कर्मों से यदि कुछ भी पुण्य बच रहे हों तो उसके प्रभाव से हमें इस भारतवर्ष में भगवान् की स्मृति से युक्त मनुष्य-जन्म मिले, क्योंकि श्री भगवान् शिव अपनी पूजा सेवा प्रार्थना तथा आत्म निवेदन, करने वालों का सब प्रकार से कल्याण कर भक्ति तथा मुक्ति प्रदान करते हैं।

भगवान् शिव नित्य हैं, सच्चिदानन्दघन है। उनका प्रभाव नित्य है, चिन्मय है। जिस स्थल में भगवान् शिव कभी प्रकट हो गये, वह भूमि दिव्य हो गई। इसमें भगवान् शिव के चरणारविन्द का चिन्मय प्रभाव आ गया और वह प्रभाव ऐसा आया कि काल भी उसे प्रभावित नहीं कर सकता। वह प्रभाव नित्य हो गया।

वेद, उपनिषद्, श्रुति, स्मृति, पुराणोक्त जिन मनुष्यों ने कर्म कर भगवान् शिव की स्थापना कर दी या किसी प्रकार के वर प्राप्त कर लिए वह स्थान भी भगवान् शिव का तीर्थ हो गया। ऐसे अनन्त स्थान हैं, किन्तु संक्षेप में द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग, अष्ट मूर्ति शिव लिङ्ग और अन्य कई स्थानों पर अनेक प्रकार के व विभिन्न नाम प्रभाव आकार प्रकार के अद्भुत कलापूर्ण प्राकृतिक दृश्ययुक्त अनेक धातुओं द्वारा निर्मित, अनेक विचित्र पाषाणमय, अनेक प्रकार की मान्यता द्वारा तत्काल सिद्धियाँ प्रदान करने वाले शिवलिङ्गों का वर्णन किया गया गया है। दर्शनार्थी पूजक साधक उनसे लाभ उठाने का प्रयत्न कर सकेंगे। ये सभी भगवान् शिव के तीर्थ स्थान हैं, इनके दर्शन, पूजन का बड़ा माहात्म्य, पुण्य व धर्म है।

ऐसे स्थानों के अतिरिक्त कुछ ऐसे भी भगवान् के तीर्थ और कहे गये हैं, जिनका उपर्युक्त स्थानों में परिचय नहीं आया और उनके कोई नियत भूमि स्थल नहीं है, उनका भी संक्षेप में वर्णन में वर्णन किया जाता है।

सन्ततीर्थ—जो जीवन मुक्त, देहातीत, परम शिव भक्त या शिवभक्ति में ओत-प्रोत सन्त-महात्मा हैं उनका शरीर भले ही पाञ्चभौतिक एवं नश्वर हो किन्तु उस देह में भी सन्त के दिव्यगुण भरे पड़े हैं। उस देह से उन दिव्य गुणों के परमाणु सदा बाहर निकलते रहते हैं और अपने सम्पर्क में आने वाली वस्तुओं को प्रभावित करते रहते हैं। इसलिए सन्त के चरण जहाँ जहाँ पड़ते हैं, वह भूमि व स्थान भी तीर्थ तथा देवालय बन जाते हैं। सन्त की जन्मभूमि, उसकी साधनाभूमि एवं समाधि विशेष रूप

से पवित्र व पूजने योग्य हैं, ऐसे सन्तों की और सन्तों के उपर्युक्त स्थानों की पूजा करने से भी भगवान् शिव प्रसन्न होते हैं।

ऐसे पुण्यप्रद तीर्थ स्थानों में जाकर भगवान् शिव की पूजा अर्चना करना और महात्मा पुरुषों की पूजा अर्चना करनी चाहिए तथा महात्मा पुरुषों के सत्संग का भी लाभ उठाना चाहिए। स्कन्द पुराण में कहा है 'तीर्थयात्रा प्रसङ्ग से महापुरुषों के दर्शन पूजन के लिये जाना भी तीर्थयात्रा का मुख्य उद्देश्य है, अतः जिस भूभाग में सन्त महात्मा निवास करते हैं वह भी 'तीर्थ' ही हो जाता है शिवभक्त महात्मा, पुरुषों को तीर्थों का भी सुतीर्थत्व प्रदान करने वाला कहा गया है।

भक्ता एकान्तिनो मुख्याः। कण्ठावरोधरोमाञ्चाश्रुभिः परस्पर लयमानाः पावयन्ति कुलानि पृथिवीं च। तीर्थी कुर्वन्ति तीर्थानि सुकर्मीकुर्वन्ति कर्माणि सच्छास्त्रीकुर्वन्ति शास्त्राणि।

(नारदभक्ति सूत्र ६७, ६८, ६९)

'एकान्त (अनन्य) भक्त ही श्रेष्ठ है। प्रेम के कारण जिनका कण्ठ रुक जाता है, शरीर पुलकित हो जाता है और आँखों में प्रेम के आँसुओं की धारा बहने लगती है, ऐसे अनन्य भक्त परस्पर सम्भाषण करते हुए अपने कुलों को और पृथ्वी को पवित्र करते हैं। वे तीर्थों. को सुतीर्थ, कर्मों को सुकर्म, शास्त्रों को सत्-शास्त्र बना देते हैं।'

इसी प्रकार मे स्कन्द पुराण (मा० कुमा० ११/६-७) में आया है, उसका पाठ स्थानाभाव से न लिखकर भावार्थ लिखते हैं।

'यह सच है कि श्रेष्ठ (दयालु एवं सरल हृदय) पुरुषों का साधुओं महापुरुषों के साथ समागम तीर्थ से भी बढ़कर है, क्योंकि उसका पका पकाया फल तुरन्त प्राप्त होता है तथा वह तुरन्त कठिनाई से दूर होने वाले पापों का नाश कर देता है। श्रेष्ठ पुरुषों का संग हजारों किरणों के प्रकाशमान सूर्योदय की भाँति अद्भुत

प्रभावशाली है, क्योंकि वह अन्त:करण में व्याप्त अज्ञानरूप अन्धकार का अत्यन्त नाश करने वाला है।'

अतएव तीर्थों में जाकर मनुष्यों को साधू. महात्मा, ज्ञानी, योगी और भक्तों के भी दर्शन, सेवा, सत्सङ्ग, वन्दन, उपदेश, आदेश और वार्तालाप के द्वारा विशेष लाभ उठाने के लिये उनकी तलाश करनी चाहिये। किन्तु इसमें यह भी बतला देना अनुचित न होगा कि आजकल ऐसे देवस्थान व तीर्थों में ठग, धूर्त, भोले भाले यात्रियों को ठगने वाले अपनी झूठी सिद्धियाँ बतलाने वाले झूठी करामात के चकमा देने वालों की कमी नहीं है। उनके चंगुल, चक्कर में न फँसे वरना लाभ के स्थान पर हानि भी हो सकती है।

स्त्री के लिये पति अपने घर गाँव तथा स्थान पर ही तीर्थ हैं। बालकों के लिये माता-पिता तथा शिष्य के लिये गुरु ही जङ्गम तीर्थ हैं। अत: मनुष्यों को तीर्थ यात्रा इनके साथ साथ अथवा इनकी आज्ञा से ही करना चाहिये तभी तीर्थ यात्रा सफल होती है। क्योंकि यह साक्षात् सजीव तीर्थ हैं। इसलिए इनकी सेवा-शुश्रूषा करने का तीर्थ यात्रा से भी बढ़कर माहात्म्य कहा गया है। अत: मनुष्यों को उनके हित में रत रहते हुए, निष्काम प्रेम भाव से श्रद्धा भक्तिपूर्वक उनकी सेवा, वन्दना और आज्ञापालन करना चाहिये। इससे भी भगवान् शिव प्रसन्न होते हैं। इस विषय में एक कवि ने बहुत सुन्दर कहा है--

एक एक कण तीर्थ महान्

(१)

निज हत्यारे के समक्ष भी, वही विश्व-मोहन मुसकान।
हाथ जोड़ कर सादर उसको, अर्पित कर देते निज प्राण॥
शाप नही देते, करुणावश देते हैं पावन वरदान।
उन सन्तों की चरण-धूलि का, एक एक कण तीर्थ महान्॥

(२)

लगा नहीं सकता कोई भी, जिनकी महिमा का अनुमान।
पापी पतित, पराजित का भी, जो करते सच्चा सम्मान॥
सदा काल वशवर्ती जिनके, शरणागत-वत्सल भगवान्।
उन सन्तों की चरण-धूलिका, एक-एक कण तीर्थ महान्॥

(३)

छू न गया है स्वप्न बीच भी, जिनको लेश मात्र अभिमान।
जो विनम्रता की परिसीमा, परम सुखद जिनकी मुसकान॥
सुधा पिला करके औरों को, करते स्वयं विषम विषपान।
उन सन्तों की चरण-धूलि का, एक-एक कण तीर्थ महान्॥

(४)

विष्णु विधाता उमानाथ भी, जाते हैं जिन पर कुर्बान।
कर न सकेंगे शेष-शारदा तक, जिनका सम्यक् गुणगान॥
जिनके सम्मुख लज्जित होता, परमेश्वर का दिव्य विधान।
उन सन्तों की चरण-धूलिका, एक-एक कण तीर्थ महान्॥

(कल्याण)

अपने ही घर में पाञ्चभौतिक शरीरधारी भगवान् शिव उपस्थित हैं उनकी ही सेवा करलें, यदि वे प्रसन्न हो जायेंगे तो सभी तीर्थ यात्राओं का फल व मनोकामना सिद्धि प्रदान कर देंगे।

भगवान् शिव व उमा स्वरूपा मातृ तीर्थ, पितृ तीर्थ, गुरु-तीर्थ, भर्तृ तीर्थ, भार्या तीर्थ, प्रत्येक घर में पाये जाते हैं।

वेद उपनिषद्, श्रुति, स्मृति, पुराण, धर्मशास्त्रों में भी पुत्र, पुत्री, पुत्रवधू के लिए माता, पिता, सास, श्वसुर, शिष्या के लिये गुरु को, पति के लिये पत्नी को और पत्नी के लिये पति को शिव व भवानी शिवा का रूप कहा गया और इसमें यह भी बतलाया गया है कि पिता के पिता, चाचा, ताऊ, मामा, नाना व उनके भाई श्वसुर व

श्वसुर के भाई, फूफा, मौसा, ये सब पिता समान हैं, इसी प्रकार माता, दादी, नानी, मामी, मौसी बुआ, चाची, ताई, गुरु-पत्नी ये सब माता समान हैं। अपने को दूध पिलाने वाली धाय, रात दिन पालन पोषण करने वाली चाहे नौकरानी के ही रूप में हो माता समान हैं। पुत्री, पुत्रवधू शिष्या ये समान हैं इन सबका ही पालन, सेवा, पूजा व सम्मान में एक ही प्रकार का कर्त्तव्य कहा गया है। "पद्मपुराण" के भूमि खण्ड में इनके इतिहासों का बड़ा विशद और सुन्दर वर्णन किया गया है। यहाँ संक्षेप में थोड़ा दर्शा दिया है।

माता-पिता-तीर्थ—

जो मनुष्य दुष्टता करके वृद्ध माता पिता का अपमान करता है, सम्मान नहीं करता, उनकी उचित रीति से खाने पीने की व्यवस्था नहीं करता, कड़वे वचन बोलता है, असहाय की तरह रखता है, बीमार अवस्था में सेवा शुश्रूषा नहीं करता, लापरवाही करता है, उनको असहाय छोड़ कर चल देता है, या उनको घर से निकाल देता है, उनका कमाया हुआ, धनादि धोखे से छल छिद्र द्वारा ले लेता है। वह बार-बार साँप, ग्राह, बाघ तथा रीछ आदि नीच कर्म योनियों में जन्म लेता है, कुम्भीपाक आदि घोर नरकों में युगों तक पड़ा सड़ा करता है। इस जीवन में भी चिन्ताओं के ताप से जला करता है, सुख शान्ति प्राप्त नहीं होती है।

माता-पिता की सेवा से, उनको सम्मानपूर्वक रखकर, संतुष्ट करने से तीनों लोकों की तुष्टि होती है और भगवान् शिव प्रसन्न होते हैं। जो मनुष्य नित्यप्रति अपने माता-पिता के चरण चाँपता (दबाता) है और नित्य प्रातः प्रणाम करता है, उनको गङ्गास्नान व दर्शन का फल प्राप्त होता है। पुत्र पुत्री के लिए माता-पिता के समान अन्य कोई देवता या तीर्थ नहीं कहा गया है। यह अनेक धर्मशास्त्रों व सभी पुराण शास्त्रों में कहा हुआ मिलता है,

यहाँ सब सार रूप में वर्णन कर रहे हैं 'नास्ति मातृसमं तीर्थं पुत्राणां च पितुः समम्' ।

माता-पिता की सेवा ही तीर्थ है——

माता तीर्थ, तीर्थ है रोगी, अभ्यागत है तीर्थ महान् ।
इन सबकी सच्ची सेवा से, द्रवीभूत होते भगवान् ।।
द्रवीभूत जब हो जाते हैं, कमल-नयन वे दयानिधान ।
जो इच्छित पदार्थ निज जनको, कर देते तत्काल प्रदान ।।

(कल्याण)

सुतीर्थ रूप माता-पिता——

तीर्थ माता-पिता घर मै है ।
व्यर्थहि क्यों जग में भरमै हैं ।।
उत्तम क्यौं न करै करमैं है ।
काहे को जात तू बाहर में है ।।
क्यौं न सुपानि सौं स्नान करै है ।
क्यौं नही दान रु ध्यान करै है ।।
क्यौ न पदामृत पान करै है ।
नेरे की गङ्गा को क्यौं बिसरे है ।।

(कल्याण)

गुरुतीर्थ—

सूर्य दिन में, चन्द्रमा रात्रि में तथा दीपक घर में अन्धकार को दूरकर प्रकाश करते हैं, परन्तु गुरु तो शिष्य के अज्ञानान्धकार को सर्वदा के लिये दूर करके दिन, रात्रि और घर तीनों में प्रकाश कर देते हैं। यह ध्यान में रखकर शिष्य को सर्वदा गुरु की सेवा पूजा व सत्कार करना चाहिये। शिष्यों के लिये गुरु ही परम पुण्य, सनातन धर्म, परमज्ञान और प्रत्यक्ष फल देने वाला परम 'तीर्थ' कहा गया है।

शिष्याणां परमं पुण्यं धर्मरूपं सनातनम् ।
परं तीर्थं परं ज्ञानं प्रत्यक्षफलदायकम् ।।

भार्या तीर्थ—

जिस घर में सदाचारयुक्त, धर्म तत्पर, पुण्यमयी, सती पतिव्रता है, उस घर में सारे देवता नित्य निवास करते हैं और वहाँ ही गङ्गा, यमुना आदि सभी पवित्र नदियाँ पवित्र समुद्र तथा समस्त तीर्थ और पुण्य रहते हैं। सत्यपरायण पवित्र सती के घर में समस्त यज्ञ, गौ और ऋषिगण निवास करते हैं। ऐसी पवित्र भार्या को त्याग कर जो पुरुष धर्म-कार्य करता है, उसके वे समस्त धर्म व्यर्थ होते हैं। भार्या के बिना धर्म पुरुष का मित्र नहीं होता है। भार्या के समान पुरुषों को सद्गति देने वाला अन्य कोई 'तीर्थ' नहीं है, जैसे शास्त्रों में कहा गया है--

तस्माद् भार्यां बिना धर्मः पुरुषस्य न सिद्ध्यति ।
नास्ति भार्या समं तीर्थं पुंसां सुगतिदायकम् ॥

भर्तृ (पति) तीर्थ--

स्त्रियों के लिये पति ही परम परमेश्वर कहा गया है. पति ही गुरु है, पति ही परम देवता है और पति ही परम तीर्थ है। जो स्त्री पति को छोड़कर अकेली रहती है, वह पापयुक्त हो जाती है। स्त्री को पति के प्रसाद से ही सब कुछ प्राप्त होता है। स्त्री का पतिव्रत ही समस्त पापों का नाश करने वाला व मोक्ष देने वाला है। जो स्त्री पतिपरायण होती है वह पुण्यमयी कहलाती है। स्त्रियों के लिए पति को छोड़कर पृथक् (अलग) कोई तीर्थ शोभा ही नहीं देना है। पति का दाहिना चरण स्त्री के लिए प्रयाग तीर्थ है और बायाँ चरण पुष्करराज 'तीर्थ' है। पति के चरणोदक याने पति के पैर से लगे हुए पानी से स्त्री स्नान कर लेती है तो उस स्त्री को उपर्युक्त सभी तीर्थों में स्नान करने का पुण्य फल मिल जाता है। स्त्री के लिये अपना पति ही देवता समान और सर्वतीर्थमय और सभी पुण्य देने वाला है। जैसा कि शास्त्रों में कहा गया है—

'सर्वतीर्थमयो भर्ता सर्वपुण्यमयः पतिः ।'

इस उपर्युक्त प्रकार में कहे गये मनुष्यों के अतिरिक्त और भी तीर्थ कहे गये हैं। किसी असहाय की सहायता करना, रोगी की सेवा करना, दवा आदि की व्यवस्था करना, विधवा स्त्री की सेवा करना आदि-आदि ये कार्य करने वालों को भी तीर्थ स्नान, देव दर्शन का फल प्राप्त होना कहा गया है।

किन्तु इस प्रकार वर्णन माहात्म्य आदि का यह मतलब (अर्थ) नहीं है कि जो तीर्थ स्नान दर्शन कहे गये है, वहां गृहस्थों को जाने की आवश्यकता ही नहीं है। इस प्रकार के कथन व विवेचन का अर्थ यह समझना चाहिए इन उपर्युक्त वर्णित मनुष्यों को या तो तीर्थ, देवदर्शन करने को जाते समय साथ लेकर जायें या उनको अपने पीछे से किसी प्रकार का कष्ट न हो, उनको आत्मसन्तोष रहे, इस प्रकार का प्रबन्ध करके जायें। याने तीर्थ और देवदर्शन में जाने से पूर्व इनको किसी प्रकार का कष्ट न हो यह जिम्मेदारी अच्छे कहे जाने वाले गृहस्थ की पूर्ण रूप से है। सर्वप्रथम कर्त्तव्य यह है, तदुपरान्त तीर्थादि कहे गये हैं। इस प्रकार इनको सन्तुष्ट और सुखी रखने सेवा सहायता पहुँचाने से भी तीर्थदेवदर्शन के समान फल प्राप्त होते हैं। क्योंकि प्रत्येक आत्मा भी परमात्मा का ही स्वरूप कहा गया है। इनकी आत्मायें आप से सन्तोष व सुख प्राप्त कर असीम आशीर्वाद प्रदान करेंगी। उससे भी आपके पाप नष्ट होंगे और पुण्य संचित होगा। कर्त्तव्य पालन होने से धर्म की वृद्धि होगी, भगवान् शिव ऐसे कर्त्तव्य पालन करने वालों से भी सन्तुष्ट व प्रसन्न होते हैं। उनकी सेवा व सहायता को अपनी ही सेवा मानते हैं, क्योंकि वे सर्वजगत्मय हैं।

जो मनुष्य भगवान् शिव में भक्ति रखते हुए तीर्थ यात्रा करते हैं, और तीर्थों में जाकर भगवान् की पूजा, अर्चना, वन्दना करते हैं वे इस लोक में भोग पदार्थ व सुख शान्ति प्राप्त करते हैं, और मरने पर उनको भगवान् शिव अपना लोक प्रदान करते हैं। तीर्थों में तीन रात्रि वास करने पर तीर्थ यात्रा के पूर्ण फल प्राप्त

हैं। किसी कारणवश ऐसा संभव न हो पाये तो भी एक दिनरात वास तो करना ही चाहिए।

* * *

सोपान

(८)

काशीवास—माहात्म्य वर्णन

शिव-लिङ्ग स्थापित स्थान सभी तीर्थं पापनाशक, भोग, योग, भक्ति, मोक्ष प्रदान करने वाले कहे गये हैं, इनमें शीघ्र अधिक फल प्रदान करने वालों में द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग, अष्टमूर्ति शिव-लिंग बतलाये गये हैं। किन्तु इनमें भी सर्वाधिक शीघ्रातिशीघ्र पाप नाश करने वाले भोग, योग, भक्ति, मोक्ष और पुण्यप्रद काशी विश्वनाथ स्थान कहा गया है।

प्राचीन व आधुनिक इतिहासकारों की दृष्टि में काशी संसार की सबसे प्राचीन नगरी है। विश्व में इस समय जो पुस्तकें उपलब्ध हैं, उनमें सबसे प्राचीन वेद बतलाये गये हैं। उनमें भी इस काशीपुरी का उल्लेख मिलता है।

'आप इव काशिना संगृभीताः' (ऋक् ७-१०४-८)
'मघवन् ! काशिरित्ते' (ऋ० ३-३०-५)
'यज्ञः काशीनां भरतः सात्वतामिव' (शतपथ ब्रा० १३-५-४-१९; २१) आदि अनेकों प्रमाण मन्त्रों में भरे हुए हैं।

इसी प्रकार नारदपुराण उ० (४९/१९–२०;) और अग्नि पुराण (११२/६) के अनुसार काशी पूर्व-पश्चिम ढाई योजन

(दस कोस) लम्बी तथा दक्षिणोत्तर आधा योजन (दो कोस) चौड़ी होना और वरणा नदी से असी नदी तक, जो शुष्क है फैली हुई बतलाई गई है। इसके उत्तर में अयन तथा तिमिचण्डेश्वर एवं दक्षिण में शंकुकर्णं एवं ॐकारेश्वर स्थान कहा है और पुरातन शास्त्रानुसार इसके नाम काशी, वाराणसी, अविमुक्त, आनन्द-कानन, महाश्मशान, रुद्रावास, काशीका, तपःस्थली, मुक्तिभूमि (क्षेत्रपुरी) और शिवपुरी (त्रिपुरारी-राजनगरी) आदि बारह (१२) संख्या में कहे गये हैं।

यह नगरी पृथ्वी पर होते हुए भी पृथ्वी से सम्बद्ध नहीं मानी है (यह साधारण पृथ्वी नहीं, तीन लोक से न्यारी ही मानी गई है) जो अधःस्थित (नीची) होने पर भी स्वर्गादि लोकों से भी अधिक प्रतिष्ठित एवं उच्चतर है, जो जागतिक सीमाओं से आबद्ध होने पर भी सभी का बन्धन काटने वाली मोक्षदायिनी है, जो सर्वदा त्रिलोकपावनी भगवती भागीरथी के तट पर सुशोभित है तथा देवताओं से सुसेवित है, वह भगवान् त्रिपुरारि विश्वनाथ की यह राजनगरी सम्पूर्ण जगत् को नष्ट होने से बचाये।

(यह भावार्थ स्कन्दपुराण काशी खण्ड १/१ का है।)

अवन्तिका (उज्जैन) आदि सात मोक्षपुरियाँ कही गई हैं, परन्तु वे मनुष्य को अपने पास आने से कालान्तर में अपने प्रभाव से उस मनुष्य को काशी प्राप्ति कराकर ही मोक्ष प्रदान कराती हैं; किन्तु काशीपुरी ही एक ऐसी है कि जो मनुष्य के वहाँ जाने व वास करने से स्वयं ही साक्षात् मोक्ष प्रदान कराती है।

जो मनुष्य, मैं कब काशी जाऊँगा, कब विश्वनाथजी के दर्शन करूँगा, इस प्रकार सोचता व कहता है, उसे सर्वदा काशी-वास करने का फल मिलता है। जिसके हृदय में काशी सदा विराजमान है, उसको संसार-सर्प के विष से क्या भय हो सकता सकता है। जिस मनुष्य ने काशी-इन दो अक्षरों का अमृत कानों

से पान कर लिया, उसे फिर गर्भजनित व्यथा कथा नहीं सुननी पड़ती है।

जो मनुष्य दूर से भी काशी काशी सदा जपता रहता है, वह अन्यत्र रहकर भी मोक्षप्राप्त कर ही लेता है।

(यह सारांश स्कन्दपुराण काशीखण्ड के आधार पर है।)

काशी के विभिन्न क्षेत्रों में किये गये स्नान, जप, तप, अध्ययनादि की अनन्त महिमा है। काशी माहात्म्य के सम्बन्ध में अधिक जानने के इच्छुकों को स्कन्दपुराण (काशीखण्ड अध्याय १ से १०० तक), नारद पुराण (उ० भा० ४८ से ५३ व २९), अग्निपुराण (अ० ११२), शिवपुराण (शत रु०अ० २), पद्मपुराण (पूना आनन्दाश्रम सं० आदि ख० अध्याय ३२ से ३७, वेङ्कटेश्वर सं० स्वर्ग खण्ड ३२ से ३७ व उत्तर खण्ड अध्याय २३), भविष्य पुराण (अध्याय १३०) को देखना चाहिये। ये सभी काशी माहात्म्य से भरे हुए हैं।

काशी को बनारस या वाराणसी भी कहा जाता है। यह भगवान् शिव के त्रिशूल पर बसी हुई है और प्रलय में कभी इसका नाश नहीं होता है। वरणा और असी नाम की दोनों नदियों के बीच में बसी हुई होने से इसे वाराणसी कहा गया है। जहाँ देह त्याग करने से प्राणी मुक्त हो जाये, वह अविमुक्त क्षेत्र वही है। यहाँ देह त्याग के समय भगवान् शंकर मरणोन्मुख प्राणी को तारक मंत्र सुनाते हैं और उससे जीव को तत्त्वज्ञान हो जाता है। उसके सामने अपना ब्रह्मस्वरूप प्रकाशित हो जाता है। इस प्रकार जहाँ ब्रह्म प्रकाशित हो वह 'काशी'—यही काशी का अर्थ है।

काशी काञ्ची च मायाख्या त्वयोध्या द्वारवत्यपि ।
मथुरावन्तिका चैताः सप्तपुर्योऽत्र मोक्षदाः ॥

अयोध्या, मथुरा, माया (कनखल-हरिद्वार) काशी, काञ्ची, अवन्तिका (उज्जैन) तथा द्वारिका ये सात पुरियाँ मोक्ष देने वाली हैं।

किन्तु इनमें काशी ही मुख्य मानी गई है।

'काश्यां हि मरणान्मुक्तिः' काशी में कैसा भी प्राणी मरे वह मुक्त हो जाता है। यह शास्त्रों की घोषणा है और इस पर आस्था रखते हुए, सहस्रों वर्षों से देश के कोने कोने से लोग देहोत्सर्ग (देहत्याग) के लिये काशी आते रहते हैं। बहुत से लोग तो मरण समय तक के लिए काशी में ही जाकर निवास करते हैं। वे काशी से बाहर जाना छोड़ ही देते हैं। यदि जांच करके गणना की जावे तो वर्तमान समय में भी इसी प्रकार के विचार से वहाँ वास करने वालों की संख्या कई हजार मिल सकती है।

यह किसी एक प्रान्त एक सम्प्रदाय या एक समाज का नगर नहीं है। भारत के सभी प्रान्त के निवासियों के यहाँ मोहल्ले के मोहल्ले बसे हुये हैं। काश्मीर से कन्याकुमारी और आसाम व भूटान से कच्छ तक के लोग यहाँ इस प्रकार बसे हुए मिल सकते हैं। भगवान् विश्वनाथ की इस पुरी में सभी सम्प्रदाय के लोग रहते हैं, उनकी संस्थायें उपासना स्थान हैं।

यदि मनुष्य ने जीवन का सही उद्देश्य समझ लिया है तो उसे काशीवास ही कर लेना चाहिए। नहीं तो यात्रा कर काशी व विश्वनाथ के दर्शन पूजन कर कम से कम तीन रात्रि तो वास करना ही चाहिये। इस समय का मनुष्य सांसारिक, सामाजिक, अर्थ भावनाओं की बेड़ियों में जकड़ा पड़ा है, किसी प्रकार से भी इसको छोड़कर बाहर नहीं निकलना चाहता; किन्तु अन्तिम अवस्था बन मरणोन्मुख हो रहे हैं, और कुछ ही दिनों में मृत्यु के ग्रास में चले जावेंगे तो क्या यह सांसारिक भोग, समाजिक लाभ व अर्थ लाभ साथ जावेंगे। इनको यहाँ ही छोड़ना पड़ेगा। तब अपनी स्वय की इच्छा से कुछ समय पूर्व ही छोड़ कर काशीवास कर जीवन के अन्तिम उद्देश्य को पूर्ण करना ही चाहिए, जिससे अन्त मता सो मता की कहावत चरितार्थ कर जन्म सफल कर सकें।

शुभ, पुण्यप्रद कार्यों में भी सावधानी परमावश्यक है, शास्त्रों में कहा गया है--

यदन्यत्र कृतं पापं तीर्थे तद् याति लाघवम् ।
न तीर्थकृतमन्यत्र कर्हिचिदेवं व्यपोहति ॥

दूसरे स्थान पर किया हुआ पाप तीर्थ में क्षीण हो जाता है परन्तु तीर्थ में किया हुआ पाप अन्य स्थानों में कभी नष्ट नहीं होता।

इसी प्रकार से काशी का माहात्म्य कहते हुए यह भी कहा गया है कि मैं तो पाप करूँगा ही–ऐसी जिसकी बुद्धि है उसके लिये पृथ्वी बहुत बड़ी पड़ी हुई है। वह काशी (तीर्थ) से बाहर जाकर कहीं भी सुख से पाप कर सकता है। कामातुर होकर भी मनुष्य एक अपनी माता को तो बचाता ही है। ऐसे ही पापी मनुष्य को भी मोक्षार्थी होने पर एक काशी तीर्थ को तो बचाना ही चाहिए। दूसरों की निन्दा करना जिनका स्वभाव है और जो परस्त्री की इच्छा करता है, उसके लिए काशी में रहना उचित नहीं। कहाँ मोक्ष देने वाला काशीधाम (तीर्थ) और कहाँ ऐसा नारकीय मनुष्य जो सर्वदा प्रतिग्रह (दान) के द्वारा धन की इच्छा करता है और जो कपट जाल फैलाकर दूसरों का धन हरण करना चाहता है। उन मनुष्यों को काशी (तीर्थ) में नहीं रहना चाहिए। काशी में रहकर ऐसा कोई काम कभी भी नहीं करना चाहिये, जिससे दूसरे को पीड़ा हो और जिस किसी को ऐसा करना ही हो तो उस दुरात्मा को काशी में वास करके क्या लेना है।

जो अर्थार्थी या कामार्थी (काम भोग की इच्छा वाला) हो उसको इस मुक्तदायी (मुक्ति देने वाली) काशी क्षेत्र में नहीं रहना चाहिए। जो भगवान् शिव की निन्दा में लगे रहते हैं तथा वेद के कहे हुए के विपरीत आचरण करते हैं, उनको वाराणसी में नहीं रहना चाहिये। जिनके मन में औरों के प्रति द्रोह है, जो दूसरों से डाह करते हैं, दूसरों को कष्ट पहुँचाते हैं उनको काशी में कोई

सिद्धि नहीं मिलती। काशी में वास करने पर पाप नाश होते हैं। इसी प्रकार जो मनुष्य काशी में वास करता हुआ पाप कर्म करता है तो उसके पापों का भी अनन्त कोटि पाप फल मिलता है। अतः काशी में जाकर पापकर्मों से बहुत ही डरना चाहिए और भूल से सेभी कोई पाप न हो, यह पूर्ण सावधानी रखनी चाहिये।

ज्योतिष द्वारा धार्मिक वृत्ति लक्षण ज्ञान

इस जन्म के कर्तव्य, कर्म बुद्धि, सत्संग, विचार, संस्कारों के अनुसार तो पूजन, भजन, शिवभक्ति, देवाराधना, तीर्थयात्रा, मोक्ष प्राप्ति होती है, किन्तु पूर्वजन्म सचित पुण्य संस्कारों के आधार पर भी इस जन्म में ऐसे योग होना ज्योतिषशास्त्र द्वारा जन्म कुण्डलियों में देखे जा सकते हैं। ज्योतिष के होरा (जातक) शास्त्रों में विविध योगों के अनेक वर्णन हैं. अधिक देखने वालों को बृहज्जातक, मानसागरी, बृहत्पाराशर होराखण्डादि ग्रन्थों को देखना चाहिए। संक्षेप में कुछ एक योग दिये जाते हैं।

यत्प्रसूतौ नैवनस्थाः सौम्याः सौरिनिरक्षिताः।
तस्य तीर्थान्यनेकानि भवन्त्यत्र न संशयः ॥१

सौम्येऽष्टमस्थे शुभदृष्टियुक्ते धर्मेश्वरे वा शुभखेचरेन्द्रे ।
तीर्थे मृतिः स्याद्यदि योगयुग्मं, तीर्थे हि विष्णुस्मरणेन मुक्तिः ॥२

चेत् चित्रकोणभवने निजलये, देवतापतिगुर्नरो भवेत् ।
श्रीमदच्युतपदच्युतामृतस्नानदानकुशलो नलोपमः ॥३

यदा मीने माने गुरुकविमहीजैश्च मिलिते
शरीरान्ते मुक्तिः सुरपति गुरौ चन्द्रसहिते ।
जलर्क्षे मीनर्क्षे भवति हरिपद्यां जनिमतां
सदा चञ्चद्भक्तिर्दुरितदलिनी मुक्तिजननी ॥४

जिसके जन्म कुण्डली में अष्टम स्थान में शुभग्रह चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र स्थित हों और उन्हें शनैश्चर देखना हो तो उसको अनेक तीर्थों में स्नान पुण्यदान, धर्म भगवत् दर्शन का समय मिलता है। यदि अष्टमस्थ शुभग्रहों को शुभग्रह ही देखते हों तथा भाग्येश भी शुभ ग्रह हो तो उसकी मृत्यु भी तीर्थ स्थान में ही होती है एवं उक्त दोनों योगों के होने पर विष्णुस्मरणपूर्वक मुक्ति प्राप्त होती है। त्रिकोण ५-९ स्थान में धनु एवं मीन राशि हो और उनमें गुरु बैठे हों तो उसे पाप मोक्षदा, पुण्यसलिला, श्री गङ्गाजी में स्नान, दानादि पुण्यकर्म का सौभाग्य मिलता है ॥१-३॥

जिस कुण्डली में दशम स्थान में मीन राशि हो और उसमें गुरु, शुक्र, मङ्गल का योग हो तो उसकी मृत्यु तीर्थ स्थान में होती है और मुक्ति प्राप्त होती है अथवा चतुर्थ भाव में कोई जलचर राशि या मीन राशि हो और उसमें चन्द्रमा के साथ बृहस्पति भी बैठा हो तो उसे मुक्तिप्रदा श्री गङ्गाजी में भक्ति होती है एवं बार-बार गङ्गा स्नान दानादि का फल प्राप्त होता है।

अयोध्या, मथुरा, माया (हरिद्वार) काशी, काञ्ची, अवन्तिका (उज्जैन) द्वारकापुरी, ये सप्तपुरी मोक्षदायिनी कही गई हैं। इनमें प्राणी की मृत्यु होकर मोक्ष होने के योग इस प्रकार कहे हैं—

लग्नाद्यो द्वात्रिंशो द्रेष्काणो मरणकारणतया निर्दिष्टस्तदीयो
यो बलीयद्रिपुकेन्द्रस्थो भवति तदा तीर्थे मरणम् ॥१

न स्युर्नैर्याणका योगाः प्रोक्ता मृत्युदिकाणजाः।
बलिनः केन्द्रषष्ठाष्टद्यूने स्युर्मोक्षहेतवः ॥२

जन्म लग्न से २२वाँ अष्टम भाव में जिस द्रेष्काण का उदय हो, वही द्रेष्काण मरण का कारण होता है। उसका स्वामी बलवान् होकर केन्द्र (१, ४, ७, १०, ६, ८वें) स्थान में स्थित हो तो उस कुंडली वाले की इन उपर्युक्त सप्त पुरियों में मृत्यु होगी

और मोक्ष प्राप्त होगा किन्तु यदि मृत्यु के समय ये द्रेष्काण जनित मोक्ष के योग न हों और छठे-आठवें स्थानों में बली ग्रह बैठे हों तो भी मोक्ष प्राप्त होगा ॥१—२

जीवे मोक्षादिक्काणेशे सिन्धु वा मथुरापुरीम् ।
विपाशां प्राप्यमरणं निश्चितं याति मानवः ॥३
काशीं द्वारावतीं काञ्चीं गङ्गाद्वारवतीं तथा ।
गुरौ केन्द्रगते सोच्चे प्राप्य मृत्युं प्रयच्छति ॥४

यदि मोक्ष (अष्टमभाव) का द्रेष्काण गुरु हो तो सिन्धुनद, मथुरा, विपाशा (व्यासनदी), काशी, द्वारका, काञ्ची अथवा हरिद्वार में प्राणि की मृत्यु होती है। इसी प्रकार गुरु के उच्च होकर केन्द्रस्थ होने से भी तीर्थों में मृत्यु होती है ॥३—४

विविधतीर्थकरः सुकलेवरः सुरगुरौ नवमे सुखवान् गुणी ।
त्रिदशयज्ञपरः परमार्थवित् प्रचुरकीर्तिकरः कुलवर्द्धनः ॥४

भाग्यभवन ९वें स्थान में गुरु (स्वक्षेत्र उच्चादिराशि में स्थित) हो तो मनुष्य विविध तीर्थों का सेवन करने वाला, सुन्दर, सुखी, गुणवान्, यशस्वी, देवयज्ञादि परायण और परमार्थ तत्त्व का ज्ञाता तथा अपने कुल की वृद्धि करने वाला होता है।

ज्योतिषशास्त्रानुसार जन्मकुण्डली के पञ्चम तथा नवम भाव भक्ति व धर्म विषय का ज्ञान कराने वाले हैं।

किसी कुण्डली में पाँचवे भाव में सूर्य हो या पाँचवें भाव को सूर्य देखता हो, वह भगवान् सूर्य और शिव का भक्त होता है।

सुते सूर्ययुतदृष्टे सूर्यशंकरभक्तः (जातक तत्त्व ११/२७)

यदि जातक के पञ्चम भाव में बुध स्थित हो या पञ्चम भाव को बुध देखता हो तो वह सभी देवताओं का भक्त होता है—

सुतज्ञ सम्बन्धे सर्वदेवभक्तः (जातक तत्त्व ११३६)

राहू यदि जातक के पञ्चम भाव में स्थित हो या पञ्चम भाव को देखता हो, तो वह यक्षिणी, प्रेतनी, भूतनी आदि की भक्ति करने वाला होता है—

परपीडकयक्षिण्योः प्रेताशन्याः स सेवकः। (ज्योतिष तत्त्व ३१/५१)

यदि पञ्चम स्थान में पुरुष ग्रह हो या पञ्चम भाव पर पुरुष ग्रह की दृष्टि हो तो जातक पुरुष देवता का भक्त होता है।

सूर्य पंचम में हो या सूर्य की पञ्चम भाव पर दृष्टि हो तो जातक सूर्य की उपासना करता है। ऐसा ही योग चन्द्रमा का होता है तो जातक पार्वती का उपासक होगा। मङ्गल का योग होने से कुमार कार्तिकेय की उपासना करने वाला होता है। इस प्रकार से बुध का योग होने पर विष्णु उपासक, गुरु का योग होने से शंकर उपासक होता है और शनि राहू केतु पञ्चम में हो या इनमें से किसी एक की भी पूर्ण दृष्टि हो तो अन्य देवों में किसी देव का उपासक होता है।

यदि किसी जातक के नवम भाव में बुध हो तो जातक पक्का (दृढ़) भगवत् प्रेमी होता है। यदि बुध के साथ अन्य शुभ ग्रह भी हों तो अनन्य भक्त होता है।

किसी जातक के नवम भाग में चन्द्रमा मङ्गल एवं बृहस्पति के सहावस्थान होने से भी जातक महान् धर्मात्मा, यज्ञ अनुष्ठानों का करने वाला होता है—

देवाराधनतत्परो नवमगैश्चन्द्रारवागीश्वरैः।

जातक के नवम भाव में शुक्र स्थित हो तो जातक देवाराधना में तत्पर होता है और अनेक धार्मिक कार्यों में समय अथवा कठिन परिश्रम द्वारा कमाया हुआ धन प्रसन्नता से लगाता है।

जातक के नवम भाव में गुरु हो, नवांशाधिपति भी नवम भाव में ही हो और शुभ ग्रहों की दृष्टि भी हो तो जातक परम गुरुभक्त होता है।

किसी जातक के नवम भाव में पापग्रह हों तो धर्मभक्ति-श्रद्धारहित होता है यदि पापग्रहों के साथ राहू भी स्थित हो तो वह जातक ईश्वर, गुरु, माता-पिता में किसी भी प्रकार की श्रद्धा व विश्वास नहीं रखता है।

जातक के नवम भाव में केवल केतु ही स्थित हो और उस पर किसी शुभ ग्रह की दृष्टि भी न हो और पञ्चम भाव में कोई शुभ ग्रह भी न हो तो वह जातक म्लेच्छ धर्म स्वीकार करता है तथा हिंसा में अधिक रुचि रखने वाला होता है।

पञ्चम तथा नवम भाव में शुभ ग्रह स्थित हों और दोनों भावों के अधिपतियों की दृष्टि भी हो, परस्पर उनके सम्बन्ध भी सुदृढ़ हो तो ऐसे जातक निश्चित रूप से महान् साधक ईश्वर के अनन्य भक्त होते हैं।

पाठकों को साधारण जानकारी हेतु यह दर्शाने का प्रयासमात्र है। अनेक जातकों की अनेक ही कुण्डली व ग्रह स्थिति होती हैं, उनको देखकर शास्त्राधार पर ही निर्णय किया जा सकता है और इसी प्रकार से अनुभवी विद्वान् सामुद्रिक शास्त्र (हस्तरेखा विज्ञान) द्वारा भी फल ज्ञात करते हैं, जैसा कि सामुद्रिकशास्त्रों में लिखा मिलता है—

अथातः संप्रवक्ष्यामि हस्तरेखाविचारणम् ।
दक्षिणे पुरुषं ज्ञेयं वामे वामा करं शुभम् ॥१
शिवोक्तं तत्र सामुद्रं हस्तरेखा शुभाशुभम् ।
येन विज्ञान मात्रेण पुरुषो न विशोचति ॥२
यस्यमीनतमारेखा कर्मसिद्धिश्च जायते ।
धनाढ्यस्तु सविज्ञेयो बहुपुत्रो न संशयः ॥३

कहाँ तक लिखा जावे कि हमारे ऋषि महर्षियों ने अपने अनेक अनुभव तथा अकाट्य परिश्रम कर, मनुष्य मात्र के ज्ञान हेतु

इसी प्रकार पादरेखा (पगथलीरेखा) ज्ञान, मस्तक रेखाज्ञान आदि अनेक ग्रन्थों की भी रचनायें की हैं। जो समय के कुप्रभाव तथा संरक्षण के अभाव में प्रायः लुप्त होते जा रहे हैं।

* * *

सोपान

(६)

परब्रह्म परमात्मा के स्वरूप का निरूपण

एक समय श्री नारदजी ने भगवान् महादेवजी से प्रश्न किया कि हे प्रभो ! जगद्गुरो ! आपकी कृपा से मैंने सब कुछ सुन लिया। अब आप ब्रह्म के स्वरूप का वर्णन, ब्रह्मतत्त्व का निरूपण कीजिये।

प्रभो ! सर्वेश्वर ! ब्रह्म साकार है या निराकार है। क्या इसका कुछ विशेषण भी है ? अथवा वह विशेषणों से रहित (निर्विशेष) ही है ? ब्रह्म का नेत्रों से दर्शन हो सकता है या नहीं ? वह समस्त देहधारियों में है या नहीं ? उसका क्या लक्षण बतलाया गया है ? वेदों में उसका किस प्रकार निरूपण किया गया है ? क्या प्रकृति ब्रह्म से अतिरिक्त है या ब्रह्मस्वरूपिणी ही है ? श्रुतियों में प्रकृति का सारभूत लक्षण क्या बतलाया गया है ? ब्रह्म और प्रकृति इन दोनों में किसकी सृष्टि में प्रधानता है ? दोनों में कौन श्रेष्ठ है ? हे सर्वज्ञ ! इन सब बातों पर मन से विचार करके जो सिद्धान्त हो उसे अवश्य मुझे बतलाए।

श्री नारदजी की यह बात सुनकर भगवान् पञ्चमुख महादेव ठठा कर हँस पड़े और उन्होंने परब्रह्म-तत्त्व का निरूपण प्रारम्भ किया।

श्री महादेवजी ने कहा—वत्स नारद तुमने जो भी पूछा है, वह उत्तम गूढ विषय है। वेदों और पुराणों में भी वह उत्तम एवं गूढ ज्ञान परम दुर्लभ है। ब्रह्मन् ! मैं, ब्रह्मा, विष्णु, शेषनाग, धर्म और महाविराट्-इन सबने तथा श्रुतियों ने भी सब बातों का निरूपण किया है। वेदवेत्ताओं में श्रेष्ठ नारद ! जो सविशेष तथा प्रत्यक्ष दृश्य-तत्त्व है। उसका हम लोगों ने वेद में निरूपण किया है। प्राचीन काल की बात है। एक समय में ब्रह्माजी, धर्म व श्री हरि उपस्थित थे, तब यही प्रश्न सामने आया था। उस समय जो भी इसका उत्तर हुआ उसे सुनो। मैं तुम्हें बताता हूँ। वह समस्त ज्ञान तत्त्वों का सार तत्त्व है, अज्ञानान्धकार से अन्वे हुए लोगों के लिये नेत्र रूप है, तथा दुविधा अथवा द्वैत नामक भ्रमरूपी अन्धकार का नाश करने के लिये सर्वोत्तम प्रदीप के समान है। सनातन परब्रह्म परमात्मा स्वरूप है। वह देहधारियों के कर्मों के साक्षी रूप में समस्त शरीरों में विराजमान है। प्रत्येक शरीर में पाँचों प्राणों के रूप में साक्षात् भगवान् विष्णु विद्यमान हैं। मन के रूप में प्रजापति ब्रह्मा विराज रहे हैं। सम्पूर्ण ज्ञान (बुद्धि) के रूप में स्वयं मैं हूँ और शक्ति के रूप में ईश्वरीय प्रकृति है। हम सब के सब परब्रह्म परमात्मा के अधीन हैं। शरीर में उसके स्थित होने पर ही स्थित होते हैं और उसके चले जाने (सम्बन्ध हटा लेने) पर हम भी चले जाते हैं। जैसे राजा के सेवक सदा राजा का अनुकरण करते हैं, उसी प्रकार हम लोग उस परमात्मा के अनुगामी बने रहते हैं। जीव परमात्मा का प्रतिबिम्ब है। वही कर्मों के फल का उपभोग करता है। जैसे जल से भरे हुए घड़ों में पृथक्-पृथक् सूर्य और चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब होता है तथा उन घड़ों के फूट जाने पर वह प्रतिबिम्ब फिर सूर्य और चंद्र में लीन हो जाता है, उसी प्रकार सृष्टिकाल में परमात्मा के प्रतिबिम्ब स्वरूप जीव की उपलब्धि होती है तथा सृष्टिमयी उपाधि के नष्ट हो जाने पर वह प्रतिबिम्ब-स्वरूप जीव पुनः सर्वव्यापी परमात्मा में लीन हो जाता है।

वत्स ! संसार का संहार हो जाने पर एक मात्र परब्रह्म परमात्मा ही शेष रहता है। हम तथा यह चराचर जगत् उसी में लीन हो जाते हैं। वह ब्रह्म मण्डलाकार ज्योतिः पुञ्ज स्वरूप है। ग्रीष्म ऋतु के मध्याह्न काल में प्रकट होने वाले कोटि-कोटि सूर्यों के समान उसका प्रकाश है। वह आकाश के समान विस्तृत व्यापक तथा अविनाशी है। योगीजनों को ही वह चन्द्रमण्डल के समान सुख पूर्वक दिखाई देता है। योगी लोग उसे सनातन ब्रह्म कहते हैं और रात दिन उस सर्वमङ्गलमय सत्य स्वरूप परमात्मा का ध्यान करते रहते हैं। वह परमात्मा निरीह, निराकार तथा सब का ईश्वर है। उसका स्वरूप उसकी इच्छा के अनुसार है। वह स्वतन्त्र तथा समस्त कारणों का भी कारण है। परमानन्द स्वरूप तथा परमानंद की प्राप्ति का हेतु है। सब से उत्कृष्ट, प्रधान पुरुष (पुरुषोत्तम) प्राकृत गुणों से रहित तथा प्रकृति से परे है। प्रलय के समय उसी में सर्व बीज स्वरूपिणी प्रकृति लीन होती है। ठीक उसी तरह जैसे अग्नि में उसकी शक्ति, सूर्य में प्रभा, दुग्ध में धवलता और जल में शीतलता लीन रहती हैं। मुने ! जैसे आकाश में शब्द और पृथ्वी में गन्ध सदा विद्यमान है, उसी प्रकार निर्गुण प्रकृति सर्वदा स्थित है। जब ब्रह्म सृष्टि के लिए उन्मुख होता है तब अपने अंश से 'पुरुष' कहलाता है। वत्स ! वही गुणों विषयों से सम्बन्ध स्थापित करने पर प्राकृत एवं विषयी कहा गया है। त्रिगुणा प्रकृति उस परमात्मा में ही उत्कृष्ट छायारूपिणी मानी गई है। मुने ! जैसे कुम्हार मिट्टी से घड़ा बनाने में सदा ही समर्थ होता है; उसी प्रकार वह ब्रह्म प्रकृति द्वारा सृष्टि का निर्माण करने में नित्य समर्थ है। जैसे सुनार स्वर्ण से कुण्डल बनाने की शक्ति रखता है, उसी तरह परमेश्वर उपादानभूता प्रकृति के द्वारा सदा सृष्टि करने में समर्थ है। जैसे कुम्हार मिट्टी का निर्माण नहीं करता, मिट्टी नित्य एवं सनातन है तथा सुनार स्वर्ण की सृष्टि नहीं करता स्वर्ण उसके लिये नित्य वस्तु ही है, उसी प्रकार वह परब्रह्म परमात्मा नित्य है और प्रकृति भी नित्य मानी गई

है। इसलिये कुछ लोग सृष्टि में उन दोनों की समानता से प्रधानता बतलाते हैं। कुम्हार और सुनार स्वयं मिट्टी और स्वर्ण पैदा करके लाने में समर्थ नहीं हैं तथा मिट्टी और स्वर्ण भी कुम्हार और सुनार को ले आने की शक्ति नहीं रखते। अतः मिट्टी और कुम्हार की घट में तथा स्वर्ण और सुनार की कुण्डल में समान रूप से प्रधानता है।

नारद! इस विवेचन से ब्रह्म प्रकृति से परे ही सिद्ध होता है। यही बात दृष्टि में रखकर कुछ लोग प्रकृति और ब्रह्म दोनों की ही निश्चित रूप से नित्यता का प्रतिपादन करते हैं। कुछ विद्वानों का कथन है कि ब्रह्म स्वयं ही प्रकृति और पुरुष रूप में प्रकट है। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि प्रकृति ब्रह्म से अतिरिक्त (भिन्न) है। वह ब्रह्म परमधाम स्वरूप कारणों का भी कारण है ब्रह्मन्! उस ब्रह्म का लक्षण श्रुतियों में कुछ इस प्रकार कहा गया है—ब्रह्म सब की आत्मा है। वह सब से निर्लिप्त और सब का साक्षी है। सर्वत्र व्यापक और सब का आदि कारण है। सर्व बीज स्वरूपिणी प्रकृति उस ब्रह्म की शक्ति है। जिससे वह ब्रह्म शक्तिमान है। अतः शक्ति और शक्तिमान् दोनों अभिन्न हैं। इन दोनों के एक साथ मिलने पर दृश्यरूप एक शरीर धारी मनुष्य रूप, पशु पक्षी, कीट पतंगादि कोई अन्य जड़ चेतन स्वरूप आकृति जो प्रत्येक अन्य प्राणियों की दृष्टि में आती है, प्रकट होती है। वह सब ही परब्रह्म परमात्मा के स्वरूप हैं। इससे भिन्न कोई भी अणुमात्र भी जीव या पदार्थ परब्रह्म के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। जिसने इस विषय को जान लिया, मनन कर लिया वह प्राणी कभी भी इस संसार की किसी माया मोह में पड़ कर अपने जन्म को निरर्थक नहीं जाने देता है। इसका ध्यान रखकर अपना जीवन समय मेरी ही आराधना, पूजा, ध्यान, योग, तप में लगा देता है और अन्त में मुझमें ही लीन होता है। मुक्ति प्राप्त करता है; और फिर कभी इस संसार रूपी माया में नहीं पड़ता बार बार जन्म मरण

होने तथा पाप पुण्य सभी से छुटकारा पा लेता है। हे नारद ! यह महान् गूढ़ रहस्य मैंने तुम्हें कह सुनाया, अब और तुम्हारी क्या जानने की इच्छा है !

नारद जी ने यह सुनकर प्रश्न किया कि हे प्रभु ! यह विषय आपने मुझे बहुत उत्तम प्रकार से बतलाया; किन्तु यह विषय तो ब्रह्म-प्रकृति रहस्य के ज्ञानी, योगी, शास्त्रज्ञ, विद्वानों के जानने समझने योग्य है। आगे आने वाले कलियुग में जो प्राणी होंगे वे अपने किये पापों के बोझ व मोह माया के आवरण (परदे) से ढके हुए होंगे। उनकी इतनी बुद्धि व ज्ञान होना संभव नहीं होगा, उनकी तृष्णाएँ इतनी बढ़ी हुई होंगी कि किसी प्रकार से भी उनकी तृप्ति नहीं होगी। सांसारिक माया, प्रपञ्च, छल-छिद्रों में लगे रहकर अपनी इच्छा (तृष्णा) पूर्ति में लगे रहकर जीवन समाप्त कर लेंगे और अपनी तृप्ति फिर भी न कर सकेंगे। अपनी तृष्णा (इच्छा) पूर्ति में किये गये पापों को संचित कर अन्य पापों का बोझा बढ़ा लेंगे उन्हीं पापों के अनुकूल फिर पुनर्जन्म में पड़कर उन पापों के अनुसार ही फल प्राप्त करेंगे। अतः ऐसे अज्ञानी मनुष्यों को जो ऐसी बातें समझने की बुद्धि नहीं रखते उनके उद्धार का कोई उपाय बतलाने की कृपा करें। जिसके अनुकूल आचरण कर पापों से छुटकारा पा सकें। आपके ब्रह्ममय सायुज्य को प्राप्त हो तथा जन्म मरण रूपी बन्धन से छुटकारा पाकर परब्रह्म को देख सकें, मुक्तिप्राप्त कर सकें। यह सुनकर भगवान् शिवशंकर कहने लगे कि हे नारद ! तुमने कलियुगी मनुष्यों के लाभ हेतु बड़ा सुन्दर प्रश्न किया है। ऐसे मनुष्यों के लाभ हेतु यह भी तुम्हें साधारण सरल उपाय बतलाता हूँ—

जो मनुष्य अपने शुद्ध कर्तव्यों में लगा हुआ रहता हो और मेरे शिवलिङ्ग की पूजा जिस प्रकार वेद शास्त्रों में वर्णन की हुई है, करता रहे तो वह मनुष्य सभी प्रकार के पापों से छुटकारा पाकर

इस संसार में अपनी शुभकामनाओं को प्राप्ति करता हुआ सुखी जीवन निर्वाह करेगा और अन्त में मेरे नित्य कैलास में पहुँचकर सुखोपभोग प्राप्त करेगा। मेरे ही सायुज्य ब्रह्म को प्राप्त होकर मेरे में ही लीन होकर मुक्ति प्राप्त करेगा। हे नारद! तुमने जो प्रश्न किया इसका समाधान भी बहुत ही संक्षिप्त, सरल ढंग से कह सुनाया और अब क्या जानने की तुम्हारी इच्छा है?

यह सुनकर नारदजी फिर भगवान् शंकर के सामने निवेदन करने लगे हे भगवन्! आपने कलियुगी मनुष्यों पर दया करके उनके उद्धार हेतु बहुत सुन्दर, सरल उपाय बतलाया किन्तु कलियुगी मनुष्य बहुत तृष्णाओं से भरे उत्पन्न होंगे, उनकी इच्छाएं कभी पूर्ण नहीं होंगी। इसलिए आपके नित्य कैलास का वैभव और आनन्द भोगने योग्य सुखद वर्णन अपने मुख से और कहने की कृपा करें जिससे उस सुखद अनेक प्रकार के भोग आनन्द सुख-साधनों का वर्णन सुनकर मनुष्य इहलौकिक, सांसारिक सुखों की परवाह न करके, आपके पूजन आराधनादि में तन, मन, धन, समय लगावें और आपके कहे हुए सरल रास्ते पर चलकर नित्य कैलास के सुखोपभोग प्राप्त कर सकें आपके सायुज्य को प्राप्त कर आपमें ही लीन हों और और मुक्ति प्राप्त कर सकें।

यह सुनकर भगवान् महादेवजी कहने लगे हे नारद! वास्तव में कलियुगी मनुष्य तृष्णाओं से भरे हुए होंगे। उनको उनकी इच्छित, सुखद कामनाओं की पूर्ति के लोभ में ही यह कार्य करना सरल तथा मन लगाने योग्य हो सकता है। मैं तुमको अब मेरे उस महान् सुखदायक जहाँ तनिक भी दुःख नहीं है, नित्य कैलास का संक्षिप्त वर्णन सुनाता हूँ।

हे नारद! मेरा वह दिव्य लोक कैलाश बड़ा ही रमणीक सभी प्रकार की सुख सुविधाओं से निरन्तर भरा पूरा रहता है, वहाँ कभी भी किसी प्रकार की कोई कमी नहीं होती है। मुझे

वह कैलास अत्यधिक प्रिय है, जो मेरी कृपा द्वारा वहाँ पहुँच जाता है, वह मेरे समान हो अनेक सुखोपभोग प्राप्त कर आनन्द में मग्न रहता है। उसको किसी प्रकार की इच्छा तृष्णा बाकी नहीं रहती है। वह मेरा नित्य कैलास पर्वत बहुत रमणीक और अनेक सुख समृद्धियों से अटूट भरा हुआ है, उस कैलास के शिखरमणि रत्नों के हैं। इन सुन्दर शिखरों पर लता गुल्म फैले हुए हैं। कैलास के कल्प वृक्षों का वर्णन ही क्या किया जाये, जबकि पर्वतों पर और सुविस्तृत वनों में मन्दार, पारिजात, पुन्नग, चम्पा, शाल, ताड़, कचनार, असन, अर्जुन, आम, कदम्ब, गुलाब, अशोक, मोलसरी, कुन्द, कुरवक, कटहल, गूलर, पीपल, पाकर, बड़, गुगल, भोजवृक्ष, रुद्राक्ष, बिल्व, तुलसी और केले आदि आदि अनेक प्रकार के फलों एवं सुगन्धित पुष्पों के असंख्य वृक्ष और पौधे सुहावने लगते हैं और उनका सौंदर्य देखकर आश्चर्य चकित हो जाना पड़ता है। इलायची, मालती और रजनीगन्धा की मनोहर लताएँ तथा कुब्जक, मोगरा और माधवी की फैली हुई बेलें वहाँ के अनुपम सौंदर्य की वृद्धि करती रहती हैं। वहाँ आमड़ा, पियाल, महुआ और लिसोड़ा आदि अनेक प्रकार के वृक्षों तथा पोले और ठोस बाँस के विडों से फैला हुआ विशाल वन बड़ा ही सुन्दर लगता है। वहाँ महान् सुहावनी गन्ध युक्त वायु मंद मंद बहती रहती है। मयूर आदि अनेक पक्षीगण नृत्य करते हुए मग्न रहते हैं और कोयल की कूक तथा विभिन्न जाति के पक्षियों का कलरव मन को मोह लेता है। उन वनों में जंगली हाथी, हरिन, वानर, सुअर, सिंह, व्याघ्र, सेही, नीलगाय, शरभ, शार्दूल, कृष्णामृग, भैंसें, एकपद, अश्वमुख, भेड़िये, कस्तूरी मृग आदि वन्य पशु, स्वच्छन्द सुखपूर्वक विचरण करते हैं। सरोवरों में अनेक प्रकार के कुमद तथा विभिन्न जातियों के सुगन्धित प्रफुल्ल कमल नेत्रों को सुख प्रदान करते हैं। उन पर अनेक प्रकार के भ्रमर गुञ्जार करते रहते हैं। वनों व सरोवरों में उनके तट पर चारों ओर केले

के वृक्षों की पक्तियाँ बड़ी सुन्दर लगती हैं। वह नन्दा व अलकनन्दा देव सरिता से घिरा है। उनका जल अत्यन्त मधुर निर्मल व स्वादिष्ट है। इन सरोवरों में आदि शक्ति सती के स्नान करने से उनकी पवित्रता और बढ़ गई है तथा उनका जल महान आनन्ददायक पुण्यप्रद शरीर को अत्यन्त सुख देने वाला और सुगन्धित हो गया है। उसके आगे श्रेष्ठ बुद्धि सम्पन्न वृषभ स्थित है, जो साक्षात् धर्म है। जिनके सत्य आदि चार पैर हैं। क्षमा सींग और शम उसके कान हैं। वेदध्वनि आस्तिकता रूप नेत्र हैं। उसके आगे दिन रात और जन्म-मृत्यु का सर्वथा अभाव है। उसके अनन्तर कारण ब्रह्म के चौदह लोक फिर कारण-विष्णु के चौदह लोक हैं। उसके आगे कारण-रुद्र के अट्ठाईस लोक हैं। उसके बाद कारणेश के छप्पन लोक हैं, फिर मुझ शिव से सम्मत ब्रह्मचर्य लोक है, यही नित्य कैलाश है।

इस मेरे भूत भावन शंकर के कैलाश में सभी प्राणी सर्वत्र सानन्द विचरण करते हैं। यहाँ सर्व प्रकार के सुखदायक आनन्दवर्द्धक ऊँचे से ऊँचे शिखर अटारियों से सुसज्जित अनेक रंग-बिरंगे व कला पूर्ण चित्रों से सुसज्जित अनेक भवन हैं। वहाँ पहुंच जाने वाले उनमें अनेक प्रकार के सुस्वादु युक्त खाने-पीने, चबाने के, चाटने के पदार्थ हर समय गर्म-ठण्डे जैसे भी प्रयुक्त होते हैं, तैयार रहते हैं। जो वहाँ रहने वाले हैं उनकी इच्छा के अनुसार समय पर प्राप्त हो जाते हैं और इसी प्रकार सभी दन्तधावन, स्नान व शृंगार सामग्री अनेक प्रकार के अनेक रंग वाले चमत्कृत सुन्दरता व कलापूर्ण ढंग से निर्मित गर्म व ठण्डे हर समय तैयार रहते हैं इच्छानुसार धारण करने के समय पर उपस्थित किये जाने की सुव्यवस्था है। इसी प्रकार विभिन्न सुन्दरतापूर्ण आभूषण अलङ्कारों के अनेक सन्दूकचे सामने प्रस्तुत हो जाते हैं और अनेक प्रकार के सिहासन व शय्या लगी हुई हैं, इच्छानुकूल अनेक प्रकार के गद्दे-तकिये, मनसद आदि लगे हुए हैं जो अनुपम

आनन्द और सुख प्रदान करते हैं। मनोऽनुकूल प्रकार से प्रयुक्त किये जा सकते हैं। वहाँ किसी को भी किसी प्रकार का कोई भय नहीं होता है। सब एक दूसरे के आत्मीय एवं प्राणप्रिय होकर रहते हैं। वहाँ न अधिक सर्दी होती है और न अधिक गर्मी। सांसारिक किसी भी प्रकार का दुःख अनुभव व दृष्टि में नहीं होता है। न किसी प्रकार की स्पर्धा या अभिलाषा होती है। दुःख व शोक की छाया भी नहीं है। अनेक प्रकार के बाग, बगीचे, नृत्य वाद्य मनोरंजन के सभी साधन हैं। जो समय समय पर स्वयं इच्छानुकूल प्रस्तुत होते रहते हैं और सभी प्रकार क आनन्द में निमग्न रहते हुए परमानन्द में लगे रहते हैं। मेरे इस नित्य कैलास पर मेरे परम भक्त सिद्ध देवगण तथा देवता समान प्राणी ही निवास करते हैं। वहाँ के आनन्द की कोई सीमा नहीं है।

वहाँ अत्यन्त सुन्दर विशाल वटवृक्ष है। वह सौ योजन ऊँचा है; और उसकी शाखाएँ पिचहत्तर योजन तक प्रसारित हैं। वहाँ सघन शीतल छाया सर्वदा बनी रहती हैं। जिसके कारण वहाँ कभी किसी को कोई कष्ट नहीं हो सकता है। उस वृक्ष में पक्षियों के नीड़ (घोसले) नहीं हैं। वहाँ पञ्चावरण मुक्त ज्ञान कैलास में पाँच मण्डप वाला, पञ्च ब्रह्मकला सम्पन्न आद्या शक्ति सहित आदि लिङ्ग हैं। यही मुझ परमात्मा शिव का शिवालय कहलाता है वहाँ सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोभाव तथा अनुग्रह-इन पाँचों में प्रवीण पराशक्ति से युक्त सच्चिदानन्द विग्रह ध्यानधर्मा, सदानुग्रह तत्पर, समाध्यासन, समाधीन, स्वात्माराम भगवान् शिव रूप से मैं विराजमान रहता हूं। वहाँ उस स्थान पर कर्पूर गौरवर्णरूप में अनेकों सौन्दर्ययुक्त जिसकी सीमा ही नहीं ऐसे प्रकार से रहता हूँ। त्रिनयनरूप, मस्तक पर जटा एवं पुण्यमयी भागीरथी की शोभा अनिर्वचनीय दिखाई देती है। सुधांशु वहाँ मुस्कराता है और विषधर सर्प मेरे अङ्गों पर स्वच्छन्द विचरण करते रहते हैं। ऐसे कल्याणमय भगवान् स्वरूप मुझ शशाङ्कशेखर के दर्शन से भक्त

आनन्दमग्न होते रहते हैं। वहाँ नन्दीस्थल के पीछे मुझ श्री चन्द्रशेखर का अमित वैभव है। वहां नन्दीश्वर पञ्चाक्षर मंत्र (ॐ नमः शिवाय) की उपासना करते रहते हैं। वहाँ सर्वत्र अखण्ड आनन्द और सुख तथा शान्ति का साम्राज्य फैला रहता है।

हे नारद! इसी प्रकार इस शिव लोक से थोड़ी थोड़ी ही दूरी पर भगवान् विष्णु का लोक, आदि सृष्टि रचयिता श्री ब्रह्मा जी का लोक तथा आद्याशक्ति दुर्गा का लोक है। ये सभी समान वैभव व सुख समृद्धि साधनों से संयुक्त हैं। इनमें कोई भी अन्तर नहीं है। नित्य कैलास के बीच में मैं अधिष्ठित रहता हूँ। इसी प्रकार वैकुण्ठ में विष्णु, ब्रह्मलोक में ब्रह्मा तथा भगवती लोक में भगवती दुर्गा अधिष्ठित है। केवल इतना ही अन्तर है कि मेरे इस नित्य कैलास में मेरे दर्शन पूजन से वहाँ के निवासी मेरे पूजन साधन सुखों में निमग्न रहते हैं। उनके लोकों में उनके पूजक, उनकी साधना में सुखों में निमग्न रहते हैं। जो जीवात्मा जिस किसी की सेवा पूजा अर्चना द्वारा जिसकी कृपा प्राप्त कर लेता है, वह उसी के दिव्य धाम में पहुँचकर उसी का सायुज्य प्राप्त कर, उसी प्रकार का आनन्द प्राप्त कर, उसी के द्वारा मुक्ति प्राप्त कर उसी में लीन होता है। हे नारद जी, जो प्रश्न आपने किया उसका समाधान मैंने इस प्रकार कह दिया अब और क्या जानने को इच्छा है।

यह सुनकर नारदजी कहने लगे हे देवाधिदेव महादेव! आपके कहे हुए इस वर्णन को सुनकर मेरे मन में एक शंका उत्पन्न हुई है कि आपने अपने नित्य कैलास का वर्णन तो किया परन्तु उसके साथ ही आपने वैकुण्ठ लोक, ब्रह्मलोक व भगवती दुर्गा के लोकों का भी वर्णन सुनाया इससे चित्त भ्रमित हो गया कि ये सभी समान हैं तो फिर किसकी पूजा अर्चना वन्दना की जावे, अब तक तो मैं एक आपको ही सबसे बड़ा समझता था। अब एक आप के स्थान पर आप सहित चार महान हो गये, यह सुनकर मैं भ्रम में पड़ गया हूं आप चारों में बड़ा कौन व छोटा कौन है?

यह सुनकर भगवान् भोलेनाथ कहने लगे, हे नारदजी सुनो ! हम चारों एक ही हैं। हम चारों में कोई भी अन्तर नहीं है। हम चारों ही ब्रह्म ईश्वर हैं। चारों शक्ति में एक समान हैं। यह विश्व-ब्रह्माण्ड की रचना हम सभी ने की है। इस विश्व ब्रह्माण्ड का कार्य निरन्तर चलता रहे. इसमें कोई व्यवधान न हो सके। इस प्रकार समझिये कि जैसे कोई मालिक कोई उद्योग स्थापित करे और उसके प्रबन्ध हेतु चार बड़े ओफीसर समान अधिकार से नियुक्त कर उसका प्रबन्ध चलाये. जिससे उसका प्रबन्ध सुचारु रूप से चले। ब्रह्माजी का कार्य सृष्टि निर्माण है, श्री विष्णु का कार्य हर प्रकार से उसे वृद्धि करना है, मुझ शिव का कार्य उसकी देखरेख करना तथा समय-समय पर न्यूनाधिक करना, कूड़ा कचरा (दोषयुक्त पदार्थों का सचय) हो जाने पर उसे ठिकाने लगाना याने लय कर देना है। महामाया शक्ति भगवती का कार्य हर प्रकार की इच्छा व आवश्यकताओं से उत्पन्न ज्ञान महसूस करना (ध्यान में रखना) और फिर उसकी पूर्ति हेतु अपनी माया, बुद्धि, बल, परिश्रम, ज्ञान, शक्ति द्वारा उसकी पूर्ति करना है।

इस प्रकार के चारों प्रबन्धकों द्वारा इस सृष्टि क्रम का विस्तार, उन्नति. अवनति. तथा लय आदि होते हैं और उसी प्रकार के प्रबन्धकों द्वारा यह सृष्टि क्रम निरन्तर चलता रहता है।

इस माया मोहधारी हमारी रचना को कोई ही, जो इन चारों में किसी एक की कृपा प्राप्त कर लेता है, जान पाता है। बाकी सभी भ्रमित रहते हैं। हम चारों को ही कई बार इस भगवती माया से भ्रमित हो जाना पड़ता है, ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाने पर हम चारों में से कोई एक उस भ्रमित शक्ति को चेतना या इस प्रकार का ज्ञान रास्ता सुझाता है। तब वह सही रास्ते (ज्ञान) पर आ जाता है।

इस प्रकार हम चारों के अनेक बार चरित्र व अवतार रूप में या दृश्य रूप में प्रादुर्भाव होते रहते हैं, जिनको लोग जानकर

अपना आत्मसमर्पण कर, हम चारों में से किसी एक की भक्ति, पूजा, आराधना द्वारा अपना जीवन सफल कर हमारे सायुज्य को प्राप्त कर मुक्ति के भागी होकर हमारे लोकों को प्राप्त होते हैं।

हे नारद जी! यह साधना, पूजा, आराधना करना तों प्राणियों की आस्था पर है कि हम चारों में से किसकी पूजा की जावे, परन्तु विधान व पूजा पद्धति आदि प्रकार सभी के भिन्न-भिन्न रूपों में वेद शास्त्रों में निर्णय किये हुए हैं। अब आप एक बात अधिक ध्यान से सुन लीजिए--भगवान् विष्णु व ब्रह्मा तथा भगवती शक्ति की पूजा अर्चना साधना विधियाँ कष्टसाध्य व बृहत्‌रूप की हैं। मेरी पूजा साधना बहुत छोटी और प्रत्येक प्राणी के द्वारा किये जाने योग्य हैं। उसके थोड़े (स्वल्प) प्रकार से और थोड़े ही दिनों में करने पर ही मुझको उसकी कठिनताओं का अनुभव होने लगता है और किसी समय में मैं अधिक ध्यान, तप, योग, साधन में लगा रहता हूँ तो भगवती उमा मुझको किसी अन्य क्रिया द्वारा उसका शीघ्र ध्यान करा देती हैं। यह जगतमाता हैं, अपने पुत्रों को कष्ट पाते देखकर इनका हृदय तत्काल द्रवित हो जाता है और शीघ्र ही किसी प्रकार के भाव व कारण को आगे करके मुझे उस भक्त के पास पहुंचा देती है और यदि मैं उसकी संतुष्टि में कुछ समय की देरी करता हूँ तो यह उसकी प्रेरणा देकर उसे पापों, कष्टों से मुक्ति (छुटकारा) दिलवा देती है।

हे नारद! इस प्रकार से आपके सभी प्रश्नों का यथोचित उत्तर समाधान योग्य मैंने कह सुनाया, जो मेरी पूजा आराधना, साधनाओं द्वारा कृपा प्राप्त कर लेता है, वह साक्षात् इस मेरे परमधाम नित्य कैलास (शिवलोक) को प्राप्त कर लेता है। अनेक प्रकार के सौंदर्य, वैभव, सुख समृद्धियों का उपभोग करता है और आदि लिङ्ग का दर्शन पूजन का आनन्द लाभ करता हुआ परमानन्द में मग्न हो जाता है तथा जन्ममरण (भवसागर रूपी माया)

से सर्वदा के लिए मुक्त होता है। मेरा सायुज्य प्राप्त कर मुझ में ही लीन हो जाता है।

यह मेरा रहस्य बहुत गूढ़ व गुप्त है, जिसको नारदजी आपने पूछा और मैंने आपको इसके योग्य समझकर कहा है, जो इस आख्यान को प्रेम व श्रद्धापूर्वक पढ़ेगा, सुनेगा, सुनायेगा वह इस प्रकार के साधन कार्य में लगकर मेरी भक्ति प्राप्त करेगा। यह कलियुग में होने वाले प्राणियों के लिए मेरा वरदान रूप से कहा गया है। यह सुनकर नारदजी गद्गद् हो गये और भगवान् शिव के चरणों में भक्तिभाव से प्रणाम कर वीणा बजाते हुये आकाश मार्ग से अन्य स्थानों को प्रस्थान कर गये।

(शिवब्रह्मज्ञानतन्त्र,लोकालोक प्रकाश के आधार से।)

उपर्युक्त प्रकार सर्वसाधारण जन-मानस को आस्था से ग्रहण करने व पालन करने योग्य प्रतीत होता है, इसके द्वारा सभी भक्तों को लाभ लेना चाहिए। किन्तु यह विषय महान् गूढ व क्लिष्ट है, योगियों एवं विशिष्ट बुद्धिमान् विद्वानों के जानने योग्य अन्य ग्रन्थों में कुछ और ही प्रकार से मिलता है, वह भी दर्शाने का प्रयास किया जाता है।

श्रुतियाँ कहती हैं—

'अणोरणीयान् महतो महीयान्।'

(कठ० १/२/२०)

ब्रह्म छोटे से छोटा भी है और बड़े से बड़ा भी है।

आसीनो दूरं व्रजति शयानो याति सर्वतः। (कठ० १/२/२१)

यह बैठे-बैठे दूर चला जाता है और सोते सोते सर्वत्र विचरण कर लेता है।

'अदृष्टं द्रष्टृश्रुतꣳ श्रोत्रमतं मन्त्रविज्ञातं विज्ञातृ नान्यतोऽस्ति द्रष्टृ नान्यदतोऽस्ति श्रोतृ नान्यदतोऽस्ति मन्तृ नान्यदतोऽस्ति विज्ञातृ। (बृह० उप० ३-८-११)

वह अदृष्ट होते हुए भी द्रष्टा, अश्रुत होते हुए भी श्रोता, अचिन्त्य होते हुए भी मननकर्ता, अविज्ञात होते हुए भी विज्ञाता है, यही नहीं उसके अतिरिक्त और कोई द्रष्टा, श्रोता, मननकर्त्ता और विज्ञाता है ही नहीं।

('सनत्सुजातीय' तृतीय अध्याय (श्लोक २०-२४) का भावार्थ)

ब्रह्म न तो शुक्ल सा प्रतीत होता है और न लोहित. श्वेत या धूम्रवर्ण ही मालूम पड़ता है। यह न पृथ्वी में स्थित है, न अन्तरिक्ष में विद्यमान है और न समुद्र में ही कोई पञ्चभूतात्मक देह धारण करता है। यह ब्रह्म न तारागण में है, न विद्युत में है, न मेघों में ही इसका रूप देखा जाता है। यह न ऋग्वेद में उपलब्ध होता है न यजुर्वेद में, न अथर्ववेद में और न निर्मल साम श्रुतियों में ही दिखायी देता है तथा रथन्तर व बृहद्रथ सामों में भी इसकी उपलब्धि नहीं होती, इसका साक्षात्कार तो महाव्रतशील ब्राह्मण (ब्रह्मवेत्ता) को अपने अन्तःकरण में ही होता है। अज्ञानान्धकार से अतीत यह ब्रह्म अविच्छिन्न है; अन्त में जगत का प्रलयकाल उपस्थित होने पर यह स्थित रहता है। यह सूक्ष्म से भी सूक्ष्म और पर्वतों से भी महान् है। उसमें स्थित हुआ यह सम्पूर्ण जगत् प्रकाश स्वरूप ब्रह्म से ही प्रकाशित हो रहा है। आत्मवेत्ता लोग ज्ञान योग के द्वारा इसका साक्षात्कार करते हैं, यह सम्पूर्ण जगत् उसी में स्थित है। जो इसे जान जाते हैं, वे अमर हो जाते हैं। इसके आगे अध्याय ४ श्लोक २ में बतलाते हैं।

शुद्ध ब्रह्म से कार्य ब्रह्म की उत्पत्ति होती है। शुद्ध ब्रह्म से ही उसकी वृद्धि होती है। (आदित्यादि) ज्योतिर्गणों मे उन्हें प्रकाशित करने वाला और स्वयं अप्रकाशित वह शुद्ध ब्रह्म स्वयं ही प्रकाशित होता है। उस सनातन भगवान् का योगीजन दर्शन करते हैं।

अध्याय ४ का श्लोक तीन इस प्रकार है।

पूर्णात् पूर्णमुद्धरन्ति पूर्णात् पूर्णं प्रचक्षते ।
हरन्ति पूर्णात् पूर्णं च पूर्णमेवावशिष्यते ।
योगिनस्तं प्रपश्यन्ति भगवन्तं सनातनम् ॥३

पूर्ण (परमात्मा) से (जीवरूप) पूर्ण को उद्धृत करते हैं। पूर्ण से उद्धृत होने के कारण वह पूर्ण ही कहा जाता है। फिर उस पूर्ण से (शुद्ध आत्मास्वरूप) पूर्ण को अलग कर लेते हैं और इस प्रकार पूर्ण से ही अवशिष्ट रहते हैं। उस सनातन भगवान् का योगिजन ही दर्शन करते हैं।

जिस प्रकार आकाश में अवकाश है और गङ्गा में तरङ्गें हैं, उसी प्रकार सम्पूर्ण चराचर जगत् ब्रह्म से उत्पन्न होकर उसी में लीन हो जाता है। (श्लोक ८)

इसका रूप किसी की समानता में नहीं है। इसे नेत्र के द्वारा कोई भी नहीं देख सकता। बुद्धि से मन से तथा हृदय से जो कोई इसे जान लेते हैं, वे अमर हो जाते हैं। (श्लोक ७)

इस परमात्मा का (ब्रह्म का) रूप दृष्टि की पहुँच से परे है। जिनका अन्तःकरण सम्यक् प्रकार से दीप्त है, वे ही इसे देख पाते हैं। अतः जो राग-द्वेष से रहित हैं, वह बुद्धिमान् पुरुष ही इसे अन्तःकरण के द्वारा देख सकते हैं। जो इसे जान लेते हैं, वे अमर हो जाते हैं। (श्लोक २५)

ऐसे ब्रह्मवेत्ता योगीजन के लक्षण इस प्रकार कहे हैं –

आत्मैव स्थानं मम जन्म चात्मा ओतप्रोतोऽहमजरप्रतिष्ठः ।
अजश्चरो दिवारात्रमतन्द्रितोऽहं मां विज्ञाय कविरास्ते प्रसन्नः ॥३०
अणोरणीयान् सुमनाः सर्वभूतेष्वस्थितः ।
पितरं सर्वभूतानां पुष्करे निहितं विदुः ॥३१

(सनत्सुजातीय अध्या० ४ श्लोक ३०, ३१)

आत्मा ही मेरा आश्रय है और आत्मा ही मेरा जन्म है। मैं अजर प्रतिष्ठित ही सम्पूर्ण जगत् में ओत प्रोत हूँ। मैं अजन्मा हूँ तथा मैं ही अहर्निश सावधान रह कर क्रियाशील रहता हूँ, विद्वान् मुझे जानकर आनन्दित हो जाता है ।।३०

मैं ही अणु से भी अणु हूँ, सुमना और समस्त भूनों में स्थित हूं। समस्त भूतों के पिता (इस आत्म तत्त्व) विज्ञजन हृदय कमल मे निहित जानते हैं ।।३१

जिनका आत्मज्ञान इस प्रकार स्थिर हो जाता है, वे इस जन्म में इस शरीर के द्वारा ही ब्रह्म का हृदय कमल में साक्षात्कार करके ब्रह्म लीन हो जाते हैं।

सोपान

(१०)

भक्ति-ज्ञान

(१) भक्ति का अर्थ है सेवा; किन्तु सभी प्रकार की सेवा भक्ति नहीं कही जा सकती जैसे नौकर के द्वारा की गई सेवा मालिक की भक्ति नहीं हो सकती । क्योंकि वह तो तनख्वाह (वेतन) के रूप में धन प्राप्ति के लिए भी जाती है। जब तक उसे वेतन मिलता है, सेवा करता है। वेतन (तनख्वाह) देना बन्द करते ही सेवा नहीं करेगा। अतः बिना फल प्राप्ति के उद्देश्य से जो सेवा की जाती है उसे ही भक्ति (सेवा) कहा जाता है। जैसे माता अपने बच्चे की सेवा सुश्रूषा बिना किसी मतलब याने बिना तनख्वाह पाये ही करती है, यह उसकी सही निरपेक्ष सेवा सुश्रूषा है।

श्री मद्भागवत में कहा है।

"न स भृत्यो स वै वणिक्"

याने सेवा के बदले में कुछ प्राप्त होगा इस भाव से जो सेवा करता है वह व्यापारी है। वास्तव में भक्ति वह है जो निस्वार्थ भाव से की जाय जैसे व्रज की गोपियाँ निःस्वार्थ भाव से भगवान श्री कृष्ण की सेवा में लगी रहती थीं। मीराबाई, तुलसीदास, सूरदास आदि कई ऐसे भक्त हुए हैं जिनकी चाहना कुछ न थी और भगवान् की सेवा में रात-दिन स्वभाव से ही लगे रहते थे और इसके बिना उन्हें चैन ही नहीं पड़ता था।

(२) भगवान् शिव सगुण भी है और निर्गुण भी है। सगुण शिव के लिए की गई भक्ति सगुण भक्ति और निर्गुण शिव के लिए की गई भक्ति निर्गुण भक्ति कहलाती है। निष्काम सेवा को भक्ति कहा जाता है यह उच्चत्तम आदर्श है इस आदर्शानुसार सबका चलना बहुत कठिन है। अतएवं प्रत्येक मनुष्य को इस उपर्युक्त आदर्श से सुगम निम्न स्तर की भक्ति करने के भी अधिकार हैं।

इस प्रकार निम्न स्तर की भक्ति के लिए श्री मद्भगवत् गीता के सातवें अध्याय। सोलवें श्लोक में आर्त या चिन्ता ग्रस्त और अर्थार्थी याने किसी अभीष्ट कामना हेतु की गई भक्ति (सेवा) की भी स्वीकृति दी गई है। ये सब भक्ति के प्रकार सगुण भगवान् शिव के लिए होने के कारण सगुण भक्ति कही जाती है। इस प्रकार की भक्ति के विषय में आद्य जगद्‌गुरु स्वामी शंकराचार्य ने एक पुस्तक 'शिवानन्द लहरी' की रचना की है, उस के अनुसार यह अर्थार्थी भक्ति पाँच प्रकार की होती है—

(१) इसको एक उदाहरण द्वारा इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है—आयुर्वेद की औषधियों में प्रयुक्त होने वाली एक दवा का नाम 'अंकोल' है। इस वृक्ष के फलों का यह प्राकृतिक गुण

है कि जब तेज हवा या तूफान की सुरमराहट या गड़गड़ाहट होती है, तब फौरन ही फल टहनियों सहित वृक्ष के चिपट जाते हैं। जब वह हवा व तूफान आदि दूर हो जाते हैं, तो वे अपनी टहनी सहित यथा स्थान झूलने लगते हैं। 'अंकोल' फल तो भक्त है, वृक्ष भगवान् शिव है। जीवन में कठिनाइयाँ आती हैं तब आर्तरूप से भक्त भगवान् शिव की भक्ति (सेवा) करने लगता है, कठिनाइयां दूर होते ही वह सेवा को छोड़ देता है। कठिनाइयां दूर करने हेतु भक्ति करने वाला अर्थार्थी (मतलबी) भक्त कहा जाता है।

(२) इससे ऊपर की भक्ति को उदाहरण द्वारा इस प्रकार समझा जा सकता है। जैसे सूई और चुम्बक होते हैं। यहां मनुष्य को सूई और चुम्बक को भगवान् शिव समझें। सूई को आकर्षण के लिए किसी कारण की आवश्यकता नहीं, किन्तु चुम्बक सामने आते ही वह उससे जा चिपटती है। स्वाभाविक गुण के अनुसार भक्त अकारण ही भगवान् की भक्ति करता है अतः यह भी उत्तम भक्ति प्रकार है। इसमें एक कमी दिखाई देती है, वह यह है कि चुम्बक व सूई का आकर्षण अपनी क्षेत्र सीमा में ही प्रभावित होता है, अधिक दूरी पर नहीं। जैसे भक्त सेवा (भक्ति) उपासनादि मन्दिर शिवालय या भगवान् शिव पास (नजदीक) हों तो करलें, दूर हो तो कौन करने जावे।

(३) एक सती स्त्री अपने पति की सेवा भक्ति बिना किसी स्वार्थ या अकारण ही करती है। चाहे वह पति उसके नजदीक रहे चाहे दूर रहे, अनुकूल स्वभाव हो चाहे प्रतिकूल हो, सती स्त्री की भक्ति अपने पति के लिए निःस्वार्थ भक्ति कहलाती है; पर इसमें भी एक कमी दृष्टिगोचर होती है। पतिपरायण स्त्री पति की मृत्यु होने के पश्चात् विधवा रूप में जीवन व्यतीत करती है और पति वियोग सहन करती है लेकिन पति के साथ मर नहीं सकती। इस प्रकार इस भक्ति में भी एक यही कमी रहती है।

(४) एक वृक्ष है और उस पर एक बेल (लता) इस प्रकार से चढ़ी हुई है कि यदि वह वृक्ष पर न चढ़ पाती तो न वह बढ़ सकती थी न उसके कोई फलफूल लग सकते थे यदि बेल उस वृक्ष से अलग हो जाये तो वह कुछ ही समय बाद मर जायेगी। इसमें कोई शंका नहीं कि ऐसी भक्ति श्रेष्ठ है। किन्तु इसमें भी कमी रहती है, जैसे बेल वृक्ष पर चढ़ी हुई रहते बढ़ी-चढ़ी, फल-फूल आये, अलग होने पर जीवन समाप्त कर दिया किन्तु जब वृक्ष पर चढ़ी हुई थी तब भी बेल और वृक्ष अलग-अलग रूप में दृष्टिगत होते थे। दोनों का भरण-पोषण भी पृथ्वी से अलग अलग रूप में होता था। दोनों के जीव एक नहीं हो सके।

(५) जैसे गङ्गा-जमुना आदि नदियाँ अपना अलग-अलग नाम रूप धारण किये हुए बहती रहती हैं किन्तु उनका प्रवाह चाहे कभी इधर व कभी उधर किसी प्रकार भी होता रहे, उनकी बहती हुई जल की धारा का प्रवाह समुद्र में मिलकर ही समाप्त होता है न उनकी जल धारा अलग रहती है न उनका फिर कोई नाम अलग रहता है न उनका प्रवाह अलग (जल बहना) रहता है, समुद्र में मिलकर एक रूप, एक नाम समुद्र ही हो जाता है। इस प्रकार यह पाँचवें प्रकार का भक्त अपना व्यक्तित्व समाप्त कर भगवान् शिव में विलीन हो जाता है और भगवान शिव का सायुज्य प्राप्त करता है। वह सर्वोत्तम भक्त कहा जाता है। इस प्रकार की भक्ति (सेवा) सर्वश्रेष्ठ कही गई है।

यह पाँच प्रकार की सगुण भक्ति कही गई है। अब संक्षेप में निर्गुण भक्ति या अद्वैत भक्तिका परिचय भी कराने का प्रयास किया जाता है—

निर्गुण ब्रह्म के प्रति की जाने वाली भक्ति निर्गुण भक्ति है। इस विषय में यहाँ एक शंका उपस्थित होती है। साधारणतया भक्ति तब ही हो सकता है जब उपास्य देव. उपासक या भक्त से भिन्न हो। ऐसा द्वैत में ही सम्भव है, परन्तु अद्वैत अवस्था में

जहाँ केवल निर्गुण ब्रह्म ही है इसमें अतिरिक्त अन्य कोई सत्ता नहीं है और न कोई भक्त ही है तो ब्रह्म की उपासना का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। ब्रह्म अनन्त है। वास्तव में उससे भिन्न कोई जीव या सृष्टि नहीं है। सृष्टि की प्रतीति भी निराधार प्रतीति मात्र ही है। अतः यह मिथ्या है। इसी प्रकार जीव मनुष्य जो ब्रह्म या ईश्वर से अलग दिखाई दे रहे हैं या प्रतीत हो रहे हैं, वास्तव में भिन्न नहीं हैं।

जैसे सूर्य आकाश में है और पृथ्वी पर एक बर्तन में जल डालकर रखा जावे और उस जल में सूर्य का प्रतिबिम्ब दिखाई दे किन्तु वह प्रतिबिम्ब रूप में दिखने वाला सूर्य वास्तव में कोई छूने योग्य दूसरी वस्तु नहीं है, इसी प्रकार से जीव का वास्तव में कोई अस्तित्व न होने पर भी मन के अन्दर ब्रह्म की प्रति छाया ही (जीव) है। पानी के हटते ही प्रतिबिम्बित छाया वाला सूर्य लुप्त (अदृश्य) हो जावेगा। इसी प्रकार मन के अदृश्य होते ही जीव भी अदृश्य हो जाता है। अद्वैत-सिद्धान्त के अनुसार जीव या मनुष्य की उपर्युक्त स्थिति समझनी चाहिये, वास्तव में निर्गुण ब्रह्म अद्वितीय है।

इसको इस प्रकार समझें कि जीव केवल छाया मात्र है, किन्तु भ्रम वश जीव यह मान बैठता है कि उसका अपना स्वत्व है वही कर्त्ता और भोक्ता है और वह स्वयं ही इन सारे संसार बन्धनों का कारण है। यदि उसके इस भ्रम को दूर कर दिया जावे तो ईश्वर से उसके भिन्न होने का आभास मिट जाता है। वह अनुभव करने लगता है कि वह तो सर्वदा ही ब्रह्म था। इस प्रकार के भ्रम और भिन्नत्व की प्रतीति का निवारण करने वाली प्रक्रिया को ही अद्वैत के अनुसार निर्गुण भक्ति कहते हैं।

यह तथ्य गीता के सातवें अध्याय के सत्तरहवें श्लोक के अनुसार ज्ञान भक्ति के अनुरूप है। सगुण भक्ति के अन्तिम उदाहरण जो नदियों के समुद्र में मिलने का दिया गया है यद्यपि समुद्र में

मिलने के बाद एक रूपता हो जाती है, किन्तु समुद्र में मिलने से पहले उनका नाम व अस्तित्व समुद्र से भिन्न होता है। नदियाँ समुद्र से सर्वदा अलग है, इसलिए समुद्र में मिलन होने तक द्वैत याने दो है। पानी में प्रतिबिम्बित सूर्य की छाया के उदाहरण से स्पष्ट होता है कि वास्तव में यह दोनों कभी दो वस्तु नहीं थे। केवल सूर्य का ही अस्तित्व है, प्रतिबिम्ब केवल निराधार आभास मात्र है और वह सूर्य से भिन्न (अलग) नहीं है, इसलिए प्रतिबिम्बित छाया का यह उदाहरण समुद्र में मिलने वाली नदियो से श्रेष्ठ और सर्वोत्तम भक्ति (सेवा) मार्ग अवलम्बन (रास्ता अपनाने) योग्य है।

इस प्रकार ज्ञान भक्ति मार्ग में कितने ही प्रकार हैं। दो उदाहरण हैं:

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्॥
(शुक्ल यजुर्वेद अध्याय ४०/१)

जगती में यह जो कुछ भी, जड़-चेतन जग है।
सब ईश्वर से व्याप्त, उसी से यह जगमग है॥
ईश्वर को रख साथ, त्याग पूर्वक भोगो सब।
धन किसका है? होओ मत आसक्त कभी अब॥

खं वायुमग्निं सलिलं महीं च ज्योतींषि सत्त्वानि दिशो द्रुमादीन्।
सरित्समुद्रांश्च हरेः शरीरं यत्किंच भूतं प्रणमेदनन्यः॥
(श्री मद्भागवत ११/२/४१)

नभ अनिल अनल जल पृथ्वी रवि शशि तारे।
सब जीव चराचर दिशा द्रुमादिक सारे॥
सर सरिता सागर सब कुछ श्री हरि का तन।
यह जान करें सब का अनन्य अभिवन्दन॥

सोपान

(११)

उपासना द्वारा भक्ति

उपासना का अर्थ साधारणतया पास बैठना होता है। पास बैठनें वाला या किसी के पास रहने वाला उसको जो भी प्रिय है, उसी का अवलम्बन करता है। वह उसका प्रिय पात्र स्वतः ही हो जाता है।

भक्ति द्वारा उपासना करना या उपासना द्वारा भक्ति करना एक ही बात है। भक्ति के लिए उपासना अधिक सरस, व्यावहारिक, प्रिय तथा सर्वजन सुलभ हो सकती है।

स वै पुंसां परो धर्मो यतो भक्तरधोक्षजे ।
अहैतुक्य प्रतिहता यायत्मा सम्प्रसीदति ।।

(श्रीमद्भागवत् १/२/६)

प्रेम के द्वारा मनुष्य का मन जितना शीघ्र प्रभावित होता है, उतना अन्य कारणों से नहीं। यह मनुष्य की स्वाभाविक मनोवृत्ति है। संसार में जरा सा भी कहीं आकर्षण दिखाई देता है तो उससे सम्पर्क करने के लिये मन मचलने लगता है। उस परम पिता परमात्मा से राग (प्रेम) द्वारा बँध जाने के लिये बड़े बड़े आत्माराम, जिनके हृदय में किसी प्रकार की भी ग्रन्थि नहीं रही है, ऐसे ऋषि मुनि भी बिना किसी स्वार्थ (मतलब) के प्रीति करते हैं। संसार का प्रत्येक मनुष्य ही किसी न किसी रूप में उसी के प्रेम का भिखारी है। ऋग्वेद में कहा है—

प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु ।
प्रियं सर्वस्य पश्यत उत शूद्र उतार्ये ।।
(ऋग्वेद १०/१२६ खिल काण्ड)

हे भगवान् ! मुझे देवताओं में प्रिय करो, राजाओं में मुझे प्रिय करो, प्रत्येक द्रष्टा का चाहे वह आर्य हो या शूद्र, मुझे प्रिय बनाओ यह भेदभाव रहित सभी के प्रति प्रेम-भावना उस विराटस्वरूप परमात्मा की उपासना है।

अनन्त समय से युग-युग में मनुष्य के मन में एक जलन है, एक प्यास है, एक तड़फन है, जिसके कारण वह प्राणों के प्राण प्रेम के एकमात्र आस्पद परम प्रभु से मिलते के लिये सर्वदा छटपटाता रहता है। इसी कारण से प्राणिमात्र को वह अधिकाधिक प्रिय है। ऐसे प्रिय परम पिता को प्राप्त करने के लिये किस प्रकार की उपासना या भक्ति की जावे कि वह परमब्रह्म परमेश्वर हम पर कृपा कर हमें दर्शन दे, हमारे पापों का नाश करे, इस संसार रूपी मोह को दूर करे और हमें सभी प्रकार के दुखों से छुटकारा कराकर, अपना सायुज्य कमें प्रदान कर कृतार्थ करें।

श्री मद्भागवत् में भक्ति के नो प्रकार बतलाये है।

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् ।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ।।
(स्कन्ध ७ अध्याय ५ श्लोक २३)

श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्म निवेदन-यही नवधा भक्ति है।

(१) भगवान् की दिव्य लीला कथाओं का उनके नाम गुणों का श्रद्धा और प्रेम के साथ सुनना 'श्रवण' भक्ति कही गई है।

(२) श्रद्धा-प्रेम पूर्वक भगवान् की मंगलमयी आनन्द सुधा-प्रवाहिनी लीलाओं का उनके आदर्श चरित्रों का उनके गुणों का

पाठ करना पढ़कर दूसरों को सुनाना, भगवान् के नामों का कीर्तन और जप करना 'कीर्तन' भक्ति कही गई है।

(३) भगवान् के परम प्रभावशाली मंगलमय नाम, रूप, गुण और लीला आदि के श्रवण और कीर्तन का प्रेम श्रद्धापूर्वक मनन चिन्तन करना उनकी लोकोत्तर सौन्दर्य-माधुर्य, लावण्यमयी श्री मूर्ति (आकार) का ध्यान करना 'स्मरण' भक्ति कही गई है।

(४) श्रद्धा प्रेम पूर्वक भगवान् की साक्षात् चरण सेवा करना अथवा उनके परम दिव्य भयानक भयों का हरण करने वाले पाद पद्मों का भजन करना 'पाद सेवन' भक्ति कही गई है।

(५) बाहर से लाई हुई सामग्रियों से या मन के द्वारा कल्पित पञ्चोपचार, षोडषोपचार, शतोपचार सामग्रियों से श्रद्धा प्रेम पूर्वक भगवान् का पूजन करना 'अर्चना' भक्ति कही गई है।

(६) भगवान् के साक्षात् श्री चरणों में या उनके श्री विग्रह के चरणों में अनन्य भाव से प्रणाम करना या समस्त जीवों को भगवान् का ही शरीर स्वरूप समझकर सभी को श्रद्धा प्रेम पूर्वक अनन्य भाव से प्रणाम करना 'वन्दना' भक्ति कही गई है।

(७) श्रद्धा प्रेमपूर्वक भगवान् को ही एक मात्र अपना सेव्य स्वामी मानकर दास्य भाव से उनकी सेवा करना या अखिल विश्व ब्रह्माण्ड से समस्त चराचर जीवों को प्रभु का रूप समझकर उनकी जिस प्रकार भी हो सके सेवा करना 'दास्य' भक्ति कही गई है।

(८) अत्यन्त प्रेमभाव पूर्वक भगवान् में मित्र भाव से प्रेम करना या जीवमात्र में प्रभु की अभिव्यक्ति समझकर सबके साथ मैत्री भाव रखना 'सख्य' भक्ति कही गई है।

(९) अहंकार छोड़ कर अपने तन, मन, धन, परिजन सहित अपने आपको सर्वस्व को, लोक, परलोक को श्रद्धा, प्रेमपूर्वक श्री भगवान् के समर्पण कर देना 'आत्म निवेदन' भक्ति कही गई है।

इन उपर्युक्त नौ प्रकारों में प्रथम तीन का सम्बन्ध भगवान् के चिन्तन से है, अगले तीन का सम्बन्ध आचरणों से है और अन्तिम तीन का सम्बन्ध समर्पण से है। भगवान् की भक्ति प्रेम, नमन भाव से करने पर ही फलवती होती है। संक्षेप में भगवान् के प्रति प्रगाढ़ प्रेम करने का नाम ही 'भक्त्युपासना' कही गई है। 'पाप समूह का नाश करने वाले भगवान् को स्मरण करते हुये और परस्पर एक दूसरे को स्मरण कराते हुए (साधन रूप) भक्ति से उत्पन्न जो (फलरूप) भक्ति है, उससे वे रोमाञ्चित हो जाते हैं। इस भक्ति का यह असाधारण गौरव इसलिए है क्योंकि द्रवीभूत चित्त द्वारा विभु, नित्य, पूर्ण, ज्ञान और सुख स्वरूप भगवान् को ग्रहण कर लेने पर कुछ भी शेष नहीं रह जाता। ऐसी स्थिति में इस ब्रह्माण्ड के सभी स्पृहणीय प्राप्तव्यों की समुपलब्धि संभव हो जाती है-

भगवन्तं विभुं नित्यं पूर्णं बोधसुखात्मकम् ।
यद् गृह्णाति द्रुतं चित्तं किमन्यदवशिष्यते ॥

(भक्ति रसायन, अध्याय १ श्लोक २८)

और भक्ति का साधन रूप ही अभिव्यक्त होता है—

अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परम् ॥

(श्रीमद्भागवत् २-३-१०)

'भक्तिर्ज्ञानाय कल्पते सम्पद्यत इत्यर्थः ।,

(सिद्धान्त-कौमुदी)

भक्तों के चरित्र जो भी पढ़ने को मिलते हैं। सभी भक्तों ने इन उपर्युक्त भक्ति प्रकारों का ही अनुसरण किया है। सर्व प्रकार की अभीष्ट कामना, मोक्ष प्राप्ति, निष्काम प्रेम भक्ति यह सभी प्रकार नमन, प्रेम, पक्की लगन, धारणा, विश्वास द्वारा प्राप्त होती है।

सोपान

(१२)

देहधारियों का सम्बन्ध किसी से क्यों होता है ?

१–अपनी पूर्व जन्म में रखी धरोहर को लेने के लिए अथवा किसी में जमा कराई हुई रकम पूँजी वसूल करने के लिये।

२–अपने पूर्व जन्म में लिया हुआ ऋण चुकाने के लिये।

३–अपने पूर्व जन्म का बैर लेने के लिये।

४–पूर्व जन्म में प्राप्त अपकार के बदले अपकार करने के लिए।

५–पूर्व जन्म में प्राप्त सेवा-सुख के बदले में सेवा-सुख देने के लिए।

६–पूर्व जन्म में प्राप्त उपकार के बदले में उपकार करने के लिये।

७–निरपेक्ष।

पति, पत्नी, भाई, बहिन, पुत्र, पुत्री, पुत्रवधू अन्य सभी सम्बन्धी, मित्र, नौकर तथा गौ कुत्ता आदि सम्पर्क में आने वाले, रहने वाले, सभी जीवधारी पूर्व जन्म के अनुसार ऋण लेने या देने चुकाने के लिये सम्बन्ध जोड़ने को प्राप्त होते हैं और सीमित और दीर्घकाल तक साथ रहकर, या सम्पर्क रख कर उनका चुकारा करते रहते हैं, इसके पश्चात् सम्बन्ध छोड़ देते हैं। इसमें कोई शंका करने की बात नहीं है. मनुष्य स्वयं ध्यान देकर समझे तो अपने अनुभवों के आधार पर प्रत्यक्ष प्रमाण पा सकता है।

इन प्रकार से सम्पर्क होने वाले सम्बन्धियों से यह मेरा है यह भाव कभी मत रखो, सर्वदा इस भाव का त्याग रखते हुए कार्य करते रहो। ममत्व का भाव अधिक दुख देने वाला है।

माता-पिता, स्त्री-पुत्र, बधु-बान्धवादि तथा गेह-देहादि में जो ममता अहन्ता है, वह मानी हुई है। देखते-देखते और सुनते-सुनते लोग, इन्हें अपना मानने लगते हैं। खेल के समय खिलाड़ी खेल-खेल में हार जीत का अनुभव करने लगते हैं। उनमें ममता रखने वाले भी उनकी हार जीत को अपनी हार जीत मानने लगते हैं। खेल में कल्पित जय-पराजय की तरह संसार के समस्त व्यवहार की स्थिति देखने में आती है। अनात्म-वस्तुओं तथा सभी प्रकार के सम्पर्कियों से ममता हमारी मानी हुई है। अतः उसका त्याग भी यदि हम चाहें तो हो ही सकता है।

एक बालक कहता है - 'माँ मेरी है। मैं माँ का हूँ। उसने मुझे जन्म दिया है, गोद खिलाया है, प्यार किया है। अतः मैं कैसे मानूँ कि वह मेरी नहीं है।' परन्तु विचार कर देखें तो यह मान्यता देखने और सुनने से ही हो गई है, इस लिये कल्पित ही है। शत्रु, मित्र, स्त्री पुत्रादिका सम्बन्ध भी माना हुआ ही तो है, परन्तु सच्चे साधु इन सम्बन्धों को वास्तविक नहीं समझते। उन्हें घर छोड़ने के पश्चात् जीवन-पर्यन्त ममता नहीं सताती। संसारिक स्वार्थ वश ही कितने ही आत्मीय प्रिय शत्रुवत हो जाते हैं। कितने ही पराये अपने हो जाते हैं।

हर एक वस्तु प्रतिक्षण बदलती जा रही है। ममता भी इसी प्रकार बदलती रहती है। जैसे एक बालिका है वह विवाह से पूर्व अपने माता पिता को अपना घर मानती है, परन्तु विवाह होने के पश्चात् वही पति के घर को अपना मानने लगती है। इस तरह ममता प्रत्यक्ष ही बदलती हुई दिखाई पड़ती है। वही बालिका जो अपने मायके में 'बेटी' कही जाती थी, अपने ससुराल में 'बहू' कहने पर बोलने लग जाती है, यही नहीं अपने आपको वह बेटी नहीं, बहू ही समझने लगती है। 'मैं बेटी हूँ' यह अहंता 'मैं बहू हूँ' का रूप धारण कर लेती है। वस्तुतः इस देह में आने से पहले और उसे छोड़ने के बाद पुरुष का उस देह-गेहादि से सम्बन्ध

नहीं रहता। बीच में भी कृत्रिम अथवा काल्पनिक ही होता है। जिस देह से हमारा अनेक वर्षों से सम्बन्ध है और अब उसके दस बीस वर्ष ही और रहने की संभावना है, तो विचार कर देखें कि उसके साथ हमारा यह सम्बन्ध काल्पनिक नहीं तो क्या है। इस प्रकार माना हुआ सम्बन्ध न मानने से मिट सकता है।

अतः देह त्याग से पहले ममता का त्याग कर देना ही कर्त्तव्य है। ममता के त्याग की विलक्षण महिमा है 'त्यागाच्छान्तिरनन्तरम्'। ममता न छोड़ने से मरने के बाद भी अशान्ति ही बनी रहती है।

आजकल तो प्रत्यक्ष देखने में आ रहा है अपने सांसारिक स्वार्थ सिद्धि हेतु तत्काल ही पराये अपने और अपने पराये हो जाते हैं। इन सबका कारण ममत्व का त्याग न होना ही है। यदि सब अपने-अपने कर्मों को ठीक-ठीक भारतीय संस्कृति के अनुकूल पालन करें तो ऐसे दुःख, क्लेश, ताप कभी भी न हों, सभी सुख शान्ति प्राप्त करें। निर्मम होने की युक्ति यह ही हो सकती है। गीता में अध्याय १८ श्लोक ४-५। "स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिः लभते नरः"॥ श्लोक का यही भावार्थ है।

पिता पुत्र से पुत्र के लिए प्रेम करे, उसके हित का मार्ग प्रशस्त करे। बदले में कुछ भी न चाहे। उसे अपने से भी अधिक योग्य बनाने का पूरा प्रयास करें।

'पुत्रादिच्छेत्पराभवम्' का यही भाव है। यह पिता का पुत्र के प्रति कर्त्तव्य है। माता सन्तान के हित में सदा तत्पर रहे, बदले में कुछ भी न चाहे। उन्हें जितना संभव हो योग्य बनाये-यह माता का पुत्र के प्रति कर्त्तव्य है। पुत्र-वधू जब घर में आ जाये उसे पुत्री के समान प्यार करें। मायके से दहेज कम लाई इसका दोष उसे कभी न दें, कभी कड़वाहट न बरतें। अपने गृह कार्यों की शिक्षा जो मायके से सीखकर न आई हो, उसे सस्नेह शिक्षा दें।

घर के कार्यों में थोड़ा थोड़ा काम कराने की आदत डालें, एक वार में पूरा बोझा उस पर न डालें। पूरा सम्हालने योग्य होने पर ही छोड़ें और जहाँ तक हो स्वयं भी पूर्ण काम से विराम न लें। जितनी ताकत हो, बराबर घर गृहस्थ के कार्यों में सहायता, पूर्ण असमर्थ न हो जहाँ तक करते रहें। अपने कुल के रीति रिवाज प्रचलन देवी देवताओं की मान्यता का परिचय करावें। वहू के प्रसूति व वीमारी अवस्था में पुत्री के समान उसकी सेवा शुश्रूषा करें। जैसा अपने पास गहना कपड़ा हो उससे उसका सम्मान करें। यह माता पिता (सास श्वसुर का) पुत्रवधू के प्रति कर्तव्य है। यदि पुत्र, पुत्रवधू माता पिता (सास श्वसुर) के प्रति कर्त्तव्य पालन न करें तो वह भिन्न न हों अपने पूर्व जन्म के कर्त्तव्य को ध्यानकर श्रीभगवान् की कृपा का अनुभव करते हुए सन्तुष्ट रहें। सर्वदा उनके हित की बात ही सोचें। पुत्र एवं पुत्रवधू को अपने माता पिता (सास श्वसुर) की सब प्रकार से सेवा शुश्रूषा करते रहने का ध्यान रखना चाहिये। जैसा अपने घर में हो, उसी प्रकार से पहले अपने इष्टदेव को, पुनः माता पिता को अर्पण करके स्वयं को भोजन करना चाहिये किसी भी प्रकार का भेदभाव न रखें। उनको समय समय पर वस्त्रादि द्वारा सन्तुष्ट करना अपनी श्रद्धानुसार भेंट आदि से प्रसन्न कर बार-बार आशीर्वाद ग्रहण करना चाहिए। वृद्ध अवस्था, अशक्त अवस्था, अस्वस्थ अवस्था में दवा पानी उनके कष्टों का अनुभव करते हुए, उनकी सेवा करने का पूर्ण ध्यान रखना चाहिये। अपने कष्ट व अन्तिम समय में वह अपने मन में विचार अनुभव करें कि हमारे पुत्र व वधू ऐसे हैं कि हमारे कष्ट व दुःख में हमारी सेवा करते हैं, हमें सन्तान होने का पूर्ण सुख प्राप्त है। अन्तिम समय का माँ बाप का आशीर्वाद आप प्राप्त कर देखें, आपका भावी जीवन कितना सुखी होता है। माता-पिता का कमाया हुआ धन, घर-बार सब वस्तुओं को छलछिद्र, प्यार दिखाकर प्राप्त कर लेना और उनकी अशक्त वृद्ध अवस्था में उनके कष्ट व अस्वस्थता की

परवाह न करना, उनके खान-पान, वस्त्र सेवा सम्मान शुश्रूषा की व्यवस्था न करना, इस संसार में तो उनकी निन्दा दिखाई देने वाली होती ही है किन्तु अदृश्य में भी इसका परिणाम अनेक प्रकारों से दुःखदायी होता है और उसका बदला चुकाने को अगले जन्मों में भी उनसे पुनः सम्पर्क होकर चुकाना ही पड़ता है।

पुत्र, पुत्रवधू को मीठे वचनों द्वारा माता पिता को सन्तुष्ट करते रहना चाहिए। वृद्ध मनुष्य खाने पीने पहनने से अधिक मान सम्मान की अधिक इच्छा रखते हैं, इस प्रकार के बर्ताव से कोई त्रुटि भी होती रहती है तो उन्हें अखरती नहीं है। सब कुछ किया जावे बोलने और मान रखने में त्रुटि होती है, तो बहुत अखरती है। वह सभी किया कराया गड़बड़ हो जाता है वृद्ध क्रोध न कर सकें, उनकी बुद्धि का सन्तुलन न बिगड़े यह सर्वदा ध्यान रखें। इनकी कभी अवहेलना न होने दें और माता पिता से इसके बदले में छलछिद्र से या माँग कर लेने की इच्छा कभी न करें। ये हमारी सेवा स्वीकार करते रहें यही भाव बनाये रखें। ये पुत्र एवं पुत्रवधू के कर्त्तव्य हैं। इसी प्रकार भाइयों के भी कर्त्तव्य हैं। बड़े भाई तथा भाभी के प्रति भी ये ही कर्त्तव्य हैं, जो माता पिता के लिये कहे गये हैं। छोटे भाई तथा छोटे भाई की 'बहू' के प्रति भी वही कर्त्तव्य हैं, जो पुत्र व पुत्रवधू के लिए कहे गये हैं। समान अवस्था, बिरादरी भाई, मित्र या हिस्सेदार के लिए कभी भी छल छिद्र कपट से या लड़ झगड़ कर उसको नुकसान देकर, अपना अधिक लाभ लेने का ध्यान न करें। सुख शान्ति से जो नियमानुसार हो, उसे अवश्य प्रसन्नता से यदि कुछ भूल-चूक हो भी जाये तो क्षमा माँगते हुए, उसे ही लौटा दें। हड़पने की इच्छा न करें, प्रेम रखें, प्यार से रहें; शुद्ध बर्ताव व प्रेम सर्वोपरि साधन सुख शान्ति व समृद्धि बटोरने के लिए हैं। गुरु, शिष्य, पिता के बड़े या छोटे भाइयों या उनकी स्त्रियों के लिए भी तथा छोटे भाइयों के पुत्रों या उनकी 'बहुओं' के प्रति भी समझना

चाहिये। इस प्रकार का बर्ताव इस समय में भी घर को स्वर्ग बना सकता है नहीं तो जैसा करेंगे उसका फल तो चाहे इस जन्म में जाकर चाहे अन्य किसी प्रकार सम्पर्क बना कर चुकाना ही पड़ेगा। इसके अतिरिक्त अन्य कोई रास्ता हो ही नहीं सकता है। देहधारियों के सम्बन्ध किसी से क्यों होते हैं, इसके यही कारण तथा नियम शास्त्रों में कहे गये हैं और अपने सामने भी देखने में आ रहे हैं।

सोपान

(१३)

पाप का फल कौन भोगता है ?

जीवन काल में अनेक सम्बन्धी और मित्र रहते हैं; किन्तु अन्तकाल में जीव (मनुष्य) सब को छोड़कर अकेला ही परलोक की यात्रा करता है। मेरी माता, मेरे पिता, मेरी पत्नी, मेरे पति, मेरे पुत्र और मेरी जायदाद, मकान, धन, जेवर. इस प्रकार की ममता प्राणियों को व्यर्थ पीड़ा देती है। पुरुष (मनुष्य) जब तक धन कमाता है घर वालों की, सम्बन्धियों की, सेवा सत्कार इच्छा पूर्ति करता है तभी तक सब सम्बन्धी कुटुम्बी आदि अपना प्यार व सम्बन्ध रखते हैं। कमाई, साधन, सेवा, इच्छा पूर्ति साधन का अभाव होते ही दूर हो जाते हैं और प्यार सम्बन्ध समाप्त कर देते हैं। किन्तु इहलोक और परलोक में केवल धर्म और अधर्म ही सदा उसके साथ रहते हैं तथा जाते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य कोई साथी सम्बन्धी साथ नहीं जाता है। धर्म व अधर्म के कमाये हुए धन के

द्वारा जिसने जिनका पालन-पोषण किया वे ही उसके मरने पर उसे अग्नि के मुख में झोंक कर आ जाते हैं और वह मृत प्राणी जो धन जायदाद छोड़ जाता है उसका आनन्द उपभोग करते हैं या जिस प्रकार पालन, पोषण, प्यार, शिक्षादि कर गया उसका आनन्द फल भोगते हैं। मनुष्यों की लालसा प्रतिक्षण बढ़ती रहती है। इसी प्रकार उन कामनाओं की पूर्ति के लिये अनेक प्रकार के पापों द्वारा धन एकत्र कर धन खर्च करता है। वैभव संचित करता है या कुटुम्बियों सम्बन्धियों को सुख समृद्धि वैभवों का आश्वासन देता रहता है या अपने समान धनी-मानियों में उस धन, वैभव का दिखावा करता रहता है; किन्तु अन्त में सब सम्पत्ति को यहीं छोड़ कर अकेला यात्रा करता है, वहाँ अपने किये पुण्य, धर्म, दान, भगवद् आराधना के अतिरिक्त न कोई देता है, न कोई साथ जाता है। इस जीवन में इन अच्छे मित्र समान साथियों का साधन न जुटाया तो वहाँ कोई सहायक नहीं होगा, और पाप द्वारा जो कमाई रूपी पाप किये हैं, वह तो साथ जायेंगे ही और अपना फल देंगे, वह ही भुगतना पड़ेगा। यहाँ जो भी धन वैभव प्यारे सम्बन्धी, कुटम्बियों के प्यार व हित व अपने बड़े दिखावे हेतु जो पाप किये हैं, उनका फल वहाँ अकेले को ही भुगतना पड़ेगा।

पुण्यात्मा मनुष्य पापों द्वारा कमाई कर अधिक धन वैभव संचित नहीं करते। अपनी सच्ची मेहनत से उचित कमाई कर घर गृहस्थ का ठीक ढंग से संचालन करते हैं और उसी कमाई में से कुछ धन, धर्म, पुण्य देवार्चन में खर्च कर अपनी अन्तिम यात्रा के लिए साथी भी बना लेते हैं। छोटी (थोड़ी) कमाई वाले ही ऐसा अधिक कर पाते हैं। धनी मनुष्यों में व धन लोभ वढ़ जाता है। फलतः जैसा करते हैं, वैसा ही फल भोगते हैं। मनुष्य शरीरधारियों को इस बात का ध्यान रख कर ही जीवन यात्रा करनी चाहिये, जिससे अन्तिम यात्रा में कष्ट न उठाना पड़े।

इस विषय में ऋषि वाल्मीकि का दृष्टान्त देखने योग्य है।

वाल्मीकि से नारदजी ने कहा—'जरा घर जाकर पूछ तो आ कि तू यात्रियों को मार-मार कर पैसा बटोरता है, उस पाप में वे भी भागीदार है क्या ?'

घर वालों ने साफ कहा—'हम भागीदार क्यों बने ? हमारा पालन करना तेरा कर्त्तव्य है। उसके लिये तू क्या करता है, यह तू जाने। उसका फल तू ही भुगतेगा !'

लौटकर वाल्मीकि जी ने नारदजी के पैर पकड़ लिए और कहा बाबा ! घर वाले तो हाथ झाड़ कर अलग हो गये। अब मेरा उद्धार कैसे होगा, मैं तो कहीं का भी न रहा।

नारदजी ने उपाय बतलाया 'राम राम जप।'
वाल्मीकि ने कहा यह नाम तो मुँह से निकलता ही नहीं।
नारदजी ने कहा 'मरा मरा' तो निकलता है ?"
वाल्मीकि-हाँ, बाबा।'
नारदजी-'तो वही जप।'
उलटा नामु जपत जगु जाना। वाल्मीकि भए ब्रह्म समाना ॥
(मानस २/१६३/४)

सांसारिक सुखों में आसक्त मनुष्यों को देख गुरु नानकदेव जी ने कहा—

जगत में झूठी देखी प्रीत।
अपने ही सुख सों सुखमानै, क्या दारा क्या मीत ॥
अंत समय कोई नहिं साथी, यह अचरज की रीत।
'नानक' सोई भव पार तरै, जो गावै प्रभु के गीत ॥

इसी प्रकार और देखें।

अहन्यहनि भूतानि गच्छन्तीह यमालयम्।
शेषाः स्थावरमिच्छन्ति किमाश्चर्यमतः परम् ॥
(महाभारत, वन पर्व ३१३/१६)

संसार में नित्य प्रति प्राणी यम लोक में जा रहे हैं, किन्तु जो वचे हुये हैं, वे सर्वदा जीने की इच्छा करते हैं। इससे बढ़कर आश्चर्य क्या हो सकता है ?'

* * *

सोपान

(१४)

धर्म की महत्ता

धर्म से अर्थ, अर्थ मे काम और काम से भोग एवं सुख, शुभ उपलब्ध होते हैं। धर्म से ही ऐश्वर्य, एकाग्रता और उतम स्वर्गीय गति प्राप्त होती है।

धर्म का यदि सेवन किया जावे तो वह धर्म मनुष्य को महान् भय से रक्षा करता है, धर्म से मनुष्य बड़ा सम्मान प्राप्त करता है, सुखी होता है। धर्म से देवत्व को भी प्राप्त कर लेता है। पूर्व संचित पापों को नाश कर लेता है, बुद्धि तीव्र होती है। इहलोक में सुख सुविधा से जीता है, मरने पर सद्गति को प्राप्त होता है। हजारों लाखों जन्मों में कुकर्म के फल भोगने पर भी जो उत्तम कर्म बच रहते हैं, तब कहीं मनुष्य योनि प्राप्त होती है, इस योनि को पाकर भी यदि मनुष्य धर्माचरण न करेगा और सौभाग्य से वंचित होगा तो न जाने कब तक फिर अपने किये दुष्कर्मों के फल भोग कर मनुष्य योनि दुबारा प्राप्त करने में समर्थ होगा।

जिन्होंने अच्छे धर्म का पालन नहीं किया है उनको आप ध्यान से देखें। वे लोग किसी अच्छे कर्म से मनुष्य शरीरधारी तो

अवश्य बने हैं, किन्तु कुत्सित, दरिद्र क्रूर, रोगी, दूसरों की सेवा करने वाले और मूर्ख हैं यही नहीं साधन होते हुये भी उपलब्ध वस्तु पदार्थ, धन, विद्या आदि होकर भी उसके सुखों से वञ्चित रहते हैं। जिन्होंने धर्माचरण साधन अनुष्ठान किए हैं, उनको आप देख सकते हैं, दीर्घायु शूरवीर पण्डित, विद्वान् भोग साधन सम्पन्न, धनवान्, नीरोग तथा रूपवान् आदि गुण जन्म से प्राप्त होते हैं। यहाँ तक देखने में आता है, कि उच्च शिक्षाधारी को साधारण स्थान प्राप्त नहीं होता और साधारण बुद्धिमान धनी, सुख-साधनों से परिपूर्ण हैं, बुद्धिमान को रोटी व वस्त्र भी नहीं मिल रहा है। यहाँ तक देख सकते हैं कि कर्मों के फल प्रभाव से मनुष्य नहीं कुत्ता बिल्ली भी दिन में तीन बार सुन्दर भोजन पाते हैं, गद्दे-तकियों पर लेट लगाते हैं, जुकाम होने पर डाक्टरों की दौड़ लगने लगती है। दूसरी ओर धर्महीनाचरण मनुष्य भूख-प्यास से दुःखी बीमारी में पड़ा कराह रहा होता है, साधारण दवा प्राप्त नहीं होती है। यह धर्माचरण अधर्माचरण का परिणाम नहीं तो और क्या है?

अतः धर्माचरण ही मनुष्य का साथी है, वही उत्तम गति को प्राप्त होता है और अधर्म सेवी नीच कर्म में लगा रहने वाला मनुष्य अधोगति नीच योनियों को प्राप्त होता है।

भगवान् रामचन्द्रजी जब वन को जाने लगे, उस समय अपनी माता कौसल्या से मिलने को गये। उस समय माता कौसल्या जी ने कहा था—

यं पालयसि धर्मं त्वं धृता च नियमेन च।
स वै राघव शार्दूल धर्मस्त्वामभि रक्षतु॥

(वाल्मीकि रामायण अयोध्याकांडसर्ग २५ श्लोक ३)

हे राघव तुम्हारी रक्षा के लिए मैं क्या करूँ? तुम जिस धर्म का धैर्य और नियम के साथ पालन करते आ रहे हो, वही धर्म तुम्हारी रक्षा करेगा। यही एक मात्र मेरा अनुग्रह है।

धर्म पर चलने वाले के पशु-पक्षी भी साथी होते हैं। अधर्मी को सगा भाई भी छोड़ देता है, इसके लिए रामायण की कथा ही प्रमाण है। धर्म मार्ग पर चलने वाले रामचन्द्रजी का पशुपक्षियों ने भी साथ दिया, अधर्म पर चलने वाले रावण को सगे भाई विभीषण ने भी छोड़ दिया।

इसी प्रकार से अधर्म पर चलने वाले, सेना व महान् आयुधाचार्यों के साथ एक सौ एक भाइयों के होने पर भी कौरव, राज्य सत्ता विहीन पाण्डवों द्वारा परास्त व काल के ग्रास हुए थे।

मनुस्मृति में राजर्षि मनु महाराज ने सभी वर्णों के लिए दस धर्म बतलाये हैं।

> धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
> धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ॥(६/९२

धैर्य रखना, क्षमा करना, मन को वश में रखना, मन वचन कर्म से चोरी न करना, स्नानादि द्वारा वाहरी काम क्रोधादि को रोककर अन्तःकरण को शुद्ध रखना, इन्द्रियों को वश में रखना, जल्दी से वातों को समझना, ज्ञान प्राप्त करना, मन, वचन तथा कर्म से सत्य व्यवहार करना, किसी पर क्रोध न करना—ये दस धर्म के लक्षण हैं।

सोपान

(१५)

धर्म का सार

जो बात अपने को बुरी लगे, दूसरे के लिए काम में मत लाओ। पर स्त्री को माता के समान, पराये धन को मिट्टी के समान और सम्पूर्ण प्राणियों को अपने समान समझो। अपनी रसोई में बनाया हुआ भोजन सबको ही समान रूप से दो, देवता व आये हुए अतिथि को पहले भोग के लिए अर्पण करो फिर स्वयं खाओ। किसी पाँतीदार का हक स्वयं अपने काम में मत लो, उसका भाग उसको अवश्य दो। अपने पूज्य गुरु, माता-पिता का सदा सम्मान व सेवा करो। अपने परिश्रम के द्वारा प्राप्त कमाई को ही अपना धन समझो, जिस धर्म में स्थित हो उसी देवता की पूजा अर्चना करो, सदा ग्रन्थ अवश्य पढ़ो या सुनो, किसी से बैर मत रखो, प्रेम सबसे करो और मृत्यु को हमेशा याद रखो। संसार में सब अनिश्चित है, निश्चित है केवल एक मृत्यु।'

'हीनस्य मध्यस्थ महात्मनो वा सर्वस्य लोके नियतो विनाशः।'

हीन, मध्यस्थ तथा महात्मा सबका संसार में विनाश निश्चित है। धन और रूप नश्वर हैं।

रूप राशि पर गर्व न करना, ओ फूलों की रानी।
समय रेत पर उतर गया, कितने मोती का पानी॥

लाखों करोड़ों के घर पल भर में नष्ट हो जाते हैं। बने बनाये महल मिनटों में लोट-पोट होते हैं। रूप, राशि, धन, यौवन

पद तथा सम्मान देखते-देखते जाते रहते हैं, कोई भी स्थिर रहने वाला नहीं है। एक कवि ने बहुत सुन्दर कहा है--

दुर्लभ मानव-तन मिला, साधन धाम महान्।
मत खो भोगों में इसे, भज ले श्री भगवान्।।
मोह-निशा तम मिटे सब, समुदित हो रवि ज्ञान।
पुनर्जन्म से मुक्ति हो, प्रभुपद में हो स्थान।।

इसी प्रकार से एक उर्दू के शायर ने भी कहा है--

हँस के दुनियाँ में मरा कोई, कोई रो के मरा।
जिन्दगी पाई मगर उसने, जो कुछ होके मरा।।
जी उठा मरने से वह, जिसकी खुदा पर थी नजर।
जिसने दुनियाँ ही को पाया था, वह सब खोके मरा।।

तथा—आगाह अपनी मौत से कोई बशर नहीं।
सामान है सौ बरस का पल की खबर नहीं।।
आने वाला इस दुनियाँ में सभी एक दिन जायेगा।
मर कर जिन्दा वही, जो सर दे अपना धर्म बचायेगा।।

सोपान
(१६)

ईश्वर (ब्रह्म) विद्या का सार

यह मनुष्य शरीर अत्यन्त दुर्लभ है। यह तीन प्रकार की गतियो का द्वार है। एक तो 'देवादि पुण्य योनि' दूसरी 'स्थावरादि

अधम योनि' तथा तीसरी शास्त्र विहित कर्माचरण, भगवदुपासना तथा तत्त्व-ज्ञान द्वारा 'मोक्ष प्राप्ति'। प्रथम द्वार बुद्धिमान मनुष्यों के द्वारा अनादरणीय है। दूसरा घोर पतन का द्योतक होने के कारण सर्वथा त्याज्य ही है। तीसरा ही मनुष्य मात्र का लक्ष्य होना चाहिए। जो इस दुर्लभ मनुष्य शरीर को प्राप्त करके आत्मोद्धार के लिये प्रयत्न नहीं करते, उन्हें श्रीमद्भागवत में-'आत्मघाती' कहा गया हैं। 'सनत्सुजातीय' में इसे सबसे बड़ा पाप और प्रयत्न न करने वाले को 'चोर' तथा 'आत्मापहारी' कहा गया है—

योऽन्यथा संतमात्मानमन्यथा प्रतिपद्यते ।
किं तेन न कृतं पापं चौरेणात्मापहारिणा ।।

श्रुतियाँ भी कहती हैं—

'अयमात्मा ब्रह्म ।'
'आनन्दं ब्रह्म ।'
'अहं ब्रह्मास्मि ।'
अत्रायं पुरुषः स्वयं ज्योतिः ।' इत्यादि

इन सब से यही निष्कर्ष निकलता है कि भले ही संसार में अनेक विषय ज्ञातव्य (जाने हुए) हैं, किन्तु उनके जानने से क्षणिक प्रतिभासमात्र आनन्द भले ही प्राप्त हो जाय, परन्तु स्थायी सुख, अबाधित सुख प्राप्त नहीं हो सकता—

प्रतिबोधविदितं मतममृतत्वं हि विन्दते ।
आत्मना विन्दते वीर्यं विद्यया विन्दतेऽमृतम् ।।

(केनोपनिषद् २/४)

इस मंत्र के भाष्य में शंकराचार्य लिखते हैं कि 'विषयात्म-विज्ञाने हि मृत्युः' अर्थात् विषयों के स्वरूप को जानने से मृत्यु ही हाथ लगती है, किन्तु उससे जन्म-मरण का चक्कर कभी नहीं मिट सकता है।

अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं तथारसं नित्यमगन्धवच्च यत् ।
अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं निचाय्य तन्मृत्युमुखात् प्रमुच्यते ।।
(कठोपनिषद् १/३/१५)

जो शब्दरहित; स्पर्शरहित, रूपरहित और गन्धरहित है, तथा (जो) अविनाशी, नित्य, अनादि, अनन्त, महान् आत्मा से श्रेष्ठ (एवं) सर्वदा सत्य तत्त्व है, उस परब्रह्म को जानकर मनुष्य मृत्यु के मुख से सर्वदा के लिये छूट जाता है।'

सोपान

(१७)

ग्रन्थ समापना प्रार्थना

देवार्चन करने वाले सभी आस्तिक ग्रन्थकार आदि में इष्टदेव की प्रार्थना तथा अन्त में क्षमा प्रार्थना करते हैं। इसी का अनुसरण करते हुए, मैं भी इस पुस्तक की समापन प्रार्थना श्री उमा महेश्वर की सेवा में अर्पण करता हूँ।

देवताओं के प्रति किसी मनुष्य का सम्यक् रूप से कुछ कहना, लिखना संभव नहीं तो मुझ जैसे व्यक्ति के लिए देवाधिदेव श्री महादेवजी, आपके प्रति कुछ लिखने की इच्छा करना, यह एक मेरी धृष्टता कहूँ, या किसी पक्षी का अण्डे से निकला हुआ वह एक चींकला जसके पंखाङ्कुर ही न निकले हों, और वह आकाश में उड़ान करने की इच्छा करे, इसी जैसा नहीं तो और क्या सकता है।

हे जगद्गुरु महेश्वर ! एक मात्र आप ही सब जीवों के प्रेरक हो, मुझे आपने जो प्रेरणा व अणुमात्र ज्ञानाभास प्रदान किया उसी के आश्रय से आपके इस दुरूह, दुर्ज्ञेय विषय में कलम पकड़ कर चलाने का प्रयास किया है।

गन्धर्वराज पुष्पदन्त कें पदों का अनुसरण करके इस "शिव-तत्त्व-दर्शन" ग्रन्थ का आरम्भ किया था और अब उन्हीं के पद का अनुसरण कर क्षमा प्रार्थना करता हुआ इसका समापन करता हूँ।

महिम्नः पारं ते परम विदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः ।
अथावाच्यः सर्वः स्वमति परिणामावधिगृणान्
ममाप्येष स्तोत्रे हर ! निरपवादः परिकरः ।।

हे भगवान् शिव ! मुझ जैसे अज्ञानी से आपके लिए जो कुछ लिखने में त्रुटियाँ रहीं उनके प्रति मैं यही आशा करता हूँ कि जब ब्रह्मादि देवता भी आपकी महिमा को सम्यक् रूप से न कह सकें तो मेरे द्वारा जो त्रुटियाँ रहीं तो उन पर आप क्या ध्यान देंगे, यही समझकर मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार जैसा भी मुझसे बन सका प्रयास किया है, आप दया करके आपत्ति न करें, मुझे क्षमा करें।

हे महेश्वर ! आप अनन्त हैं जिस प्रकार से यह आकाश भी अनन्त है और पक्षियों का उड़ान लगाना कर्त्तव्य है यह समझकर वह उड़ान लगाते ही हैं किन्तु कोई भी पक्षी अपनी उड़ान लगाकर इस आकाश का अन्त नहीं पा सकता है। जिस पक्षी की जैसी सामर्थ्य है, वह उसी के अनुसार उड़ान लगाता है अगर वह। उड़ान न लगाये तो पक्षी ही क्या और यह आकाश छोटी उड़ान लगाने वाले पक्षी में और बड़ी उड़ान लगाने वाले पक्षी में किसी प्रकार

का भेद भी नहीं समझता। यह उन सभी उड़ने वाले पक्षियों का अपने क्षेत्र में विचरण (उड़ान) करने में किसी प्रकार की आपत्ति भी नहीं करता है, इसी प्रकार से आप भी मुझपर करुणाभाव करके अवश्य क्षमा करें।

मंत्रहीनं क्रियाहीनं, भक्तिहीनं महेश्वर ।
यत्पूजितं मया देव ! परिपूर्णं तदस्तु मे ।।
यदक्षरं पदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर ।।

हे भगवान् महेश्वर ! मेरी यह पूजा मन्त्र, पूजन विधि एवं भक्ति से हीन है, आप ही इसे पूर्ण करेंगे। पूजा में प्रयुक्त जो अक्षर पदभ्रष्ट एवं मात्रा हीन हों, उन्हें भी हे देवाधिदेव ! आप क्षमा करें।

ॐ आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् ।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ।।
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्यभावेन रक्ष मां परमेश्वर ।

हे उमा महेश्वर भगवान् शिव ! न मुझे आपका आह्वान आता है और न आपकी पूजा की विसर्जन क्रिया ही आती है। अतः हे परमब्रह्म परमेश्वर ! आप मुझे क्षमा करें। आपकी शरण के अतिरिक्त मेरे पास कोई भी अन्य मार्ग नहीं है। अतः हे उमा महेश्वर ! हे प्रभो ! आप दयाभाव से मेरी रक्षा करें।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देवदेव ।।

आप ही मेरे माता और पिता हो, आप ही भाई व सखा

हो, आप ही मेरी विद्या व धन हो, हे देवाधिदेव ! मेरे तो सब कुछ आप ही हो। मैं आपकी शरण हूँ, शरण हूँ, शरण हूँ।

नमः शिवाय शान्ताय कारणत्रयहेतवे।
निवेदयामि चात्मानं त्वं गतिः परमेश्वर ॥
नमस्तुभ्यं विरूपाक्ष नमस्ते दिव्यचक्षुषे।
नमः पिनाकहस्ताय वज्रहस्ताय वै नमः ॥
नमस्त्रिशूलहस्ताय दण्डपाशासिपाणये।
नमस्त्रैलोक्यनाथाय भूतानां पतये नमः ॥
नमस्ये त्वां महादेव लोकानां गुरुमीश्वरम्।
पुंसामपूर्णकामानां कामपूरामराङ्घ्रिपम् ॥
तव तत्त्वं न जानामि कीदृशोऽसि महेश्वर।
यादृशस्त्वं महादेव तादृशाय नमो नमः ॥

अनेन पूजनेन श्री साम्बसदाशिवः प्रीयताम्। ॐ नमः शिवाय

* * *

सोपान
(१८)

शान्ति–पाठ

अथ रुद्रे स्वस्ति प्रार्थना मंत्राऽध्यायः

हरिः ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥१

भाषार्थ—वृद्धश्रवा (बड़ी कीर्तिवाले) इन्द्र हमारे निमित्त स्वस्ति विधान करें, सर्वज्ञ पूषा हमारे निमित्त स्वस्ति विधान करें, अरिष्ट नेमि तार्क्ष्य (तार्क्ष्य-रथ अर्थात् जिस रथ की नेमि की गति अर्थात् चक्रधारी की गति कोई भी रोकने में समर्थ नहीं है, उसको ही अरिष्ट नेमि तार्क्ष्य कहते है, यहाँ पर रथ रूप से वर्णन हुआ) हमारे निमित्त स्वस्ति विधान करें, बृहस्पति हमारे निमित्त स्वस्ति विधान करें ॥ १ ॥

ॐ पयः पृथिव्याम्पयऽओषधीषुपयोदिव्यन्तरिक्षे पयोधाः पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥२

भावार्थ—पृथिवी देवी हमारे निमित्त (अर्थात् हम को देने के लिए) रस धारण करे, औषधियाँ भी हमारे निमित्त रस धारण करें, स्वर्गलोक और अन्तरिक्ष लोक भी हमारे निमित्त रस धारण करें अर्थात् आहुति के परिणाम से पृथिवी आदि हमको भगवत्कृपा से अभीष्ट देने वाले हों ॥ २ ॥

ॐ विष्णोरराटमसि विष्णो श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोसि ॥ वैष्णव मासि विष्णवे त्वा ॥३

भावार्थ—हे तिर्यक् वंशचीर ! तुम इस यज्ञिय मंडप के रराटी (द्वार के दो खम्भों पर नीचे को मुख वाला अर्द्धवृत्ताकार जो तिरछा वंशचीर होता है उसको रराटी कहते हैं यही मंडप का का माथा रूप है) होते हो। रराटी प्रान्तद्वय ! तुम दोनों इस यज्ञिय मंडप की ओष्ट संधि रूप होती हो हे लस्यू जनि ! (बड़ी सुई सूजा) तुम ही इस यज्ञ मंडप की सूची हो। हे रस्सी की गाँठ ! तुम इस यज्ञिय मंडप की गाँठ हो, इससे दृढ़ होवो। हे प्राग्वंश ! पूर्व पश्चिम को लम्बा करके स्थापित बांस ! इस मण्डप की छत का प्रधान अवलंबन बड़ाबांस (आडा) तुम इस यज्ञिय मण्डप की छत के मध्यवाले प्रधान बांस हो, इस मंडप की दृढ़ता की परीक्षा

करने के लिए तुमको स्पर्श करता हूँ इस मंत्र में वंशादि में स्थित सर्वज्ञ देव को प्रार्थना उस उस रूप से वर्णन की है ।। ३ ।।

ॐ अग्नि र्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा देवतादित्या देवता मरुतो देवता विश्वे देवादेवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ।।४

भावार्थ –अग्नि देवता की प्रार्थना करता हुआ, यह इष्ट का स्थापन करता हूँ ? (१) वायु देवता का ध्यान करता हुआ यह इष्ट का स्थापन करता हूं. (२) सूर्य्य देवता का ध्यान करता हुआ यह इष्ट का स्थापन करता हूँ, (३) चन्द्रमा देवता का ध्यान करता हुआ यह इष्ट का स्थापन करता हूँ. (४) वसु देवताओं का ध्यान करता हुआ यह इष्ट का स्थापना करता हूँ. (५) रुद्र देवताओं का ध्यान करता हुआ यह इष्ट का स्थापन करता हूं. (६) आदित्य देवताओं का ध्यान करता हुआ यह इष्ट का स्थापन करता हूं. (७) मरुत देवताओं का ध्यान करता हुआ यह इष्ट का स्थापन करता हूँ. (८) विश्वेदेवा देवताओं का ध्यान करता हुआ यह इष्ट का स्थापन करता हूँ, (९) बृहस्पति देवता का ध्यान करता हुआ यह इष्ट का स्थापन करता हूँ, (१०) इन्द्र देवता का ध्यान करता हुआ यह इष्ट का स्थापन करता हूं, (११) वरुण देवता का ध्यान करता हुआ यह इष्ट का स्थापन करता हूं. (१२) ।। ४ ।।

ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामि सद्यो जाता य वै नमो नमः ।
भवे भवे नाति भवे भव स्व मां भवोद्भवाय नमः ।।५

भावार्थ—ज्ञान प्राप्ति के निमित्त महादेव सम्बन्धी पंचमुखों में पश्चिम मुख प्रतिपादक मंत्र का वर्णन करते हैं, सद्योजात नामक परमेश्वर के रूप को प्राप्त होता हूँ सद्योजात के निमित्त प्रणाम है. हे देव ! अनेक जन्मों में मुझे मत प्रेरण करो, किन्तु जन्म के दुख

करने के निमित्त तत्वज्ञान के निमित्त मुझे प्रेरण करो। संसार के उद्धार कर्त्ता सद्योजात को प्रणाम है ।। ५ ।।

वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः
कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमः ।।६

बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो
मनोन्मनाय नमः ।।७

भाषार्थ--उत्तर मुख का प्रतिपादक मन्त्र कहते हैं--उत्तर मुख वामदेव को प्रणाम है, उसी के विग्रह ज्येष्ठादि नाम हैं, यह महादेव की पीठ शक्तियों के स्वामी हैं। वामदेव, ज्येष्ठ, श्रेष्ठ, रुद्र, कालकल, विकरण, बलविकरण, बल-बल प्रमथन, सर्व भूतों के दमन करने वाले, मनोन्मन के निमित्त नमस्कार है ।। ६ ।। ७ ।।

अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः।
सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः।।८

भाषार्थ--दक्षिण वक्र प्रतिपादक मंत्र कहते हैं--सत्त्व गुण युक्त होने से अघोर, राजस होने से घोर और तामस सम्बन्ध से घोरतर शर्व प्रलय में व जगत् के हरने वाले हम आपके तीन प्रकार के रूपों को सब देश काल में प्रणाम करते हैं। आपके रुद्र शर्व सब रूपों को नमस्कार है ।। ८ ।

तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ।।९

भाषार्थ--पूर्व मुख प्रतिपादक मंत्र कहते हैं--तत्पुरुष देव को गुरु शास्त्र मुख से जानते हैं, जानकर उन महादेव का ध्यान करते हैं, इस कारण वह रुद्र हमको ज्ञान ध्यान के लिये प्रेरणा करें ।।९।।

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम्।
ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तुसदाशिवोम् ।।१०

भाषार्थ--ऊर्ध्वं मुख देव का प्रतिपादक मंत्र--वेदशास्त्रादि विद्या और चौंसठ कलाओं के नियामक समस्त प्राणियों के नियामक वेद के विशेष रूप से पालक हिरण्य गर्भ के अधिपति ब्रह्मा रूप परमात्मा मुझ पर अनुग्रह करने के लिए शान्त रूप हों। मैं सदा शिव रूप हूँ ॥ १० ॥

(यह ६ यन्त्र तैत्तिरीयारण्यक के हैं)

ॐ शिवोनामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्ते अस्तु मा मा
हिꣳसीः। निवर्त्तयाम्यायुषेन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय
सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय ॥११

भाषार्थ--सर्व व्यापी होने से क्षुर में व्याप्त क्षुराधिष्ठित देव! तुम नाम करके शान्त स्वभाव कल्याण कारक हो वज्र तुम्हारा पालक रक्षक है तुम्हारे निमित्त नमस्कार है मुझ को मत आघात करना! इस क्रिया के फल से जीवन के निमित्त अन्नादि भक्षण के निमित्ति बहुत प्रजा बहुत धन पुष्टि उत्कृष्ट प्रजनन सामर्थ्य प्रशंसनीय बल की प्राप्ति के निमित्त मुण्डन करता हूँ ॥ ११ ॥

ॐ विश्वानि देव सवितुरदुरितानि परासुव। यद्भद्रन्तन्न आसुव १२

भाषार्थ--हे सविता देव हमारे पापों को दूर करो और जो कल्याण हैं सो हमको प्राप्त करो ॥ १२ ॥

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳशान्तिः पृथिवीशान्तिरापः
शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवा शान्ति
र्ब्रह्मशान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा
शान्तिरेधि ॥१३

भाषार्थ--द्युलोक रूप शान्ति, और अन्तरिक्ष रूप शांति, पृथिवी रूप शांति, जल रूप शान्ति, औषधि रूप शांति, वनस्पति रूप शांति, विश्वेदेवा संबंधी शांति वा सर्वदेव रूप शान्ति

त्रयी-लक्षण युक्त शांति, सर्व जगत् रूप शान्ति, स्वरूप से ही शान्ति, जो शांति है वह मेरे प्रति हो अर्थात् यह सब मुझ को शान्त रूप हों।।१३

ॐ शान्तिः शान्तिः सुशान्तिर्भवतु सर्वारिष्टशान्तिर्भवतु । अनेन शिव-तत्त्व-दर्शनाख्येन ग्रन्थेन श्री भगवान्भवानीशंकर महारुद्रः प्रीयतां न मम । ॐ सदाशिवार्पणमस्तु ।।

सर्व मङ्गल कामना

सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु, सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखमाप्नुयात् ।।

इस विश्व में सब सुखी हों, सब नीरोग हों, सब कल्याण-मङ्गलों का दर्शन करें, कोई भी दुःख को प्राप्त न हों ।

सर्वस्तरतु दुर्गाणि सर्वः भद्राणि पश्यतु ।
सर्वः सद्बुद्धिमाप्नोतु सर्वः सर्वत्र नन्दतु ।।

सब कठिनाइयों से, विपत्तियों से त्राण पाएँ, सब मङ्गलों का दर्शन करें, सब सद्बुद्धि को प्राप्त हों और सब सर्वदा सर्वत्र आनन्द लाभ करें ।

दुर्जनः सज्जनो भूयात् सज्जनः शान्तिमाप्नुयात् ।
शान्ति मुच्येत् बन्धेभ्यो मुक्तश्चान्यान् विमोचयेम ।।

दुष्टजन सज्जन हो जाएँ, सज्जन शान्ति को प्राप्त करें, शान्तजन बन्धन से मुक्त हो जायँ और मुक्तजन दूसरों को बन्धन से मुक्त करें ।

स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्ता न्याय्येन मार्गेण महीं महीशाः ।
गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु ।।

प्रजाजनों का कल्याण हो, राज्याधिकारी न्याय युक्त मार्ग से पृथ्वी पर शासन करें। गौओं एवं ब्राह्मणों का सर्वदा मङ्गल हो। सम्पूर्ण लोक सुखी हो जायँ।

काले वर्षतु पर्जन्य पृथिवी शस्यशालिनी।
देशोऽयं क्षोभरहितो ब्राह्मणाः सन्तु निर्भयाः॥

बादल समय पर वर्षा करें, पृथ्वी धान्य से समृद्ध हो। यह देश (भारतवर्ष) क्षोभ रहित हो जाय, ब्राह्मण सन्त (महात्मा) निर्भय हो जायें।

स्वस्त्यस्तु विश्वस्य खलः प्रसीदतां
ध्यायन्तु भूतानि शिवं मिथो धिया।
मनश्च भद्रं भजता दधोक्षजे
आवेश्यतां नो मतिरप्यहैतुकी॥

विश्व ब्रह्माण्ड का कल्याण हो, दुष्ट लोग शान्त हो जाएँ, सभी प्राणी अपनी बुद्धि के द्वारा एक दूसरे का भला सोचें, मन सदा भलाई और मङ्गल का चिन्तन करे एवं हम सबकी बुद्धि बिना किसी हेतु के भगवान् में आविष्ट हो जाय।

ॐ असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्माऽमृतंगमय॥ॐ शान्ति........

असत् से मुझे सत् पर ले जाओ, अन्धकार से प्रकाश में ले जाओ, मृत्यु से बचाकर मुझे अमर करदो।

क्षमेऽहं सर्वान् वै जीवान् ते च क्षाम्यन्तु मां सदा।
मैत्री स्यात्सर्वभूतेषु न मे द्वेषोऽस्तिकेनचित्॥ॐ शांति.....

मैं सब जीवों को क्षमा करता हूँ, सब जीव मुझे क्षमा करें, सब भूतों से मेरी मित्रता हो, किसी से द्वेष न हो।

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नापुनर्भवम् ।
कामये दुःखतप्तानां प्राणनामार्तिनाशनम् ।।ॐ शान्ति····

मैं राज्य की सवर्ग की मोक्ष की भी कामना नहीं करता हूं ; मैं कामना करता हूँ कि दुःख से पीड़ित प्राणियों का दुःख नष्ट हो ।

ॐ सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै ।
तेजस्वि नावधीतमस्तु, मा विद्विषावहै ।।ॐ शान्ति ···

हम सब परस्पर एक दूसरे की रक्षा करें, विरोध को छोड़ कर सुखों का भोग करें, हमारी विद्या तेजस्वी हो, हम आपस में द्वेष न करें ।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।ॐ शान्ति····

ॐ वह (परब्रह्म) पूर्ण है और यह (कार्य ब्रह्म) भी पूर्ण है, क्योंकि पूर्ण से पूर्ण की ही उत्पत्ति होती है तथा (प्रलय काल में) पूर्ण (कार्यब्रह्म) का पूर्णत्व लेकर (अपने में लीन करके) पूर्ण (परब्रह्म) ही बच रहता है । त्रिविध ताप की शान्ति हो ।

ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद् भद्रं तन्न आसुव ।।

हे सविता देव ! हमारे सब दुःखों को दूर करो । जिससे हमारा कल्याण (भला) हो, वही प्राप्त कराओ । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

ग्रन्थ लेखक परिचय एवं ग्रन्थ समाप्ति

इति श्री भारतवर्षे राजस्थान प्रान्तीय झुंझनू मण्डलान्तर्गत खेतडी नगर निवासिना भूतपूर्व खेतड़ी राजकीय प्रधान पण्डित ज्योतिर्विद् श्री रूडमल्ल बलदेव शर्माणां प्रपौत्रेण राजकीय प्रधान पण्डित ज्योतिर्विद् धर्माध्यक्ष श्री महासुख शर्मणां पौत्रेण राजकीय संस्कृत विद्यालय प्रधानाचार्य राजकीय प्रधान पण्डित ज्योतिर्विद् श्री रघुनाथ शर्मा शास्त्रीणां आत्मजः सीकर मण्डलान्तर्गत भूतपूर्व खण्डेलाराज्यपण्डित नन्दकुमार शर्माणामात्मजा श्री भगवती देव्यास्तु गर्भजः श्री भवानी शङ्कर महारुद्र चरणानुरागी गौड वंशावतंस, त्रिप्रवरस्य माध्यन्दिनी शाखा, शुक्ल यजुर्वेदीय, कात्यायनी सूत्र, गौतम गोत्रोद्भवेन वैद्य पण्डित रामप्रसाद शर्मणा शास्त्रिणा विरचितं 'शिव-तत्त्व दर्शनम्' इत्याख्यस्य ग्रन्थस्य स्कंधत्रयोऽध्यायाश्च चतुश्पञ्चाशत् समाप्ता । शुभमस्तु ।

। प्रार्थना दोहा ।

उमा महेश्वर पद कमल, श्रीगणपति चित लाय ।
शिव-तत्त्व-दर्शन लिख्यो, गुरु चरनन सिर नाय ॥१
पढ़े सुनें जो प्रेम सौं, लहे पदारथ चार ।
भक्ति मिले श्री शम्भु को, जो जग में सुखसार ॥२
किंकर रामप्रसाद की, विनती यही महेश ।
शिव चरनन की भक्ति से, विनसे सकल कलेश ॥३
विनती रामप्रसाद की, भक्ति देहु परमेश ।
बिना भक्ति के नारि-नर, पावत दुःख हमेश ॥४
बार-बार विनती करूँ, कृपा करहु अखिलेश ।
तव पूजन अर्चन सदा, नाशत अमित कलेश ॥५

श्री साम्ब सदाशिव प्रीयताम् ॥ ॐ साम्ब सदाशिवार्पणमस्तु ॥

ॐ शान्तिः ! ॐ शान्तिः !! ॐ शान्तिः !!!

। श्री शुभमस्तु ।

प्रार्थना स्तोत्राणि

श्री गणेशस्य प्रातःस्मरणम्

प्रातः स्मरामि गणनाथमनाथबन्धुं
सिन्दूरपूरपरिशोभितगण्डयुग्मम् ।
उद्दण्डविघ्नपरिखण्डनचण्डदण्ड-
माखण्डलादिसुरनायकवृन्दवन्द्यम् ॥१॥

प्रातर्नमामि चतुराननवन्द्यमान-
मिच्छानुकूलमखिलं च वरं ददानम्
तं तुन्दिलं द्विरसनाधिपयज्ञसूत्रं
पुत्रं विलासचतुरं शिवयोः शिवाय ॥२॥

प्रातर्भजाम्यभयदं खलु भक्तशोक-
दावानलं गणविभुं वरकुञ्जरास्यम् ।
अज्ञानकाननविनाशनहव्यवाह-
मुत्साहवर्धनमहं सुतमीश्वरस्य ॥३॥

श्लोकत्रयमिदं पुण्यं सदा साम्राज्यदायकम् ।
प्रातरुत्थाय सततं यः पठेत्प्रयतः पुमान् ॥४॥

* इति श्री गणेश प्रातःस्मरणम् *

जो इन्द्र आदि देवेश्वरों के समूह से वन्दनीय हैं, अनाथों के बन्धु हैं, जिनके युगल कपोल सिन्दूर राशि से अनुरंजित हैं जो

उद्दण्ड (प्रबल) विघ्नों का खण्डन करने के लिए प्रचण्ड दण्ड स्वरूप हैं, उन श्री गणेशजी को मैं प्रातःकाल स्मरण करता हूँ ।१। जो ब्रह्मा से वन्दनीय हैं, अपने सेवक को उसकी इच्छा के अनुकूल पूर्ण वरदान देने वाले हैं, तुन्दिल हैं, सर्प ही जिनका यज्ञोपवीत है, उन क्रीड़ा-कुशल शिव-पार्वती के पुत्र (श्री गणेशजी) को मैं कल्याण प्राप्ति के लिए प्रातःकाल नमस्कार करता हूँ ।।२।। जो अपने जन को अभय प्रदान करने वाले हैं, भक्तों के शोकरूप बन के लिये दावानल (वनाग्नि) हैं, गणों के नायक हैं, जिनका मुख हाथी के समान और सुन्दर है और जो अज्ञान रूप वन को नष्ट करने (जलाने) के लिये अग्नि हैं, उन उत्साह बढ़ाने वाले शिवसुत (श्री गणेशजी) को मैं प्रातःकाल भजता हूं ।।३।। जो पुरुष प्रातःकाल उठकर संयत-चित्त से इन तीनों पवित्र श्लोकों का नित्य पाठ करता है उसको यह स्तोत्र सर्वदा साम्राज्य के समान सुख देता है ।।४।।

श्री शिवस्य प्रातःस्मरणम्

प्रातः स्मरामि भवभीतिहरं सुरेशं
गङ्गाधरं वृषभवाहनमम्बिकेशम् ।
खट्वाङ्गशूलवरदाभयहस्तमीशं
संसाररोग हरमौषधमद्वितीयम् ।।१

प्रातर्नमामि गिरिशं गिरिजार्द्धदेहं
सर्गस्थितिप्रलयकारणमादिदेवम् ।
विश्वेश्वरं विजितविश्वमनोऽभिरामं
संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ।।२

प्रातर्भजामि शिवमेकमनन्तमाद्यं
वेदान्त वेद्यमनघं पुरुषं महान्तम् ।

नामादिभेदरहितं षडभावशून्यं
संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥३
प्रातः समुत्थाय शिवं विचिन्त्य
श्लोकत्रयं येऽनुदिनं पठन्ति ।
ते दुःखजातं बहुजन्मसञ्चितं
हित्वा पदं यान्ति तदेव शम्भोः ॥४

* इति श्री शिवस्य प्रातःस्मरणम् *

जो सांसारिक भय को हरने वाले देवताओं के स्वामी हैं, जो गङ्गाजी को धारण करते हैं, जिनका वृषभवाहन है, जो अम्बिका के ईश हैं तथा जिनके हाथ में खट्वाङ्ग, त्रिशूल और वरद तथा अभय मुद्रा है, उन संसार-रोग को हरने के निमित्त अद्वितीय औषध-रूप 'ईश' (महादेवजी) का मैं प्रातः समय में स्मरण करता हूँ ॥१॥ भगवती पार्वती जिनका आधा अङ्ग है जो संसार की सृष्टि, स्थिति और प्रलय के कारण हैं आदि देव हैं, विश्वनाथ हैं, विश्वविजयी और मनोहर हैं, सांसारिक रोग को नष्ट करने के लिए अद्वितीय औषधरूप उन गिरिश (शिव) को मैं प्रातःकाल स्मरण करता हूँ ॥२॥ जो अन्त से रहित आदिदेव हैं, वेदान्त से जानने योग्य, पापरहित एवं महान् पुरुष हैं तथा जो नाम आदि भेदों से रहित छह अभावों से शून्य, संसार रोग को हरने के निमित्त अद्वितीय ओषध है, उन एक शिवजी को मैं प्रातःकाल भजता हूं ॥३॥ जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर शिव का ध्यान कर प्रतिदिन इन तीनों श्लोकों का पाठ करते है, वे लोग अनेक जन्मों के संचित दुःख समूह से मुक्त होकर शिवजी के उसी कल्याणमय पद को पाते हैं ॥४॥

श्री देव्याः प्रातःस्मरणम्

चाञ्चल्यारुणलोचनाञ्चितकृपां चन्द्रार्कचूडामणिं
चारुस्मेरमुखां चराचरजगत्संरक्षणीं सत्पदाम् ।

चञ्चच्चम्पक – नासिकाग्रविलसन्मुक्तामणीरञ्जितां
श्रीशैलस्थलवासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ।।१
कस्तूरीतिलकाञ्चितेन्दु विलसत्प्रोद्भासिभालस्थलीं
कर्पूरद्रवमिश्रचूर्णखदिरामोदोल्लसद्वीटिकाम्
लोलापाङ्गतरङ्गितैरधिकृपासारैर्नतानन्दिनीं
श्रीशैलस्थलवासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ।।२

इति श्री देव्याः प्रातःस्मरणम्

जिनके चञ्चल और अरुण नेत्रों में करुणा प्रकट हो रही है, चन्द्रमा और सूर्य जिनके मस्तक के आभूषण हैं, जिनका मुख सुन्दर मुसकान से सुशोभित, जो चराचर जगत् की रक्षिका हैं, सत्पुरुष जिनके विश्राम स्थान हैं, शोभायमान चम्पा के समान सुन्दर नासिका के अग्रभाग में मोती की बुलाक जिनकी शोभा बढ़ा रही हैं. उन श्री शैल पर निवास करने वाली भगवती श्री माता का मैं स्मरण करता हूँ ।। १ ।। जिनका ललाट कस्तूरी की वेदी से विभूषित और चन्द्रमा के समान प्रकाशमान है, जिनके मुख में कपूर के रस से युक्त चूना और खैर की सुगन्ध से पूर्ण पान की बीड़ी शोभा दे रही है, जो अपने चञ्चल कटाक्षों से तरङ्गायमान करुणा की धारावाहिनी वृष्टि से प्रणत भक्तों को आनन्द देने वाली हैं, श्री शैल पर निवास करने वाली उन भगवती श्री माता का मैं स्मरण करता हूँ ।। २ ।।

श्री परब्रह्मणः प्रातःस्मरणम्

प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदात्मतत्त्वं
सच्चित्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम् ।
यत्स्वप्नजागरसुषुप्तिमवैति नित्यं
तद्ब्रह्मनिष्कलमहं न च भूतसङ्घः ।।१

प्रातर्भजामि मनसा वचसामगम्यं
वाचों विभान्ति निखिला यदनुग्रहेण ।
यन्नेतिनेति वचनैर्निगमा अवोचं-
स्तं देवदेवमजमच्युतमाहुरग्र्यम् ।।२

प्रातर्नमामि तमसः परमर्कवर्णं
पूर्णं सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम् ।
यस्मिन्निदं जगदशेषमशेषमूर्तौ
रज्ज्वां भुजङ्गम इव प्रतिभासितं वै । ३

श्लोकत्रयमिदं पुण्यं लोकत्रयविभूषणम् ।
प्रातःकाले पठेद्यस्तु स गच्छेत्परमं पदम् ।।४

इति श्री मच्छङ्करभगवतः कृतौ परब्रह्मणः प्रातःस्मरण-
स्तोत्रं सम्पूर्णम्

मैं प्रातःकाल हृदय में स्फुरित होते हुए आत्म-तत्त्व का स्मरण करता हूँ; जो सत्, चित् और आनन्द रूप है, परमहंसों का प्राप्य स्थान है और जाग्रदादि तीनों अवस्थाओं से विलक्षण है। जो स्वप्न, सुषुप्ति और जाग्रत अवस्था को नित्य जानता है, वह स्फुरणा रहित ब्रह्म ही मैं हूँ पञ्चभूतों का संघात (शरीर) मैं नहीं हूँ ।। १ ।। जो मन और वाणी से अगम्य है, जिसकी कृपा से समस्त वाणी भास रही है, जिसका शास्त्र 'नेति-नेति' कहकर निरूपण करते हैं, जिस अजन्मा देव देवेश्वर अच्युत को अग्रच (आदि पुरुष) कहते हैं, मैं उसका प्रातःकाल भजन करता हूँ ।। २ ।। जिस सर्व स्वरूप परमेश्वर में यह समस्त संसार रज्जु में सर्प के समान प्रतिभासित हो रहा है, उस अज्ञानातीत, दिव्यतेजोमय, पूर्ण सनातन पुरुषोत्तम को प्रातःकाल नमस्कार करता हूँ ।।३।। ये तीनों श्लोक तीनों लोकों के भूषण हैं, इन्हें जो कोई प्रातःकाल के समय पढ़ता है, उसे परम पद की प्राप्ति होती है ।। ४ ।।

शिव पंचावरण–प्रतिष्ठित–सर्वदेवस्तुति

उपमन्युरुवाच—

स्तोत्रं वक्ष्यामि ते कृष्ण पञ्चावरणमार्गतः ।
योगेश्वरमिदं पुण्यं कर्म येन समाप्यते ॥१

उपमन्यु कहते हैं – श्री कृष्ण ! अब मैं तुम्हारे समक्ष पञ्चावरण-मार्ग से किये जाने वाले स्तोत्र का वर्णन करूँगा, जिससे यह योगेश्वर नामक पुण्यकर्म पूर्ण रूप से सम्पन्न होता है ॥ १ ॥

जय जय जगदेकनाथ शम्भो प्रकृतिमनोहर नित्यचित्स्वभाव ।
अतिगतकलुषप्रपञ्चवाचामपि मनसां पदवीमतीततत्त्वम् ॥२

जगत् के एक मात्र रक्षक ! नित्य चिन्मयस्वभाव ! प्रकृति मनोहर शम्भो ! आपका तत्त्व कलुषराशि से रहित, निर्मल वाणी तथा मन की पहुँच से भी परे है। आपकी जय हो, जय हो ॥ २ ॥

स्वभावनिर्मलाभोग जय सुन्दरचेष्टित ।
स्वात्मतुल्यमहाशक्ते जय शुद्धगुणार्णव ॥३

आपका श्रीविग्रह स्वभाव से ही निर्मल है, आपकी चेष्टा परम सुन्दर है, आपकी जय हो। आपकी महाशक्ति आपके ही तुल्य है। आप विशुद्ध कल्याणमय गुणों के महासागर हैं, आपकी जय हो ॥३॥

अनन्तकान्तिसम्पन्न जयासदृशविग्रह ।
अतर्क्यमहिमाधार जयानाकुलमङ्गल ॥४

आप अनन्त कान्ति से सम्पन्न हैं। आपके श्रीविग्रह की कहीं तुलना नहीं है, आपकी जय हो। आप अतर्क्य महिमा के आधार हैं, तथा शान्तिमय मङ्गल के निकेतन हैं। आपकी जय हो ॥ ४ ॥

निरञ्जन निराधार जय निष्कारणोदय ।
निरन्तरपरानन्द जय निर्वृत्तिकारण ॥५

निरञ्जन (निर्मल) आधार रहित तथा बिना कारण के प्रकट होने वाले शिव ! आपकी जय हो। निरन्तर परमानन्दमय ! शान्ति और सुख के कारण ! आपकी जय हो ॥ ५ ॥

जयातिपरमैश्वर्य जयातिकरुणास्पद ।
जय स्वतन्त्रसर्वस्व जयासदृशवैभव ॥६

अतिशय उत्कृष्ट ऐश्वर्य से सुशोभित तथा अत्यन्त करुणा के आधार ! आपकी जय हो। प्रभो ! आपका सब कुछ स्वतन्त्र है तथा आपके वैभव की कहीं समता नहीं है; आपकी जय हो, जय हो ॥६॥

जयावृतमहाविश्व जयानावृत केनचित् ।
जयोत्तर समस्तस्य जयात्यन्तनिरुत्तर ॥७

आपने विराट् विश्व को व्याप्त कर रक्खा है, किन्तु आप किसी से भी व्याप्त नहीं हैं। आपकी जय हो, जय हो। आप सबसे उत्कृष्ट हैं, किन्तु आपसे श्रेष्ठ कोई नहीं है। आपकी जय हो, जय हो ॥७॥

जयाद्भुत जयाक्षुद्र जयाक्षत जयाव्यय ।
जयामेय जयामाय जयाभव जयामल ॥८

आप अद्भुत हैं, आपकी जय हो। आप अक्षुद्र (महान्) हैं; आपकी जय हो। आप अक्षत (निर्विकार) हैं, आपकी जय हो। आप अविनाशी हैं, आपकी जय हो। अप्रमेय परमात्मन् ! आपकी जय हो। माया रहित महेश्वर ! आपकी जय हो। अजन्मा शिव ! आपकी जय हो। निर्मल शंकर ! आपकी जय हो ॥ ८ ॥

महाभुज महासार महागुण महाकथ ।
महाबल महामाय महारस महारथ ॥९

महाबाहो ! महासार ! महागुण ! महती कीर्तिकथा से युक्त ! महाबली ! महामायावी ! महान् रसिक तथा महारथ ! आपकी जय हो ॥ ९ ॥

नमः परमदेवाय नमः परमहेतवे ।
नमः शिवाय शान्ताय नमः शिवतराय ते॥१०

आप परम आराध्य को नमस्कार है। आप परम कारण को नमस्कार है। शान्त शिवको नमस्कार है और आप परमकल्याणमय प्रभु को नमस्कार है ॥१०॥

त्वद्धनीमिदं कृत्स्नं जगद्धि ससुरासुरम् ॥११
अतस्त्वद्विहितामाज्ञां क्षमते कोऽतिवर्तितुम्॥१२

देवताओं और असुरों सहित यह सम्पूर्ण जगत् आपके अधीन है। अतः आपकी आज्ञा का उल्लंघन करने में कौन समर्थ हो सकता है ॥११-१२॥

अयं पुनर्जनो नित्य भवदेकसमाश्रयः ।
भवानतोऽनुगृह्यास्मै प्रार्थितं सम्प्रयच्छतु ॥१३

हे सनातन देव ! यह सेवक एकमात्र आपके ही आश्रित है; अतः आप अनुग्रह करके इसे इसकी प्रार्थित वस्तु प्रदान करें ॥१३॥

जयम्बिके जगन्मातर्जय सर्वजगन्मयि ।
जयानवधिकैश्वर्ये- जयानुपमविग्रहे ॥१४

अम्बिके ! जगन्मातः ! आपकी जय हो। सर्वजगन्मयी ! आपकी जय हो। असीम ऐश्वर्यशालिनि ! आपकी जय हो। आपके श्रीविग्रह को कहीं उपमा नहीं है; आपकी जय हो ॥१४॥

जय वाङ्मनसातीते जयाचिद्ध्वान्तभञ्जिके ।
जय जन्मजराहीने जय कालोत्तरोत्तरे ॥१५

मन, वाणी से अतीत शिवे ! आपकी जय हो। अज्ञानान्धकार का भञ्जन करने वाली देवि ! आपकी जय हो। जन्म और

जरा से रहित उमे ! आपकी जय हो। काल से भी अतिशय उत्कृष्ट शक्तिशाली दुर्गे ! आपकी जय हो ॥१५॥

जयानेकविधानस्थे जय विश्वेश्वरप्रिये ।
जय विश्वसुराराध्ये जय विश्वविजृम्भिणि ॥१६

अनेक प्रकार के विधानों में स्थित परमेश्वरी ! आपकी जय हो। विश्वनाथ प्रिये ! आपकी जय हो। समस्त देवताओं की आराधनीया देवि ! आपकी जय हो। सम्पूर्ण विश्व का विस्तार करने वाली जगदम्बिके ! आपकी जय हो ॥१६॥

जयमङ्गलदिव्याङ्गि जय मङ्गलदीपिके ।
जयमंगलचरित्रे जय मङ्गलदालिनि ॥१७

मंगलमय दिव्य अङ्गों वाली देवी ! आपकी जय हो। मङ्गल को प्रकाशित करने वाली देवी ! आपकी जय हो। मङ्गलमय चरित्रवाली सर्वमङ्गले ! आपकी जय हो। मङ्गलदायिनि, आपकी जय हो ॥१६॥

नमः परमकल्याणगुणसंचयमूर्तये ।
त्वत्तः खलु समुत्पन्नं जगत्त्वय्येव लीयते ॥१८

परम कल्याणमय गुणों की आप मूर्ति हैं, आपको नमस्कार है। सम्पूर्ण जगत् आपसे ही उत्पन्न हुआ है; अतः आपमें ही लीन होगा ॥१८॥

त्वद्विनातः फलं दातुमीश्वरोऽपि न शक्नुयात् ।
जन्मप्रभृति देवेशि जनोऽयं त्वदुपाश्रितः ॥१९
अतोऽस्य तव भक्तस्य निर्वर्तय मनोरथम् ।

देवेश्वरि ! अतः आपके बिना ईश्वर भी फल देने में समर्थ नहीं हो सकते। यह जन जन्मकाल से ही आपकी शरण में आया

हुआ है। अतः देवि ! आप अपने इस भक्त का मनोरथ सिद्ध कीजिए ॥१९॥

पञ्चवक्त्रो दशभुजः शुद्धस्फटिकसंनिभः ॥२०
वर्णब्रह्मकलादेहो देवः सकलनिष्कलः ।
शिवमूर्तिसमारूढ़ः शान्त्यतीतः सदाशिवः ।
भक्त्या मयार्चितो मह्यं प्रार्थितं शं प्रयच्छतु ॥२१

प्रभो ! आपके पाँच मुख और दस भुजाएँ हैं। आपकी अङ्गकान्ति शुद्ध स्फटिकमणि के समान निर्मल है। वर्ण, ब्रह्म और कला आपके विग्रह रूप हैं। आप सकल और निष्कल देवता हैं। शिवमूर्ति में सदा व्याप्त रहने वाले हैं। शान्त्यतीत पद में विराजमान सदाशिव आप ही हैं। मैंने भक्ति भाव से आपकी अर्चना की है। आप मुझे प्रार्थित कल्याण प्रदान करें । २०-२१ ॥

सदाशिवाङ्कमारूढा शक्तिरिच्छा शिवाह्वया ।
जननी सर्वलोकानां प्रयच्छतु मनोरथम् ॥२२

सदाशिव के अंक में आरूढ़, इच्छाशक्तिस्वरूपा, सर्वलोक-जननी शिवा मुझे मनोवाञ्छित वस्तु प्रदान करें ॥ २२ ॥

शिवयोर्दयितौ पुत्रौ देवौ हेरम्बषण्मुखौ ।
शिवानुभावौ सर्वज्ञौ शिवज्ञानामृताशिनौ ॥२३
तृप्तौ परस्परं स्निग्धौ शिवाभ्यां नित्यसत्कृतौ ।
सत्कृतौ च सदा देवौ ब्रह्माद्यैस्त्रिदशैरपि ॥२४

सर्वलोकपरित्राणं कर्तुमभ्युदितौ सदा ।
स्वेच्छावतारं कुर्वन्तौ स्वांशभेदैरनेकशः ॥२५

ताविमौ शिवयोः पार्श्वे नित्यमित्थं मयार्चितौ ।
ययोराज्ञां पुरस्कृत्य प्रार्थितं मे प्रयच्छताम् ॥२६

शिव और पार्वती के प्रिय पुत्र, शिव के समान प्रभावशाली सर्वज्ञ तथा शिव-ज्ञानामृत पान करके तृप्त रहने वाले देवता गणेश और कार्तिकेय परस्पर स्नेह रखते हैं। शिवा और शिव दोनों से सत्कृत हैं तथा ब्रह्मा आदि देवता भी इन देवों का सर्वथा सत्कार करते हैं। ये दोनों भाई निरन्तर सम्पूर्ण लोकों की रक्षा करने के लिए उद्यत रहते हैं और अपने विभिन्न अंशों द्वारा अनेक बार स्वेच्छापूर्वक अवतार धारण करते हैं। वे ही ये दोनों बन्धु शिव और शिवा के पार्श्व-भाग में मेरे द्वारा इस प्रकार पूजित हो उन दोनों की आज्ञा लेकर प्रतिदिन मुझे प्रार्थित वस्तु प्रदान करें ।।२३-२६।।

शुद्धस्फटिकसंकाशमीशानाख्यं सदाशिवम् ।
मूर्द्धाभिमानिनी मूर्तिः शिवस्य परमात्मनः ।।२७
शिवार्चनरतं शान्तं शान्त्यतीतं खमास्थितम् ।
पञ्चाक्षरान्तिमं बीजं कलाभिः पञ्चभिर्युतम् ।।२८
प्रथमावरणे पूर्वं शक्त्या सह समर्चितम् ।
पवित्रं परमं ब्रह्म प्रार्थितं मे प्रयच्छतु ।।२९

जो शुद्ध स्फटिकमणि के समान निर्मल, ईशान नाम से प्रसिद्ध और सदा कल्याणस्वरूप है, परमात्मा शिव की मूर्धाभिमानिनी मूर्ति है; शिवार्चन में रत, शान्त, शान्त्यतीत कला में प्रतिष्ठित, आकाश मण्डल में स्थित शिव-पञ्चाक्षर का अन्तिम बीज-स्वरूप, पाँच कलाओं से युक्त और प्रथम आवरण में सबसे पहले शक्ति के साथ पूजित है, वह पवित्र परब्रह्म मुझे मेरी अभीष्ट वस्तु प्रदान करे ।। २७-२९ ।।

बालसूर्यप्रतीकाशं पुरुषाख्यं पुरातनम् ।
पूर्ववक्त्राभिमानं च शिवस्य परमेष्ठिनः ।।३०
शान्त्यात्मकं मरुत्संस्थं शम्भोः पादार्चने रतम् ।
प्रथमं शिवबीजेषु कलासु च चतुष्कलम् ।।३१

पूर्वभागे मया भक्त्या शक्त्या सह समर्चितम् ।
पवित्रं परमं ब्रह्म प्रार्थितं मे प्रयच्छतु ॥३२

जो प्रातःकाल के सूर्य की भाँति अरुण प्रभा से युक्त पुरातन, तत्पुरुष नाम से विख्यात, परमेष्ठी शिव के पूर्ववर्ती मुख का अभिमानी, शान्तिकला स्वरूप या शान्तिकला में प्रतिष्ठित, वायुमण्डल में स्थित, शिव-चरणार्चन परायण, शिव के बीजों में प्रथम और कलाओं में चार कलाओं से युक्त हैं, मैंने पूर्व दिशा में भक्ति भाव से शक्ति सहित जिसका पूजन किया है, वह पवित्र परब्रह्म मेरी प्रार्थना सफल करे ।। ३०–३२ ।।

अञ्जनादिप्रतीकाशमघोरं घोरविग्रहम् ।
देवस्य दक्षिणं वक्त्रं देवदेवपदार्चकम् ॥३३
विद्यापदं समारूढं वह्निमण्डलमध्यगम् ।
द्वितीयं शिवबीजेषु कलास्वष्टकलान्वितम् ॥३४
शम्भोर्दक्षिणदिग्भागे शक्त्या सह समर्चितम् ।
पवित्रं परमं ब्रह्म प्रार्थितं मे प्रयच्छतु ॥३५

जो अञ्जन आदि के समान श्याम, घोर शरीरवाला एवं अघोर नाम से प्रसिद्ध है, महादेवजी के दक्षिणमुख का अभिमानी तथा देवाधिदेव शिव के चरणों का पूजक है, विद्या कला पर आरूढ़ और अग्निमण्डल के मध्य विराजमान है, शिव बीजों में द्वितीय तथा कलाओं में अष्टकलायुक्त एवं भगवान् शिव के दक्षिण भाग में शक्ति के साथ पूजित है वह पवित्र परब्रह्म मुझे मेरी अभीष्ट वस्तु प्रदान करे ॥३३–३५॥

कुंकुमक्षोदसंकाशं वामाख्यं वरवेषधृक् ।
वक्त्रमुत्तरमीशस्य प्रतिष्ठायां प्रतिष्ठितम् ॥३६

वारिमण्डलमध्यस्थं महादेवार्चने रतम् ।
तुरीयं शिवबीजेषु त्रयोदशकलान्वितम् ॥३७
देवस्योत्तरदिग्भागे शक्त्या सह समर्चितम् ।
पवित्रं परमं ब्रह्म प्रार्थितं मे प्रयच्छतु ॥३८

जो कुंकुमचूर्ण अथवा केसरयुक्त चन्दन के समान रक्तपीत वर्ण वाला, सुन्दर वेषधारी और वामदेव नाम से प्रसिद्ध है, भगवान् शिव के उत्तरवर्ती मुख का अभिमानी है, प्रतिष्ठाकला में प्रतिष्ठित है, जल के मण्डल में विराजमान तथा महादेवजी की अर्चना में तत्पर है, शिव बीजों में चतुर्थ तथा तेरह कलाओं से युक्त है और महादेवजी के उत्तर भाग में शक्ति के साथ पूजित हुआ है, वह पवित्र परब्रह्म मेरी प्रार्थना पूर्ण करे ॥३६-३८॥

शङ्खकुन्देन्दुधवलं सद्याख्यं सौम्यलक्षणम् ।
शिवस्य पश्चिमं वक्त्रं शिवपादार्चने रतम् ॥३९
निवृत्तिपदनिष्ठं च पृथिव्यां समवस्थितम् ।
तृतीयं शिववीजेषु कलाभिश्चाष्टभिर्युतम् ॥४०
देवस्य पश्चिमे भागे शक्त्या सह समर्चितम् ।
पवित्रं परमं ब्रह्म प्रार्थितं मे प्रयच्छतु ॥४१

जो शङ्ख, कुन्द और चन्द्रमा के साथ धवल, सौम्य तथा सद्योजात नाम से विख्यात है; भगवान शिव के पश्चिम मुख का अभिमानी एवं शिवचरणों की अर्चना में रत है, निवृत्तिकला में प्रतिष्ठित तथा पृथ्वीमण्डल में स्थित है, शिव-बीजों में तृतीय, आठ कलाओं से युक्त और महादेवजी के पश्चिम भाग में शक्ति के साथ पूजित हुआ है, वह पवित्र परब्रह्म मुझे मेरी प्रार्थित वस्तु दे ॥३९-४१॥

शिवस्य तु शिवायाश्च हृन्मूर्त्ती शिवभाविते ।
तयोराज्ञां पुरस्कृत्य ते मे कामं प्रयच्छताम् ॥४२

शिव और शिवा की हृदयरूपी मूर्तियाँ शिव के ही आश्रित रहकर उन की आज्ञा शिरोधार्य करके मेरा मनोरथ पूर्ण करें ।।४२।।

शिवस्य च शिवायाश्च शिखामूर्ती शिवाश्रिते ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां ते मे कामं प्रयच्छताम् ।।४३

शिव और शिवा की शिखारूपा मूर्तियाँ शिव के ही आश्रित रहकर उन दोनों की आज्ञा का आदर करके मुझे मेरी अभीष्ट वस्तु प्रदान करें ।।४३।।

शिवस्य च शिवायाश्च वर्मणा शिवभाविते ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां ते मे कामं प्रयच्छताम् ।।४४

शिव और शिवा की कवचरूपा मूर्तियाँ शिवभाव से भावित हो उनकी आज्ञा का सत्कार करके मेरी कामना सफल करें ।।४४।।

शिवस्य च शिवायाश्च नेत्रमूर्ती शिवाश्रिते ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां ते मे कामं प्रयच्छताम् ।।४५

शिव और शिवा की नेत्ररूपा मूर्तियाँ शिव के आश्रित रह उन्हीं दोनों की आज्ञा शिरोधार्य करके मुझे मेरा मनोरथ प्रदान करें ।।४५।।

अस्त्रमूर्ती च शिवयोर्नित्यमर्चनतत्परे ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां ते मे कामं प्रयच्छताम् ।।४६

शिव और शिवा की अस्त्ररूपा मूर्तियाँ नित्य उन्हीं दोनों के अर्चन में तत्पर रह उनकी आज्ञा का सत्कार करती हुई मुझे मेरी अभीष्ट वस्तु प्रदान करें ।।४६।।

वामो ज्येष्ठस्तथा रुद्रः कालो विकरणस्तथा ।
बलो विकरणश्चैव वलप्रमथनः परः ।।४७

सर्वभूतस्य दमनस्तादृशाश्चाष्टशक्तयः ।
प्रार्थितं मे प्रयच्छन्तु शिवयोरेव शासनात् ।।४८

वाम, ज्येष्ठ, रुद्र, काल, विकरण, बलविकरण, बलप्रथमन तथा सर्वभूतदमन—ये आठ शिव मूर्तियाँ तथा इनकी वैसी ही आठ शक्तियाँ-वामा, ज्येष्ठा, रुद्राणी, काली, विकरणी, बलविकरणी, बलप्रमथनी तथा सर्वभूतदमनी -ये सब शिव और शिवा के ही शासन से मुझे प्रार्थित वस्तु प्रदान करें ।।४७-४८।।

अथानन्तश्च सूक्ष्मश्च शिवश्चाप्येकनेत्रकः ।
एकरुद्रस्त्रिमूर्तिश्च श्रीकण्ठश्च शिखण्डिकः ।।४९
तथाष्टौ शक्तयस्तेषां द्वितीयावरणेऽर्चिताः ।
ते मे कामं प्रयच्छन्तु शिवयोरेव शासनात् ।।५०

अनन्त, सूक्ष्म, शिव (अथवा शिवोत्तम), एकनेत्र, एकरुद्र, त्रिमूर्ति, श्रीकण्ठ ओर शिखण्डी–ये आठ विद्येश्वर तथा इनकी वैसी ही आठ शक्तियाँ—अनन्ता, सूक्ष्मा, शिवा (अथवा शिवोत्तमा), एकनेत्रा, एकरुद्रा, त्रिमूर्ति, श्रीकण्ठी और शिखण्डिनी, जिनकी द्वितीय आवरण में पूजा हुई है, शिवा और शिव के ही शासन से मेरी मनोकामना पूर्ण करें ।।४९-५०।।

भवद्या मूर्तयश्चाष्टौ तासमपि च शक्तयः ।
महादेवादयश्चान्ये तथैकादशमूर्तयः ।।५१
शक्तिभिः सहिताः सर्वे तृतीयावरणे स्थिताः ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां दिशन्तु फलमीप्सितम् ।।५२

भव आदि आठ मूर्तियाँ और उनकी शक्तियाँ तथा शक्तियों सहित महादेव आदि ग्यारह मूर्तियाँ, जिनकी स्थिति तीसरे आवरण में है। शिव और पार्वती की आज्ञा शिरोधार्य करके मुझे अभीष्ट फल प्रदान करें ।।५१-५२।

वृषराजो महातेजा महामेघसमस्वनः ।
मेरुमन्दरकैलासहिमाद्रिशिखरोपमः ॥५३
सिताभ्रशिखराकारककुदा परिशोभितः ।
महाभोगीन्द्रकल्पेन वालेन च विराजितः ॥५४
रक्तास्यशृङ्गचरणो रक्तप्रायविलोचनः ।
पीवरोन्नतसर्वाङ्गः सुचारुगमनोज्ज्वलः ॥५५
प्रशस्तलक्षणः श्रीमान् प्रज्वलन्मणिभूषणः ।
शिवप्रियः शिवासक्तः शिवयोर्ध्वजवाहनः ॥५६
तथा तच्चरणन्यासपावितापरविग्रहः ।
गोराजपुरुषः श्रीमान् श्रीमच्छूलवरायुधः ।
तयोराज्ञां पुरस्कृत्य स मे कामं प्रयच्छतु ॥५७

जो वृषभों के राजा, महातेजस्वी, महान मेघ के समान शब्द करने वाले, मेरु, मन्दराचल, कैलास और हिमालय के शिखर की भांति ऊँचे एवं उज्ज्वल वर्ण वाले हैं, श्वेत बादलों के शिखर की भांति ऊँचे ककुद् से शोभित हैं, महानागराज (शेष) के शरीर की भाँति पूँछ जिनकी शोभा बढ़ाती है, जिनके मुख सींग और पैर भी लाल हैं, नेत्र भी प्रायः लाल ही हैं, जिनके सारे अङ्ग मोटे और उन्नत हैं, जो अपनी मनोहर चाल से बड़ी शोभा पाते हैं, जिनमें उत्तम लक्षण विद्यमान हैं, जो चमचमाते हुए मणिमय आभूषणों से विभूषित हो अत्यन्त दीप्तिमान दिखाई देते हैं, चमचमाते हुए मणिमय आभूषणों से विभूषित हो अत्यन्त दीप्तिमान जो भगवान् शिव को प्रिय हैं और शिव में ही अनुरक्त रहते हैं, शिव और शिवा दोनों के ही जो ध्वज और वाहन हैं तथा उनके चरणों के स्पर्श से जिनका पृष्ठभाग परम पवित्र हो गया है, जो गौओं के राजपुरुष हैं, वे श्रेष्ठ और चमकीला त्रिशूल धारण करने वाले नन्दिकेश्वर वृषभ शिव और शिवा की आज्ञा शिरोधार्य करके मुझे अभीष्ट वस्तु प्रदान करें ५३–५७॥

नन्दीश्वरो महातेजा नगेन्द्रतनयात्मजः ।
सनारायणकैर्देवैर्नित्यमभ्यर्च्य वन्दितः ।।५८
शर्वस्यान्तःपुरद्वारि सार्द्धं परिजनैः स्थितः ।
सर्वेश्वरसमप्रख्यः सर्वासुरविमर्दनः ।।५९
सर्वेषां शिवधर्माणामध्यक्षत्वेऽभिषेचितः ।
शिवप्रियः शिवासक्तः श्रीमच्छूलवरायुधः ।।६०
शिवाश्रितेषु संसक्तस्तमनुरक्तश्च तैरपि ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां स मे कामं प्रयच्छतु ।।६१

जो गिरिराजनन्दिनी पार्वती के लिये पुत्र के तुल्य प्रिय हैं, श्री विष्णु आदि देवताओं द्वारा नित्य पूजित एवं वन्दित हैं, भगवान् शंकर के अन्तःपुर के द्वार पर परिजनों के साथ खड़े रहते हैं, सर्वेश्वर शिव के समान ही तेजस्वी हैं तथा समस्त असुरों को कुचल देने की शक्ति रखते हैं, शिवधर्म का पालन करने वाले सम्पूर्ण शिवभक्तों के अध्यक्ष पद पर जिनका अभिषेक हुआ है, जो भगवान् शिव के प्रिय, शिव में ही अनुरक्त तथा तेजस्वी त्रिशूल नामक श्रेष्ठ आयुध धारण करने वाले हैं, भगवान् शिव के शरणागत भक्तों पर जिनका स्नेह है तथा शिवभक्तों का भी जिनमें अनुराग है, वे महातेजस्वी नन्दीश्वर शिव और पार्वती की आज्ञा को शिरोधार्य करके मुझे मनोवाञ्छित वस्तु प्रदान करें ।।५८-६१।।

महाकालो महाबाहुर्महादेव इवापरः ।
महादेवाश्रितानां तु नित्यमेवाभिरक्षतु ।।६२

दूसरे महादेव के समान महातेजस्वी, महाबाहु, महाकाल महादेवजी के शरणागत भक्तों की नित्य ही रक्षा करें ।।६२।।

शिवप्रियः शिवासक्तः शिवयोरर्चकः सदा ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां स मे दिशतु कांक्षितम् ।।६३

वे भगवान् शिव के प्रिय हैं, भगवान् शिव में उनकी आसक्ति है तथा वे सदा ही शिव तथा पार्वती के पूजक हैं, इसलिये शिवा और शिव की आज्ञा का आदर करके मुझे मनोवाञ्छित वस्तु प्रदान करें ॥६३॥

सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः शास्ता विष्णोः परा तनुः ।
महामोहात्मतनयो मधुमांसासवप्रियः ।
तयोराज्ञां पुरस्कृत्य स मे कामं प्रयच्छतु ॥६४

जो सम्पूर्ण शास्त्रों के तत्त्वार्थ ज्ञाता, भगवान् विष्णु के द्वितीय स्वरूप, सबके शासक तथा महामोहात्मा कद्रू के पुत्र हैं, मधु, फल का गूदा और आसव जिन्हें प्रिय हैं, वे नागराज भगवान् शेष शिव और पार्वती की आज्ञा से मेरी इच्छा को पूरी करें ॥६४॥

ब्रह्माणी चैव माहेशी कौमारी वैष्णवी तथा ।
वाराही चैव माहेन्द्री चामुण्डा चण्डविक्रमा ॥६५
एता वै मातरः सप्त सर्वलोकस्य मातरः ।
प्रार्थितं मे प्रयच्छन्तु परमेश्वरशासनात् ॥६६

ब्रह्माणी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, माहेन्द्री तथा प्रचण्ड पराक्रमशालिनी चामुण्डा देवी--ये सात सर्वलोकजननी शिव के आदेश से मुझे मेरी प्रार्थित वस्तु प्रदान करें ॥६५-६६॥

मत्तमातङ्गवदनो गङ्गोमाशंकरात्मजः ।
आकाशदेहो दिग्बाहुः सोमसूर्याग्निलोचनोः ॥६७
ऐरावतादिभिर्दिव्यैर्दिग्गजैर्नित्यमर्चितः ।
शिवज्ञानमदोद्भिन्नस्त्रिदशानामविघ्नकृत ॥६८
विघ्नकृच्चासुरादीनां विघ्नेशः शिवभावितः ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां स मे दिशतु कांक्षितम् ॥६९

जिनका मतवाले हाथी का सा मुख है, जो गङ्गा, उमा और शिव के पुत्र हैं; आकाश जिनका शरीर है, दिशाएँ भुजाएँ हैं तथा चन्द्रमा, सूर्य, और अग्नि जिनके तीन नेत्र हैं, ऐरावत आदि दिव्य दिग्गज जिनकी नित्य पूजा करते हैं, जिनके मस्तक से शिवज्ञानमय मद की धारा बहती रहती है, जो देवताओं के विघ्न का निवारण करते हैं असुर आदि के कार्यों में विघ्न डालने वाले विघ्नराज गणेश शिव से भावित ही शिवा और शिव की आज्ञा शिरोधार्य करके मेरा मनोरथ पूर्ण करें ।।६७–६९।।

षण्मुखः शिवसम्भूतः शक्तिवज्रधरः प्रभुः ।
अग्नेश्च तनयो देवो ह्यपर्णातनयः पुनः ।।७०
गङ्गायाश्च गणाम्बायाः कृत्तिकानां तथैव च ।
विशाखेन च शाखेन नैगमेयेन चावृतः ।।७१
इन्द्रजिच्चेन्द्रसेनानीस्तारकासुरजित्तथा ।
शैलानां मेरुमुख्यानां वेधकश्च स्वतेजसा ।।७२
तप्तचामीकरप्रख्यः शतपत्रदलेक्षणः ।
कुमारः सुकुमाराणां रूपोदाहरणं महत् ।।७३
शिवप्रियः शिवासक्तः शिवपादार्चकः सदा ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां स मे दिशतु कांक्षितम् ।।७४

जिनके छः मुख हैं, भगवान् शिव से जिनको उत्पत्ति हुई है, जो शक्ति और वज्र धारण करने वाले प्रभु हैं, अग्नि के पुत्र तथा अपर्णा (शिवा) के बालक हैं, गङ्गा, गणाम्बा तथा कृत्तिकाओं के भी पुत्र हैं, विशाख, शाख और नैगमेय–इन तीनों भाइयों से जो सदा घिरे रहते हैं जो इन्द्र विजयी, इन्द्र के सेनापति तथा तारकासुर को परास्त करने वाले हैं । जिन्होंने अपनी शक्ति से मेरु आदि पर्वतों को छेद डाला है, जिनकी अङ्गकान्ति तप्त सुवर्ण के समान है, नेत्र प्रफुल्ल कमल के समान सुन्दर हैं, कुमार नाम वाले जो

सुकुमारता के उदाहरण हैं, शिव के प्रिय, शिव में अनुरक्त तथा शिवचरणों की नित्य अर्चना करने वाले स्कन्द शिव और शिवा की आज्ञा शिरोधार्य करके मुझे मनोवांछित वस्तु दें ॥७०-७४॥

ज्येष्ठा वरिष्ठा वरदा शिवयोर्यजने रता ।
तयोराज्ञां पुरस्कृत्य सा मे दिशतु कांक्षितम् ।।७५

सर्वश्रेष्ठ और वरदायिनी ज्येष्ठा देवी, जो सदा भगवान् शिव और पार्वती के पूजन में लगी रहती हैं, उन दोनों की आज्ञा मानकर मुझे अभीष्ट प्रदान करें ॥७५॥

त्रैलोक्यवन्दिता साक्षादुल्काकारा गणाम्बिका ।
जगत्सृष्टिविवृद्धयर्थं ब्रह्मणाभ्यर्थिता शिवात् ।।७६
शिवायाः प्रविभक्ताया भ्रुवोरन्तरनिस्सृता ।
दाक्षायणी सती मेना तथा हैमवती ह्युमा ।।७७
कौशिक्याश्चैवजननी भद्रकाल्यास्तथैव च ।
अपर्णायाश्च जननी पाटलायास्तथैव च ।।७८
शिवार्चनरता नित्यं रुद्राणी रुद्रवल्लभा ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां सा मे दिशतु कांक्षितम् ।।७९

त्रैलोक्यवन्दिता, साक्षात् उल्का (लुकाठी) जैसी आकृति वाली गणाम्बिका, जो जगत् की सृष्टि बढ़ाने के लिए ब्रह्माजी के प्रार्थना करने पर शिव के शरीर से पृथक् हुई शिवा के दोनों भौंहों के बीच से निकली थीं जो दाक्षायणी, सती, मेना तथा हिमवान् कुमारी उमा आदि के रूप में प्रसिद्ध हैं, कौशिकी, भद्रकाली, अपर्णा और पाटला की जननी हैं, नित्य शिवार्चन में तत्पर रहती हैं एवं रुद्रवल्लभा रुद्राणी कहलाती हैं, वे शिव और शिवा की आज्ञा शिरोधार्य करके मुझे मनोवांछित वस्तु दें। ७६-७९॥

चण्डः सर्वगणेशानः शम्भोर्वदन सम्भवः ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां स मे दिशतु कांक्षितम् ॥८०

भगवान् शंकर के मुख से प्रकट शिवगणों के स्वामी चण्ड शिवा-शिव की आज्ञा का आदर करके मुझे अभीष्ट प्रदान करें ।८०

पिङ्गलो गणपः श्रीमान् शिवासक्तः शिवप्रियः ।
आज्ञया शिवयोरेव स मे कामं प्रयच्छतु ॥८१

शिव में आसक्त शिव के प्रिय गणपाल श्रीमान् पिङ्गल शिव और शिवा की आज्ञा से ही मेरी मनोकामना पूर्ण करें । ८१।

भृङ्गीशो नाम गणपः शिवाराधनतत्परः ।
प्रयच्छतु स मे कामं पत्युराज्ञापुरस्सरम् ।८२

शिव की आराधना में तत्पर रहने वाले भृङ्गीश्वर नामक गणपाल अपने स्वामी की आज्ञा ले मुझे मनोवांछित वस्तु प्रदान करें ॥८२॥

वीरभद्रो महातेज हिमकुन्देन्दुसंनिभः ।
भद्रकालीप्रियो नित्यं मातृणां चाभिरक्षिता ।८३
यज्ञस्य च शिरोहर्ता दक्षस्य च दुरात्मनः ।
उपेन्द्रेन्द्रयमादीनां देवानामङ्गतक्षकः ॥८४
शिवास्यानुचरः श्रीमान् शिवशासनपालकः ।
शिवयोः शासनादेव स मे दिशतु कांक्षितम् ॥८५

हिम, कुन्द और चन्द्रमा के समान उज्ज्वल, भद्रकाली के प्रिय, सदा ही मातृगणों की रक्षा करने वाले, दुरात्मा दक्ष और उसके यज्ञ का सिर काटने वाले, उपेन्द्र, इन्द्र और यम आदि देवताओं के अङ्गों में घाव कर देने वाले, शिव के अनुचर तथा शिव की आज्ञा के पालक, महातेजस्वी श्रीमान् वीरभद्र शिव और शिवा के आदेश से ही मुझे मेरी मनचाही वस्तु दें ॥८३-८५॥

सरस्वती महेशस्य वाक्सरोजसमुद्भवा ।
शिवयोः पूजने सक्ता सा मे दिशतु कांक्षितम् ॥८६

महेश्वर के मुख कमल से प्रकट, शिव-पार्वती के पूजन में आसक्त सरस्वती देवी मुझे मनचाही वस्तु प्रदान करें ॥८६॥

विष्णोर्वक्षःस्थिता लक्ष्मीः शिवयोः पूजने रता ।
शिवयोः शासनादेव सा मे दिशतु कांक्षितम् ॥८७

शिव-शिवा के पूजन में लीन,विष्णु के वक्षस्थल में विराजमान लक्ष्मी देवी, शिव दम्पती के आदेश से ही मेरी अभिलाषा पूरी करें ॥८७॥

महामोटी महादेव्याः पादपूजापरायणा ।
तस्या एवं नियोगेन सा मे दिशतु कांक्षितम् ॥८८

महादेवी पार्वती के पादपद्मों की पूजा में परायण महामोटी उन्हीं की आज्ञा से मेरी मनचाही वस्तु मुझे दें ॥८८॥

कौशिकी सिंहमारूढा पार्वत्याः परमा सुता ।
विष्णोर्निद्रा महामाया महामहिषमर्दिनी ॥८९
निशुम्भशुम्भसंहर्त्री मधुमांसासवप्रिया ।
सत्कृत्य शासनं मातुः सा मे दिशतु कांक्षितम् ॥९०

पार्वती की सबसे श्रेष्ठ पुत्री सिंहवाहिनी कौशिकी, भगवान् विष्णु की योगनिद्रा महामाया, महामहिषमर्दिनी महालक्ष्मी तथा मधु और फलों के गूदे तथा रस का प्रेमपूर्वक भोग लगाने वाली निशुम्भ-शुम्भसंहारिणी महासरस्वती माता पार्वती की आज्ञा से मुझे मनोवांछित वस्तु प्रदान करें ॥८९-९०॥

रुद्रा रुद्रसमप्रख्याः प्रमथाः प्रथितौजसः ।
भूताख्याश्च महावीर्या महादेवसमप्रभाः ॥९१
नित्यमुक्ता निरुपमा निर्द्वन्द्वा निरुपप्लवाः ।
सशक्तयः सानुचराः सर्वलोकनमस्कृताः ॥९२

सर्वेषामेव लोकानां सृष्टिसंहरणक्षमाः ।
परस्परानुरक्ताश्च परस्परमनुव्रताः ॥९३
परस्परमतिस्निग्धा परस्परनमस्कृताः ।
शिवप्रियतमा नित्यं शिवलक्षणलक्षिताः ॥९४
सौम्या घोरास्तथा मिश्राश्चान्तरालद्वयात्मिकाः ।
विरूपाश्च सुरूपाश्च नानारूपधरास्तथा ॥९५

रुद्रदेव के समान तेजस्वी रुद्रगण, प्रख्यात पराक्रमी प्रमथगण तथा महादेवजी के समान तेजस्वी महाबली भूतगण, जो नित्यमुक्त, उपमारहित, निर्द्वन्द्व, उपद्रवशून्य; शक्तियों और अनुचरों के साथ रहने वाले, सर्वलोकवन्दित, समस्त लोकों की सृष्टि और संहार में समर्थ, परस्पर एक दूसरे के अनुरक्त और भक्त, आपस में अत्यन्त स्नेह रखने वाले, एक दूसरे को नमस्कार करने वाले, शिव के नित्य प्रियतम, शिव के ही चिह्नों से लक्षित, सौम्य, घोर, उभय-भाव युक्त, दोनों के बीच में रहने वाले द्विरूप, कुरूप, सुरूप और नाना रूपधारी हैं, वे शिव और शिवा की आज्ञा का सत्कार करते हुए मेरा मनोरथ सिद्ध करें ॥९१–९५॥

सत्कृत्य शिवयोराज्ञां ते मे कामं दिशन्तु वै ।
देव्या प्रियसखीवर्गो देवीलक्षणलक्षितः ॥९६
सहितो रुद्रकन्याभिः शक्तिभिश्चाप्यनेकशः ।
तृतीयावरणे शम्भोर्भक्त्या नित्यं समर्चितः ॥९७
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां स मे दिशतु मङ्गलम् ।

देवी के लक्षणों से लक्षित देवी की प्रिय सखियों का समुदाय, जो शिव के तीसरे आवरण में रुद्रकन्याओं तथा अनेक शक्तियों सहित नित्य भक्तिभाव से पूजित हुआ है, वह शिव-पार्वती की आज्ञा का सत्कार करके मुझे मङ्गल प्रदान करें ॥९६-९७॥

दिवाकरो महेशस्य मूर्तिर्दीप्तसुमण्डलः ॥९८
निर्गुणो गुणसंकीर्णस्तथैव गुणकेवलः ।
अविकारात्मकश्चाद्य एकः सामान्यविक्रयः ॥९९
असाधारणकर्मा च सृष्टिस्थितिलयक्रमात् ।
एवं त्रिधा चतुर्द्धा च विभक्तः पञ्चधा पुनः ॥१००
चतुर्थावरणे शम्भोः पूजितश्चानुगैः सह ।
शिवप्रियः शिवासक्तः शिवपादार्चने रतः ॥१०१
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां स मे दिशतु मङ्गलम् ।

भगवान् सूर्य महेश्वर की मूर्ति हैं, उनका सुन्दर मण्डल दीप्तिमान है, वे निर्गुण होते हुए भी कल्याणमय गुणों से युक्त हैं, केवल सद्गुण रूप हैं, निर्विकार, सबके आदिकारण और एकमात्र (अद्वितीय) हैं। यह सामान्य जगत् उन्हीं की सृष्टि है, सृष्टि, पालन और संहार के क्रम से उनके कर्म असाधारण हैं। इस तरह वे तीन, चार और पांच रूपों में विभक्त हैं, भगवान् शिव के चौथे आवरण में अनुचरों सहित उनकी पूजा हुई है। वे शिव के प्रिय, शिव में ही आसक्त तथा शिव के चरणारविन्दों की अर्चना में तत्पर हैं, ऐसे सूर्यदेव शिवा और शिव की आज्ञा का सत्कार करके मुझे मङ्गल प्रदान करें ॥९८-१०१॥

दिवाकरषडङ्गानि दीप्ताद्याश्चाष्टशक्तयः ॥१०२
आदित्यो भास्करो भानू रविश्चेत्यनुपूर्वशः ।
अर्को ब्रह्मा तथा रुद्रो विष्णुश्चादित्यमूर्तयः ॥१०३
विस्तरा सुतरा बोधिन्याप्यायिन्यपराः पुनः ।
उषा प्रभा तथा प्राज्ञा संध्या चेत्यपि शक्तयः ॥१०४
सोमादिकेतुपर्यन्ता ग्रहाश्च शिवभावितः ।
शिवयोराज्ञया नुन्ना मङ्गलं प्रदिशन्तु मे ॥१०५
अथवा द्वादशादित्यास्तथा द्वादशशक्तयः ।

ऋषयो देवगन्धर्वाः पन्नगाप्सरसां गणाः ।।१०६
ग्रामण्यश्च तथा यक्षा राक्षसाश्च सुरास्तथा ।
सप्त सप्तगणाश्चैते सप्तच्छन्दोमया हयाः । १०७
वालखिल्यादयश्चैव सर्वे शिवपदार्चकाः ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां मङ्गलं प्रदिशन्तु मे । १०८

सूर्यदेव से सम्बन्ध रखने वाले छहों अङ्ग, उनकी दीप्ता आदि आठ शक्तियाँ, आदित्य, भास्कर, भानु, रवि, अर्क, ब्रह्मा, रुद्र तथा विष्णु ये आठ आदित्य मूर्तियाँ और उनकी विस्तरा, सुतरा, बोधिनी, आप्यायिनी तथा उनके अतिरिक्त उषा, प्रभा, प्राज्ञा और संध्या—ये शक्तियाँ, चन्द्रमा से लेकर केतु पर्यन्त शिवभावित ग्रह, बारह आदित्य, उनकी बारह शक्तियाँ तथा ऋषि, देवता, गन्धर्व नाग, अप्सराओं के समूह, ग्रामणी (अगुवा), यक्ष, राक्षस—ये सात-सात संख्या वाले गण, सात छन्दोमय अश्व, बालखिल्य आदि मुनि—ये सबके सब भगवान् शिव के चरणारविन्दों की अर्चना करने वाले हैं। ये लोग शिव और पार्वती की आज्ञा का आदर करते हुए मुझे मङ्गल प्रदान करें ।।१०२–१०८।।

ब्रह्माथ देवदेवस्य मूर्तिर्भूमण्डलाधिपः ।
चतुःषष्टिगुणैश्वर्यो बुद्धितत्त्वे प्रतिष्ठितः ।।१०९
निर्गुणो गुणसंकीर्णस्तथैव गुणकेवलः ।
अविकारात्मको देवस्ततः साधारणः पुरः ।।११०
असाधारणकर्मा च सृष्टिस्थितिलयक्रमात् ।
एवं त्रिधा चतुर्धा च विभक्तः पञ्चधा पुनः ।।१११
चतुर्थावरणे शम्भोः पूजितश्च सहानुगैः ।
शिवप्रियः शिवासक्तः शिवपादार्चने रतः ।।११२
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां स मे दिशतु मङ्गलम् ।

ब्रह्माजी देवाधिदेव महादेवजी की मूर्ति हैं। भूमण्डल के अधिपति हैं। चौसठ गुणों के ऐश्वर्य से युक्त हैं और बुद्धितत्त्व में प्रतिष्ठित

हैं। वे निर्गुण होते हुए भी अनेक कल्याणमय गुणों से सम्पन्न हैं, सद्गुण समूह रूप हैं, निर्विकार देवता हैं, उनके सामने दूसरे सब लोग साधारण हैं। सृष्टि, पालन और संहार के क्रम से उनके सब कर्म असाधारण हैं। इस तरह वे तीन, चार एवं पाँच आवरणों या स्वरूपों में विभक्त हैं। भगवान् शिव के चौथे आवरण में अनुचरों सहित उनकी पूजा हुई है। वे शिव के प्रिय, शिव में ही आसक्त तथा शिव के चरणारविन्दों को अर्चना में तत्पर है, ऐसे ब्रह्मदेव शिवा और शिव को आज्ञा का सत्कार करके मुझे मङ्गल प्रदान करें ॥१०९–११२॥

हिरण्यगर्भो लोकेशो विराट् कालश्च पुरुषः ॥११३
सनत्कुमारः सनकः सनन्दश्च सनातनः ।
प्रजानां पतयश्चैव दक्षाद्या ब्रह्मसूनवः ॥११४
एकादश सपत्नीका धर्मः संकल्प एव च ।
शिवार्चनरताश्चैते शिवभक्तिपरायणाः ॥११५
शिवाज्ञावशगाः सर्वे दिशन्तु मम मङ्गलम् ।

हिरण्यगर्भ, लोकेश, विराट, कालपुरुष, सनत्कुमार, सनक, सन्दन, सनातन, दक्ष आदि ब्रह्मपुत्र, ग्यारह प्रजापति और उनकी पत्नियाँ धर्म तथा संकल्प – ये सबके सब शिव की अर्चना में तत्पर रहने वाले और शिवभक्तिपरायण हैं, अतः शिव की आज्ञा के अधीन हो मुझे मङ्गल प्रदान करें ॥११३-११५॥

चत्वारश्च तथा वेदाः सेतिहासपुराणकाः ॥११६
धर्मशास्त्राणि विद्याभिर्वैदिकीभिः समन्विताः ।
परस्पराविरुद्धार्थाः शिवप्रकृतिपादकाः ॥११७
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां मङ्गलं प्रदिशन्तु मे ।

चार वेद, इतिहास, पुराण, धर्मशास्त्र और वैदिक विद्याएँ – ये सब शिव के स्वरूप का प्रतिपादन करते हैं। इनका तात्पर्य एक

दूसरे के विरुद्ध नहीं है। ये शिव-शिवा की आज्ञा से मेरा मङ्गल करें ।।११६-११७।।

अथ रुद्रो महादेवः शम्भोर्मूर्तिर्गरीयसी ।।११८
वाह्नेयमण्डलाधीशः पौरुषैश्वर्यवान् प्रभुः ।
शिवाभिमानसम्पन्नो निर्गुणस्त्रिगुणात्मकः ।।११९
केवलं सात्त्विकश्चापि राजसश्चैव तामसः ।
अविकाररतः पूर्वं ततस्तु समविक्रियः ।।१२०
असाधारणकर्मा च सृष्टयादिकरणात्पृथक् ।
ब्रह्मणोऽपि शिरश्छेत्ता जनकस्तस्य तत्सुतः ।।१२१
जनकस्तनयश्चापि विष्णोरपि नियामकः ।
बोधकश्च तयोर्नित्यमनुग्रहकरः प्रभुः ।।१२२
अण्डस्यान्तर्वहिर्वर्ती रुद्रो लोकद्वयाधिपः ।
शिवप्रियः शिवासक्तः शिवपादार्चने रतः ।।१२३
शिवस्याज्ञां पुरस्कृत्य स मे दिशतु मङ्गलम् ।

महादेव रुद्र शम्भु की सबसे गरिष्ठ मूर्ति है। ये अग्निमण्डल के अधीश्वर हैं। समस्त पुरुषार्थों और ऐश्वर्यों से सम्पन्न हैं, सर्व समर्थ हैं। इनमें शिवत्व का अभिमान जाग्रत है। वे निर्गुण होते हुए भी त्रिगुण रूप हैं। केवल सात्त्विक भी हैं और राजस तथा तामस भी। ये पहले ही निर्विकार हैं। सब कुछ इन्हीं की सृष्टि है। सृष्टि, पालन और संहार करने के कारण इनका कर्म असाधारण माना जाता है। ये ब्रह्माजी के भी मस्तक का छेदन करने वाले हैं। ब्रह्माजी के पिता और पुत्र भी हैं। इसी तरह विष्णु के भी जनक और पुत्र हैं तथा उन्हें नियन्त्रण में रखने वाले हैं। ये उन दोनों ब्रह्मा और विष्णु को ज्ञान देने वाले तथा नित्य उन पर अनुग्रह रखने वाले हैं। ये प्रभु ब्रह्माण्ड के भीतर और बाहर भी व्याप्त हैं तथा इहलोक और परलोक दोनों के अधिपति रुद्र हैं।

ये शिव के प्रिय, शिव में ही आसक्त तथा शिव के ही चरणारविन्दों की अर्चना में तत्पर हैं, अतः शिव की आज्ञा को सामने रखते हुए मेरा मङ्गल करें ॥११८–१२३॥

तस्य ब्रह्म षडङ्गानि विद्येशानां तथाष्टकम् ॥१२४
चत्वारो मूर्तिभेदाश्च शिवपूर्वाः शिवार्चकाः ।
शिवो भवो हरश्चैव मृडश्चैव तथापरः ।
शिवस्याज्ञां पुरस्कृत्य मङ्गलं प्रदिशन्तु मे ॥१२५

भगवान् शंकर के स्वरूपभूत ईशानादि, ब्रह्म, हृदयादि छः अङ्ग, आठ विद्येश्वर, शिव आदि चार मूर्तिभेद-शिव, भव, हर और मृड ये सब शिव के पूजक हैं। ये लोग शिव की आज्ञा को शिरोधार्य करके मुझे मङ्गल प्रदान करें ॥१२४-१२५॥

अथ विष्णुर्महेशस्य शिवस्यैव परा तनुः ।
वारितत्त्वाधिपः साक्षादव्यक्तपदसंस्थितः ॥१२६
निर्गुणः सत्त्वबहुलस्तथैव गुणकेवलः ।
अविकाराभिमानी च त्रिसाधारणविक्रियः ॥१२७
असाधारणकर्मा च सृष्ट्यादिकरणात्पृथक् ।
दक्षिणाङ्गभवेनापि स्पर्धमानः स्वयम्भुवा ॥१२८
आद्येन ब्रह्मणा साक्षात्सृष्टः स्रष्टा च तस्य तु ।
अण्डस्यान्तर्बहिर्वर्ती विष्णुर्लोकद्वयाधिपः ॥१२९
असुरान्तकरश्चक्री शक्रस्यापि तथानुजः ।
प्रादुर्भूतश्च दशधा भृगुशापच्छलादिह ॥१३०
भूभारनिग्रहार्थाय स्वेच्छयावातरत् क्षितौ ।
अप्रमेयबलो मायी मायया मोहयञ्जगत् ॥१३१
मूर्तिं कृत्वा महाविष्णुं सदाविष्णुमथापि वा ।
वैष्णवैः पूजितो नित्यं मूर्तित्रयमयासने ॥१३२

शिवप्रियः शिवासक्तः शिवपादार्चने रतः ।
शिवस्याज्ञां पुरस्कृत्य स मे दिशतु मङ्गलम् ।।१३३

भगवान् विष्णु महेश्वर शिव के ही उत्कृष्ट स्वरूप हैं। वे जलतत्त्व के अधिपति और साक्षात् अव्यक्त पद पर प्रतिष्ठित हैं। प्राकृत गुणों से रहित हैं। उनमें दिव्य सत्त्वगुण को प्रधानता है तथा वे विशुद्ध गुणस्वरूप हैं। उनमें निर्विकाररूपता का अभिमान है। साधारणतया तीनों लोक उनकी कृति हैं। सृष्टि पालन आदि करने के कारण उनके कर्म असाधारण हैं। वे रुद्र के दक्षिणाङ्ग से प्रकट हुए स्वयम्भू के साथ एक समय स्पर्धा कर चुके हैं। साक्षात् आदि ब्रह्मा द्वारा उत्पादित होकर भी वे उनके भी उत्पादक हैं। ब्रह्माण्ड के भीतर और बाहर व्याप्त हैं, इसलिए विष्णु कहलाते हैं। दोनों लोकों के अधिपति हैं। असुरों का अन्त करने वाले, चक्रधारी तथा इन्द्र के भी छोटे भाई हैं। दस अवतार विग्रहों के रूप में यहाँ प्रकट हुए हैं। भृगु के शाप के बहाने पृथ्वी का भार उतारने के लिए उन्होंने स्वेच्छा से इस भूतल पर अवतार लिया है। उनका बल अप्रमेय है। वे मायावी हैं और अपनी माया द्वारा जगत् को मोहित करते हैं। उन्होंने महाविष्णु अथवा सदाविष्णु का रूप धारण करके त्रिमूर्तिमय आसन पर वैष्णवों द्वारा नित्य पूजा प्राप्त की है। वे शिव के प्रिय, शिव में ही आसक्त तथा शिव के चरणों की अर्चना में तत्पर हैं। वे शिव की आज्ञा शिरोधार्य करके मुझे मङ्गल प्रदान करें ।।१२६-१३३।।

वासुदेवोऽनिरुद्धश्च प्रद्युम्नश्च ततः परः ।
संकर्षणः समाख्याताश्चतस्रो मूर्तयो हरेः ।।१३४
मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नारसिंहोऽथ वामनः ।
रामत्रयं तथा कृष्णो विष्णुस्तुरगवक्त्रकः ।।१३५

चक्रं नारायणस्यास्त्रं पाञ्चजन्यं च शार्ङ्गकम् ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां मङ्गलं प्रदिशन्तु मे ॥१३६

वासुदेव, अनिरुद्ध, प्रद्युम्न तथा संकर्षण—ये श्री हरि की चार विख्यात मूर्तियाँ (व्यूह) हैं। मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, बलराम, श्रीकृष्ण, विष्णु, हयग्रीव, चक्र, नारायणास्त्र, पाञ्चजन्य तथा शार्ङ्गधनुष ये सबके सब शिव और शिवा की आज्ञा का सत्कार करते हुए मुझे मङ्गल प्रदान करें ॥१३४-१३६॥

प्रभा सरस्वती गौरी लक्ष्मीश्च शिवभाविता ।
शिवयोः शासनादेता मङ्गलं प्रदिशन्तु मे ॥१३७

प्रभा, सरस्वती, गौरी तथा शिव के प्रति भक्तिभाव रखने वाली लक्ष्मी शिवा के आदेश से मेरा मङ्गल करें ॥१३७॥

इन्द्रोऽग्निश्च यमश्चैव निर्ऋतिर्वरुणस्तथा ।
वायुः सोमः कुबेरश्च तथेशानस्त्रिशूलधृक् ॥१३८
सर्वे शिवार्चनरताः शिवसद्भावभाविताः ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां मङ्गलं प्रदिशन्तु मे ॥१३९

इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, सोम, कुबेर तथा त्रिशूलधारी ईशान—ये सब शिव-सद्भाव से भावित होकर शिवार्चन में तत्पर रहते हैं। ये शिव और शिवा की आज्ञा का आदर मान कर मुझे मंगल प्रदान करें ॥१३८-१३९॥

त्रिशूलमथ वज्रं च तथा परशुसायकौ ।
खड्गपाशाङ्कुशाश्चैव पिनाकश्चायुधोत्तमः ॥१४०
दिव्यायुधानि देवस्य देव्याश्चैतानि नित्यशः ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां रक्षां कुर्वन्तु मे सदा ॥१४१

त्रिशूल, वज्र, परशु बाण, खड्ग, पाश, अंकुश और श्रेष्ठ आयुधपिनाक—ये महादेव तथा महादेवी के दिव्य आयुध शिव और शिवा की आज्ञा का नित्य सत्कार करते हुए सदा मेरी रक्षा करें ॥१४०-१४१॥

वृषरूपधरो देवः सौरभेयो महाबलः ।
वडवाख्यानलस्पर्द्धी पञ्चगोमातृभिर्वृतः ॥१४२
वाहनत्वमनुप्राप्तस्तपसा परमेशयोः ।
तयोराज्ञां पुरस्कृत्य स मे कामं प्रयच्छतु ॥१४३

वृषभरूपधारी देव, जो सुरभि के महाबली पुत्र हैं, बडवानल से भी होड़ लगाते हैं, पाँच गोमाताओं से घिरे रहते हैं और अपनी तपस्या के प्रभाव से शिव और शिवा के वाहन हुए हैं, उन दोनों की आज्ञा शिरोधार्य करके मेरी इच्छा पूर्ण करें ॥१४२-१४३॥

नन्दा सुनन्दा सुरभिः सुशीला सुमनास्तथा ।
पञ्च गोमातरस्त्वेताः शिवलोके ऽवस्थिताः ॥१४४
शिवभक्तिपरा नित्यं शिवार्चनपरायणाः ।
शिवयोः शासनादेव दिशन्तु मम वाञ्छितम् ॥१४५

नन्दा, सुनन्दा, सुरभि, सुशीला और सुमना-ये पांच गोमाताएँ सदा शिवलोक में निवास करती हैं। ये सब की सब नित्य शिवार्चन में लीन ओर शिवभक्ति परायणा हैं, अतः शिव तथा शिवा के आदेश से ही मेरी इच्छा पूरी करें ॥१४४-१४५॥

क्षेत्रपालो महातेजा नीलजीमूतसंनिभः ।
दंष्ट्राकरालवदनः स्फुरद्रक्ताधरोज्ज्वलः ॥१४६
रक्तोर्ध्वमूर्द्धजः श्रीमान् भृकुटीकुटिलेक्षणः ।
रक्तवृत्तत्रिनयनः शशिपन्नगभूषणः ॥१४७

नग्न — स्त्रिशूलपाशासिकपालोद्यतपाणिकः ।
भैरवो भैरवैः सिद्धैर्योगिनीभिश्च संवृतः ॥१४८

क्षेत्रे क्षेत्रसमासीनः स्थितो यो रक्षकः सताम् ।
शिवप्रणामपरमः शिवसद्भावभावितः ॥१४९

शिवाश्रितान् विशेषेण रक्षन् पुत्रानिवौरसान् ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां स मे दिशतु मङ्गलम् ॥१५०

क्षेत्रपाल महान् तेजस्वी हैं, उनकी अङ्गकान्ति नीलमेघ के समान है और मुख दाढ़ों के कारण विकराल जान पड़ता है। उनके लाल लाल ओठ फड़कते रहते हैं, जिससे उनकी शोभा बढ़ जाती है, उनके सिर के बाल भी लाल और ऊपर को उठे हुए हैं। वे तेजस्वी हैं, उनकी भौंहें तथा आँखें भी टेढ़ी ही हैं। उनके लाल और गोलाकार तीन नेत्र हैं। चन्द्रमा और सर्प उनके आभूषण हैं। वे सदा नंगे रहते हैं तथा उनके हाथों में त्रिशूल, पाश, खड्ग और कपाल उठे रहते हैं। वे भैरव हैं और भैरवों, सिद्धों तथा योगिनियों से घिरे रहते हैं। प्रत्येक क्षेत्र में उनकी स्थिति है। वे वहाँ सत्पुरुषों के रक्षक होकर रहते हैं। उनका मस्तक शिव के चरणों में झुका रहता है, वे सदाशिव के सद्भाव से भावित है तथा शिव के शरणागत भक्तों की औरस पुत्रों की भांति विशेष रक्षा करते हैं। ये क्षेत्रपाल शिव-शिवा की आज्ञा से मेरा मङ्गल करें ॥१४६-१५०॥

तालजङ्घादयस्तस्य प्रथमावरणेऽर्चिताः ।
सत्कृत्य शिवयोराज्ञां चत्वारः समवन्तु माम् ॥१५१

शिव के प्रथम आवरण में पूजित तालजङ्घा आदि चारों देवता शिव की आज्ञा का आदर करके मेरी रक्षा करें ॥१५१॥

भैरवाद्याश्च ये चान्ये समन्ताच्चस्य वेष्टिताः ।
तेऽपि मामनुगृह्णन्तु शिवशासनगौरवात् ॥१५२

शिव को सब ओर से घेर कर स्थित भैरव आदि भी शिव के आदेश के गौरव से मुझ पर अनुग्रह करें ॥१५२॥

नारदाद्याश्च मुनयो दिव्या देवैश्च पूजिताः ।
साध्या नागाश्च ये देवा जनलोकनिवासिनः ॥१५३
विनिर्वृ चाधिकाराश्च महर्लोकनिवासिनः ।
सप्तर्षयस्तथान्ये वै वैमानिकगणैः सह ।।१५४
सर्वे शिवार्चनरताः शिवाज्ञावशवर्तिनः ।
शिवयोराज्ञया मह्यं दिशन्तु समकांक्षितम् ॥१५५

नारद आदि देव पूजित दिव्य मुनि, साध्य, नाग, जनलोक निवासी देवता, विशेषाधिकार से सम्पन्न महर्लोक निवासी, सप्तर्षि तथा अन्य वैमानिकगण सदाशिव की अर्चना में तत्पर रहते हैं। ये सब शिव की आज्ञा से मुझे मनोवांछित वस्तु प्रदान करें ॥१५३-१५५॥

गन्धर्वाद्याः पिशाचान्ताश्चतस्रो देवयोनयः ।
सिद्धा विद्याधराद्याश्च येऽपि चान्ये नभश्चराः॥१५६
असुरा राक्षसाश्चैव पातालतलवासिनः ।
अनन्ताद्याश्च नागेन्द्रा वैनतेयादयो द्विजा ॥१५७
कूष्माण्डाः प्रेतवेताला ग्रहा भूतगणाः परे ।
डाकिन्यश्चापि योगिन्यः शाकिन्यश्चापि तादृशाः॥१५८
क्षेत्रारामगृहादीनि तीर्थान्यायतनानि च ।
द्वीपाः समुद्रा नद्यश्च नदाश्चान्ये सरांसि च ॥१५९
गिरयश्च सुमेर्वाद्याः काननानि समन्ततः ।
पशवः पक्षिणो वृक्षाः कृमिकीटादयो मृगाः ॥१६०

भुवनान्यपि सर्वाणि भुवनानामधीश्वराः ।
अण्डान्यावरणैः सार्द्धं मासाश्च दश दिग्गजाः ॥१६१
वर्णाः पदानि मन्त्राश्च तत्त्वान्यपि सहाधिपैः ।
ब्रह्माण्डधारका रुद्रारुद्राश्चान्ये सशक्तिकाः ॥१६२
यच्च किंचिज्जगत्यस्मिन्दृष्टं चानुमितं श्रुतम् ।
सर्वे कामं प्रयच्छन्तु शिवयोरेव शासनात् ॥१६३

गन्धर्वों से लेकर पिशाच पर्यन्त जो चार देव योनियाँ हैं, जो सिद्ध विद्याधर, अन्य आकाशचारी, असुर, राक्षस, पाताल तलवासी अनन्त आदि नागराज, गरुड़ आदि दिव्य पक्षी, कूष्माण्ड, प्रेत, वेताल, ग्रह, भूतगण, डाकिनियाँ, योगिनियाँ, शाकिनियां तथा वैसी ही और स्त्रियाँ क्षेत्र, आराम (बगीचे), गृह आदि तीर्थ, देवमन्दिर, द्वीप, समुद्र, नदियां, नद, सरोवर, सुमेरु आदि पर्वत, सब ओर फैले हुए वन, पशु, पक्षी, वृक्ष, कृमि, कोट आदि मृग, समस्त भुवन, भुवनेश्वर, आवरणों सहित ब्रह्माण्ड, बारहमास, दस दिग्गज, वर्ण, पद, मन्त्र, तत्त्व, उनके अधिपति, ब्रह्माण्ड-धारक रुद्र, अन्य रुद्र और उनकी शक्तियाँ तथा इस जगत् में जो कुछ भी देखा, सुना और अनुमान किया हुआ है—सब शिवा और शिव की आज्ञा से मेरा मनोरथ पूर्ण करें ॥१५६-१६३॥

अथ विद्या परा शैवी पशुपाशविमोचिनी ।
पञ्चार्थसंज्ञिता दिव्या पशुविद्याबहिष्कृता ॥१६४
शास्त्रं च शिवधर्माख्यं धर्माख्यं च तदुत्तरम् ।
शैवाख्यं शिवधर्माख्यपुराणं श्रुतिसम्मितम् ॥१६५
शैवागमाश्च ये चान्ये कामिकाद्याश्चतुर्विधाः ।
शिवाभ्यामविशेषेण उत्कृत्येह समर्चिताः ॥१६६
ताभ्यामेव समाज्ञाता ममाभिप्रेतसिद्धये ।
कर्मेदमनुमन्यन्तां सफलं साध्वनुष्ठितम् ॥१६७

जो पञ्च-पुरुषार्थ स्वरूपा होने से पञ्चार्था कही गयी है, जिसका स्वरूप दिव्य है तथा जो पशु-विद्या की कोटि से बाहर है, वह पशुओं को पाश से मुक्त करने वाली शैवी परा विद्या, शिवधर्म शास्त्र, शैवधर्म, श्रुतिसम्मत शिवसंज्ञक पुराण, शैवागम तथा धर्म-कामादि चतुर्विध पुरुषार्थ, जिन्हें शिव और शिवा के समान ही मानकर उन्हीं के समान पूजा दी गई है। उन्हीं दोनों की आज्ञा से मेरी अभीष्ट सिद्धि के लिए इस कर्म का अनुमोदन करें, इसे सफल और सुसम्पन्न घोषित करें ।।१६४-१६७।।

श्वेताद्या नकुलीशान्ताः सशिष्याश्चापि देशिकाः ।
तत्संततीया गुरवो विशेषाद् गुरवो मम ।।१६८
शैवा माहेश्वराश्चैव ज्ञानकर्मपरायणाः ।
कर्मेदमनुमन्यन्तां सफलं साध्वनुष्ठितम् ।।१६९

श्वेत से लेकर नकुलीशपर्यन्त, शिष्य सहित आचार्यगण, उसकी सन्तान परम्परा में उत्पन्न गुरुजन, विशेषतः मेरे गुरु, शैव, माहेश्वर जो ज्ञान और कर्म में तत्पर रहने वाले हैं, मेरे इस कर्म को सफल और सुसम्पन्न मानें ।।१६८-१६९।।

लौकिका ब्राह्मणाः सर्वे क्षत्रियाश्च विशः क्रमात् ।
वेदवेदाङ्गतत्त्वज्ञाः सर्वशास्त्रविशारदाः ।।१७०
सांख्या वैशेषिकाश्चैव यौगा नैयायिकानराः ।
सौरा ब्राह्मास्तथा रौद्रा वैष्णवाश्चापरे नराः ।।१७१
शिष्टाः सर्वे विशिष्टाश्च शिवशासनयन्त्रिताः ।
कर्मेदमनुमन्यन्तां ममाभिप्रेतसाधकम् ।।१७२

लौकिक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, वेद वेदाङ्गों के तत्त्वज्ञ विद्वान्, सर्वशास्त्रकुशल, सांख्यवेत्ता, वैशेषिक, योगशास्त्र के आचार्य, नैयायिक, सूर्योपासक, ब्रह्मोपासक, शैव, वैष्णव तथा अन्य सब शिष्ट और

विशिष्ट पुरुष शिव की आज्ञा से मेरे इस कर्म को अभीष्ट-साधक मानें ॥१७०–१७२॥

शैवाः सिद्धान्तमार्गस्थाः शैवाः पाशुपतास्तथा ।
शैवा महाव्रतधराः शैवा कापालिकाः परे । १७३
शिवाज्ञापालकाः पूज्या ममापि शिवशासनात् ।
सर्वे मामनुगृह्णन्तु शंसन्तु सफलाक्रियाम् । १७४

सिद्धान्तमार्गी शैव, पाशुपत शैव, महाव्रतधारी शैव—ये सब के सब शिव की आज्ञा के पालक तथा मेरे भी पूज्य हैं। अतः शिव की आज्ञा से ये मुझ पर अनुग्रह करें और मेरे कार्य को सफल घोषित करें ॥१७३–१७४।

दक्षिणज्ञाननिष्ठाश्च दक्षिणोत्तरमार्गगाः ।
अविरोधेन वर्तन्तां मन्त्रं श्रेयोऽर्थिनो मम ॥१७५

दक्षिणाचार के ज्ञान में परिनिष्ठित तथा उत्कृष्ट दक्षिण मार्ग पर चलने वाले परस्पर विरोध न रखते हुए मन्त्र का जप करें और मेरे कल्याणकामी हों ॥१७५॥

नास्तिकाश्च शठाश्चैव कृतघ्नाश्चैव मानसाः ।
पाषण्डाश्चाति पापाश्च वर्तन्तां दूरतो मम ॥१७६
बहुभिः किं स्तुतैरत्रये ऽपिकेऽपि चिदास्तिकाः ।
सर्वे मामनुगृह्णन्तु सन्तः शंसन्तु मङ्गलम् ॥१७७

नास्तिक, शठ, कृतघ्न, तामस, पाखण्डी और अति पापी प्राणी मुझसे दूर ही रहें। यहाँ बहुतों की स्तुति से क्या लाभ ? जो कोई भी आस्तिक संत हैं, वे सब मुझ पर अनुग्रह करें और मेरे मंगल होने का आशीर्वाद दें ॥१७६-१७७॥

नमः शिवाय साम्बाय ससुतायादिहेतवे ।
पञ्चावरणरूपेण प्रपञ्चेनावृताय ते ॥१७८

पंचावरण रूप प्रपञ्च से घिरे, सबके आदि कारण आप पुत्र सहित साम्ब सदाशिव को मेरा नमस्कार है ॥१७८॥

इत्युक्त्वा दण्डवद् भूमौ प्रणिपत्य शिवं शिवाम् ।
जपेत्पञ्चाक्षरीं विद्यामष्टोत्तरशतावराम् ॥१७९
तथैव शक्तिविद्यां च जपित्वा तत्समर्पणम् ।
कृत्वा तं क्षमयित्वेशं पूजाशेषं समापयेत् ॥१८०

ऐसा कहकर शिव और शिवा को भूमि पर दण्डवत प्रणाम करे और एक सौ आठ बार पञ्चाक्षरी विद्या का जप करे। इसी प्रकार शक्ति विद्या (ओ३म् नमः शिवायै) का जप करके उसका समर्पण करे। महादेवजी से क्षमा माँगकर शेष पूजा की समाप्ति करे ॥१७९-१८०॥

एतत्पुण्यतमं स्तोत्रं शिवयोर्हृदयंगमम् ।
सर्वाभीष्टप्रदं साक्षाद्भुक्तिमुक्त्येकसाधनम् ॥१८१

यह परम पुण्यमय स्तोत्र शिव और शिवा को हृदय से ग्राह्य है, अभीष्ट-साधक है और भोग तथा मोक्ष का एक मात्र साक्षात् साधन है ॥१८१॥

य इदं कीर्तयेन्नित्यं श्रृणुयाद्वा समाहितः ।
स विधूयाशु पापानि शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥१८२

एकाग्र चित्त से नित्य इसका कीर्तन अथवा श्रवण करने वाला पापमुक्त होकर भगवान् शिव का सायुज्य प्राप्त कर लेता है ॥१८२॥

गोघ्नश्चैव कृतघ्नश्च वीरहा भ्रूणहापि वा ।
शरणागतघाती च मित्रविश्रम्भघातकः ॥१८३
दुष्टपापसमाचारो मातृहा पितृहापि वा ।
स्तवेनानेन जप्तेन तत्तत्पापात् प्रमुच्यते ॥१८४

जो गो-हत्यारा, कृतघ्न, वीरघाती, गर्भस्थ शिशु की हत्या करने वाला, शरणागत का वध करने वाला और मित्र के प्रति विश्वासघाती है, दुराचार और पापाचार में ही लगा रहता है तथा माता और पिता का भी घातक है, वह भी इस स्तोत्र के जप से तत्काल पापमुक्त हो जाता है ॥१८३-१८४॥

दुःस्वप्नादिमहानर्थसूचकेषु भयेषु च ।
यदि संकीर्तयेदेतन्न ततोऽनर्थभाग्भवेत् ॥१८५

दुःस्वप्न आदि महान् अनर्थसूचक भय उपस्थित होने पर इस स्तोत्र का कीर्तन करे तो स्तोता अनर्थ का भागी नहीं होता।१८५।

आयुरारोग्यमैश्वर्यं यच्चान्यदपि वाञ्छितम् ।
स्तोत्रस्यास्य जपे तिष्ठंस्तत्सर्वं लभते नरः ॥१८६

आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य तथा मनोवांछित वस्तुओं को इस स्तोत्र के जप में संलग्न पुरुष पाता है ॥१८६॥

असम्पूज्य शिवं स्तोत्रजपात्फलमुदाहृतम् ।
सम्पूज्य च जपे तस्य फलं वक्तुं न शक्यते ॥१८७

बिना पूजा स्तोत्र का केवल पाठ करने से मिलने वाला फल यहाँ बताया गया; शिव की पूजा करके स्तोत्र का पाठ करने से जो फल मिलता है, उसका तो वर्णन ही नहीं किया जा सकता।१८७।

आस्तामियं फलावाप्तिरस्मिन् संकीर्तिते सति ।
सार्द्धमम्बिकया देवः श्रुत्वैव दिवि तिष्ठति ॥१८८
तस्मान्नभसि सम्पूज्य देवदेवं सह मया ।
कृताञ्जलिपुटस्तिष्ठन् स्तोत्रं मे तदुदीरयेत् ॥१८९

यह फल की प्राप्ति अलग रहे, इस स्तोत्र का कीर्तन करने पर इसे सुनते ही माता पार्वती सहित महादेवजी आकाश में

में आकर खड़े हो जाते हैं। अतः उस समय उमा सहित देवदेव महादेव की आकाश में पूजा करके दोनों हाथ जोड़ खड़ा हो जाय और इस स्तोत्र का पाठ करे ॥१८८-१८९॥

(शि० पु० वा० संहि० अध्या० ३१)

शिवाष्टकम् *

तस्मै नमः परमकारणकारणाय
दीप्तोज्ज्वलज्ज्वलितपिङ्गललोचनाय ।
नागेन्द्रहारकृतकुण्डलभूषणाय
ब्रह्मेन्द्रविष्णुवरदाय नमः शिवाय ॥१
श्रीमत्प्रसन्नशशिपन्नगभूषणाय
शैलेन्द्रजावदनचुम्बितलोचनाय ।
कैलासमन्दरमहेन्द्रनिकेतनाय
लोकत्रयार्तिहरणाय नमः शिवाय ॥२
पद्मावदातमणिकुण्डलगोवृषाय
कृष्णागरुप्रचुरचन्दनचर्चिताय ।
भस्मानुषक्तविकचोत्पलमल्लिकाय
नीलाब्जकण्ठसदृशाय नमः शिवाय ॥३
लम्बत्सपिङ्गलजटामुकुटोत्कटाय
दंष्ट्राकरालविकटोत्कटभैरवाय ।
व्याघ्राजिनाम्बरधराय मनोहराय
त्रैलोक्यनाथनमिताय नमः शिवाय ॥४

दक्षप्रजापतिमहामखनाशनाय
क्षिप्रं महात्रिपुरदानवघातनाय ।
ब्रह्मोर्जितोर्ध्वगकरोटिनिकृन्तनाय
योगाय योगनमिताय नमः शिवाय ॥५
संसारसृष्टिघटनापरिवर्तनाय
रक्षःपिशाचगणसिद्धसमाकुलाय ।
सिद्धोरगग्रहगणेन्द्रनिषेविताय
शार्दूलचर्मवसनाय नमः शिवाय ॥६
भस्माङ्गरागकृतरूपमनोहराय
सौम्यावदातवनमाश्रितमाश्रिताय ।
गौरीकटाक्षनयनार्धनिरीक्षणाय
गोक्षीरधारधवलाय नमः शिवाय ॥७
आदित्यसोमवरुणानिलसेविताय
यज्ञाग्निहोत्रवरधूमनिकेतनाय ।
ऋक्सामवेदमुनिभिः स्तुति संयुताय
गोपाय गोपनमिताय नमः शिवाय ॥८
शिवाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥९

जो कारण के भी परम कारण हैं, (अग्नि शिखा के समान) अति देदीप्यमान उज्ज्वल और पिंगल नेत्रों वाले हैं, सर्पराजों के हार कुंडलादि से भूषित हैं तथा ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्रादि को भी वर देने वाले हैं उन श्री शंकरजी को नमस्कार करता हूं ॥१॥ शोभायमान एवं निर्मल चन्द्रकला तथा सर्प ही जिनके भूषण हैं, गिरिराजकुमारी अपने मुख से जिनके लोचनों का चुम्बन करतो

हैं, कैलाश और महेन्द्र गिरि जिनके निवासस्थान हैं तथा जो त्रिलोकी के दुःख को दूर करने वाले हैं उन श्री शंकर को नमस्कार करता हूँ ॥२॥ जो स्वच्छ रागमणि के कुण्डलों से किरणों की वर्षा करने वाले अगरु और बहुत से चन्दन से चर्चित तथा भस्म, प्रफुल्लित कमल और जूही से सुशोभित हैं; ऐसे नील कमल सदृश कण्ठ वाले शिव को नमस्कार है ॥३॥ लटकती हुई पिंगल वर्ण जटाओं के सहित मुकुट धारण करने से जो उत्कट जान पड़ते हैं, तीक्ष्ण दाढों के कारण जो अति विकट और भयानक प्रतीत होते हैं, व्याघ्र चर्म धारण किये हुए हैं, अति मनोहर हैं तथा तीनों लोकों के अधीश्वर भी जिनके चरणों में झुकते हैं, उन श्री शंकर को प्रणाम है ॥४॥ दक्ष प्रजापति के महायज्ञ को ध्वंस करने वाले महान् त्रिपुरासर को शीघ्र मार डालने वाले, दर्पयुक्त ब्रह्मा के ऊर्ध्वमुख पञ्चम शिर का छेदन करने वाले, योग स्वरूप, योग से नमस्कृत शिव को मैं नमस्कार करता हूँ ॥५॥ जो कल्प-कल्प में संसार रचना का परिवर्तन करने वाले हैं; राक्षस, पिशाच और सिद्धगणों से घिरे रहते हैं; सिद्ध, सर्प, ग्रहगण तथा इन्द्रादि से सेवित हैं तथा जो व्याघ्रचर्म धारण किये हुए हैं उन श्री शङ्कर को नमस्कार करता हूं ॥६॥ भस्मरूपी अङ्गराग से जिन्होंने अपने रूप को अत्यन्त मनोहर बनाया है, जो अति शान्त और सुन्दर वन का आश्रय करने वालों के आश्रित हैं। श्री पार्वतीजी के कटाक्ष की ओर जो बाँकी चितवन से निहार रहे हैं और गोदुग्ध की धारा के समान जिनका श्वेत वर्ण है, उन श्री शंकर को मैं नमस्कार करता हूं ॥७॥ सूर्य, चन्द्र, वरुण और पवन से जो सेवित हैं, यज्ञ और अग्निहोत्र के धूम में जिनका निवास है, ऋक्-सामादि वेद और मुनिजन जिनकी स्तुति करते हैं, उन नन्दीश्वर पूजित गौओं का पालन करने वाले महादेवजी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥८॥ जो इस पवित्र शिवाष्टक को श्री महादेवजी के समीप पढ़ता है वह

शिवलोक को प्राप्त होता है और श्री शंकरजी के साथ आनन्द प्राप्त करता है ॥६॥

* गौरीशाष्टकम् *

भज गौरीश भज गौरीशं गौरीशं भज मन्दमते । (ध्रुवपदम्)
जलभवदुस्तरजलधिसुतरणं ध्येयं चित्ते शिवहरचरणम् ।
अन्योपायं न हि न हि सत्यं ज्ञेयं शङ्कर शङ्कर नित्यम् ॥१भज०
दारापत्यं क्षेत्रं वित्तं देहं गेहं सर्वमनित्यम् ।
इति परिभावय सर्वमसारं गर्भं विकृत्या स्वप्नविचारम् ॥२भज०
मलवैचित्ये पुनरावृत्तिः पुनरपि जननीजठरोत्पत्तिः ।
पुनरप्याशाकुलितं जठरं किं न हि मुञ्चसि कथयेश्चित्तम् ॥३भज०
मायाकल्पितमैन्द्रं जालं न हि तत्सत्यं दृष्टिविकारम् ।
ज्ञाते तत्त्वे सर्वमसारं मा कुरु मा कुरु विषयविचारम् ॥४भज०
रज्जौ सर्पभ्रमणारोपस्तद्वद्ब्रह्मणि जगदारोपः ।
मिथ्यामायामोहविकारं मनसि विचारय बारम्बारम् ।५भज०
अध्वरकोटिगङ्गागमनं कुरुते योगं चेन्द्रियदमनम् ।
ज्ञानविहीनः सर्वमतेन न भवति मुक्तो जन्मशतेन ॥६भज०
सोऽहं हंसो ब्रह्मैवाहं शुद्धानन्दस्तत्त्वपरोऽहम् ।
अद्वैतोऽहं सङ्गविहीने चेन्द्रिय आत्मनि निखिले लीने ॥७भज०
शंकरकिङ्कर मा कुरु चिन्तां चिन्तामणिना विरचितमेतत् ।
यः सद्भक्त्या पठति हि नित्यं ब्रह्मणिलीनो भवति हि सत्यम्।८भज०

इति श्रीचिन्तामणि विरचितं गौरीशाष्टकं सम्पूर्णम्

हे मन्दबुद्धिवाले! तू सदा गौरीश (शंकर भगवान्) का भजन कर! संसार रूप दुस्तर सागर से पार लगाने वाले, भगवान् शिव के ही चरण का ध्यान कर, संसार से उद्धार पाने का दूसरा कोई उपाय ही नहीं है, यह सत्य जान सदा शंकर के नाम का ही गान किया कर। हे मन्दमते! सदागौरीपति भगवान् शिव को भज ॥१॥ स्त्री, सन्तान, क्षेत्र, धन, शरीर और गृह––ये सब अनित्य हैं! गर्भविकार के परिणामभूत इस संसार को सारहीन तथा स्वप्नवत असत्य समझकर सबकी उपेक्षा कर दे, हे मन्दमते! सदा गौरीपति भगवान् शिव को भज ॥२॥ मलभूत संसार के रूप पर मोहित होने से पुनः संसार में लौटना पड़ता है, फिर माता के गर्भ से उत्पत्ति होती है अतः पुनः आशा से व्याकुल हुए अपने चित्त से कह दे कि रे चित्त! क्यों नहीं इस पेट की चिन्ता को छोड़ता है और हे मन्दमते! तू सदा गौरीपति भगवान् शिव को भज ॥३॥ अरे, यह सारा प्रपञ्चमाया से कल्पित इन्द्रजाल है, इसका विकार प्रत्यक्ष देखा गया है, इसे कदापि सत्य न जान, तत्त्वज्ञान हो जाने पर सब कुछ असार ही ठहरता है, इसलिये विषयोपभोग का विचार कभी न कर, हे मन्दमते! सदा गौरीपति भगवान् शिव को भज ॥४॥ जैसे रज्जु में भ्रम से सर्प का आरोप होता है, उसी प्रकार शुद्ध ब्रह्म में जगत् का आरोपमात्र है, यह माया-मोह का विकार असत्य है, इस बात को तू बार बार मन में विचार; हे मन्दमते! सदा गौरीपति शिव को भज ॥५॥ लोग करोड़ों यज्ञ करते हैं, स्नानार्थ गङ्गाजी जाते हैं, इन्द्रियों को दमन करने वाला योग करते हैं परन्तु यह सबका सिद्धान्त मत है कि ज्ञानहीन जीव सैंकड़ों जन्म में भी मुक्त नहीं हो सकता, इसलिए हे मन्दमते! तू सदा गौरीपति भगवान् शिव का भजन कर ॥६॥ अब सम्पूर्ण इन्द्रियां विषयों से निवृत्त होकर आत्मा में लीन हो जाती हैं, उस समय ऐसा भान होने लगता है कि मैं ही परमात्मा हूँ, मैं शुद्ध ब्रह्म ही हूँ तथा इन पञ्चभूतों से पृथक् शुद्ध अद्वैत

आनन्दस्वरूप हूँ, हे मन्दमते! सदा गौरीपति भगवान् शिव का भजन कर ॥७॥ हे शिव के सेवक! तू चिन्ता न कर, क्योंकि जो पुरुष चिन्तामणि द्वारा रचित इस गौरीशाष्टक स्तोत्र का शुद्ध भक्ति से नित्य पाठ करता है, वह ब्रह्म में लीन हो जाता है, यह सत्य बात है, इसलिए हे मन्दमते! तू सदा गौरीपति भगवान् शिव को भज ॥८॥

* श्री विश्वनाथाष्टकम् *

गङ्गातरङ्गरमणीयजटाकलापं
गौरीनिरन्तरविभूषितवामभागम् ।
नारायणप्रियमनङ्गमदापहारं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम् ॥१
वाचामगोचरमनेकगुणस्वरूपं
वागीशविष्णुसुरसेवितपादपीठम् ।
वामेन विग्रहवरेण कलत्रवन्तम्
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम् ॥२
भूताधिपं भुजगभूषणभूषिताङ्गं
व्याघ्राजिनाम्बरधरं जटिलं त्रिनेत्रम् ।
पाशांकुशाभयवरप्रदशूलपाणिम्
वाराणसीपुरपतिं भज विश्नाथम् ॥३
शीतांशु शोभितकिरीटविराजमानं
भालेक्षणानलविशोषित पञ्चबाणम् ।
नागाधिपा रचितभासुरकर्णपूरम्
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम् ॥४

पञ्चाननं दुरितमत्तमतङ्गजानां
नागान्तकं दनुजपुङ्गवपन्नगानाम् ।
दावानलं मरणशोकजराटवीनाम्
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम् ॥५

तेजोमयं सगुणनिर्गुणमद्वितीय-
मानन्दकन्दमपराजितमप्रमेयम् ।
नागात्मकं सकलनिष्कलमात्मरूपम्
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम् ॥६

रागादिदोषरहितं स्वजनानुरागं
वैराग्यशान्तिनिलयं गिरिजासहायम् ।
माधुर्यधैर्यसुभगं गरलाभिरामम्
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम् ॥७

आशां विहाय परिहृत्य परस्य निन्दां
पापे रतिं च सुनिवार्य मनः समाधौ ।
आदायहृत्कमलमध्यगतं परेशम्
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम् ॥८

वाराणसी पुरपतेः स्तवनं शिवस्य
व्याख्यातमष्टकमिदं पठते मनुष्यः ।
विद्यां श्रियं विपुलसौख्यमनन्तकीर्तिं
सम्प्राप्यदेहविलये लभते च मोक्षम् ॥९

विश्वनाथाष्टकमिदं यः पठेच्छिवसन्निधौ ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥१०

जिनकी जटाएँ गङ्गाजी की लहरों से सुन्दर प्रतीत होती हैं, जिनका वाम भाग सदा पार्वती जी मे सुशोभित रहता है, जो नारायण के प्रिय और कामदेव के मद का नाश करने वाले हैं, उन काशीपति विश्वनाथ को भज ॥ १ । वाणी द्वारा जिनका वर्णन नहीं हो सकता, जिनके अनेक गुण और अनेक स्वरूप हैं; ब्रह्मा, विष्णु और अन्य देवता जिनकी चरण पादुका का सेवन करते हैं; जो अपने सुन्दर वामाङ्ग के द्वारा ही सपत्नीक हैं, उन काशीपति विश्वनाथ को भज ॥२॥ जो भूतों के अधिपति हैं, जिनका शरीर सर्परूपी गहनों से विभूषित हैं, जो बाघ की खाल का वस्त्र पहनते हैं, जिनके हाथों में पाश, अङ्कुश, अभयवर और शूल हैं, उन जटाधारी त्रिनेत्र, काशीपति विश्वनाथ को भज ॥३॥ जो चन्द्रमा द्वारा प्रकाशित किरीट से शोभित हैं, जिन्होंने अपने भालस्थ नेत्र को अग्नि से कामदेव को दग्ध कर दिया, जिनके कानों में बड़े-बड़े सांपों के कुण्डल चमक रहे हैं उन काशीपति विश्वनाथ को भज ॥४॥ जो पापरूपी मतवाले हाथियों के मारने वाले सिंह हैं, दैत्य समूहरूपी साँपों का नाश करने वाले गरुड़ हैं तथा जो मरण, शोक और बुढ़ापा रूपी भीषण वन को जलाने वाले दावानल हैं, ऐसे काशीपति विश्वनाथ को भज ॥५॥ जो तेजपूर्ण, सगुण, निर्गुण, अद्वितीय, आनन्दकन्द, अपराजित और अतुलनीय हैं, जो अपने शरीर पर साँपों को धारण करते हैं, जिनका रूप ह्रास-वृद्धि रहित है ऐसे आत्मस्वरूप काशीपति विश्वनाथ को भज ॥६॥ जो रागादि दोषों से रहित हैं, अपने भक्तों पर कृपा रखते हैं, वैराग्य और शान्ति के स्थान हैं, पार्वतीजी सदा जिनके साथ रहती हैं, जो धीरता और मधुर स्वभाव से सुन्दर जान पड़ते हैं तथा जिनका कण्ठ गरल के चिह्न से सुशोभित हैं, उन काशीपति विश्वनाथ को भज ॥७। सब आशाओं को छोड़कर, दूसरों की निन्दा त्यागकर और पापकर्म से अनुराग हटाकर, चित्त को समाधि में लगाकर, हृदयकमल में प्रकाशमान परमेश्वर काशीपति विश्वनाथ को भज ॥८॥ जो मनुष्य

काशीपति शिव के इन आठ श्लोकों के स्तवन का पाठ करता है, वह विद्या, धन, प्रचुर सौख्य और अनन्तकीर्ति प्राप्त कर देहावसान होने पर मोक्ष भी प्राप्त कर लेता है ॥९॥ जो शिव के समीप इस विश्वनाथाष्टक का पाठ करता है वह शिवलोक प्राप्त करता है और शिव के साथ आनन्दित होता है ॥१०॥

इति श्री महर्षि व्यास प्रणीत श्री विश्वनाथाष्टक सम्पूर्ण

* परमेश्वर स्तोत्रम् *

जगदीश सुधीस भवेश विभो
परमेश परात्पर पूत पित ।
प्रणतं पतितं हतबुद्धिबलं
जनतारण तारय तापितकम् ॥१

गुणहीनसुदीनमलीनमतिं
त्वयि पातरि दातरि चापरतिम् ।
तपसा रजसावृतवृत्तिमिमम्
जनतारण तारय तापितकम् ॥२

मम जीवनमीनमिमं पतितं
मरुघोर भुवीह सुवीहमहो ।
करुणाब्धिचलोर्मिजलानयनम्
जनतारण तारय तापितकम् ॥३

भववारण कारण कर्मततौ
भवसिन्धुजले शिवमग्नमतः ।
करुणाञ्च समर्प्य तरिं त्वरितम्
जनतारण तारय तापितकम् ॥४

अतिनाश्य जनुर्मम पुण्यरुचे
दुरितौघभरैः परिपूर्णभुवः ।
सुजघन्यमगण्यम पुण्यरुचिम्
जनतारण तारय तापितकम् ।।५
भवकारक नारकहारक हे
भवतारक पातकदारक हे ।
हर शंकर किंकरकर्मचयम्
जनतारण तारय तापितकम् ।।६
तृषितश्चिरमस्मि सुधां हित मे-
ऽच्युत चिन्मय देहि वदान्यवर ।
अतिमोहवशेन विनष्टकृतम्
जनतारण तारय पापितकम् ।।७
प्रणमामि नमामि नमामि भवं
भवजन्मकृतिप्रणिषूदनकम् ।
गुणहीनमनन्तमितं शरणम्
जनतारण तारय तापितकम् ।।८

इति परमेश्वर स्तोत्रं सम्पूर्णम्

◆

हे जगदीश ! हे सुमतियों के स्वामी ! हे विश्वेश ! हे सर्वव्यापिन् ! हे परमेश्वर ! हे प्रकृति आदि से अतीत ! हे परमपावन ! हे पितः ! हे जीवों का विस्तार करने वाले ! इस शरणागत पतित और बुद्धि-बल से हीन संसार-संतप्त दास का उद्धार कीजिए ।।१।। जो सर्वथा गुणहीन, अत्यन्त दीन व मलिनमति है तथा अपने रक्षक

और दाता आप से पराङ्मुख है, हे जीवों का निस्तार करने वाले ! इस संसार संतप्त तामस राजसवृत्तिवाले दास का आप उद्धार कीजिये ॥२॥ हे जीवों का निस्तार करने वाले ! इस भयानक मरुभूमि में पड़कर नितान्त निश्चेष्ट हुए मेरे इस अति संतप्त जीवनरूप मीन का अपने करुणा वारिधि की चञ्चल तरङ्गों का जल लाकर उद्धार कीजिये ॥३॥ अतः हे संसार की निवृत्ति करने वाले ! हे कर्म विस्तार के कारण स्वरूप ! हे कल्याणमय ! हे जीवों का निस्तार करने वाले ! संसार समुद्र के जल में डूबकर संतप्त होते हुए इस दास का अपनी करुणा रूप नौका समर्पण करके यहाँ से तुरन्त उद्धार कीजिये ॥४॥ हे पुण्यरुचे ! जीवोद्धारक ! जिसकी पापराशि के भार से पृथ्वी परिपूर्ण है, ऐसे मुझ नीच के जन्म को सदा के लिये मिटाकर मुझ अत्यन्त निन्दनीय, नगण्य, पाप में रुचि रखने वाले और संसार के दुःखों से दुःखित का उद्धार कीजिये ॥५॥ हे जगत्कर्ता ! हे नारकीय यन्त्रणाओं का अपहरण करने वाले ! हे संसार का उद्धार करने वाले ! हे पापराशि को विदीर्ण करने वाले ! हे शंकर ! इस दास की कर्मराशि का हरण कीजिये और हे जीवों का निस्तार करने वाले ! इस संसार संतप्त जन का उद्धार कीजिये ॥६॥ हे अच्युत ! हे चिन्मय ! हे उदार चूड़ामणि ! हे कल्याण स्वरूप मैं अत्यन्त तृषित हूँ, मुझे ज्ञानरूप अमृत का पान कराइये। मैं अत्यन्त मोह के वशीभूत होकर नष्ट हो रहा हूं। हे जीवों का उद्धार करने वाले ! मुझ संसार संतप्त को पार लगाइये ॥७॥ संसार में जन्म प्राप्ति के कारणभूत कर्मों का नाश करने वाले आपको मैं बारंबार प्रणाम और नमस्कार करता हूं। हे जीवों का उद्धार करने वाले ! आप निर्गुण और अनन्त की शरण को प्राप्त हुए इस संसार संतप्त जन का उद्धार कीजिये ॥८॥

* * *

* भवान्यष्टकम् *

न तातो न माता न बन्धुर्न दाता
न पुत्रो न पुत्री न भृत्यो न भर्ता ।
न जाया न विद्या न वृत्तिर्ममैव
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेकाभवानि ॥१

भवाब्धावपारे महादुःखभीरुः
प्रपातप्रकामी प्रलोभी प्रमत्तः ।
कुसंसारपाशप्रबद्धः सदाहम्
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेकाभवानि ॥२

न जानामि दानं न च ध्यानयोगं
न जानामि तन्त्रं न च स्तोत्रमन्त्रम् ।
न जानामि पूजां न च न्यासयोगम् ।
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेकाभवानि ॥३

न जानामि पुण्यं न जानामि तीर्थं
न जानामि मुक्ति लयं वा कदाचित् ।
न जानामि भक्ति व्रतं वापि मात-
र्गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेकाभवानि ॥४

कुकर्मी कुसङ्गी कुबुद्धिः कुदासः
कुलाचारहीनः कदाचारलीनः ।
कुदृष्टिः कुवाक्यप्रबन्धः सदाहम्
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेकाभवानि ॥५

प्रजेशं रमेशं महेशं सुरेशं
दिनेशं निशीथेश्वरं वा कदाचित् ।

न जानामि चान्यत् सदाहं शरण्ये
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेकाभवानि ॥६

विवादे विषादे प्रमादे प्रवासे
जले चानले पर्वते शत्रुमध्ये ।

अरण्ये शरण्ये सदा मां प्रपाहि
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेकाभवानि ॥७

अनाथो दरिद्रो जरारोगयुक्तो
महाक्षीणदीनः सदा जाड्यवक्त्रः ।

विपत्तौ प्रविष्टः प्रणष्टः सदाहम्
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेकाभवानि ॥८

इति श्री मच्छङ्कराचार्यकृतं भवान्यष्टकं सम्पूर्णम्

◆

हे भवानी ! पिता, माता, भाई दाता, पुत्र पुत्री, भृत्य, स्वामी, स्त्री, विद्या और वृत्ति- इनमें से कोई भी मेरा नहीं है, हे देवि ! एक मात्र तुम्हीं मेरी गति हो ॥१॥ मैं अपार भवसागर में पड़ा हुआ हूँ, महान् दुःखों से भयभीत हूँ, कामी, लोभी, मतवाला तथा घृणा योग्य संसार के बन्धनों में बँधा हुआ हूं; हे भवानी ! अब एक मात्र तुम्हीं मेरी गति हो ॥२॥ हे देवि ! मैं न तो दान देना जानता हूँ और न ध्यान मार्ग का ही मुझे पता है, तन्त्र और स्तोत्रमन्त्रों का भी मुझे ज्ञान नहीं है, पूजा तथा न्यास आदि की क्रियाओं से तो मैं एकदम कोरा हूँ, अब एक मात्र तुम्हीं मेरी गति ही ॥३॥ न पुण्य जानता हूँ न तीर्थ, न मुक्ति का पता है न लय का हे मातः ! भक्ति और व्रत भी मुझे ज्ञात नहीं हैं, हे भवानी ! अब केवल तुम्हीं मेरा सहारा हो ॥४॥ मैं कुकर्मी, बुरी संगति में रहने वाला, दुर्बुद्धि, दुष्टदास, कुलीचित्त, सदाचार से हीन, दुराचार परायण, कुत्सित

दृष्टि रखने वाला और सदा दुर्वचन बोलने वाला हूं, हे भवानी ! मुझ अधम की एक मात्र तुम्हीं गति हो ॥५॥ मैं ब्रह्मा, विष्णु, शिव इन्द्र, सूर्य, चन्द्रमा तथा अन्य किसी भी देवता को नहीं जानता। हे शरण देने वाली भवानी ! एक मात्र तुम्हीं मेरी गति हो ॥६॥ हे शरण्ये ! तुम विवाद, विषाद, प्रमाद, परदेश, जल, अनल, पर्वत, वन तथा शत्रुओं के मध्य में सदा ही मेरी रक्षा करो। हे भवानी ! एक मात्र तुम्हीं मेरी गति हो ॥७॥ हे भवानी ! मैं सदा से ही अनाथ, दरिद्र, जरा-जीर्ण, रोगी, अत्यन्त दुर्बल, दीन, गूंगा, विपद्-ग्रस्त और नष्ट हूं, अब तुम्हीं एक मात्र मेरी गति हो ॥८॥

॥ आदित्यहृदयस्तोत्रम् ॥

ततो युद्धपरिश्रान्तं समरे चिन्तया स्थितम् ।
रावणं चाग्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम् ॥१
दैवतैश्च समागम्य द्रष्टुमभ्यागतो रणम् ।
उपगम्याब्रवीद् राममगस्त्यो भगवांस्तदा ॥२

उधर श्री रामचन्द्रजी युद्ध से थककर चिन्ता करते हुए रणभूमि में खड़े थे। इतने में रावण भी युद्ध के लिये उनके सामने उपस्थित हो गया। यह देख भगवान् अगस्त्य मुनि जो देवताओं के साथ युद्ध देखने के लिए आये थे, श्रीराम के पास जाकर बोले -॥१-२॥

राम राम महाबाहो शृणु गुह्यं सनातनम् ।
येन सर्वानरीन् वत्स समरे विजयिष्यसे ॥३

सबके हृदय में रमण करने वाले महाबाहो राम ! यह सनातन गोपनीय स्तोत्र सुनो। वत्स ! इसके जप से तुम युद्ध में अपनें समस्त शत्रुओं पर विजय पा जाओगे ॥३॥

आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वशत्रुविनाशनम् ।
जयावहं जपं नित्यमक्षयं परमं शिवम् ॥४

सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वपापप्रणाशनम् ।
चिन्ताशोकप्रशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम् ॥५

इस गोपनीय स्तोत्र का नाम है 'आदित्यहृदय'। यह परम पवित्र और सम्पूर्ण शत्रुओं का नाश करने वाला है। इसके जप से सदा विजय की प्राप्ति होती है। यह नित्य अक्षय और परम कल्याणमय स्तोत्र है। सम्पूर्ण मङ्गलों का भी मङ्गल है। इससे सब पापों का नाश हो जाता है। यह चिन्ता और शोक को मिटाने तथा आयु को बढ़ाने वाला उत्तम साधन है ॥४-५॥

रश्मिमन्तं समुद्यन्तं देवासुरनमस्कृतम् ।
पूजयस्व विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम् ॥६

भगवान् सूर्य अपनी अनन्त किरणों से सुशोभित (रश्मिमान्) हैं। ये नित्य उदय होने वाले (समुद्यन्), देवता और असुरों से नमस्कृत· विवस्वान् नाम से प्रसिद्ध, प्रभा का विस्तार करने वाले (भास्कर) और संसार के स्वामी (भुवनेश्वर) हैं। तुम इनका (रश्मिमते नमः, समुद्यते नमः, देवासुरनमस्कृताय नमः, विवस्वते नमः, भास्कराय नमः, भुवनेश्वराय नमः—इन नाम मन्त्रों के द्वारा) पूजन करो ॥

सर्वदेवात्मको ह्येष तेजस्वी रश्मिभावनः ।
एष देवासुरगणांल्लोकान् पाति गभस्तिभिः ॥७

सम्पूर्ण देवता इन्हीं के स्वरूप हैं। ये तेज की राशि तथा अपनी किरणों से जगत् को सत्ता एवं स्फूर्ति प्रदान करने वाले हैं। ये ही अपनी रश्मियों का प्रसार करके देवता और असुरों सहित सम्पूर्ण लोकों का पालन करते हैं।

एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कन्दः प्रजापतिः ।
महेन्द्रो धनदः कालो यमः सोमोह्यपां पतिः ।८
पितरो वसवः साध्या अश्विनौ मरुतौ मनुः ।
वायुर्वह्निः प्रजाः प्राण ऋतुकर्त्ता प्रभाकरः ॥९

ये ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव, स्कन्द, प्रजापति, इन्द्र, कुबेर, काल, यम, चन्द्रमा, वरुण, पितर, वसु, साध्य, अश्विनो कुमार, मरुद्गण, मनु, वायु, अग्नि, प्रजा, प्राण ऋतुओं को प्रकट करने वाले तथा प्रभा के पुञ्ज हैं ॥८-९॥

आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान् ।
सुवर्णसदृशो भानुर्हिरण्यरेता दिवाकरः ॥१०
हरिदश्वः सहस्रार्चिः सप्तसप्तिर्मरीचिमान् ।
तिमिरोन्मथनः शम्भुस्त्वष्टा मार्तण्डकोंऽशुमान् ॥११
हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनोऽहस्करो रविः ।
अग्निगर्भोऽदितेः पुत्रः शङ्खः शिशिरनाशनः ॥१२
व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजुः सामपारगः ।
घनवृष्टिरपां मित्रो विन्ध्यवीथीप्लवंगमः ॥१३
आतपी मण्डली मृत्युः पिंगलः सर्वतापनः ।
कविर्विश्वो महातेजः रक्तः सर्वभवोद्भवः ॥१४
नक्षत्रग्रहताराणामधिपो विश्वभावनः ।
तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन् नमोऽस्तुते ॥१५

इन्हीं के नाम - आदित्य (अदिति पुत्र), सविता (जगत् को उत्पन्न करने), सूर्य (सर्वव्यापक), खग (आकाश में विचरने वाले) पूषा (पोषण करने वाले), गभस्तिमान् (प्रकाशमान), सुवर्णसदृश, भानु, (प्रकाशक), हिरण्यरेता (ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के बीज),

दिवाकर (रात्रि का अन्धकार दूर करके दिन का प्रकाश फैलाने वाले), हरिदश्व (दिशाओं में व्यापक अथवा हरे रंग के घोड़े वाले), सहस्रार्चि (हजारों किरणों से सुशोभित), सप्तसप्ति (सात घोड़ों वाले), मरीचिमान् (किरणों से सुशोभित), तिमिरोन्मथन (अन्धकार का नाश करने वाले), शम्भु (कल्याण के उद्गम स्थान), त्वष्टा (भक्तों का दुःख दूर करने अथवा जगत् का संहार करने वाले), मार्तण्डक (ब्रह्माण्ड को जीवन प्रदान करने वाले), अंशुमान् (किरण धारण करने वाले), हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा), शिशिर (स्वभाव से ही सुख देने वाले), तपन (गर्मी पैदा करने वाले), अहस्कर (दिनकर), रवि (सब की स्तुति के पात्र), अग्निगर्भ (अग्नि को गर्भ में धारण करने वाले), अदितिपुत्र, शङ्ख (आनन्द स्वरूप एवं व्यापक), शिशिर नाशन (शीत का नाश करने वाले), व्योमनाथ (आकाश के स्वामी) तमोभेदी (अन्धकार को नष्ट करने वाले), ऋग्, यजुः और सामवेद के पारगामी, घनवृष्टि (घनी वृष्टि के कारण), अपांमित्र (जल को उत्पन्न करने वाले), विन्ध्यवीथीप्लवङ्गम (आकाश में तीव्र वेग से चलने वाले) आतपी (घाम उत्पन्न करने वाले), मण्डली (किरण समूह को धारण करने वाले), मृत्यु (मौत के कारण), पिङ्गल (भूरे रङ्ग वाले), सर्वतापन (सबको ताप देने वाले), कवि (त्रिकालदर्शी) विश्व (सर्वस्वरूप), महातेजस्वी, रक्त (लाल रङ्ग वाले) सर्वभवोद्भव (सबकी उत्पत्ति के कारण), नक्षत्र, ग्रह और तारों के स्वामी, विश्वभावन (जगत् की रक्षा करने वाले), तेजस्वियों में भी अति तेजस्वी तथा द्वादशात्मा (बारह स्वरूपों में अभिव्यक्त) हैं। [इन सभी नामों से प्रसिद्ध सूर्य देव !] आपको नमस्कार है ॥१०-१५।

नमः पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नमः।
ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः ॥१६

पूर्वगिरि—उदयाचल तथा पश्चिमगिरि—अस्ताचल के रूप में आपको नमस्कार है। ज्योतिर्गणों (ग्रहों और तारों) के स्वामी तथा दिन के अधिपति आपको प्रणाम है ॥१६॥

जयाय जयभद्राय हर्यश्वाय नमो नमः ।
नमो नमः सहस्रांशो आदित्याय नमो नमः ॥१७

आप जय स्वरूप तथा विजय और कल्याण के दाता हैं। आपके रथ में हरे रंग के घोड़े जुते रहते हैं। आपको बारंबार नमस्कार है। सहस्रों किरणों से सुशोभित भगवान् सूर्य! आपको बारंबार प्रणाम है। आप अदिति के पुत्र होने के कारण आदित्य नाम से प्रसिद्ध हैं, आपको नमस्कार है ॥१७॥

नम उग्राय वीराय सारङ्गाय नमो नमः ।
नमः पद्मप्रबोधाय प्रचण्डाय नमोऽस्तु ते ॥१८

उग्र (अभक्तों के लिए भयंकर), वीर (शक्ति सम्पन्न) और सारंग (शीघ्रगामी) सूर्यदेव को नमस्कार है (कमलों को विकसित करने वाले प्रचण्ड तेजधारी मार्तण्ड को प्रणाम है ॥१८॥

ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सूरायादित्यवर्चसे ।
भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नमः ॥१९

(परात्पर-रूप में) आप ब्रह्मा, शिव और विष्णु के भी स्वामी हैं। सूर आपकी संज्ञा है, यह सूर्यमण्डल आपका ही तेज है, आप प्रकाश से परिपूर्ण हैं, सबको स्वाहा कर देने वाली अग्नि आपका ही स्वरूप है, आप रौद्ररूप धारण करने वाले हैं, आपको नमस्कार है ॥१९॥

तमोघ्नाय हिमघ्नाय शत्रुघ्नायामितात्मने ।
कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः ॥२०

आप अज्ञान और अन्धकार के नाशक, जड़ता एवं शीत के निवारक तथा शत्रु का नाश करने वाले हैं, आपका स्वरूप अप्रमेय है। आप कृतघ्नों का नाश करने वाले, सम्पूर्ण ज्योतियों के स्वामी और देव स्वरूप हैं, आपको नमस्कार है।

तप्तचामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे ।
नमस्तमोऽभिनिघ्नाय रुचये लोकसाक्षिणे ।।२१

आपकी प्रभा तपाये हुए सुवर्ण के समान है, आप हरि (अज्ञान का हरण करने वाले) और विश्वकर्मा (संसार की सृष्टि करने वाले) हैं, तम के नाशक, प्रकाशस्वरूप और जगत् के साक्षी हैं, आपको नमस्कार है ।।२१।।

नाशयत्येष वै भूतं तमेव सृजति प्रभुः ।
पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभिः ।।२२

हे रघुनन्दन ! ये भगवान् सूर्य ही सम्पूर्ण भूतों का संहार, सृष्टि और पालन करते हैं, ये ही अपनी किरणों से गर्मी पहुँचाते हैं और वर्षा करते हैं ।।२२।।

एष सुप्तेषु जागर्तिभूतेषु परिनिष्ठितः ।
एष चैवाग्निहोत्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम् ।।२३

ये सब भूतों में अन्तर्यामी रूप से स्थित होकर उनके सो जाने पर भी जागते रहते हैं । ये ही अग्निहोत्र तथा अग्निहोत्री पुरुषों को मिलने वाले फल हैं ।।२३।।

देवाश्च क्रतवश्चैव क्रतूनां फलमेव च ।
यानि कृत्यानि लोकेषु सर्वेषु परमप्रभुः ।।२४

(यज्ञ में भाग ग्रहण करने वाले) देवता, यज्ञ और यज्ञों के फल भी ये ही हैं । सम्पूर्ण लोकों में जितनी क्रियाएँ होती हैं । उन सब का फल देने में ये ही पूर्ण समर्थ हैं ।२४।।

एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कान्तारेषु भयेषु च ।
कीर्तयन् पुरुषः कश्चिन्नावसीदति राघव ।।२५

राघव विपत्ति में, कष्ट में, दुर्गम मार्ग में तथा और किसी भय के अवसर पर जो कोई पुरुष इन सूर्यदेव का कीर्तन करता है उसे दुःख नहीं भोगना पड़ता ॥२५॥

पूजयस्वैनमेकाग्रो देवदेवं जगत्पतिम् ।
एतत् त्रिगुणितं जप्त्वा युद्धेषु विजयिष्यति ॥२६

इसलिए तुम एकाग्रचित्त होकर इन देवाधिदेव जगदीश्वर की पूजा करो। इस आदित्य हृदय का तीन बार जप करने से तुम युद्ध में विजय पाओगे ॥२६॥

अस्मिन् क्षणे महाबाहो रावणं त्वं जहिष्यसि ।
एवमुक्त्वा ततोऽगस्त्यो जगाम स यथागतम् ॥२७

महाबाहो ! 'तुम इस क्षण रावण का वध कर सकोगे।' यह कहकर अगस्त्यजी जैसे आये थे, उसी प्रकार चले गये। २७॥

एतच्छ्रुत्वा महातेजा नष्टशोकोऽभवत् तदा ।
धारयामास सुप्रीतो राघवः प्रयतात्मवान् ॥२८
आदित्यं प्रेक्ष्य जप्त्वेदं परं हर्षमवाप्तवान् ।
त्रिराचम्य शुचिर्भूत्वा धनुरादाय वीर्यवान् ॥२९
रावणं प्रेक्ष्य हृष्टात्मा जयार्थं समुपागमत् ।
सर्वयत्नेन महता वृतस्तस्य वधेऽभवत् ॥३०

उनका उपदेश सुनकर महातेजस्वी श्री रामचन्द्रजी का शोक दूर हो गया। उन्होंने प्रसन्न होकर शुद्ध चित्त से आदित्य हृदय को धारण किया और तीन बार आचमन करके शुद्ध हो भगवान् सूर्य की ओर देखते हुए इसका तीन बार जप किया। इससे उन्हें बड़ा हर्ष हुआ। फिर परम पराक्रमी रघुनाथजी ने धनुष उठाकर रावण की ओर देखा और उत्साहपूर्वक विजय पाने के लिए वे

आगे बढ़े। उन्होंने पूरा प्रयत्न करके रावण के वध का निश्चय किया ॥२८–३०॥

अथ रविरवदन्निरीक्ष्य रामं
मुदितमनाः परमं प्रहृष्यमाणः ।
निशिचरपतिसंक्षयं विदित्वा
सुरगणमध्यगतो वचस्त्वरेति ॥३१

उस समय देवताओं के मध्य में खड़े हुए भगवान् सूर्य ने प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्रजी की ओर देखा और निशाचरराज रावण के विनाश का समय निकट जानकर हर्ष पूर्वक कहा 'रघुनन्दन! अब जल्दी करो।' ॥३१॥

इत्यार्षे श्री मद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये युद्धकाण्ड स्यान्तर्गत आदित्य हृदय स्तोत्र सम्पूर्णम् ।

◆

* श्री हनुमानजी का ध्यान प्रार्थना *

महाशैलं समुत्पाट्य धावन्तं रावणं प्रति ।
लाक्षारसारुणं रौद्रं कालान्तकयमोपमम् ।
ज्वलदग्निसमं जैत्रं सूर्यकोटिसमप्रभम् ।
अङ्गदाद्यैर्महावीरैर्वेष्टितं — रुद्ररूपिणम् ।
तिष्ठ तिष्ठ रणे दुष्ट सृजन्तं घोरनिःस्वनम् ।
शैवरूपिणमभ्यर्च्य ध्यात्वा लक्षं जपेन्मनुम् ।

(नारद० पू० ७४/१२२–१२५)

श्री हनुमानजी एक बहुत बड़ा पर्वत उखाड़ कर रावण की ओर दौड़ रहे हैं। वे लाक्षा (महावर) के रंग के समान अरुणवर्ण हैं। काल, अन्तक तथा यम के समान भयंकर जान पड़ते हैं।

उनका तेज प्रज्वलित अग्नि के समान है। ये विजयशील तथा करोड़ों सूर्यों के समान तेजस्वी हैं। अङ्गद आदि महावीर उन्हें चारों ओर से घेरकर चलते हैं। वे साक्षात् रुद्रस्वरूप हैं। भयंकर सिंहनाद करते हुए वे रावण से कहते हैं—अरे ओ दुष्ट! युद्ध में खड़ा रह, खड़ा तो रह!' इस प्रकार कहने वाले शिव के अवतार भगवान् हनुमानजी का ध्यान और पूजन करके एक लाख मन्त्र का जप करे, तो मनुष्य सभी सिद्धियों को प्राप्त कर लेता है। जप करने का मन्त्र यह है 'हं हनुमते रुद्रात्मकाय हुं फट्।'

●

* श्री हनुमानजी की प्रार्थना *

उद्यत्कोट्यर्क संकाशं जगत्प्रक्षोभकारकम्।
श्रीरामाङ्घ्रिध्याननिष्ठं सुग्रीवप्रमुखार्चितम्।
वित्रासयन्तं नादेन राक्षसान् मारुतिं जपेत्।

उदयकालीन करोड़ों सूर्यों के समान तेजस्वी हनुमानजी सम्पूर्ण जगत् को क्षोभ में डालने की शक्ति रखते हैं। सुग्रीव अदि प्रमुख वीर उनका समादर करते हैं। वे राघवेन्द्र श्रीराम के चरणारविन्दों के चिन्तन में निरन्तर लगे रहते हैं और अपने सिंहनाद से सम्पूर्ण राक्षसों को भयभीत कर रहे हैं। ऐसे श्री पवन कुमार हनुमानजी को मैं भजता हूँ।

तप्तचामीकरनिभं भीघ्नं संविहिताञ्जलिम्।
चलत्कुण्डलदीप्तास्यं पद्माक्षं मारुतिं स्मरेत्।

जिनकी दिव्य कान्ति तपाये हुए सुवर्ण के समान है, जो भय का नाश करने वाले हैं, जिन्होंने अपने प्रभु (श्रीराम) का चिन्तन करके उनके लिए अञ्जलि बाँध रखी है, जिनका सुन्दर मुख हिलते हुए कुण्डलों से उद्भासित हो रहा है तथा जिनके नेत्र कमल के

समान शोभायमान हैं, उन पवनकुमार हनुमान जी का ध्यान करता हूं।

◆

॥ श्री शिव चालीसा ॥

दोहा—अज अनादि अविगत अलख, अकल अतुल अविकार।
बंदौं शिव-पद-युग-कमल अमल अतीव उदार ॥१
आर्तिहरण सुखकरण शुभ भक्ति-मुक्ति-दातार।
करो अनुग्रह दीन लखि अपनो विरद विचार ॥२
परयो पतित भवकूप महँ सहज नरक आगार।
सहज सुहृद पावन-पतित, सहजहि लेहु उबार ॥३
पलक-पलक आशा भरयो, रह्यो सुबाट निहार।
ढरहु तुरंत स्वभाववश, नेक न करो अवार ॥४

जय शिवशंकर औढरदानी। जय गिरितनया मातु भवानी ॥१
सर्वोत्तम योगी योगेश्वर। सर्वलोक ईश्वर–परमेश्वर ॥२
सब उर प्रेरक सर्वनियन्ता। उपदेष्टा भर्ता अनुमन्ता ॥३
पराशक्ति–पति अखिल विश्वपति। परब्रह्म परधाम परमगति ॥४
सर्वातीत अनन्य सर्वगत। निज स्वरूप महिमा में स्थित रत ॥५
अंगभूति-भूषित श्मशानचर। भुजंगभूषण चन्द्र मुकुटधर ॥६
वृषवाहन नंदीगणनायक। अखिल विश्व के भाग्य-विधायक ॥७
व्याघ्रचर्म परिधान मनोहर। रीछचर्म ओढे गिरिजावर ॥८
कर त्रिशूल डमरूवर राजत। अभय वरद मुद्रा शुभ साजत ॥९
तनु कर्पूर गोर उज्ज्वलतम। पिङ्गल जटाजूट सिर उत्तम ॥१०
भाल त्रिपुण्ड्र मुण्डमालाधर। गल रुद्राक्ष-माल शोभाकर ॥११
विधि-हरि रुद्र त्रिविध वपुधारी। बने सृजन-पालन-लयकारी ॥१२
तुम हो नित्य दया के सागर। आशुतोष आनन्द-उजागर ॥१३
अतिदयालु भोले भण्डारी। अग जग सबके मंगलकारी ॥१४
सती-पार्वती के प्राणेश्वर। स्कन्द गणेश-जनक शिव सुखकर ॥१५

हरिहर एक रूप गुणशीला। करत स्वामि-सेवक की लीला ॥१६
रहते दोउ पूजत पुजवावत। पूजा-पद्धति सबन्हि सिखावत ॥१७
मारुति बन हरि सेवा कीन्ही। परमेश्वर बन सेवा लीन्ही ॥१८
जग-हित घोर हलाहल पीकर। बने सदाशिव नीलकंठ वर ॥१९
असुरासुर शुचि वरद शुभंकर। असुर निहन्ता प्रभु प्रलयंकर ॥२०
'नमः शिवाय' मन्त्र पञ्चाक्षर। जपत मिटत सब क्लेश भयंकर ॥२१
जो नर-नारि रटत शिव-शिव नित।
तिनको शिव अति करत परमहित ॥२२
श्री कृष्ण तप कीन्हों भारी। ह्वै प्रसन्न वर दियो पुरारी ॥२३
अर्जुन संग लड़े किरात बन। दियो पाशुपत-अस्त्र मुदित मन ॥२४
भक्तन के सब कष्ट निवारे। दे निज भक्ति सबन्हि उद्धारे ॥२५
शङ्खचूड जालंधर मारे। दैत्य असंख्य प्राण हर नारे ॥२६
अन्धक को गणपति पद दीन्हों। शुक्र शुक्रपथ बाहर कीन्हों ॥२७
तेहि सजीवनि विद्या दीन्हीं। बाणासुर गणपति-गति कीन्हीं ॥२८
अष्टमूर्ति पंचानन चिन्मय। द्वादश ज्योतिलिङ्ग ज्योतिर्मय ॥२९
भुवन चतुर्दश व्यापक रूपा। अकथ अचिन्त्य असीम अनूपा ॥३०
काशी मरत जन्तु अवलोकी। देत मुक्ति-पद करत अशोकी ॥३१
भक्त भगीरथ की रुचि राखी। जटा बसी गङ्गासुर साखी ॥३२
रुरु अगस्त्य उपमन्यू ज्ञानी। ऋषि दधीचि आदिक विज्ञानी ॥३३
शिव रहस्य शिव ज्ञान प्रचारक। शिवहिं परम प्रिय लोकोद्धारक ॥३४
इनके शुभ सुमिरन तें शंकर। देत मुदित ह्वै अति दुर्लभ वर ॥३५
अति उदार करुणा वरुणालय। हरण दैन्य-दारिद्र्य-दुःख-भय ॥३६
तुम्हरो भजन परम हितकारी। विप्र शूद्र सब हो अधिकारी ॥३७
बालक वृद्ध नारि-नर ध्यावहिं। ते अलभ्य शिवपद को पावहिं ॥३८
भेदशून्य तुम सबके स्वामी। सहज सुहृद सेवक अनुगामी ॥३९
जो जन शरण तुम्हारी आवत। सकल दुरित तत्काल नशावत ॥४०
दोहा--वहन करौ तुम शीलवश, निज जनकौ सबभार।
गनौ न अघ, अघजाति कछु, सब विधि करौ सँभार ॥१

तुम्हरो शील स्वभाव लखि, जो न शरण तव होय।
तेहि सम कुटिल कुबुद्धि जन, नहिं कुभाग्य जन कोय ॥२
दीन हीन अति मलिन मति, मैं अघ-ओघ अपार।
कृपा-अनल प्रगटौ तुरत, करौ पाप सब छार ॥३
कृपा-सुधा बरसाय पुनि, शीतल करौ पवित्र।
राखौ पद कमलनि सदा, हे कुपात्र के मित्र! ॥४

* * *

॥ श्री शिवाष्टक ॥

आदि अनादि अनंत अखंड अभेद अखेद सुबेद बतावैं।
अलख अगोचर रूप महेस कौ जोगि-जती-मुनि ध्यान न पावैं॥
आगम-निगम-पुरान सबै इतिहास सदा जिनके गुन गावैं।
बड़भागी नर-नारि सोई जो सांब-सदाशिव कौं नित ध्यावैं ॥१
सृजन-सुपालन-लय-लीला हित जो विधि-हरि-हर रूप बनावैं।
एकहि आप विचित्र अनेक सुवेष बनाइ कैं लीला रचावैं॥
सुन्दर सृष्टि सुपालन करि जग पुनि बन काल जु खाय पचावैं।
बड़भागी नर-नारि सोई जो सांब-सदाशिव कौं नित ध्यावैं ॥२
अगुन अनीह अनामय अज अविकार सहज निज रूप धरावैं।
परम सुरम्य बसन-आभूषन सजि मुनि-मोहन रूप करावैं॥
ललित ललाट बाल बिधु बिलसै रतन-हार उर पै लहरावैं।
बड़भागी नर-नारि सोई जो सांब-सदाशिव कौं नित ध्यावैं ॥३
अंग विभूति रमाय मसान की विषमय भुजगनि कौं लपटावैं।
नर-कपाल कर मुंडमाल गल, भालु-चरम सब अंग उठावैं॥
घोर दिगम्बर, लोचन तीन भयानक देखि कैं सब थर्रावैं।
बड़भागी नर-नारि सोई जो सांब-सदाशिव कौं नित ध्यावैं ॥४
सुनतहि दीन की दीन पुकार दयानिधि आप उबारन धावैं।
पहुँच तहाँ अविलंब सुदारुन मृत्यु को मर्म विदारि भगावैं॥

मुनि मृकंडु–सुत की गाथा सुचि अजहुँ विज्ञजन गाइ सुनावैं ।
बड़भागी नर–नारि सोई जो सांब सदाशिव कौं नित ध्यावैं ॥५
चाउर चारि जो फूल धतूरे के, बेल के पात औ पानि चढ़ावैं ।
गाल बजाय कै बो जोले 'हरहर महादेव' धुनि जोर लगावै ॥
तिनहिं महाफल देय सदासिव सहजहि भुक्ति-मुक्ति सो पावैं ।
बड़भागी नर-नारि सोई जो सांब-सदाशिव कौं नित ध्यावैं ॥६
बिनसि दोष दुख दुरित दैन्य दारिद्रय नित्य सुख-सांति मिलावैं ।
आसुतोष हर पाप-ताप सब निरमल बुद्धि-चित्त बकसावैं ॥
असरन-सरन काटि भव बंधन भव निज भवन भव्य बुलवावैं ।
बड़भागी नर-नारि सोई जो सांब-सदाशिव कौं नित ध्यावैं ॥७
औढरदानि, उदार अपार जु नैक–सी सेवा तें ढुरि जावैं ।
दमन असांति, समन सब संकट, विरह विचार जनहिं अपनावैं ॥
ऐसे कृपालु कृपामय देव के क्यों न सरन अब ही चलि जावैं ।
बड़भागी नर नारि सोई जो सांब सदाशिव कौं नित ध्यावैं ॥८

* * *

॥ आरती ॥

आरती परम साम्ब-शंकर की ।
सत्य सनातन शिव शुभकर की ॥

आदि, अनादि, अनन्त, अनामय ।
अज, अविनाशी, अकल, कलामय ॥
सर्वरहित नित सर्व-उरालय ।

मस्तक सुरसरिधर शशिधरकी ।
आरती परम साम्ब-शंकर की ॥

कर्त्ता, भर्ता, जगसंहारी ।
ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तनुधारी ।
सर्वविकाररूप अविकारी ।

अग-जग-पालक प्रलयंकरकी।
आरती परम साम्ब-शंकर की।

विश्वातीत विश्वगत स्वामी।
द्रष्टा साक्षी अन्तर्यामी।
काम काल सब जगहितकामी।
अनघ स्वरूप सकल अघहर की।
आरती परम साम्ब शंकर की॥

मुनि मन हरण मधुर शुचि सुन्दर।
अति कमनीय रूप सुषमावर।
दिव्याम्बर रत्नाभूषणधर।
सर्व नयन मन हर सुखकर की।
आरती परम साम्बशंकर की॥

त्रिकट कराल पंचमुखधारी।
मुण्डमाल विषधर भयकारी।
हाथ कपाल श्मशान-विहारी।
वेष अमंगल मंगलकर की।
आरती परम साम्ब शंकर की॥

भोगी, योगी, ध्यानी, ज्ञानी।
जग अभिमानाधार अमानी।
आशुतोष अति औढरदानी।
दैन्य दुरित दुर्गतिहर हर की।
आरती परम साम्ब-शंकर की॥

ओ३म् नमः

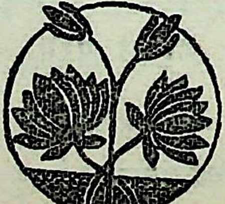

शिवाय

शिव-तत्त्व-दर्शन—

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ संख्या	पंक्ति संख्या	अशुद्ध	शुद्ध
१	—	तत्व	तत्त्व
१२	१७	जान	ज्ञान
२१	२४	वंसी	वैसी
२२	२०	भद	भेद
३३	४	अ मूर्तियों	अष्ट मूर्तियों
४०	१७	कहत	कहते
४३	७	श्रति	श्रुति
५८	२१	निश्चत	निश्चित
५९	१८	वेवल	केवल
६३	२१	शंव	शैव
६४	३	बान	बन
६८	१६	स्वानुकू ल	स्वानुकूल
७०	११	सचक	सूचक
७०	२०	वन्धरा	वसुन्धरा
७८	२	वत्रता	वक्रता
७८	१६	वत्राकार	वक्राकार
७८	२२	लिग	लिंग
८१	१८	ज्ञान था	ज्ञान नहीं था
८१	२२	यदि आप सभी	यदि अत्र आप सभी
८५	५	प्रार्थ ा	प्रार्थना
८५	६	निए	लिए
८६	१५	दुख	दुःख
९३	१	खाले	खोले
१००	२१	सन्दिर	मन्दिर
१०३	६	जिन्हाने	जिन्होंने
१०३	१०	हा	हो
१०५	३	त्रयम्बकेश्वर	त्र्यम्बकेश्वर
१०६	१४	शिवाजी	शिवजी
१०९	६	मील रास्ते में	मील पर रास्ते में

१२७	२	आजा	आज्ञा
१४०	२०	अनिष्टकरर्ता	अनिष्टकर्त्ता
१४१	२४	जैसा है	जैसा कहा है
१४३	१८	जिसकी	जिनकी
१४८	१३	पार्शिव	पार्थिव
१५०	१६	नम	नमः
१५३	१५	योग्य	योग्य हूं
१५६	२७	का	Delete ×
१५९	१०	साममूर्तये	सोममूर्तये
१६१	१४	मी	भी
१७७	२०	देवा	देवो
१७९	१२	रामश्वरम्	रामेश्वरम्
१८८	२४	का	के लिए
१९१	१	द्वारपालों	द्वारपालों की
१९९	५	भा	भास
२०८	१	बार	वर
२१६	७	वंधा	बंधा
२४०	१९	सुविधायं	सुविधायें
२४५	१९	द्वारा	द्वारा न करें, अपनी
२५२	२६	किथे	किये
२५५	११	दे	देते
२५७	४	धीकर	धोकर
२६३	२१	ज	जल
२६४	१४	रख	रखें
२६८	७	जही	जूही
२६८	२८	आखा	अरवा
२७०	१८	नमो	नमः
२७१	८	तल	तेल
२७२	२०.	जारृत	जागृत
२७३	२७	ष्याज्य	त्याज्य
२८३	१६	का	कार्य
२८५	१७	कनुष्य	मनुष्य
२८७	२६	स्वरू-पपूजा	स्वरूप-पूजा
२९०	१०	शास्त्राचार	शास्त्राधार
२९१	१	किथे	किये

३००	३	सामुज्य	सायुज्य
३००	१७	षड़ाशर	षडाक्षर
३०२	१०	सनेक	अनेक
३०५	१७	रूषवर्ग	पुरुष वर्ग
३१२	२०	छोटे- ोटे	छोटे-छोटे
३२४	५	काली	जयकाली
३२४	१६	लुकर	लुंकर
३२६	२४	कर	करें
३३८	२	शय्य	शय्या
३४६	१६	करता है	करता हूँ
३४८	१०	एक ही	एक साथ ही
३५४	७	हेश्वरार्पणमस्तु	महेश्वरार्पणमस्तु
३७६	१६	पर्णन	वर्णन
३८२	५	मत्र	मंत्र
३८८	१८	पंच	पाँच
४०१	८	की	का
४०१	१२	जव	मनुष्य
४०६	२२	ही	Delete ×
४०८	१४	गन्धव	गन्धर्व
४०८	३	प्रकाग्रचित	एकाग्रचित्त
४०९	९	साघनों	साधनों
४१५	१९	में वर्णन	Delete ×
४१९	३	माना	माता
४२६	२३	शले	चले
४२८	४	से	Delete ×
४२८	१०	ज्यातिष शास्त्र	ज्योतिष शास्त्र
४२९	५	हाती	होती है
४२९	१०	उ ा ा	उसमें
४३०	२	आठव	आठवें
४३०	१०	प्राणि	प्राणी
४३४	२६	उपलधि	उपलब्धि
४३८	१३	वी	की
४३८	१८	वर	कर
४४१	९	क	के

४४२	7	वैंव	वैभव
४४८	१७	भी	की
४४९	१४	अतएवं	अतएव
४५०	१८	कलें	करलें
४५१	२७	सकता	सकती
४५२	१५	अद्वैव	अद्वैत
४५५	१६	कमें	हमें
४५६	२४	अंहकार	अहंकार
४५६	११	शतोपचार	द्वादशोपचार
४५९	१७	पराय	पराये
४६१	१	धर	घर
४६१	१७	भेदभव	भेदभाव
४७२	१०	समापना	समापन
४७३	२४	वह।	वह
४७८	९	श्रष्ट	श्रेष्ठ
४७९	६	यंत्र	मंत्र
४८२	३	भ	भी
४८७	१७	धारवाहिनी	धारावाहिनी
५०५	१	मुव	मुख
५०६	८	भूनगण	भूतगण
५२३	२४	नुख	मुख
५२९	१५	पारूपी	पाप रूपी
५४४	१४	उपदेष्टा	उपद्रष्टा
५४५	१४	कान्हीं	कीन्हीं
५४५	११	सबान्हि	सबन्हि
५४७	४	बो जोले	जो बोले

● परिशिष्ट—

आशीर्वाद, मङ्गलकामना तथा सम्मतियाँ

(१)

अनन्त श्री विभूषित श्रीमत्परमहंस परि व्राजकाचार्य समस्त विरुदांकित-श्री पश्चिमाम्नाय पूज्यपाद श्री द्वारका शारदा पीठाधीश्वर श्रीमद् जगद्गुरु श्री शंकराचार्य श्री अभिनव सच्चिदानन्द तीर्थ-स्वामी जी महाराज का शुभाशीर्वाद ।

(पत्रांक—४७८ दिनांक माघ कृष्ण सप्तमी २०२८)

श्री रामप्रसाद शर्मा शास्त्री जी नागदा

सादर निवेदन है कि आपका दीर्घपत्र तथा लिखित पुस्तिकाएं (शिव-तत्त्व-दर्शन व सम्बन्धी विचार की) मिलीं और आपकी परम शिव-तत्त्व तरफ शुद्ध भक्ति श्रद्धा देखकर आनन्द हुआ। उनकी असीम कृपा से आपका यह समुद्यम सफल हो और सम्पूर्ण हों, यही पूज्यपाद जगद्गुरुजी के शुभाशीर्वाद हैं

वह लिखित पुस्तिकाएं पोष्ट द्वारा आपको वापिस भेजी जा रही हैं । बाकी सर्व कुशल है ।

भवदीय

महाबलम भट्ट, मन्त्री जगद् गुरुजी महाराज

●

(२)

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्री शंकराचार्य श्री स्वामी शान्तानन्द सरस्वती जी महाराज ज्योतिर्मठ--बदरिकाश्रम, का शुभाशीर्वाद—

दिनांक २५-५-७२

पं० राम प्रसाद शर्मा शास्त्री कृत "शिव-तत्त्व-दर्शन" नामक ग्रन्थ देखने का अवसर प्राप्त हुआ। श्री शर्माजी ने अपने इस महत्त्व पूर्ण ग्रन्थ में शिव विषयक अधिकाधिक सामग्री सुव्यवस्थित ढंग से देने का स्तुत्य प्रयास किया है। समस्त ग्रन्थ तीन स्कन्धों में विभाजित है और प्रत्येक स्कन्ध में अठारह अठारह अध्याय हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ में शिव के ब्रह्म स्वरूप, प्रतिमा–पूजन की अनिवार्यता, द्वादश लिङ्गों की आधार कथाएँ, विविध शिव-लिङ्गों का परिचय, उनकी महत्ता, उनकी उपासना से त्रिविध सिद्धियों की प्राप्ति, पारद (पारा) निर्मित शिव-लिङ्ग एवं उसकी विचित्रता, शिव की आराधना विषयक सामग्री एवं द्रव्यादि का चयन, अनेक पूजा पद्धतियों, शिव के विभिन्न व्रतों, तीर्थ स्थानों, व्रतकथाओं आदि का विश्लेषण बड़ी ही रोचक शैली में किया गया है। विद्वान् लेखक ने अपने कथन की प्रामाणिकता के लिए, वेदों, पुराणों, आदि से महत्त्वपूर्ण उदाहरण देकर, साथ ही-पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों के मतों का उद्धरण देकर ग्रन्थ की उपादेयता बहुत अधिक बढ़ा दी है।

अतः मेरा स्पष्ट मत है कि हिन्दी में यह ग्रन्थ अपने ढंग का निराला है। अन्त में मेरा शुभाशीर्वाद है कि इस ग्रन्थ का अधिकाधिक प्रचार और प्रसार हो, जिससे हमारे देश में आस्तिकता, धार्मिकता और आध्यात्मिकता के प्रति प्रगाढ़ आस्था और निष्ठा हो।

आपका परम शुभैषी
ब्र० सोमनाथ
कृते अनन्त श्री विभूषित जगद्गुरु शंकराचार्य

(३)

अनन्त श्री विभूषित जगद्गुरु श्री शंकराचार्य शृंगेरी मठ शारदा पीठाधीश्वर का शुभाशीर्वाद

श्री जगद्गुरु महासंस्थानं, शारदा पीठम्, शृंगेरी कडूर (मैसूर स्टेट)

पत्रांक 3892/M दिनांक २४-४-७२

श्री रामप्रसाद शर्मा जी शास्त्री जी,
सादर नमस्कार !

"शिव-तत्त्व-दर्शन" नामक पुस्तक का विस्तृत विषय विवरण गुरु महाराज ने देखा है। पुस्तक को तीन स्कन्धों में विभाजित करके हरएक स्कन्ध में अलग-अलग विषयों का चुनाव करके लिखा जाना बहुत सुन्दर जान पड़ता है। इन तीनों स्कन्धों के अवलोकन से शिव भगवान् की महत्ता, पूजाविधान और सर्वव्यापकता की स्पष्ट प्रतीति हो सकती है। यह पुस्तक वेद पुराणादि ग्रन्थों का अच्छी तरह अध्ययन करके लिखी गई मालूम होती है। भगवान् शिवजी के ऊपर भक्ति करके पूजन चिन्तन वगैरह करने से आदमी न केवल ऐहिक सुख प्राप्ति ही कर सकता है किन्तु मनुष्य जीवन का चरम लक्ष्य, मोक्ष तक भगवान् की कृपा से प्राप्त कर सकता है। सो हर एक आदमी को शिवजी के ऊपर भक्ति हो जाये तो जीवन सार्थक हो जायेगा।

आपने "शिव-तत्त्व-दर्शन" नामक इस पुस्तक का लेखन करके आस्तिक जनता को एक अच्छी देन दे दी है। श्री गुरु महाराज भगवान् से प्रार्थना करके आशीर्वाद देते हैं कि यह पुस्तक शीघ्र ही प्रकाशित हो और आप भगवान् की कृपा के पात्र बनें। इति

निवेदक
के० कृष्णभट्ट, प्राइवेट सेक्रेटरी
टू हिज होलीनेस दी जगद्गुरु शंकराचार्य जी महाराज
शारदापीठम्, शृंगेरी-कडूर (मैसूर स्टेट)

(४)

अनन्त श्री विभूषित श्री काञ्ची काम कोटि पीठाधिपति जगद्गुरु श्री शंकराचार्य स्वामीजी श्री चन्द्रशेखरेन्द्र सरस्वती जी महाराज का आशीर्वाद

ता० ५-७-१९७२

श्री रामप्रसाद जी शर्मा

हमें आपका पत्र "शिव-तत्त्व-दर्शन" पुस्तक परिचय सहित प्राप्त हुआ, जो श्री गुरु जी के सांनिध्य में रखा गया।

श्री गुरुजी ने आपको आशीर्वाद सहित प्रसाद भेजने का अनुग्रह किया है जो इस पत्र के साथ भेजा जा रहा है।

हस्ताक्षर मैनेजर

---

(५)

अनन्त श्री विभूषित जगद्गुरु श्री शंकराचार्य जी महाराज भानपुरा पीठ (मध्य प्रदेश) का शुभाशीर्वाद

भानपुरा (म० प्र०)
७/५/७२

प्रिय महोदय,

सप्रेम नारायण स्मरण।

"शिव-तत्त्व-दर्शन" श्रेष्ठ है। भक्त हृदयों को इससे बहुत संतोष प्राप्त होगा। जिज्ञासु जनों के लिए यह पाथेय रूप सिद्ध होगा। आपके प्रयास की प्रशंसा करता हुआ; शुभकामना प्रेषित करता हूँ कि सदा आपके द्वारा ऐसे श्रेष्ठ प्रकाशन होते रहें।

शेष शुभ एवं भगवत कृपा।

हितेच्छुः
स्वामी सत्यमित्रानन्द

(६)

श्री सर्वेश्वरो जयति

श्री निम्बार्क—महामुनीन्द्रायनमः

श्रीमन्निखिल महीमण्डलाचार्य, चक्र-चूड़ामणि, सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र, द्वैताद्वैत प्रवर्तक, यतिपति दिनेश, राज राजेन्द्र-समभ्यर्चित चरणकमल, भगवन्निम्बार्काचार्य--पीठ विराजित अनन्तानन्त श्री विभूषित,

जगद् गुरु श्री निम्बार्काचार्य "श्री श्री जी"

श्री राधा सर्वेश्वरशरण देवाचार्य जी महाराज अखिल भारतीय श्री निम्बार्काचार्य पीठ, सलेमाबाद, अजमेर (राज०) की

मङ्गल कामना

वेद पुराणादि समस्त संस्कृत वाङ्मय में अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड नायक परात्पर परब्रह्म युगल किशोर श्री राधा सर्वेश्वर प्रभु अनन्त नाम रूपों से वर्णित हैं। उनके अंशकला एवं स्वरूप-गुण शक्ति आवेश आदि अनन्त अवतार हैं। श्री शिव, ब्रह्मा, इन्द्र आदि देवों की महिमा का भी उनमें गान किया हैं। अतएव समस्त धर्मावलम्बी सज्जनों में बहुत से व्यक्ति विष्णु, शिव, सूर्य, शक्ति और गणपति इन पांचों में अपनी श्रद्धानुसार किसी एक एक की अनन्य रूप से उपासना करते हैं। बहुत से पांचों में समान ब्रह्म भाव रखकर सम्मिलित रूप से उपासना करते हैं। सभी देव अपने अपने अधिकारानुसार अपने उपासकों का हित करते हैं अतः सभी स्तुत्य वन्द्य एवं उपासनीय हैं। शास्त्र का ऐसा आदेश है।

आरोग्यं भास्करादिच्छेद्धनमिच्छेद्धुताशनात्।
विज्ञानं शंकरादिच्छेत् मुक्तिमिच्छेज्जनार्दनात्॥

स्वास्थ्य के लिए सूर्य की उपासना करना चाहिए। धन के लिए अग्नी की, विज्ञान के लिए शंकर की ओर मुक्ति के लिए

जनार्दन (सर्व-व्यापी सर्वाधार श्री सर्वेश्वर) की आराधना करना आवश्यक है।

भूतभावन भगवान् शंकर ऐहिक सुख वैभव के अतिरिक्त अपने उपासक के हृदय में विज्ञान की अभिव्यक्ति करते हैं। जिससे साधक परमार्थिक पथ की ओर अग्रसर होकर श्री सर्वेश्वर प्रभु की भक्ति द्वारा शाश्वत सुख (मुक्ति) की प्राप्ति कर सकता है। अतः उसकी आराधना भी आवश्यक है।

यह जानकर हमें बड़ी प्रसन्नता है कि वैद्य पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री ने 'शिव-तत्त्व-दर्शन' नामक बृहत् पुस्तक हिन्दी भाषा में लिख कर शिव-तत्त्व का सांगो पांग वर्णन किया है। इसके विषय सूची के अवलोकन से यह अवगत होता है कि भगवान् शंकर के सम्बन्ध में प्रमाणों द्वारा विशद विवेचन करके उनक स्वरूप गुण शक्ति महत्त्व आदि का लेखक ने अच्छी प्रकार से स्पष्टीकरण किया है। शिव भक्तों का इससे बड़ा उपकार होगा।

यद्यपि अनन्य उपासक एक ही आराध्य देव में सर्वोच्चभाव रखते हैं तथापि अन्य किसी भी देव की वे अवहेलना नहीं करते। सनातन धर्मावलम्बी इस भावना में दृढ़ रहें तो सभी उपासक पारस्परिक प्रेम पूर्वक अपने अपने आराध्य देवों की उपासक द्वारा वांछित फल प्राप्त कर सकते हैं। शिव-तत्त्व-दर्शन से सभी साधकों का हित हो श्री राधा माधव सर्वेश्वर प्रभु से हमारी यही मंगल कामना है।

आचार्य श्री की आज्ञानुसार
प्रेषक :—अधिकारी श्री व्रजवल्लभ शरण
वेदान्ताचार्य पञ्चतीर्थ

(७)

अनन्त श्री विभूषित जगद्गुरु श्री रामानुजाचार्य स्वामी पुरुषोतमाचार्य रङ्गाचार्यजी महाराज रामबाग, धर्मपीठ, पंढरपुर (महाराष्ट्र) का शुभाशीर्वाद—

श्रीमान् पं० रामप्रसादजी शास्त्री द्वारा प्रणीत "शिव-तत्त्व-दर्शन" ग्रन्थ के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ "कर्ममीमांसा" में प्रतिष्ठित शब्द एवं अर्थ अभिन्न है. इस सिद्धान्त से "शिव-तत्त्व-दर्शन" के दर्शन साक्षात् शिव के दर्शन हैं। इसके लिये पण्डितजी का महोपकार स्मरण है।

"शान्ता घोराश्च मूढाश्च" के आधार से परमात्मा के शान्त घोर रूप 'रुद्र" है, शान्तरूप "शिव" है. "नारायणोपनिषत्" का विज्ञान है कि एक ही अद्वैत परमात्मा "एकं वा इदं वि बभुव सर्वम्" के आधार से अपनी कलाभेदों से अनेक नामों एवं रूपों में परिणत हो गया है। उनकी आनन्द, विज्ञान, मन, प्राण एवं वाक् ये पाँच कलायें मुख्य हैं।

इनमें आनन्द कला से वह "मृत्युञ्जय" है। विज्ञान कला से वह "दक्षिण मूर्ति" है। मनः कला से वह "कामेश्वर" है। प्राणकला से वह "नीलकंठ" है। वाक् कला से वह "पशुपति" है। एवमेव शान्तिकला से वह 'शिव" अथवा "सदाशिव" है।

तंत्रों में "सदा शिव एवं विष्णु" अभिन्न माने गये हैं अतः "शिव तत्त्व दर्शन" का स्वाध्याय आत्मा को शिव भाव एवं विश्व को शान्ति प्रदाता है।

ग्रन्थ की भूमिकावलोकन से विदित होता है कि इसमें आवश्यक एवं उपादेय सब विषयों के संग्रह करने का प्रयास किया गया है, कतिपय अपूर्व विषयों का भी संकलन है।

इनमें शिव-लिङ्ग की प्राचीनता, विश्वव्यापकता प्रतिमा एवं उपासना, पूजा में ध्यान देने एवं समझने योग्य बातें एवं

लिंगार्चना आदि विषय मननीय हैं। "लीनं अर्थं गमयति इति लिंगम्" इस निर्वचन से अमूर्त का मूर्त रूप "लिंग" होता है। अतः भगवान् शंकराचार्यजी ने पाण्डुरंग भगवान् के लिये "परब्रह्मलिंग भजे पाण्डुरंगम्" कहा है।

हम श्री पण्डितजी के इस "स्तुत्य प्रयास" से परम सन्तुष्ट एवं "भवन्तो बहुलाः सन्तु वेदो विस्तार्यतामयम्" की अध्येषणा करते हैं।

दिनाङ्क १४/१२/७२ पुरुषोत्तमाचार्य रंगाचार्य

●

(८)

अनन्त श्री विभूषित पूज्य श्री स्वामी करपात्री जी महाराज का शुभाशीर्वाद

श्री राम प्रसाद शर्माजी के "शिव-तत्त्व-दर्शन" का संक्षिप्त परिचय ग्रन्थ देखा। विद्वान लेखक ने विषय का सुबोध तथा सुख-बोध प्रतिपादन किया है। "शिव-तत्त्व" समझने में यह ग्रन्थ परम उपयोगी है। यद्यपि भगवान् शिव का स्वरूप जानना कठिन है। जो शिव समग्र जगत् का आकाश की भाँति आश्रय है वही भक्तों पर अनुग्रह के लिये हिमालय के पाषाण खण्ड पर बैठ कर तप करते भी देखा गया है, तथापि अचिन्त्य के चिन्तन की धारा में यह ग्रन्थ परम उपयोगी है। हम श्री शास्त्री जी को शुभाशीर्वाद प्रदान करते हैं।

श्री करपात्री जी स्वामी जी का आशीर्वाद प्रेषित है।

प्रेषकः—सन्तशरण वेदान्ती
धर्म संघ, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी

●●

(९)

अनन्त श्री विभूषित दण्डि स्वामी श्री स्वरूपानन्दजी सरस्वतीजी महाराज, संस्थापक—आध्यात्मिक उत्थान मण्डल, प्रधान केन्द्र—परमहंसी गङ्गाक्षेत्र, श्रीनगर (नरसिंहपुर) मध्यप्रदेश का शुभाशीर्वाद

स्वस्ति श्री शास्त्री जी दि० ३१/५/७२

पूज्य श्री चरणनारायण स्मरणात्मक शुभाशीर्वाद।

"त्रिनेत्र" की विषय वस्तु अत्यन्त उपादेय प्रतीत हुई। इसमें भगवान् भूतभावन विश्वनाथ की उपासना एवं उसके विभिन्न उपादानों का साङ्गोपाङ्ग वर्णन प्रामाणिक रूप से किया गया है।

विश्वास है इससे साधक जनों को बहुत लाभ होगा। पुस्तक के प्रचार प्रसार के लिए पूज्य श्री चरण अपनी शुभकामना प्रेषित कर रहे हैं।

पूज्य श्री महाराज की आज्ञा से।

ह० निजी सचिव—सुबुद्धानन्द ब्रह्मचारी

●

(१०)

अनन्त श्री विभूषित परम सिद्धि महापुरुष अन्नपूर्णा माँ के अनन्य परम भक्त बाबा रामेश्वर दास जी का शुभाशीर्वाद।

शिव-तत्त्व-दर्शन का सारांश सुनकर माँ की कृपा से यह पवित्र पुण्यतम उद्यम सफल सिद्ध होने के लिये आशीर्वाद रूप में प्रसाद प्रदान किया।

ज्येष्ठ कृष्णा १ सोमवार वि० २०२९ दिनाङ्क २९-५-७२

रामेश्वरानन्द आश्रम ग्राम-टीबा बसई, तहसील खेतड़ी (राज०)

●

(११)

श्री गणेशजी महाराज के परम अनन्य भक्त सिद्ध महा पुरुष गुरुवर्य्य श्री हर्ष जी महाराज बीकानेर (राजस्थान) का शुभाशीर्वाद

विश्व की उत्पत्ति तथा लय के परम कारण परात्पर ब्रह्म प्रकृति पुरुष रूप में भगवान् साम्ब सदाशिव का वेद, वेदान्त, उपनिषद्, श्रुति, स्मृति, पुराणादि धर्म ग्रन्थों व आधुनिक विज्ञान विषयक अनेक महाग्रन्थों द्वारा प्रमाणित स्वान्तः सुखाय सरल हिन्दी में पं० रामप्रसाद शर्मा शास्त्री द्वारा तिरोहित 'शिव-तत्त्व-दर्शन' नामक अद्वितीय सांगोपांग अनुपम ग्रन्थ को पढ़ कर अनेक तार्किक प्रश्नों का समाधान पाकर, परम शांति एवं सुख का अनुभव हुआ।

वर्तमान युग में जब कि वैज्ञानिक प्रकाश में मनुष्य चकचौंद गया है और ईश्वरीय शक्तियों के विश्वास को खोकर अपनी आसुरी बल, बुद्धि, शक्तियों के प्रयोग द्वारा आवश्यकता, तृष्णा पूर्तियों पर उतर आया है। ऐसे ग्रंथ की परमावश्यकता प्रतीत हो रही थी। लेखक ने इस ग्रंथ का प्रणयन करके हिन्दू जनसाधारण को ही नहीं, अपितु विद्वान् से लेकर जनसाधारण मनुष्यों का पथ प्रदर्शक किया है। मेरी धारणा है कि यह ग्रंथ मनुष्य मात्र को सच्चे गुरु व मित्र समान सत्य पथ प्रदर्शक का कार्य करेगा। मनुष्य मात्र इसके द्वारा अपनी उचित आवश्यकताओं की पूर्ति, सुख शांति एवं समृद्धि प्राप्त कर सकेगा।

लेखक अनेकानेक धन्यवाद व सम्मान का पात्र है, लेखक के इस स्तुत्य प्रयास से हिन्दू जनता सर्वदा आभारी रहेगी। श्री-भगवान् गणेशजी महाराज की कृपा प्रसाद से इस ग्रंथ का अधिकाधिक प्रचार–प्रसार होगा।

श्री गोपाल हर्ष
हर्षों का चौक, बीकानेर

(१२)

"पद्मभूषण" "पण्डितराज" श्री राजेश्वर शास्त्री द्रविड़, मानद-विभागाध्यक्ष, वाराणसेय-संस्कृत-विश्वविद्यालय की सम्मति—

श्रीमद्भिः रामप्रसाद शर्म शास्त्रिभिः लिखितस्य 'शिव-तत्त्व-दर्शनस्य' संक्षिप्त परिचयो मयाऽवलोकितः । अत्र विभिन्न देश स्थितानां विविधा कृतीनां विभिन्न परिमाणानांच शिव लिङ्गानां परिचयो दत्तः । एवं अनेकैरुपयोगिभिर्विषयैः साधारण जनानां कृते शिव तत्त्वं प्रकाशितं वर्तते । वर्तमान समये देवता तत्त्व प्रकाशकाना-मेतादृशानां ग्रन्थानां अतीवावश्यकता विद्यते । अतः सर्वे संग्राह्य-स्यास्य ग्रन्थस्य लोके विशेषतः प्रचारो भवत्विति भगवन्तं विश्वेशं प्रार्थये इति ।

दिनांक २९/४/७२ श्री पूज्यगुरु चरणानां "पद्मभूषण"
"पण्डितराज" श्री राजेश्वर शास्त्री द्राविड़
महोदयानां आज्ञया रा० शा० होसमने

●

(१३)

"पद्मभूषण" "ज्योतिषाचार्य" डॉ० सूर्यनारायण व्यास
भारतीभवन, उज्जैन की सम्मति—

अनेक धन्यवाद । आपकी मौलिक मार्मिक और तत्त्वोद्-बोधक रचना देखकर सुख मिला। अवश्य रचना मौलिक और मर्मोद्बोधक है। आपने जिस प्रकार शिव तत्त्व के मर्म को प्रस्तुत किया है वह अभिनव है।. मुझे विश्वास है कि आपकी यह रचना आपके यश को बढ़ानें वाली सिद्ध होगी। मैं बधाई देता हूँ और भगवान् महाकाल से यश की कामना करता हूँ।

दि० २९-३-७२ सू० ना० व्यास

(१४)

भारत, पैरिस, अफ्रीकादिषु कृत वैदिक धर्म प्रचार, प्रसार, भारत प्रशासन सम्मानित, संस्कृत षोडश ग्रंथ–लेखक महामहोपाध्याय श्री छज्जूराम शास्त्री विद्या सागर की सम्मति

बगीचा माधोदास
लाल किला, दिल्ली–६ ।

श्री युत रामप्रसाद शर्मा शास्त्रि प्रणीतं "शिव-तत्त्व-दर्शन" नामक पुस्तकं दृष्ट्वा प्रसीदतितमांस्मम व्यचेतः । इदं पुस्तकं सरलं सहृदय हृदय प्रसादकं चास्ति, पुस्तकमिदं गृहीत्वा सर्वे लाभान्विताः स्युरित्यहं कामये ।

म. म. छज्जूराम शास्त्री विद्यासागर
अध्यक्ष :–दिल्लीस्थ–संस्कृत प्रचारक मण्डलस्य

◆

(१५)

श्री रामः शरणं मम

विद्वद्वर्य पं० रामकिंकर उपाध्याय,
तुलसी तत्त्वानुसन्धान, ४-२७३ बलभद्रप्रसाद तिवाड़ी रोड,
कानपुर–२ की सम्मति––

पं० श्री रामप्रसाद जी शास्त्री द्वारा रचित "शिव-तत्त्व-दर्शन" को देखनें का सुअवसर प्राप्त हुआ । यद्यपि ग्रन्थ को समयाभाव से आद्योपान्त नहीं पढ़ पाया फिर भी जिन अंशों को देख सका उससे प्रभावित हुआ । भगवान् शिव पर उपलब्ध सामग्री के सदुपयोग के साथ २ बौद्धिक आधार पर भी उन्हें सिद्ध करने का तार्किक प्रयास इसमें किया गया है । इसलिये इसकी उपादेयता बढ़ गई है ।

आशा है इसके प्रकाशन से भगवान् भूतभावन शिव की महिमा का प्रचार प्रसार होगा।

केम्प नागदा ११-४-७२ रामकिंकर उपाध्याय

* * *

(१६)

"शिव-तत्त्व-दर्शन" की रूप रेखा द्वारा जान पड़ता है कि यह ग्रन्थ शिव भक्तों, शोधकर्ताओं तथा विद्वानों के लिए भी महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा। मैं ग्रन्थकार को इस सदनुष्ठान के लिये बधाई देता हूँ।

डॉ० कन्हैयालाल सहल
एम० ए०, पी-एच० डी
सैक्रेट्री, बिरला एज्यूकेशन ट्रष्ट पिलानी (राजस्थान)

* * *

(१७)

पं० राधेश्याम मिश्र, संस्थापक प्राचार्य, पोद्दार कालेज नवलगढ़ व रुइया कालेज रामगढ़ (शेखावाटी) की सम्मति—

ब्रह्मा, विष्णु, महेश रूपों में प्रख्यात हैं—त्रिदेवत्व, उसमें महेश सर्वोपरि हैं। सृष्टि में सर्व व्याप्त होकर भी सर्वोपरि सत्ताधारी शिव की महिमा तथा तत्सम्बन्धी समस्त बातें जो प्रसिद्ध हैं तथा जो अभी सर्वसाधारण के सम्मुख नहीं है उनका पूर्ण बुद्धि ग्राह्य, एवं सुसंगत विवेचन इस "शिव-तत्त्व-दर्शन" नामक ग्रंथ में प्राप्य है। जो जिस स्तर का मनुष्य है, वह अपने सन्तोष के लिए अच्छा पोषक वस्तु प्राप्त कर सकता है।

लेखक ने इस ग्रंथ को लिखने से पूर्व लम्बे समय तक इस विषय का गहन अध्ययन किया है। शिव वाङ्मय में जो भी

तत्सम्बन्धी बातें मिली वे सब युक्ति पूर्वक संकलित की गई हैं। ग्रंथ अत्यन्त उपादेय है।

दिनांक १७ मई सन् १९७२
केम्प जयपुर (राजस्थान)

राधेश्याम मिश्र
(राजस्थान)

◆

(१८)

वैद्यराज श्री पण्डित रामप्रसाद जी शर्मा शास्त्री द्वारा लिखित "शिव-तत्त्व-दर्शन" नामक निबन्ध को पढ़कर बड़ा आनन्द हुआ। श्री शास्त्रीजी ने इस ग्रन्थ के लिखने में महान् परिश्रम किया है। यह अनेक ग्रन्थों के प्रमाणों के साथ अत्यन्त सरल हिन्दी में लिखा है।

भगवान् भूतभावन के आप परम भक्त हैं अतः श्री महेश्वर सम्बन्धी सभी गाथाओं पर पूर्ण प्रकाश डाला है। यह सर्व साधारण से लेकर वरिष्ठ विद्वानों के लिए भी अत्यन्त उपादेय सिद्ध होगा। इससे जनता को बहुत लाभ होगा। इससे शिवभक्त विद्वानों को भी परितोष प्राप्त होगा। बहुत नूतन नूतनादि का ज्ञान भी प्राप्त होगा।

अतः पाठकों से अनुरोध है कि इस ग्रंथ का अनुशीलन करके लेखक के प्रयास को सफल बनाने का कष्ट करें।

मैं आशा करता हूं ये लेखक इस पुण्य से सुदीर्घायु तथा सारोग्य प्राप्त करते हुए अन्य भी ऐसे ग्रन्थों को लोकोपकारार्थ प्रस्तुत करेंगे।

बम्बई
दिनांक २१-५-७२

कन्हैयालाल भेड़ा

व्याकरण आयुर्वेदाचार्य, प्रधान चिकित्सक, बम्बई हॉस्पीटल,
आयुर्वेद विभाग मानद् सदस्य—विद्वत् परिषद्,
वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय।

(१९)

'शिव-तत्त्व-दर्शन' आख्यस्य पुस्तकस्येति वृत्तमवगम्य परमं प्रसीदति मे चेतः। साम्प्रतिक युगे भारतीय संस्कृतेर्मूलतत्त्व परिचायकानां पुस्तकानां सर्वजन वेद्यार्थतया विदुषां रचना नास्तीति बहुनामुपालम्भः। तेषामर्थे पुस्तकमिदं स्वाग्रह परीक्षणाय फले ग्रहिः स्यादिति संभावयामि।

पुस्तकस्यास्य लेखकः

श्रीमान् रामप्रसाद शास्त्री महानुभावो भगवत्कृपया अन्यान्यापि पुस्तक रत्नानि प्रकाशयित्वा विचार सरणिं सम्प्रथवेदिति कामयते।

दि० २५-७-७२ डॉ० श्री गोपाल चंद्र मिश्रः
आचार्य-वेद धर्मशास्त्र, मीमांसा
एम. ए., पी. एच. डी.।
प्राध्यापक एवं अध्यक्ष-वेद विभाग वाराणसेय संस्कृत
विश्वविद्यालय जगत् गंज वाराणसी-२ उत्तर प्रदेश

●

(२०)

डा० रामगोपाल शर्मा 'दिनेश',

आचार्य तथा अध्यक्ष हिन्दी-विभाग उदयपुर विश्वविद्यालय उदयपुर की सम्मति—

"शिव-तत्त्व-दर्शन" में विद्वान् लेखक पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री ने शिव सम्बन्धी गम्भीर ज्ञान का परिचय दिया है। शिव की ईश्वर (ब्रह्म) रूप में स्वीकृति, साकार-निराकार के द्वन्द्व का निराकरण तथा शिव सम्बन्धी प्रतीकों का अर्थाख्यान इस ग्रन्थ की विशेषताएँ हैं। शिव-पूजा-सम्बन्धी विवेचन बहुत सार्थक तथा तर्कपूर्ण है। शिव का लोक जीवन से जो गहरा सम्बन्ध है उसे यह

ग्रंथ उद्घाटित करता है तथा उस सम्बन्ध को स्थायी भी बनाता है। भक्ति सम्बन्धी दृष्टिकोण भी पर्याप्त मौलिक तथा प्रभावशाली है। मैं शास्त्रीजी को ऐसे सुंदर ग्रंथ की रचना के लिए हार्दिक बधाई देता हूँ।

दिनाङ्क १८/२/७४ डा० रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'

●

(२१)

श्री गोविन्द नारायण शर्मा, न्याय-साहित्याचार्य प्राचार्य महाराजा संस्कृत कालेज जयपुर की सम्मति

मैंने खेतड़ी निवासी पं. रामप्रसाद जी शास्त्री द्वारा लिखित "शिव-तत्त्व-दर्शन" नामक ग्रंथ को देखा। इसमें विद्वान् लेखक ने श्रुति–स्मृति–पुराण–आगम अन्य साम्प्रदायिक ग्रंथों का अनुशीलन करके शिव उपासना में सम्बन्धित विभिन्न विषयों पर सप्रमाण एवं साधिकार लेखनी उठाई है।

प्रस्तुत ग्रंथ में विभिन्न प्रकार के शिव-लिङ्गों का निरूपण, भारतवर्ष के द्वादश ज्योतिर्लिङ्गो का वर्णन, शिवोपासना के अधिकारी भक्तों का लक्षण, भगवान् शिव की विशेष पूजा पद्धति, शिव एवं शिवा सम्बन्धी मन्त्र यन्त्रों का सविधि वर्णन सम्यक् प्रकार से किया गया है।

शिव भक्तों के लिए यह पुस्तक विशेष रूप से मनन करने योग्य है। इसमें वर्णित विषयों को देखने पर "गागर में सागर" वाली उक्ति चरितार्थ होती दिखाई देती है। वस्तुतः सभी आवश्यक ज्ञातव्य विषयों का इसमें संक्षिप्त रूप से यथा स्थान समावेश कर दिया गया है। भक्त जनों को इससे लाभ उठाना चाहिए। मैं हृदय से इस पुस्तक के अधिकाधिक प्रचार प्रसार की कामना करता हूँ। शम्।

दि० १५-६-७२ गोविन्द नारायण शर्मा

(२२)

पण्डित श्री रामप्रसाद शास्त्रिणा संकलितस्तुलसीकृत श्रीराम चरितमानसमिव जनसाधारणेभ्यः सुगमतयैव बहुलाभमालक्ष्य हिन्दी भाषयैवोपनिबद्ध शिव-तत्त्व-दर्शन नामको निबंधोऽसंदिग्धं महदुपयोगीति दृढं विश्वसिमि, यतो ह्यत्र सप्रमाणं सर्वांगसुन्दरं च भगवच्छिवविषयक महदुपयोगी विविधविवेचनं महदायासेन महताश्रमेण च ग्रन्थकृता कृतम् । यद्यपि शिवो भगवान् नैव सर्वाधिक विवादास्पदो देवोऽपितु सर्वाधिकेष्टदेव एव, तथापि सर्वाधिकष्ट देवे तस्मिन् तत्र तत्र प्रदर्शितानेक प्रकारान्संलोच्यैकत्रैवात्र सत् सिद्धान्तो दर्शितः । अतश्च शिव-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थरत्ननिर्मातृभ्यः पण्डित श्री रामप्रसाद शर्मा शास्त्रीभ्यो हृदा सबहुमानं धन्यवादानर्पयन् कामयेऽस्य ग्रन्थरत्नस्य झटिति प्रकाशं प्रचारं चेत्युदयपुरस्थस्य में खड्गनाथस्य मतिः ।

दिनाङ्क १७-८-७३

खड्गनाथ मिश्रः, वेदान्ताचार्य, प्रधानाचार्य,
राजकीय महाराणा संस्कृत महाविद्यालय उदयपुर (राज०)

(२३)

श्री शास्त्री जी, सप्रेम नमस्कार ।

यह जानकर बड़ा हर्ष हुआ कि आपने "शिव-तत्त्व-दर्शन" पुस्तक लिखी है, इस विषय में मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ स्वीकार कीजिए ।

आप द्वारा प्रेषित पुस्तक को मैंने देखा । आपने प्रचुर सामग्री त्रिनेत्र रूप तीन स्कन्धों में समेटने का स्तुत्य प्रयास किया है । यद्यपि शैव वैष्णव सम्प्रदायवादियों ने अनेक अनर्गल बातें लिखी हैं और कीचड़ उछालने का प्रयास किया है पर इसमें सन्देह नहीं कि शिव-तत्त्व (ब्रह्म) सर्वोपरि है । वैदिक पृष्ठभूमि पर पुराणों, स्मृतियों

और विभिन्न धर्मशास्त्रों ने शिव का जो स्वरूप स्थिर किया है, वह तपस्वी, त्यागी, सन्तोषी, आशुतोषी, और अपरिग्रह्य रहा है और यही त्रिकालदर्शी स्वरूप भारतीय संस्कृति के अनुकूल है और यही मानव संस्कृति के निर्माण में प्रेरणादायक सिद्ध हो सकता है ।

अतः "शिव–तत्त्व–दर्शन" जैसे ग्रंथ की परमावश्यकता का अनुभव हो रहा था, जिसमें शिव–तत्त्व सम्बन्धी पूर्ण परिचय हो । शिव का ब्रह्मत्व, लिङ्ग-परिचय, द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग परिचय, अष्ट-मूर्ति शिव का माहात्म्य, पूजा पद्धति, शिव सम्बन्धी विभिन्न व्रतों और तीर्थों का परिचय और माहात्म्य आदि विपुल सामग्री के साथ यह ग्रंथ आपके अथक परिश्रम से सामने आ रहा है। यह भक्तों और धर्मोत्सुकों के लिए ही नहीं जन सामान्य के लिए भी अत्यंत उपादेय होगा, यही मेरी कामना है।

मैं आपके इस सत्प्रयास की हृदय से सफलता चाहता हूँ ।

दिनांक ५–६–७२ भवदीय

शिव सागर त्रिपाठी

संस्कृत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर

◆

(२४)

मैंने श्री रामप्रसाद जी शर्मा खेतड़ी निवासी द्वारा लिखित "शिव-तत्त्व-दर्शन" नामक पुस्तक के संक्षिप्त परिचय का अवलोकन किया। संक्षिप्त परिचय को देखने से प्रतीत होता है, कि लेखक ने शिव-तत्त्व सम्बन्धी विविध विषयों का इसमें समावेश किया है। और शिव-तत्त्व सम्बन्धी बहुविध सामग्री को इसमें संकलित किया है, इस पुस्तक के द्वारा संस्कृतानभिज्ञ साधारण जन भी शिवतत्त्व सम्बन्धी सभी बातों का सरलता से ज्ञान प्राप्त कर सकेगा। विप्रकीर्ण सामग्री के एकत्र सरल भाषा में संक्षेप में संकलित हो जाने से संस्कृतज्ञ शिक्षितकल्पियों को भी इससे लाभ पहुँचेगा,

ऐसी मेरी धारणा है। मैं इस कार्य के लिए धन्यवाद अर्पित करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

सुरजनदास स्वामी
एम०ए०, साहित्य–व्याकरण-आयुर्वेद-वेदान्ताचार्य
संस्कृत विभाग, जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर

◆

(२५)

श्री रामप्रसाद शास्त्रि शर्म द्वारा लिखितस्य 'शिव-तत्त्व-दर्शन' नामक पुस्तकस्य सारांशोऽविकलं नयनपथगोचरीकृतः। नूनं परिश्रान्तं लेखकेन विषय विवेचने। शिवतत्त्वसमीक्षणे बहुपकारि पुस्तकमिदं विशदयति प्राञ्जलं शैव रहस्यम् वर्णयति पारदं माहेश्वरं तत्त्वं अपवारयति शिव विषयक भ्रान्त धारणा परिक्लान्त मनस्तामसम् प्रमाणयति तदीय विविध विध समर्चना रहस्यम् स्फोरयति शिव सम्बन्धि व्रतोत्सवानां माहात्म्यम्, किं बहुना प्रेरयति अशान्त तात्प्यमानं मनः शिव संकल्प कामनया भगवतो भूतपतेः समर्चायाम।

मन्येजड़वादतिमिराच्छन्नं दौलायमानमाधुनिकं जनमानसमवाप्य पुस्तकमिदं शान्तं शाश्वतिकं शिवतत्वमासाद्यामलमालोकितञ्च स्यादिति।

बीकानेर — विश्वनाथ मिश्रः
दिनांक ३ अप्रैल १९७२ — प्राचार्यः
श्री शार्दूल संस्कृत विद्यापीठ, बीकानेरम्

◆

(२६)

श्री वल्लभ-सम्प्रदायाचार्य जगद्गुरु प्रधान धर्मपीठ (तिलकायत) नाथद्वारा (राजस्थान) टेम्पिल बोर्ड के चीफ एक्जी-

क्यूटिव ऑफीसर, गोकल प्रसाद शर्मा बी० ए०, एल-एल० बी०, भूतपूर्व म्यूनिसिपल कमिश्नर साधिकार मजिस्ट्रेट फर्स्ट क्लास जयपुर सिटी (राजस्थान) की सम्मति

प्रिय पण्डितजी श्री राम प्रसादजी

सादर प्रणाम ।

मुझे यह लिखते हुए अत्यन्त हर्ष हो रहा है कि 'शिव-तत्त्व-दर्शन' लिखकर आपने न केवल शिव भक्तों की ही सेवा की है, अपितु समस्त हिन्दू धर्म, मतावलम्बियों का उपकार किया है। इस ग्रंथ के अवलोकन से ही इसकी उपादेयता का ज्ञान हो सकता है। ग्रंथ को अलग अलग-स्कन्धों में विषय की दृष्टि से बाँट कर इस ग्रंथ का सरलीकरण भी कर दिया है। भाषा और भाव की दृष्टि से ग्रंथ बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। भाषा उत्तम गुण पूर्ण है और विषय अति क्लिष्ट होते हुए भी शब्दों का चयन पाठकों की तथा जनसाधारण की रुचि के अनुसार ही किया है। प्रतिपादन की दृष्टि से जो उद्धरण दिये गये हैं, वे भी बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। यों यह ग्रंथ सब ही दृष्टियों से रोचक शोधपूर्ण है। इस ग्रंथ रचना के लिए बधाइयाँ देता हूँ, ससम्मान-सधन्यवाद।

नाथद्वारा (राज०) शुभेच्छु

दिनाँक २८/३/७३ गोकुल प्रसाद शर्मा

●

(२७)

डा० प्रभाकर शास्त्री, एम० ए० (हिन्दी, संस्कृत), पी-एच०डी०

डी० लिट्, (संस्कृत)

साहित्य-धर्मशास्त्राचार्यः, व्याख्याता संस्कृत विभाग

राजकीय महाविद्यालय, कोटा की सम्मति

अनेकोपाधि विभूषित—

पंडितप्रवर श्री रामप्रसाद शास्त्री द्वारा लिखित पुस्तक "शिव-तत्त्व-दर्शन" एक उल्लेखनीय कृति है। विद्वान् लेखक ने इसे हिन्दी भाषा में लिखकर सार्वजनोपयोगी बना दिया है। यद्यपि संस्कृत भाषा में अनेक ऐसे ग्रन्थ मिलते हैं जो प्रकाशित तथा हस्तलिखित ग्रंथ के रूप में उपलब्ध होते हैं तथा जिनमें शिव-तत्त्व सम्बन्धी जानकारी पर्याप्त मात्रा में विद्यमान हैं परन्तु वह सामग्री संस्कृत भाषा में निबद्ध होने से सार्वजनीन उपयोगिता के लिए नहीं थी। इस दृष्टि से श्री शास्त्रीजी का प्रयास स्तुत्य है। शैव धर्म व दर्शन भारत का प्राचीनतम सिद्धान्त है। शिव की महिमा असीम है। उसका सम्यक् ज्ञान निरन्तर चिन्तन व मनन का विषय है। शिव तत्त्व का वास्तविक अनुशीलन करने के इच्छुक व्यक्तियों के लिए यह ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसमें शिव-तत्त्व सम्बन्धी सम्पूर्ण विषय का विस्तार से विवेचन उपलब्ध होता है।

विद्वान् लेखक ने इस महान् ग्रन्थ को तीन स्कन्धों में तथा प्रत्येक को १८ अध्यायों में विभक्त किया है। स्कन्धों की संख्या शिव के नेत्रों की ओर संकेत करती है। स्कन्धों की संख्या शास्त्र सम्मत है। भारतीय वाङ्मय में १८ संख्या बहुत ही महत्त्वपूर्ण मानी गई है। पुराण भी १८ हैं, भागवद्गीता के भी १८ ही अध्याय हैं, महाभारत का युद्ध भी १८ दिन तक चला था।

इस ग्रन्थ के लेखन में विद्वान् लेखक ने अपने मत की पुष्टि में वेदमंत्रों, उपनिषदों: धर्म शास्त्रीय ग्रन्थों, पुराणों एवं दुर्लभ तन्त्र ग्रन्थों के उद्धरण प्रस्तुत कर अपने विकसित ज्ञान का परिचय दिया है। अनेक संदिग्ध प्रश्नों के समाधान में लेखक की विद्वत्ता प्रमाणित होती है।

इस ग्रन्थ के उल्लेखनीय विषयों में शिव का ब्रह्म से अभेद शिवलिंगकृति रहस्य, द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों का माहात्म्य, अष्टमूर्ति शिवलिंग शिव सम्बन्धी मन्त्रों का यन्त्रानुरूप विवेचन शिवपूजन

रहस्य, शिव विषयक व्रतोत्सवादि का सांगोपाङ्ग वर्णन तथा विभिन्न स्थानों पर स्थापित शिवलिंगों का ऐतिहासिक व पौराणिक विवेचन द्रष्टव्य है।

शैवमतानुयायी एवं शैवमत के जिज्ञासु श्रद्धालु व्यक्तियों के लिये यह ग्रन्थ अत्यन्त उपादेय व संग्राह्य है। इस स्तुत्य प्रयास के लिए विद्वान् लेखक धन्यवाद के पात्र हैं।

दिनांक १७/४/७२ डा० प्रभाकर शास्त्री

●

(२८)

डा० बद्रीप्रसाद पंचोली, एम० ए०(हिन्दी, संस्कृत),
पी–एच०डी०, साहित्यरत्न,
राजकीय महाविद्यालय, अजमेर की सम्मति

स्तुत्य प्रयास

वैद्यपंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री द्वारा रचित “शिव-तत्त्व-दर्शन” नामक ग्रंथ एक अभाव की पूर्ति करता है। इस विशाल ग्रंथ में शिव के वास्तविक स्वरूप का बड़ा ही विशद वर्णन है। तीन नेत्र दृष्टियों में विभक्त इस ग्रंथ के प्रथम स्कन्ध में शिव का ब्रह्मत्व सिद्ध किया है। शिव की महिमा व उसके पूजन का विवेचन प्राचीन और अर्वाचीन प्रमाण जुटाकर किया गया है। शिव के लिङ्गाकार व पीठ योनि के रूप में प्रकट होने की स्थिति को सकारण स्पष्ट किया गया है। शिव-तत्त्व सम्पूर्ण शास्त्रीय विवेचन इस खण्ड में मिलता है। द्वितीय नेत्र दृष्टि में शिव पूजा के शास्त्रोक्त विधान का सविस्तार मार्मिक विवेचन है। तृतीय नेत्र दृष्टि में शिव से सम्बद्ध तीर्थों व्रतों आदि का वर्णन है। विस्तृत विषय सूची देखने से प्रतीत होता है कि इस ग्रंथ में अपने विषय का बहुत ही प्रामाणिक विवरण है। लेखक ने शिव-तत्त्व के विवेचन के लिए अनेक ग्रंथों

का अध्ययन किया है। निःशंक होकर उसने पाश्चात्य विचारों का भी उपयोग किया है। लेखक की तत्त्वान्वेषिणी दृष्टि के सुफल के रूप में ऐसे प्रामाणिक ग्रंथ का सर्वत्र स्वागत किया जायगा इसमें कोई सन्देह नहीं है।

'अग्नि-सोममयं जगत्' मानने वाली दृष्टि ने वेदी पर प्रज्वलित अग्नि शिखा के प्रतीक के रूप में शिव के स्वरूप की कल्पना को जन्म दिया है। संसार भर में जहाँ-जहाँ पर भारत की इस वैज्ञानिक दृष्टि का स्वागत हुआ वहाँ-वहाँ शिवपूजा भी प्रचार पाती गई। विश्व को कुटुम्व में बदलने वाले तत्त्वों में शिव को भी एक माना जा सकता है। आज मानव और मानव के बीच में धर्म, जाति, सम्प्रदाय, राज्य आदि की सीमा रेखायें खड़ी करके दूरी पैदा की जा रही है। ऐसे समय में एक अविकारी विद्वान का यह प्रयत्न कि किन्हीं बिंदुओं पर यह दूरी समाप्त हो जाती है और इस दृष्टि से मनुष्य मात्र में हार्दिकता और एकता खोजी जा सकती है, वास्तव में प्रशंसा के योग्य है। आज इस बात की सर्वाधिक आवश्यकता है कि देश देश के जाति जाति के सम्प्रदाय–सम्प्रदाय के मनुष्यों में एकता के मृदुल सूत्रों की खोज की जाये। भारतीय संस्कृति में ऐसे तत्त्वों की प्रचुरता है। यह प्रसन्नता की बात है कि 'शिव-तत्त्व-दर्शन" के विद्वान् लेखक ने ऐसे एक सूत्र को खोजकर उस पर विस्तृत विचार प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। आशा है ऐसे अन्य सूत्रों पर विचार करने के क्रम में यह ग्रन्थ पथिकृत के रूप में प्रमाणित होगा। एक बार फिर ग्रन्थकार को ऐसे सुन्दर प्रयास के लिए बधाई देता हूँ।

●

(२६)

शिव को लेकर भारतीय समाज में अनेक प्रकार की कल्पनाएं एवं मान्यताएँ दिखाई देती हैं। वस्तुतः "शिव-तत्त्व-दर्शन" पुस्तक

में इस सम्बन्ध में प्रामाणिक तथ्यात्मक सामग्री प्रस्तुत की गई है। विद्वान लेखक ने भारतीय एवं पाश्चात्य साहित्य का गम्भीर अध्ययन एव अनुसन्धान करके शिव विषयक तटस्थ दृष्टि का प्रतिपादन किया है।

शिव के ब्रह्मस्वरूप, पूजा पद्धतियों एवं व्रतों आदि का वैज्ञानिक विवेचन हुआ है। मंत्र, सूत्र, श्लोक आदि का हिन्दी अनुवाद देने से पुस्तक की महत्ता और अधिक बढ़ गई है। शिव दर्शन जैसे गूढ विषय का तात्त्विक विश्लेषण कर लेखक ने एक बड़े अभाव की पूर्ति की है। इस शोधपूर्ण ग्रन्थ के लिए मैं साधुवाद देता हूँ।

डा० गोरधनसिंह शेखावत,
एम०ए०, पी–एच०डी०

प्रवक्ता—हिन्दी विभाग, श्री भगवानदास तोदी कालेज,
लक्ष्मणगढ़ (सीकर)

◆

(३०)

P. A. Phadke
B.Sc., B.Sc. (Tech)(Chemical Eng.)
Chief officer, Engg. Division,

Gwalior Rayons,
BIRLAGRAM(NAGDA)
13th May 1972

The book 'Shiv Tatva' written by respected Shri Ramprasadji Sharma is nothing less than an Encyelopedia on Lord Shiva. To deseribe every aspect of Lord Shiva in one single book and that also in a very simple and common language is in itself a very great work and reveals the deap study, untiring perseverance and the boundless efforts Shri Panditji has put–in to compile all this information.

The book gives information about practically all the known "Shiv Lingas" not only in India but all over the

world. Shiv Lingas ranging in size from one inch to twelve hundred feet, made of sand, ice & different metals, having multifaced four, five and eight entity have been described in this book. Their mythological importance together with their geographical situation and the routes and ways and means to reach them has all been compiled in this book in a very systematic and simple way. Thus the book has been made extremely usefull not only for the Shiva Devotees but also for the tourists.

The main feature of this book is the scientific analysis of the modes of worship, including (जप, ध्यान, मंत्र) and the benefits mankind can derive from it. The aspect has been dealt with by Shri Panditji in such an impressiye and convincing way that one who does'nt have faith in God will also think of trying same of them. The socalled modern civilisation cannot accommodate 'God' and therefore his worship or praying and aspiring for 'Eternal peace' called 'मोक्ष' is looked upon as backwardness and a 'fad'. The materialistic world will not only laugh at it but vehemently oppose all such efforts to achieve it.

In this world of today everything needs a Proof and even 'God' is no exception to this. 'Man' thinks he is the "creator" and he can wield and control nature. But how futile are his efforts and how vain prove his words when he is no more. This very feeling kindles in him a ray of devotion and belief in 'God'. This revealation has been achieved to a great extent by Shri Panditji in this book.

Uptill now, this remained a very serious and mystic subject and people never tried to probe into it. But Shri Panditji has explained it in such a simple and easy language and has proved it scientifically that a common man will also be pleased to try and derive the good of it.

The book though being so simple also opens vast field for research work. Materialism has reached its peak and there is no end to it. At this juncture mankind needs solace and peace which he will find at the feet of Lord Shiva. This has been propagated in most convincing way in this book.

I am sure this book will prove useful to Shiva Devotees, the researh scholars and even to the Critics.

With respectful regards, (Padmakar Anant Phadke)

हिन्दी अनुवाद

सम्मान्य श्री रामप्रसाद जी शर्मा द्वारा रचित 'शिव-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ भगवान् शिव पर विश्वकोश से कम नहीं है। शिव विषयक प्रत्येक दृष्टिकोण को एक पुस्तक में इतनी सरल व सुबोध भाषा में प्रस्तुत करना अपने आप में बहुत बड़ा कार्य है और पण्डितजी के गहन अध्ययन, अथक श्रम और असीम प्रयास का सूचक है।

पुस्तक में भारत के ही नहीं संसार भर के ज्ञात शिवलिंगों की जानकारी दी गई है। एक इंच से लेकर बारह सौ फुट आकार के शिवलिंग, रेत, बर्फ और विविध धापुओं से बने शिवलिंग, एक से लेकर आठ मुख तक धारण करने वाले शिवलिङ्ग इस पुस्तक में वर्णित हैं। उनकी परम्परागत महत्ता, भौगोलिक स्थिति और वहाँ पहुँचने

के मार्ग, साधन आदि की जानकारी अतीव सरल ढंग से पुस्तक में संकलित है। इस तरह पुस्तक शिवभक्तों के लिए ही नहीं यात्रियों के लिए भी उपयोगी बन गई है।

इस पुस्तक की मुख्य विशेषता है—जप, ध्यान, मन्त्र सहित पूजा के प्रकारों और उनसे मनुष्यों को होने वाले लाभों का वैज्ञानिक विवेचन। पंडितजी ने यह विषय इतने प्रभावशाली और विश्वस्त ढंग से प्रस्तुत किया है कि नास्तिक भी एक बार सोचने और प्रयोग करने का यत्न करेगा। वर्तमान सभ्यता ईश्वर की स्वीकृति नहीं देती इसलिए उसकी पूजा करना और शाश्वत शान्ति तथा मोक्ष के लिए प्रेरित होना आज पिछड़ेपन का सूचक माना जाता है। भौतिकतवादी जगत् इस पर हँसेगा ही नहीं उसके लिए किये जाने वाले प्रयत्नों का तीव्र विरोध भी करेगा।

आज संसार में प्रत्येक बात का प्रमाण चाहिए और ईश्वर भी इसमें अपवाद नहीं है। मनुष्य सोचता है कि वह स्रष्टा है और प्रकृति का प्रेरक और नियन्ता हैं पर जब वह हो ही नहीं तो उसके प्रयास और शब्द कितने निरर्थक हो जाते हैं। यह भावना ही मनुष्य में ईश्वर विश्वास और भक्ति का विचार जगाती है। पण्डितजी का यह ग्रन्थ यही उपलब्धि प्रस्तुत करता है। अब तक यह गम्भीर और रहस्यमय विषय रहा जिससे जनता इस विषय में प्रयास नहीं कर सकी परन्तु पण्डितजी ने इसकी इतनी सरल व सुबोध भाषा में, वैज्ञानिक दृष्टि से सप्रमाण व्याख्या कर दी है कि सामान्य व्यक्ति भी प्रयोग करके प्रसन्न होगा और उत्तम लाभ प्राप्त करेगा।

पुस्तक सरल होते हुए भी खोज का व्यापक क्षेत्र प्रस्तुत करती है। भौतिकतावादी दृष्टि चरमसीमा तक पहुंच गई है और उसका अन्त दिखाई नहीं देता। इस स्थिति में मानव को शान्ति

और सन्तोष चाहिए जो शिव के चरणों में मिल सकेगा। यह बात विश्वसनीय ढंग से पुस्तक में प्रस्तुत की गई है।

मुझे विश्वास है कि पुस्तक शिवभक्तों, गवेषकों और समीक्षकों के लिए भी लाभप्रद सिद्ध होगी।

—पद्माकर अनन्त फड़के

●

(३१)

DR. D.R. SONAR

M.B.B.S. (Poona), F.R.C.S. (eng), BIRLAGRAM (NAGDA)

Chief Medical Officer Grasim Jana Seva Trust Hospital

"SHIVOSHMI AHAM" Shiva is very soul in each of us and could be expressed as 'SELF' within us. It is a great strength and power of individual faculty. Seeing this SELF within us is its realisation. This is the ultimate and the greatest of the human achievements. The way to achieve this is through the 'SADHANA' (Yoga). The types of yogas may be different in degree rather than in kind and so each should select a suitable type for him to achieve this goal–knowing 'Self-Tatva' or "SHIVA TATVA". One can be happy of knowing this 'TATVA' provided he has become capable of enjoying it by way of 'TAPASCHARYA'.

Begetting the fortune of seeing this will of course be called as "SHIVA TATVA DARSHAN". For this Implicite faith and firm belief in him are essentials. Modern civilised society believes in him with reservation due to the development of Science and though pretend to believe him

in difficulties and sorrows he is always suspicious in surrendering him completely. This half hearted approach naturally bars him in getting or knowing of "SHIVA-TATVA DARSHAN". This rarest and highest fortune was obtained by very few lucky devotees of him and rest of them have to be satisfied with imaginations only of its scintillating brightness consisting three zones of SATYAM-SHIVAM-SUNDARAM.

Viewing this though not possible for every body of us, conversion of this faculty into simpler version in descriptive text is not only desirable but essential. Describing this powerful picture into words is not easy. It's a difficult and laborious task.

I am proud to say that Pandit Ramprassad Shastri had made an arrangement for everybody of us to get this "SHIVA TATVA DARSHAN" through his text. This is unique of its kind-a great voluminous work could be called as Encyclopedia-Shiva. All aspects of shiva from Adhyatmic to modern scientific are reviewed in absolutely precise fashion in three different sections. One is definately impressed for the work Shri Panditji has put in, collecting all the Scattered and Piecemeal informations of Shiva, arranging in different sections and compiling into one big volume. It is really worth reviewing this "SHIVA-TATVA DARSHAN" and I am sure it will enlighten not only the devotee of Shiva but all the keen and learned persons desirous of obtaining such a knowledge.

July 26, 1973 (Dr. D. R. Sonar)

● हिन्दी अनुवाद ●

'शिवोऽस्मि अहम्'—शिव हम सबमें निहित आत्मा का नाम है जिसे अन्तरात्मा कहा जा सकता है। यह व्यक्ति की सर्वोच्च शक्ति है। अन्तरात्मा को अपने भीतर देखना आत्मसाक्षात्कार है। यह मनुष्य के लिए सर्वोच्च और परम उपलब्धि है। साधना द्वारा इसे प्राप्त किया जा सकता है। योग के स्तरभेद से विविध रूप होते हैं स्वरूप भेद से नहीं। व्यक्ति को उनमें से अपने लिए उपयुक्त रूप चुनकर आत्मतत्त्व या शिवतत्त्व की जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। व्यक्ति इस तत्त्व को जानकर आनन्द पायेगा बशर्ते कि वह तपश्चर्या से स्वयं को इसके लिए सत्पात्र प्रमाणित कर सके।

भाग्य से ऐसा दर्शन प्राप्त करना निश्चय ही 'शिव-तत्त्व-दर्शन' कहलायेगा। इसके लिये अटूट विश्वास और स्पष्ट विचार परमावश्यक हैं। आधुनिक सभ्य समाज विज्ञान की प्रगति के कारण ईश्वर में दृढ़ विश्वास नहीं रखता और कठिनाइयों और दुःखों में उस पर विश्वास करने का बहाना करता हुआ भी वह पूरी तरह आत्मसमर्पण करने में संदिग्ध रहता है। यह अधकचरा प्रयास शिव-तत्त्व-दर्शन करने या उसे जानने में सदा बाधक रहा है। ऐसा उत्कृष्ट और अन्यतम सौभाग्य बहुत कम भक्तों को मिला है। शेष तो सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् इन तीन स्तरों पर उसकी शाश्वत ज्योतिर्मयता की कल्पना मात्र करके सन्तुष्ट हुए हैं।

इस दृष्टि से हममें से प्रत्येक के लिए यह मार्ग सरल न होने पर भी, इसके प्रति अपने सम्मान के लिए सरल कथन और विशद वर्णन करना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। इस शक्तिशाली दृश्य को वर्णन का विषय बनाना आसान नहीं है। यह कठिन और श्रमशील कार्य है।

मुझे यह कहने में गर्व होता है कि पंडित रामप्रसाद जी शास्त्री ने हममें से प्रत्येक के लिए 'शिव-तत्त्व-दर्शन' की व्यवस्था

की है। यह अपनी तरह का अनुपम और विशाल कार्य है जिसे शिवविश्वकोश कहा जा सकता है। शिव सम्बन्धी आध्यात्मिक से लेकर आधुनिक वैज्ञानिक तथ्यों को तीन स्कन्धों में विभक्त करके परमप्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है। पण्डित जी के कार्य से हर व्यक्ति प्रभावित होगा। उन्होंने शिव सम्बन्धी बिखरी हुई सूचनाओं को एकत्र और सुव्यवस्थित करके एक ग्रंथ में प्रस्तुत किया है। यह सचमुच ही दर्शनीय 'शिव-तत्त्व-दर्शन' है। मुझे विश्वास है कि यह ग्रंथ शिव भक्तों के लिए ही नहीं अन्य जिज्ञासु विद्वानों के लिये भी पथप्रदर्शक होगा।

डा० डी० आर० सोनार

●

(३२)

Dr. S. D. SHRIVASTAVA
Retired Assistant Surgeon
and Medical Officer
Regd. No. 11697–Bombay.

70, Mahatma Gandhi Marg,
NAGDA (UJJAIN) M.P.

Dated the 16th March' 72

I take great pleasure in writing the following lines about the unique book "SHIVA TATVA DARSHAN" written by Shri Pandit Ram Prasad Shastri of khetri (Rajasthan). Initiated by his bondless Shiva Bhakti he has taken enormous pains in compiling the match-less collection of facts and informations regarding every thing required by a devotee of Lord Shiva for his Bhakti and worship

After a wide and searchful reading of ancient and modern books on the subject, the author has suceeded to bring all the ancient and modern concepts and scientific interpretations of Shiva Tatva with proofs and authentic

quotations available through out the world, in a single book, the one of its kind.

In this book, the author has dealt with the subjects of God, God realisation, its necessity, the theory of Karma and its results and deliverance of human soul from suffering, in a very interesting manner, giving the very gist of religion and preaches that every human being, irrespective of caste, creed or colour in whatever socical status he may be placed, is entitled to worship the Lord Shiva equally.

The author has given a very comprehensive description with history and location of almost all the important Shiva Lingas in India and abroad giving the shortest, easiest, and most elaborate methods of walks of life' and circumstances.

I hope this valuable book would prove to be of immense interest and use to all the devotees of Lord Shiva.

Sd/-Dr. S. D. Shrivastava

● हिन्दी अनुवाद ●

मैं खेतड़ी निवासी श्री पंडित रामप्रसाद शास्त्री के अनुपम ग्रंथ 'शिव-तत्त्व-दर्शन' के विषय में ये कतिपय पंक्तियाँ लिखते हुए अत्यन्त आनन्द का अनुभव कर रहा हूँ। असीम शिव भक्ति से प्रेरित होकर, भगवान् शिव के भक्तों के लिए; भक्ति और पूजा सम्बंधी ज्ञातव्य सभी तथ्यों और संकेतों को संकलित करने का महान् श्रम आपने किया है।

प्राचीन और अर्वाचीन ग्रंथों का व्यापक और खोजी दृष्टि से अध्ययन करके लेखक ने शिवतत्त्व के सम्बंध में प्राचीन और

आधुनिक विचार तथा वैज्ञानिक विश्लेषण को सतर्क और सोदाहरण अपने किस्म की इस एक मात्र पुस्तक में प्रस्तुत किया है।

इस ग्रंथ में लेखक ने इन विषयों पर विचार प्रकट किये हैं— ईश्वर, ईश्वर–साक्षात्कार, इसकी आवश्यकता, कर्म सिद्धांत और उसके परिणाम, मानव अन्तःकरण की दुःखों से मुक्ति। यह सब रुचिकर शैली में प्रस्तुत करते हुए और धर्म का सार बतलाते हुए लेखक ने कहा है कि सभी धर्मों, सम्प्रदायों, जातियों और सामाजिक स्तरों के व्यक्ति भगवान् शिव की पूजा के अधिकारी हैं।

लेखक ने भारत और विदेशों के महत्त्वपूर्ण शिवलिङ्गों के इतिहास व स्थानों का बड़ा विशद वर्णन किया है। विविध स्तरों और परिस्थितियों में जीवन बिताने वाले भक्तों के लिए सुविधाजनक सरलतम और प्रभावशाली पूजन प्रकारों की जानकारी प्रस्तुत की गई है।

मुझे आशा है कि यह बहुमूल्य पुस्तक शिवभक्तों के लिए अतीव रुचिकर और उपयोगी प्रमाणित होगी।

डा० एस०डी० श्रीवास्तव

●

(३३)

श्रीमती मैत्रेयी पद्मनामन, एम०ए०, बी०एस-सी० मोण्ट. डिप्, २१६, साकेत नगर, इंदौर की सम्मति

I am very much pleased to have been briefed with an abstract of "SHIVA TATVA DARSHAN" a unique book of ancient and modern concepts and scientific interpretations of "SHIVA TATVA" written by Pandit Ram Prasad Sharma, Shastri of Khetri (Rajasthan). The book written after a thorough study of Indian Vedas, Puranas and other religious authoritative work of western world, gives a very comprehensive description of "SHIVA TATVA" and the easiest and most elaborate methods of worshiping 'Lord Shiva'. The book being in Hindi language should prove to be of immense interest for common public. I congratulate the author for his sincere effort.

Sd/-Maitreyi Padmanabhan

● हिन्दी अनुवाद ●

शिव-तत्त्व पर, पं० रामप्रसाद शर्मा, शास्त्री, खेतड़ी निवासी द्वारा रचित, प्राचीन व वर्तमान विचार और वैज्ञानिक विवेचना प्रस्तुत करने वाली अनन्य पुस्तक 'शिव–तत्त्व-दर्शन' का सार देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। पुस्तक भारतीय वेद, पुराण तथा पाश्चात्य जगत् की प्रामाणिक, धार्मिक कृतियों का गहन अध्ययन करके लिखो गई है तथा शिव-तत्त्र पर विस्तृत विवेचन और भगवान् शिव की पूजा की सरल तथा प्रामाणिक प्रक्रिया को प्रस्तुत करती है। हिन्दी में लिखी होने से यह सामान्य जनता के लिए रुचिकर सिद्ध होगी। लेखक को उनके स्तुत्य प्रयास के लिये बधाई !

मैत्रेयी पद्मनाभन्

●

(३४)

मेट्रोपोलिटन इंस्ट्रूमेण्ट्स लिमिटेड, त्रिवेन्द्रम् के कार्य व्यवस्थापक श्री भगवान स्वरूप माथुर बी. एस-सी, बी.ई० की सम्मति

सनातन धर्मी समाज में शिव उपासना लोकप्रिय होने पर भी इसका यथार्थ स्वरूप तथा वैज्ञानिक आधार पर केवल विद्वानों को ही ज्ञात होगा-जन साधारण की इस कमी को माननीय पण्डित जी ने अथक परिश्रम से स्वरचित "शिव-तत्त्व-दर्शन" द्वारा पूरा करके समाज का महान् उपकार किया है।

सरल हिन्दी भाषा में शिव स्वरूप तथा उपासना आदि का विशद विवेचन तथा वैज्ञानिक आधार प्रस्तुत किया गया है, जिससे उपासक की आस्था सुदृढ़ हो सके।

पाश्चात्य साहित्य में शिव तत्त्व पर पण्डित जी ने जो प्रकाश डाला है वह निश्चय ही उनके गहन अध्ययन का फल है।

दिनांक ३-५-७२ भगवान स्वरूप माथुर

●

(३५)

धर्मशास्त्र-प्रचार-परिषद् व मोर प्राच्य शोध-प्रतिष्ठान, ५ क्लाइव रोड़, कलकत्ता-१ के पण्डित ब्रह्मदत्त त्रिवेदी, एम० ए०, व्याकरणाचार्य, लक्ष्मणगढ निवासी की सम्मति—

"शिव-तत्त्व-दर्शन" इस प्रपञ्च के मूल कारण भगवती महामाया और भगवान् शिव सभी भारतीय शास्त्रों के ध्येय, गेय और आराध्य हैं जीवन का फल अपने "स्व" का प्रत्यभिज्ञान करने में निहित है जो उपासना से ही शक्य है। पण्डितजी ने "श्री शिव" के विषय का ऊहापोह पूर्वक सरल भाषा में उपनिबन्धन किया है।

मुझे ग्रन्थ रत्न के सविषेश स्थलों के प्रमुख आवश्यक अंशों का सामूहिक सिंहावलोकन कराया गया। ग्रंथ के विषयों का क्रम अधिकाधिक वैज्ञानिक दृष्टि से सम्मत है।

लेखक का रचना वार्ता पर अधिकार है स्वयं शम्भू पूजन परायण और श्री विद्या की कृपा का पात्र होने से ही ऐसी अद्भुत स्फुरणा ने विद्वान् लेखक की कृति में चार चाँद लगाये हैं। मैं पण्डित जी का साधुवाद करता हूँ कि ऐसे कराल समय में भी हमें देवाधिदेव महादेव के गुणानुवाद का अहेतुक गायन करने वाला कोई महापुरुष सम्भवतः अवश्य ही जनता जनार्दन में प्रेमाभक्ति अधिकाधिक

बढ़ावे इसी से ग्रन्थ को सफलता है। मैं इस ग्रंथ की भूरि भूरि प्रशंसा करता हूँ।

शिव दर्शन सारेण, धन्योऽहं परमार्थतः ।
ग्रन्थस्य सुप्रचारः स्यात्सर्वदेशेषु सर्वथा ॥
प्रिय श्री रामप्रसादेन, विहितोऽञ्जलिको मुदा ।
प्रीयतां तेन सुप्रीतौ, भवानीशंकरौ तथा ॥

अधिक वैशाख शुक्ला ८
विक्रमाब्द २०२९ ।

भवतां शुभानुध्यायो
ब्रह्मदत्त त्रिवेदी

●

(३६)

श्री राजस्थान ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम, रतनगढ़ के कुलसचिव, वेदश्रमी जीवानन्द 'आनन्द' की सम्मति।

श्रीयुत् सम्माननीय पंडित रामप्रसाद जी शास्त्री-सादर प्रणाम

यह अकाट्य सत्य है कि हमारी वैदिक कालीन मान्यताएँ सृष्टि के अनन्तकाल तक अमिट रहेंगी और उनके अमिट रहने में देवाधिदेव महादेव 'शिव' एक ऐसी अटूट कड़ी हैं, जो कभी भी छिन्न भिन्न होने वाली नहीं हैं।

आपके द्वारा लिखा गया 'शिव-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ आज के भूले बिसरे पथिकों के लिये पथ प्रदर्शक के रूप में सहायक सिद्ध होगा। क्योंकि 'शिव' राजा और रंक सभी का सामान्य आराध्यदेव है, यही इसकी विशिष्टता है। यह सबका कल्याण करता है।

क्रमांक ७-३-७४-५६६
दिनाङ्क १६-३-७२

विनयशील
वेदश्रमी जीवानन्द 'आनन्द' विद्यावाचस्पति

●

(३७)

श्री ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम संस्कृत महाविद्यालय लछमनगढ़ (सीकर) के प्राचार्य एवं निदेशक पं० नन्दकुमार शास्त्री की सम्मति

पंडित रामप्रसाद जी शास्त्री

सादर अभिवादन

आपके द्वारा लिखित "शिव-तत्त्व-दर्शन" नामक पुस्तक का संक्षिप्त परिचय पढ़ने को मिला। यह पुस्तक तीन स्कन्धों में विभाजित है; शिव-तत्त्व विषयक प्राचीन, अर्वाचीन एवं दुर्लभ साहित्य का गवेषणापूर्ण अवगाहन है। जनसाधारण को शिव-तत्त्व विषयक सांगोपांग ज्ञान कराने में यह पुस्तक सफल प्रमाणित होगी। शीघ्र प्रकाशनार्थ भगवान् शिव से मङ्गल कामना करता हूँ।

दिनांक १/१/७२ नन्दकुमार शास्त्री

●

(३८)

आयुर्वेद वाचस्पति, विद्यावारिधि, पंडित वैद्य श्री विश्वनाथ जोशी साहित्य, व्याकरण, आयुर्वेदाचार्य, साहित्यरत्न, व्याकरणतीर्थ, काव्यतीर्थ, तुमसर (महाराष्ट्र) की सम्मति

पंडित रामप्रसाद जी शर्मा शास्त्री। सादर प्रणाम!

आपने भगवान् भूतभावन भवानीपति भक्तवत्सल भव विमोचन भव की कृपा से "शिव-तत्त्व-दर्शन" ग्रन्थ की रचना की है; यह आपका प्रयास अतीव स्तुत्य है। ग्रन्थ की प्रेषित रूपरेखा के आधार पर प्रतीत होता है कि आपने इसकी रचना में अतीव श्रम किया है।

मैं हृदय से आपके प्रतिभा प्रसून इस ग्रन्थ रत्न की सफलता चाहता हूँ।

मेरी शुभ कामना इस प्रकार है—

श्रीमद् राम प्रसाद शर्म विदुषां श्रीशंकरप्रीतये ।
लोकानां च हिताय सत्प्रतिभया ग्रन्थे रनेकेः पुनः ।।
संगृह्याभिमतानि नैक :विधया प्रतीच्यानियत् ।
संतेनेशिवतत्त्वदर्शनमिदं तत् सर्वदा शोभताम् ।।

दिनांक २८/४/७२ वैद्य विश्वनाथ जोसी

◆

(३९)

रा० ब० सेठ सूर्यमल शिवप्रसाद वेद-वेदांग संस्कृत महाविद्यालय, चिड़ावा के प्रधानाचार्य की सम्मति

स्वस्ति श्रीमत्सु नतितयः शमिहेहेऽथोदन्तः ।

आपका श्री शिव-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ देख कर, अपारानन्द पारावार मग्न हूं ।

यह ग्रंथ अनुपमाद्वितीय, सरस; सरल, मन:प्रसादाधायक होनें से अयस्कान्तवत् सर्वजन चित्ताकर्षक है । तदर्थ आपको भूरि भूरि धन्यवाद । इति ।

दिनांक १६-३-७४ सूर्य्यनारायण झा व्याकरणाचार्य

◆

(४०)

सेठ० गो० रा० चमड़िया संस्कृत शास्त्री महाविद्यालय फतेहपुर-शेखावटी (राज०) के आचार्य उमेश शास्त्री, एम० ए० की सम्मति

पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री

प्रिय महोदय,

आपके द्वारा लिखित 'शिव-तत्त्व-दर्शन' नामक ग्रंथ को देख कर यह कहा जाना स्वाभाविक है कि आपने नितान्त श्रम के साथ

एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया है– यह ग्रन्थ राष्ट्रभाषा-साहित्य के अध्यात्म-क्षेत्र में उपयोगी उपलब्धी है।

आपका

दिनांक १८-३-७४ आचार्य उमेश शास्त्री

●

(४१)

रामकृष्ण शर्मा एम०ए०, बी०एड्०,

प्रधानाध्यापक, श्री रघुनाथ हायर सैकण्डरी स्कूल, लक्ष्मणगढ़(सीकर)

धर्म-प्रधान व अध्यात्मवादी देश होने के कारण प्रायः हरेक भारतीय किसी न किसी रूप में आस्तिक एवं धर्म-भीरु है। यहां जाति वर्गभेद के अनुसार ईश्वर को अलग-अलग इष्ट देवों के रूप में आराधना की जाती है। भारतीय संस्कृति से प्रभावित अन्य विदेशी राष्ट्रों में भी ईश्वर का साधना किसी इष्ट विशेष के माध्यम से हो की जाती है। भारतीय धर्म शास्त्रों ने इन्हें ब्रह्म माना है व त्रिनेत्र भगवान् शिव ही एक ऐसे इष्ट देवता हैं जिनकी विश्वव्यापी पूजा की जाती है। ब्रह्म का तत्त्व-दर्शन अति गूढ़ होने के कारण जन सामान्य की रुचि से कुछ हटकर है एवं नीलकण्ठ भगवान् शंकर का अद्भुत् चरित्र ब्रह्मतत्त्व को और अधिक गूढ़ बना देता है।

मान्य पण्डित श्री रामप्रसादजी शर्मा ने चन्द्रमौलि भगवान् शिव के गूढ़ तत्त्व का निरूपण 'शिव-तत्त्व-दर्शन' नामक ग्रंथ लिखकर किया है। इस जटिल विषय को पंडितजी की सक्षम लेखनी ने बहुत ही रोचक, सरल एवं सुव्यवस्थित रूप से प्रतिपादित कर शिवभक्तों की आस्था का विषय बनाया है। त्रिनेत्र भगवान् शंकर के तत्त्व का विश्लेषण तीन स्कन्धों में वर्गीकृत होने के कारण

सरल सुरुचि पूर्ण होने के साथ ही साथ विशिष्ट बन पड़ा है। जहाँ 'प्रथम-नेत्र-दृष्टि में भगवान् शूलपाणि के ब्रह्मस्वरूप तत्त्व का निरूपण एवं उनकी अन्य इष्ट देवताओं से एकरूपता बताई गई है, वहाँ द्वितीय नेत्र-दृष्टि स्कन्ध में बृहत् से बृहत् एवं सूक्ष्म से सूक्ष्म पूजा विधान संस्कृत एवं हिन्दी में दिये गये हैं। तृतीय नेत्र दृष्टि स्कंध में भारतीय संस्कृति, धर्म तथा विभिन्न व्रत, उत्सव आदि की विशिष्ट जानकारी दी गई है। लेखक ने विषय प्रतिपादित करने में मौलिक तर्कों के साथ-साथ शास्त्र सम्मत दृष्टान्त देते हुए कतिपय नवीन मान्यताएँ स्थापित की हैं। विषय का अर्वाचीन धारणाओं से सामंजस्य स्थापित करने के लिये यथास्थान वैज्ञानिक प्रमाण दिये गये है, जो आज की भौतिकवादी शंकालु मनःस्थिति को स्थिर कर ईश्वर की ओर लगाने में निःसन्देह सफल होंगे।

भगवान् शिव विषयक ऐसे एक ग्रंथ की आवश्यकता प्रतीत हो रही थी, जिसमें जन सामान्य, बुद्धिजीवी एवं विद्वत्-वर्ग सबके लिए यथानुसार सामग्री संकलित हो। विद्वान् लेखक की कृति 'शिव-तत्त्व-दर्शन' उक्त आवश्यकता की पूर्ति करने वाली शृंखला में एक विशेष कड़ी का कार्य करेगी। इस दिशा में श्रद्धेय पण्डितजी का धर्मशास्त्र ज्ञान, गहन अध्ययन, मनन व परिश्रम सराहनीय है। निश्चय ही यह ग्रंथ हिन्दू धर्म साहित्य की अभिवृद्धि करने में सहायक सिद्ध होगा। भाषा विषय एवं विश्लेषण पर मान्य पंडितजी का पूर्ण अधिकार रहा है। अतः ग्रंथ की एकरसता आद्योपान्त बनी रही है।

लेखक का प्रयास निःसन्देह स्तुत्य है। वेदों, उपनिषदों के उद्धरणों से लेकर पौराणिक कथाओं के दृष्टांत देने वाला, यह ग्रंथ ईश्वर प्राप्ति के लक्ष्य में, श्रद्धालु साधकों के लिए अत्यन्त उपादेय निधि है। मैं सर्वशक्तिमान मंगलमय प्रभु से कामना करता हूं कि हरएक साधक इस ग्रंथ से अधिक लाभान्वित हो एवं हिन्दूधर्म

साहित्य को मान्य पण्डितजी से ऐसी साधिकारिक गागर में सागर भरने वाली कृतियाँ उपलब्ध होती रहें।

रामकृष्ण शर्मा

पण्डित रामप्रसाद जी शर्मा का जन्म भूतपूर्व खेतड़ी राज के एक ऐसे प्रतिष्ठित पण्डित कुल में हुआ है। जिसमें वेद, वेदान्त, धर्मशास्त्र, व्याकरण, ज्योतिषादि शास्त्रों के विद्वान् शताब्दियों से होते आये हैं। यदि इनकी विद्वत्ता को पैतृक सम्पति के रूप में मिली हुई कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। 'शिव-तत्त्व-दर्शन' ग्रंथ लेखक के पूर्वज खेतड़ी राज के पूज्य सम्माननीय जागीरदार थे, उनकी निजी धार्मिक सेवाओं में लगे रहने के कारण, उनकी विद्वत्ता का प्रभाव परिस्थितिवश खेतड़ी राज एवं उनके सम्वन्धी सम्पर्कीय राजा. महाराजा, सरदारों तक ही अधिक रहा, जनसाधारण एवं अन्य प्रांत निवासियों को लाभ कम ही मिल पाया, किन्तु जिनका सम्पर्क इस खेतड़ी राज घराने से रहा, चाहे वह कहीं के निवासी हों, उनकी विद्वत्ता से प्रभावित हुए बिना न रहे।

भूतपूर्व हिज हाईनेस महारावत प्रतापगढ़ नरेश, राजाधिराज शाहपुरा तथा अनेक ठिकानेदार सरदारान के श्रद्धाभाजन बने हुए सम्मानित होते रहे।

पण्डित मोतीलाल जी नेहरू ने पं०जवाहर लाल जी के जन्म के समय खुशी का सूचनापत्र खेतड़ी नरेश राजा अजीत सिंह जी बहादुर को भेजा था। उसमें लिखा है कि आपके पंडित जी द्वारा जन्मपत्रिका बनवाकर भेजें, उस समय खेतड़ी नरेश के प्रधान ज्योतिर्विद् पंडित रूड़मलजी शर्मा (इस लेखक के प्रपितामह) ही थे। उन्हीं के द्वारा जन्मपत्रिका तैयार कराके भेजी गई थी। इसका उल्लेख 'आदर्श-नरेश' (राजा अजीत सिंह का जीवन चरित्र) में है। खेतड़ी से नेहरू परिवार का सम्पर्क अनेक पुस्तक व लेखों द्वारा प्रमाणित है।

विश्व विख्यात स्वामी विवेकानन्द जब खेतड़ी नरेश राजाजी अजीत सिंह जी बहादुर के आतिथ्य में आकर रहा करते थे. तब राजाजी बहादुर एवं स्वामी जी के सांनिध्य में वेद वेदान्त, धर्मशास्त्र विषयक अनेक संगोष्ठियां आयोजित की जाती थीं। जिसके संयोजक पंडित रूड़मलजी (लेखक के प्रपितामह) तथा मुंशी जगमोहन लाल जी कायस्थ सेक्रेट्री राजाजी बहादुर थे। संगोष्ठियों में सम्मिलित होने वाले विद्वानों में पण्डित नारायणदास जी, गुसांई भवानी गिरिजी, मिश्र अम्बादत्तजी, श्री निवास जी, भवानीदत्त जी, खुशहालीराम जी, हरदेव जी, पं० महासुखजी, मिश्र गुरुदत्तजी पं०सीतारामजी, पं०गौरी शंकर जी, पं०सुन्दर झा जी पं०रामचन्द्र जी ब्रह्मचारी, पं० हरलाल जी, ·पं० हरनन्दराम जी, पं० राधा कृष्णजी पुजारी, पं० रामकुमार जी दाधीच. बाघजी जोशी, लालचन्द जी वैद्य, स्वामी बख्तावरदास जी खेतड़ी निवासी. गोस्वामी प्यारेलाल जी नारनौल, पं० शंकरलाल जी बिहार (डावला) पं० हरदयालुजी मेरठ, पं० रामचरण जी चौबे कोटपूतली' पं० स्नेहीरामजी, पं०रामजीलाल जी चिड़ावा, पं०गोवर्द्धनदासजी पाण्डेय, अङ्गणराम जी वैद्य सिंघाना, वैद्य रामगोपाल जी टीवा बसई के नाम सुनने में आते हैं।

सनातन धर्मी समाज में शिव उपासना का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। परंतु इसके तात्त्विक स्वरूप के ज्ञाता कम ही पाये जाते हैं। इस विषय पर पाश्चात्य साहित्य के जानकार तो और भी कम हैं। पंडितजी ने इससे सम्बन्धित प्राच्य तथा पाश्चात्य मतों के पर्याप्त अध्ययन के फलस्वरूप निर्गुण तथा सगुण शिव-तत्त्व का विशद विवेचन किया है तथा इसको वैज्ञानिक आधार देने का मार्मिक शुभ प्रयास किया है। सैलानियों के लिए विचित्र प्रकार के शिव-लिंगों का वर्णन, भौगोलिक परिचय, यातायात मार्ग-दर्शक सुविधाओं सहित आकर्षण योग्य है। पूजाविधि सामग्री आदि का पूर्ण वर्णन एक ही स्थान पर एकत्र करके उपासकों का भलीभांति पथ

प्रदर्शन किया है। शिव-तत्त्व का यथार्थ स्वरूप, उपासना विधि, इसके वैज्ञानिक आधार, अनेक आवश्यक विषय इस एक ही ग्रन्थ में सुलभ हो सकेंगे। सभी देवताओं के तत्त्व-दर्शनों में भगवान् शिव का तत्त्व-दर्शन अधिक गहन तथा क्लिष्ट है जिसको लेखक ने पूर्ण परिश्रम एवं सतत प्रयास द्वारा सर्वजन हितार्थ सप्रमाण हिन्दी में लिखकर अनुपम कृति प्रदान की है जिसके लिए हिन्दू जगत् इनका आभारी रहेगा। इस पुनीत पुण्यतम प्रयास के लिये लेखक प्रशंसा व बधाई के पात्र हैं।

दिनांक २/५/७३
वर्तमान निवास
२९/१ १४ ऋषिमङ्गलम्
त्रिवेन्द्रम् (केरल)

सूर्यनारायण माथुर बी०ए०,सी०टी०,
रिटायर्ड निरीक्षक शिक्षाविभाग
भूतपूर्व खेतड़ी राज्य

◆

(८२)

श्री सूरजमल शर्मा बी० काम०, एल-एल० बी०,एफ० सी०ए०, चार्टर्ड एकाउण्टेण्ट, ३ मुक्ताराम बाबू स्ट्रीट, कलकत्ता की सम्मति

पं० रामप्रसाद जी शास्त्री लिखित "शिव–तत्त्व–दर्शन" ग्रंथ का अवलोकन किया। शिव-तत्त्व सम्बन्धी अनेक विषय इस ग्रंथ मे शास्त्र सगत रूप में दे दिये गये हैं। वेद पुराणादि प्राचीन ग्रंथों के मतों का आधुनिक विज्ञान से समन्वय कर विद्वान लेखक ने इस ग्रंथ की उपादेयता को बहुत बढ़ा दिया है। वर्तमान युग में इस प्रकार के अन्वेषणपूर्ण धार्मिक ग्रन्थों की बड़ी आवश्यकता है। मेरा विश्वास है कि शिवभक्तों के लिए यह ग्रथ एक नई प्रेरणा का स्रोत होगा।

दिनांक २०/६/७३

सूरजमल शर्मा

◆

(४३)

श्री नवलगढ़ संस्कृत विद्यालय के प्रधानाचार्य पं० कृष्णदत्त खांडल विद्यावारिधि, साहित्याचार्य, साहित्यरत्न, एम०ओ०एल० की सम्मति

श्री माननीय पण्डितजी,

आपने 'शिव-तत्त्व-दर्शन" नामक पुस्तक लिखकर विद्वज्जनों के सम्मुख अपनी अपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया है, इसके लिए मैं अपनी हार्दिक शुभकामना भेज रहा हूँ।

पंडित रामप्रसाद शास्त्री द्वारा रचित ग्रन्थ 'शिव-तत्त्व-दर्शन' अपने में किया गया एक सफल प्रयास है। अब तक केवल संस्कृत साहित्य में ही धार्मिक व इष्ट देवताओं के संदर्भ उपलब्ध होते रहे हैं। हिन्दी के अन्दर माननीय लेखक महोदय का प्रयास हिन्दू समाज के लिये सम्यक् पथ प्रदर्शन करता रहेगा।

हजारों वर्षों से 'शंकर का स्वरूप क्या ?' उनकी उत्पत्ति कैसे हुई ? उनकी उपासना किस विधि से की जावे ? आदि विभिन्न विषयों पर वाद-विवाद चलते आ रहे हैं। विद्वान् लेखक ने अपने इस अमूल्य ग्रंथ के माध्यम से न केवल सबको सही दिशा दी है बल्कि डूबती हुई भारतीय संस्कृति को भी बचाया है। आज जबकि विश्व में विज्ञान का बोलबाला है और ईश्वर की असीम शक्ति पर किसी को विश्वास नहीं है लेखक ने अपनी अनोखी प्रतिभा एवं गवेषणा से इस ग्रंथ में मनोवैज्ञानिक, वैज्ञानिक एवं तर्क के आधार पर जन समाज की शंकाओं का समाधान कर एक प्रशंसनीय कार्य किया है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि लेखक महोदय का यह महान् प्रयास जन समाज में इष्टदेव शङ्कर के प्रति श्रद्धा पैदा करके कल्याणकारी सिद्ध होगा।

दिनांक ३/५/७२ भवदीय—कृष्णदत्त खाण्डल विद्यावारिधि

(४४)

वैद्य पं० निरञ्जनलाल शर्मा भिषगाचार्य, गवर्नमेण्ट रसायन—शालाध्यक्ष, जयपुर की सम्मति

'शिव-तत्त्व-दर्शन' ग्रंथ में प्राचीन भारतीय धर्मग्रंथों, संस्कृति व आधुनिक भारत के समाजवाद तथा विदेशों को बदलती हुई वैज्ञानिक विचारधाराओं का अद्‌भुत समन्वय देखकर आश्चर्य हुआ।

भगवान् शिव की प्राचीन एवं अर्वाचीन सभी स्थितियों का परिचय, तत्सम्बन्धी अनेक संदिग्ध प्रश्नों के समाधान व छोटे से छोटी व बड़े से बड़ी सभी प्रकार की पूजा पद्धतियों व व्रत उत्सवों के विधानों का परिपूर्ण ग्रन्थ है। जिन मनुष्यों में हिन्दुत्व की छाया भी बाकी रह रही है या जो अपने आपको हिन्दू होने का गर्व समझते हैं, सभी इसके द्वारा लाभ प्राप्त कर सकेंगे। शिव सम्बन्धित सभी प्रकार की सामग्री इस ग्रंथ में एक साथ ही संचित की गई है।

आयुर्वेद की सर्वोपरि सिद्ध परमौषधि तत्त्व आयुर्वेदीय ग्रन्थों में पारद का वर्णन किया गया है। पारद को भगवान् आशुतोष का वीर्य कहते हुए साक्षात् शिव का स्वरूप वर्णन किया है।

पारद का शिव निर्माण कर पूजन करने के अद्‌भुत फल इस पुस्तक में बीसों ग्रन्थों के प्रमाणों से दर्शाये गये हैं। अपने को वैद्य कहने वाले व्यक्ति को तो इसका पठन मनन कर लाभ से कदापि वञ्चित नहीं रहना चाहिये। भगवान् आशुतोष ही आयुर्वेद के आदि प्रवर्तक माने गये हैं।

मेरे विचार से यह ग्रन्थ आधुनिक युग के सर्वथा अनुकूल, उपादेय साधारण हिन्दी भाषा से संस्कृतज्ञ महान् विद्वज्जनों तक सभी को समान लाभप्रद तथा प्रामाणिक सिद्ध होगा। लेखक का अथक परिश्रम तथा बुद्धिमत्ता का प्रयास स्तुत्य है।

दिनांक १/७/७२ वैद्य निरंजनलाल मिश्र

(४५)

जगदीश प्रसाद दीक्षित बी०ए०, एल-एल०बी०, आर०ए०एस० रिटायर्ड मजिस्ट्रेट, १६ जोबनेर बाग जयपुर की सम्मति

मुझे पं० रामप्रसाद जी शर्मा द्वारा लिखित "शिव-तत्त्व-दर्शन" देखने का अवसर मिला। पुस्तक में शिव साहित्य संबंधी सामग्री के साथ साथ शिव-साधना एवं शैव मत के क्रमिक विकास का सुन्दर विश्लेषण है, तथा साथ ही महत् गवेषणा पूर्ण अध्ययन का समावेश है। शिव उपासना के तत्त्व एवं दर्शन का इतना समीचीन एवं सांगोपांग अवगाहन अन्यत्र दुर्लभ है। इतनी उपयोगी सामग्री का संकलन एवं सुबोध तथा सरल भाषा में उसका रूपान्तर लेखक के अथक परिश्रम का परिचायक है। इस सुन्दर प्रयास के लिये श्री रामप्रसाद जी शर्मा धन्यवाद के पात्र हैं। आशा है शिव साधन-रत व्यक्ति इस महत्त्वपूर्ण ग्रंथ का पूर्ण लाभ उठावेंगे।

दिनांक २८/६/७२ ज० प्रसाद दीक्षित

●

(४६)

पंडित रामप्रमाद जी शर्मा शास्त्री द्वारा रचित 'शिव-तत्त्व दर्शन' अद्भुत दिव्य ग्रंथ देखकर वर्णनातीत हर्षोल्लास हुआ। अपनी तरह का शिव विषयक यह एक ही ग्रंथ-रत्न दृष्टिगोचर हुआ है। जिसकी कोई उपमा नहीं, इसकी प्रशंसा में जो भी कहा जा सके वही कम है।

इस ग्रन्थ-रत्न द्वारा हिन्दू जाति का बृहत् उपकार ही नहीं होगा, किन्तु आज के युग में इस प्रकार के ग्रन्थ की बहुत बड़ी आवश्यकता प्रतीत हो रही थी। इस अभाव की भी पूर्ति होगी और हिन्दी भाषा में लिखे जाने के कारण अधिकाधिक मनुष्य लाभ प्राप्त कर सकेंगे।

भक्त रामशरण दास,
पिलखुवा (मेरठ) उत्तर प्रदेश

(४७)

कवि–रमेश गुप्त, कांग्रेस हाउस, वी. पी. रोड़ बम्बई की सम्मति

भावना के पुष्प

एक चकोरी देव पे अपने भाव के पुष्प चढ़ाती थी ।
निरख निरख प्रिय शरद् चन्द्र को मन ही मन मुसकाती थी ॥
मन ही मन हर्षाती थी । १ ॥
अपने पिया को मिलने धाती उड़ उड़ कर नीचे गिर जाती ।
आशा निराशा के झगड़े में निशि दिन टकराती थी ॥
एक चकोरी देव पे. । २ ॥
बीत चली यों ही रजनी सारी तब उसने एक बात बिचारी ।
सोच समझ कर चली मगन हो उमड़ भावना आई ॥
लाकर लकड़ी कुछ चन्दन की उसने चिता बनाई ॥
फिर कहने लगी ।
शिव शंकर कैलासपति जब फिरते फिरते आयेंगे ।
चिता भस्म लेकर के प्रभु जी अपने शीश चढ़ायेंगे ।
शिवमस्तक पर चन्द्र बिराजे हम स्वामी को पायेंगे ।
जीवित नहीं तो मरकर ही चरणों में लय हो जायेंगे ॥
आशा के शिखर बनाती थी भावना की भेंट चढ़ाती थी ।
एक चकोरी देव पे अपने भाव के पुष्प चढ़ाती थी ॥

पंडित रामप्रसाद शास्त्री खेतड़ी वाले के एक जीवन की झलक ! उनके महा अमूल्य संग्रह "शिव-तत्त्व-दर्शन" पुस्तक के प्रति मेरी अन्तरी भावना ! जो मेरे इस उपरोक्त गीत में एक चकोरी की अपना जीवन समर्पण करने की भावना के समान ही है । इस पुस्तक में लेखनी ने उनके दर्शन पाये हैं। ईश्वर इस कृति को सफलता प्रदान करें। यही मेरी शुभकामना व भगवान् शिव से प्रार्थना है। भोले भण्डारी इस कार्य में अपनी पूर्ण सहमति तथा सफलता प्रदान करें ।

दिनांक २१ मार्च १९७२ रमेश गुप्ता

(४८)

श्री सुरेन्द्र काबरा, बी० काम०, एल-एल०बी०, ए०सी०ए०, ज्वाइंट चीफ अकाउण्टेण्ट, भारत कामर्स इण्डस्ट्रीज, बिरलाग्राम (नागदा) की सम्मति

'शिव-तत्त्व-दर्शन' भगवान् शिव विषयक भारतीय पुरातन ग्रंथ वेद उपनिषद् पुराणादि अनेक धर्मशास्त्रों तथा देशी विदेशी वैज्ञानिक इतिहासवेत्ताओं की विचारधाराओं को अनेक वर्षों तक पठन–मनन करने के पश्चात् अनेक तथ्यपूर्ण अधिकाधिक सामग्री संग्रह कर, अत्यन्त कठिन परिश्रम द्वारा समीचीन अभिनव ग्रंथ सर्वजन हितार्थ हिन्दी भाषा में लिखा गया है।

इसमें भगवान् शिव के अनेकों रूप स्वरूप निर्माण प्रकार तथा पूजा अनुष्ठान सम्बन्धित अनेक ऐसे दुर्लभ विषयों का संग्रह है, जो अब तक अन्य ग्रन्थों में सहज सुलभ नहीं था। शिवभक्तों के ही नहीं अपितु सभी हिन्दू-जन साधारण के पठन मनन योग्य अनेक सामग्री प्रस्तुत हैं। हिन्दी भाषा में इस प्रकार का यह पहला ही ग्रंथ है जिसमें भगवान् शिव का स्वरूप, पूजा एवं धर्म विषय के प्रकारों का अनेक स्थलों पर वैज्ञानिक व सामाजिक समन्वय वर्णित है।

सनातन धर्मावलम्बी सभी हिन्दू समाज के भगवान् शिव आराध्य हैं किन्तु माहेश्वरी वैश्य समाज के परम आराध्य ही नहीं, अपितु जीवनदान प्रदान करने वाले भी हैं। अतएव मैं सभी हिन्दू समाज एवं सर्वाधिक माहेश्वरी वैश्य समाज के प्रत्येक परिवार से सानुरोध निवेदन करता हूँ कि ऐसे तथ्यपूर्ण ग्रंथ को अवश्य पठन-मनन कर अपने इष्टदेव विषयक ज्ञान का प्रकाश लेकर लाभ प्राप्त करें।

लेखक पण्डित रामप्रसाद जी शर्मा शास्त्री का यह कठिन परिश्रम परमादर सत्कार योग्य है, जिन्होंने हिन्दू समाज को यह अनुपम कृति प्रदान की है।

दिनांक १२-१-७४

सुरेन्द्र काबरा

●●●

परिग्रहण सं. 8247